

GL SANS 891.21  
BAN



125555  
LBSNAA

ने राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी  
Academy of Administration

मुसूरी  
MUSSOORIE

पुस्तकालय  
LIBRARY

अवाप्ति संख्या

Accession No.

वर्ग संख्या GL Sans

Class No.

पुस्तक संख्या

Book No.

125555

~~14650~~

891.21

BAN बाणभ

आशुतोष ग्रन्थ-मालायाः प्रथमं पुष्पम् ।



महाकविश्रीबाणभट्टविरचितम् ।

# \* श्रीहर्षचरितम् \*

\* आद्यमुच्छ्वासचतुर्थकम् \*

करनाल मण्डलान्तर्गत समीक (सीख) ग्राम वास्तव्येन

पं० रामस्वरूपशास्त्रिणा “विरचितया”

आशुतोषिण्या-व्याख्यया

समलंकृतम् ।



प्रथम संस्करणे सहस्रं ] सम् १९३६ [ मूल्यं रुप्यकद्वयम्

पुनर्मुद्रणाधिकारः प्रकाशकायतः

प्रकाशक—

पं० नारायणदत्त शर्मा

अध्यक्ष आशुतोष पुस्तकालय

सीख ( करनाल )

ब्रांच—लाहौर ।



मुद्रक—

सरदारीलाल शारदा

मैनेजर दी सनातन धर्म ऐजुकेशनल

प्रिंटिंग प्रेस, लिमिटेड, लाहौर ।

## \* नम्रनिवेदनम् \*

श्रीमाननीयाः ?-विद्वान्सः—

श्रीहर्षचरित “आशुतोषिण्यायाः” प्रथमेस्मिन्संस्करणे अक्षर-संयोजकानां प्रकाशकानांचानवधानतया, कार्यान्तर संलग्ने च मयि ज्ञातानां यन्त्राद्यशुद्धीनां कृते खेदो महान् मनसि मे, तदर्थं सानुरोध-प्रार्थ्यन्ते मया विद्वान्सः— यत् कृपया तत्र तत्र तच्छंशोधनं विधायपठन्त-पाठयन्तश्चमयि महान्तमनुग्रहंविधास्यन्तीति, किं बहुना—मनुष्य जन-सुलभप्रमाद हेतोर्यत्र कुत्रापि काचित्पुटिरुपलभ्येत, तन्मांप्रति लेख-द्वारा सूचयेयुः-बुधाः, येनाग्रिमेसंस्करणे तन्निराकरणां करिष्येत । किं वा स्वयमपि तत्र तत्र तत्पूर्तिं करणेन मत्साहाय्यमाचरन्तो मयाशतशो-धन्यवादैर्भुष्येरन्निति वद्व्राज्जलिः प्रार्थयते ।

कर्मण्यस्मिन् मत्साहाय्यकराणां पं० जगन्नाथशास्त्रिणां ( प्रो० चीफकालिज ), म० म० पं० माधव भाण्डारी शास्त्रिणां ( प्रो० औरि-यण्टल कालिज ), पं० रामचन्द्र “कुशल” शास्त्रिणां ( प्रो० औरि-यण्टल कालिज ), पं० सूर्यनारायणशास्त्रिणां ( प्रो० शीतला महा-विद्यालय ) पं० ज्ञानचन्द्र वेदान्तशास्त्रिणां ( लवपुरम् ) पं० अमर-नाथशास्त्रिणां ( वामनौली ) च कृते शतशः धन्यवादाः । यैर्मत्साहाय्यं मनसा वाचा कर्मणा चाकारि ।

श्रीविश्वेश्वरानन्द वैदिक अनुसंधानालय

डी० ए० वी० कालिज लाहौर

आवर्णा—सं० १९६६

}

विदुषामनुचरः—

रामस्वरूपः



## ❀ प्राक्कथन ❀

१—बाण का जीवन—संस्कृत के कवियों में बाण कुछ भाग्यवान् हैं। इनकी जीवन कहानी और तिथि के बारे में हमें निश्चय पूर्वक जितना मालूम है उतना कदाचित् किसी अन्य कवि के विषय में नहीं। अपने हर्षचरित् के पहिले दो उच्छ्वासों एवं कादंबरी के आरम्भ में अपनी कथा स्वयं लिखी है।

सरस्वती के पुत्र सारस्वत थे। इनके चचेरे भाई वत्स के कुल में कुबेर उत्पन्न हुए। कुबेर के पड़पोते ( चित्रभानु ) ही बाण के पिता थे। इनकी माता का नाम राजदेवी था। बाण अभी चौदह वर्ष के ही थे, कि इनके माता पिता स्वर्ग सिधारे। उदास होकर ये देशाटन करने लगे। इससे इन्हें बहुत अनुभव प्राप्त हुआ। कुछ समय पश्चात् ये अपने घर ( प्रीतिकूट ) लौट आए। एक दिन एक राजदूत इन्हें लेने आया। पहले तो बाण डरे, फिर साहस करके हर्ष के द्वार में उपस्थित हुए। महाराज ने इनकी कविता से प्रसन्न हो बड़ा सम्मान किया, ये अब राज कवि कहलाने लगे, तथा इनकी कीर्ति चारों ओर फैलने लगी।

कदाचित् उसी वर्ष पतभट्ट के आने पर ये अवकाश लेकर अपने देश को आए। भाई बन्धुओं के कौतुक से हर्ष के विषय में पूछे जाने पर इन्होंने जो कहा— वही हर्षचरित् है।

आगे इन्होंने अपने विषय में कुछ न कह कर अपने राजा की ही महत्त्व पूर्ण जीवनी के दर्शन कराये हैं। इन्हें अपने दोनों ग्रन्थ समाप्त करने का अवसर नहीं मिला। “कादंबरी” इनके पुत्र ( पुलिन्द ) ने इनके बाद पूर्ण की हर्षचरित् अधूरा ही रहा। ये शाहबाद ( आरा ) प्रान्तवर्ति प्रीतिकूट ग्राम के निवासी तथा थानेश्वर और कन्नौज के महाराज हर्षवर्धन के प्रधान सभा पण्डित थे।

२—बाण का बेटा और बाण—कादंबरी को पूर्ण करने का सेहरा कवि के सुयोग्य पुत्र पुलिन्द के सिर पर है। पुलिन्द ने यह कार्य कर संस्कृत प्रेमियों पर विशेष अनुकम्पा की है। डाक्टर बुह्लर के कथनानुसार बाण के पुत्र का नाम भूषणबाण अथवा भूषणभट्ट है, यह बात अब असत्य सिद्ध की जा चुकी है, क्योंकि—

(क) कादंबरी के पुराने लेख मित्र हैं जिन पर पुलिन्द नाम लिखित है।

(ख) कवि धनपाल ने भी अपनी सुक्तिमुक्तावली में लिखा है—

केवलोऽपि स्मृतो बाणः करोतिविमदान् कवीन् ।

किम्पुनः करुप्रसंधानपुलिन्दकृतसंनिधिः ॥

३—बाण और मयूर—बाण और मयूर दोनों हर्ष के द्वार की शोभा थे। कहते हैं, मयूर बाण के श्वसुर थे। मयूर का लिखा सूर्यशतक अब भी पढ़ा जाता है। संभव है कि उन्होंने ने और भी लिखा होगा। पर समय के चक्र में वह नष्ट हो गया हो।

४—बाण की तिथि—इस विषय में हमें दो जगह से सहायता मिलती है। एक तो काव्य-ग्रन्थों से। दूसरे ह्यूनश्याङ्ग के यात्रा-वृत्तान्त से, बाण ने हर्षचरित् के प्रारम्भिक श्लोकों में कुछ कवियों की स्तुति की है। कुछ अन्य कवियों की सूचि के निरीक्षण ने जहाँ बाण की तिथि नियत करने में सहायता दी है, वहाँ साहित्य के अनेक ऐतिहासिक पहलुओं पर भी प्रकाश-प्रक्षेपन किया है।

चीनी यात्री ह्यूनश्याङ्ग सातवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में भारत में आया। उसने भी हर्ष का वर्णन किया है। अतएव बाण की तिथि सातवीं शताब्दी ईस्वी के पूर्वार्ध में ही मानी जाती है।

५—आख्यायिका और कथा—संस्कृत काव्य के तीन मुख्य भाग

हैं—गद्य, पद्य, और मिश्र । गद्य के आगे दो भाग हैं—आख्यायिका और कथा ।

(१) आख्यायिका में कवि के कुल इत्यादि का संक्षेप से गद्यरूप में विस्तार से वर्णन होता है । कथामें पद्यरूप में ऐसा किया जाता है ।

(२) आख्यायिका में नारी-हरण, युद्ध, नेता का वियोग-आदि का वर्णन होता है, कथा में नहीं ।

(३) आख्यायिका में नेता अपने किए कार्यों का वर्णन करता है कथा में दूसरे व्यक्ति करते हैं ।

(४) आख्यायिका को उच्छ्वासों में बाँटा जाता है । कथा में साधारणतः कोई भाग नहीं होते । यदि हों तो उन्हें लंबक कहते हैं ।

वस्तुतः इन दोनों में कोई विशेष भेद नहीं होता ।

हर्षचरित् एक आख्यायिका है और कादम्बरी, एक कथा ।

## ६—टीका टिप्पणी

संस्कृत साहित्य में बाण एक चमकता हुआ तारा है । गद्य काव्य में इसका स्थान बहुत ऊँचा है ।

अनेक बातों में इसका हर्षचरित् निराला है । यही आख्यायिका है जो आजकल मिलती है । मुख्य बातों पर यह ह्यूनश्याङ्ग के विवरण से मिलता जुलता है । आगे चलकर हम देखेंगे कि सामयिक भारत के विषय में बाण हमें क्या २ बतलाता है । पहले हम इसकी शैली को लेते हैं ।

बाण पाश्चाली तथा गोड़ी शैली में लिखित है । पहली बात जो साफ़ तौर पर नज़र आ जाती हैं, वह है इसकी श्लेष प्रयोग करने के लिए उत्सुकता । प्रायः वे पौराणिक विषय पर होती है । पढ़नेवाला थक जाता है किन्तु अर्थ फिर भी गूढ़ रखने का यत्न करते प्रतीत होता है । दूसरे, यह लम्बे समासों का प्रयोग करके भाषा को जटिल

बना देता है। वास्तव में यह इसका अपराध नहीं। उस समय इन बातों को ही गद्य का ओजस अथवा प्राण समझा जाता था। यदि यह ऐसा न करता तो पण्डित मण्डली इसे सराहती—इसमें सन्देह है। परन्तु कहीं २ इसकी लेखनी से जो सीधे-सादे और सुन्दर पद निकले हैं, वे अमर हो गए हैं। इसके पात्र नैसर्गिक अतः प्रभाव-पूर्ण भाषा बोलते हैं। किन्तु जब यह कवि उड़ने लगता है तो इसकी कल्पना-कल्पना नहीं मालूम होती वह एक जीती जागती वस्तु दीखती है।

बाण का शब्द-परिचय भी बहुत है। अनेक शब्दों का अर्थ अपनी बुद्धि से घड़ना पड़ता है।

यह ऐसे शब्द लाना चाहता है जिनकी आवाज़ में जीभ को खूब मोड़ना पड़े—इसे अनुप्रास कहते हैं। यह खूबी समझी जाती थी।

उत्प्रेक्षा, विरोध, निदर्शन, व्यतिरेक, विषम, उपमा रूपक और व्याघात। बाण ने प्रायः इन—अलङ्कारों का प्रयोग किया है—

बाण शब्द अथवा समानार्थ भाव को दुहरात रहता है जो प्रायः भला मालूम होता है, किन्तु कहीं २ पाठक उबने लगता है।

इसका प्रकृति-वर्णन सिद्ध करता है—कि यह प्राकृतिक सौंदर्य को समझने और प्यार करने वाला था।

सारांश यह है कि इसके काव्य का, चाहे किसी रस में वह लिख रहा हो, पढ़ने वाले पर प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता। इसका चित्रण सजीव और अपूर्व है। भाषा में लचक पैदा करना इसे खूब आता है, और काबू करना भी, ताकि जिधर चाहे मोड़ सके। महाराज हर्ष ने इसे “वश्यवाणी कविचक्रवर्ती” के नाम से अलंकृत किया, इसकी शैली में छिद्र भी है, पर जैसा हम कह आए हैं, वे समय के प्रभाव के कारण थे, इसकी धवल कीर्ति के चन्द्र

मण्डल पर वे केवल ध्वजे कहे जा सकते हैं। अब हम उस समय के “बाण द्वारा” इंगित रीति-रिवाज पर कुछ प्रकाश डालते हैं।

मुख्य मत दो थे—हिन्दू और बौद्ध। कभी कोई सांप्रदायिक भगड़ा न होता था। राजगृह ही में अलग २ मातानुयायी थे। हर्ष के पिता सूर्य भक्त थे। उनके बड़े भाई, राज्यवर्द्धन, पक्के बौद्ध, और हर्ष स्वयं अपने आपको परमेश्वर कहते थे। राजा किसी विशेष धर्म की प्रशंसा न करता था। सब श्रेष्ठ लोग एक सा ही मान पाते थे।

आजकल की भांति पुराणों की कथाएँ प्रायः होती थीं। इससे पुराणों की प्राचीनता सिद्ध होती है, बाण ने रामायण और महा-भारत का भी उल्लेख किया है।

मूर्ति-पूजा और देवालय होते थे। कादंबरी से पता चलता है, कि उन दिनों ब्रह्मा और कार्तिकेय की पूजा का भी रिवाज था। तथा सती प्रथा भी थी। हर्षचरित् में रानी यशोवती अपने पति की मृत्यु के पूर्व ही चिता में जलकर प्राण त्याग करती है किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि जनता इस बात को बहुत पसन्द न करती थी।

ब्राह्मण वेद शास्त्रों का अध्ययन किया करते थे। उत्सव के अवसर पर ऊँचे घरों के स्त्री पुरुषों में नृत्य का भी रिवाज था।

### ७—बाण की कृतियाँ

निम्नलिखित ग्रन्थ बाण के कहे जाते हैं:—

(१) हर्षचरित्। (२) कादंबरी। (३) चैंडीशतक। (४) पार्वतीपरिणय।

चौथा ग्रन्थ नाटक है यह कवि की असफल कृति कही जा सकती है। कोई पंडित लोग तो इसे बाण का लिखा नहीं मानते। दो तीन और ग्रन्थ भी बाण ने लिखे, परन्तु वे अब नहीं मिलते।

**रामस्वरूपः**



# श्रीहर्षचरितम्

आशुतोषिण्यासमेतम्

प्रथम उल्लासः

\* चतुर्मुख मुखाम्भोज वनहंसवधूमम ।

मानसे रमतां नित्यं सर्वशुक्ला सरस्वती ॥१॥

\* आशुतोषिणी \*

वृन्दारकैर्वन्दितपादपोठो गौर्यैकदन्ताग्निभैरूपेतः ।

सदाशुतोषः करुणापयोधिशिवप्रतन्याद्रिरिजापतिर्नः ॥

१—अथ श्रीमन्महा कविर्वाणभट्टः चिकीर्षितस्य स्व निबन्धस्य निबिन्न-  
परिसमाप्त्यर्थं वारुणवता स्मरणं रूपं मङ्गलं ग्रन्थादौ शिष्यशिष्यायै निव-  
ध्नाति । चतुर्मुखेति—चतुर्मुखस्य, ब्रह्मणः, चत्वारि, आननान्येव, ( अम्भो-  
जानां, कमलानां ), वनानि, तत्र या हंसवधूः, मरालस्त्री, ( प्रजापतेः  
मुखकमल वनविहारस्तत्रहंसवधूस्वरूपेत्यर्थः ) सर्वशुक्ला, सर्वतःशरीर

\* पद्यमिदं हलायुध वृत्तिकारेण महाकविदण्डिना स्वसन्दर्भकाव्या-  
दर्शे श्रुलेखि, केषुचिद्-हर्षचरित पुस्तकेषु लभ्यते, न सर्वत्र ।

१. ओंकारश्चाथ शब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा ।

कण्ठंभित्वा विनिर्यातौ तस्मान्माङ्गलिकावुभौ ॥

नमस्तुंगशिरश्चुम्बि चन्द्रचामरचारवे ।

त्रैलोक्यनगरारम्भ मूलस्तम्भाय शम्भवे ॥२॥

वसनादिना, ( पद्मे ) च्युतसंस्कारादिदाषरहिता, शुक्ला, श्वेतवर्णा, ( पद्मे ) परिशुद्धा, सरस्वती, वाग्देवी, ( पद्मे ) संस्कृतभारती च, मम मानसे, चित्ते, ( पद्मे ) मानसाख्ये सरसि यथा हंसो मानसविहायस्वर्गसुखमप्यनुभवितुं नेच्छति, तस्यैव सरसःशांभामतितरांप्रकाशयति, तथैव विदुषां मानसकलहंसो भगवती भारती मन्मानसं प्रविश्यसदर्थजातं प्रकाशयति, इति श्लेषतात्पर्यार्थः ) नित्यं, सर्वदा, रमतां, विहरतु । कमलकानने मानसाख्ये सरसि हंसीव या प्रजापतेः मुखकमलवने नित्यंश्रुति रूपेण विहरति, साऽतिविशुद्धस्वरूपा सरस्वती मम मानसे<sup>१</sup> नित्यं निवसतु, इति भावार्थः । हंस वधूरूपेण भगवत्या वर्णनत्वाद्वरूपकमलंकारः, अनुष्टुप्वृत्तम् ॥१॥

अथेदानीं जन्मानन्तरामेहिकंवा विघ्न निचयमाशङ्क्य स्वादिष्टदेवं शिवं स्तोति ।

नमस्तुङ्गेति—तुङ्गं, समुन्नतं, शिरः, उत्तमाङ्गं, तं चुम्बति, स्पृशति, ( तत्र संलग्न इत्यर्थः ) यश्वद्रः, शशीः, स एव, चामरं, व्यजनं, ( चमर्थाः गोः पुच्छसंभूतः व्यजनविशेषः ) तेन, चारुः, मनोहरः, त्रैलोक्यं, त्रिभुवनं, ( भूःभुवःस्वः ) एव नगरं, पुरं, तस्य य आरम्भः, निर्माणोपक्रमः, तस्य, मूलस्तम्भः शुभ्रशिलामय स्थूणाविशेषः, तस्मै, शम्भवे, शंकराय, नमः, प्रणतिरस्तु ।

यथा महानगरी निर्माणे पुरतो गोपुरं विरचय्य महतींस्थूणां च निवेश्य श्वेतपताकां निवध्नाति जनः, तथैव त्रैलोक्य नगरारम्भे पताकारूपेणशुभ्रं

१. अस्तित्यद्यपि सर्वत्र नीरं नीरजं मण्डितम् ।

रमते न मरालस्य मानसं मानसं विना ॥

हरकण्ठ ग्रहानन्द मीलिताक्षीं नमाम्युमाम् ।

कालकूट विष स्पर्श जात मूर्छा गमामिव ॥३॥

चंद्रमसं नियुज्य स्थणारूपेण स्वयं भगवान् शंकरः अतितरां शोभते तस्मै  
शम्भवे नमः इति तात्पर्यार्थः । <sup>१</sup>परम्परित रूपकमत्रालंकारः । अनुष्टुप् ॥२॥

अथ श्राभूतभावनसंस्तुत्य तदद्वाङ्मनीं श्रीपार्वतीं स्तौति—हर  
कण्ठग्रहेति—हरस्य, शंकरस्य, कण्ठग्रहे, कण्ठाश्लेषे, यः—आनन्दः, सुख  
विशेषः, तेन मीलिते, संकुचिते, अक्षिणी, नेत्रे, यस्यास्ताम् (आश्लेषसुख  
शिथिलगात्रीमित्यर्थः) अत एव <sup>२</sup>काल कूटस्य, हलाहलस्य, (अत्र काल  
कूट शब्देनैव विषत्व सिद्धेः पुनर्विषशब्दप्रयोगः पौनरूक्त्यमावहति परं गो  
वलीवर्द्धन्यायेन कविसम्मतत्वाच्च नाशङ्कनीयोऽयं दोषः) स्पर्शेन, सम्पर्केण,  
जातः, सम्भूतः, मूर्छागमः, मोहावेशः, यस्याः पार्वत्याः (तथाभूतामिव)  
उमां, पार्वतीं नमामि, वन्दे ।

यथैव विष संसर्गे हि श्वासप्रश्वास योगेन पार्श्ववर्तिनः मूर्च्छागमः सम्भाव्यते.  
तथैव विषसंयुते महादेवकण्ठे बाहोस्संसर्गे—आनन्देन निमीलिताक्ष्याः पार्वत्याः  
विशेषहतामिव नेत्र निमीलनमतिशय प्रणय दर्शनाय पतिकण्ठ ग्रहानन्द कृते  
विष सम्पर्क जनित मूर्च्छागम इत्युत्प्रेक्षितम् । उत्प्रेक्षालंकारः—अनुष्टुप् <sup>३</sup>॥३॥

अथ कविकुल शिरोमणि भगवंतं श्रीकृष्णद्वैपायनं प्रथमं स्तौति—  
नमः, इति—सर्वविदे, सर्ववेदादिकं वेत्तीति सर्वविन्, (सर्वज्ञायेत्यर्थः) ।

१. यत्र कस्य चिदारोपः परारोपण कारणम् ।

तत्परंपरिताशिलशिलिष्ट शब्द निबंधनम् ॥ इति साहित्यदर्पणे ॥

२. काकोल काल कूटहलाः हलाः विषभेदा अमीनव—इति कोषः ।

३. श्लोकेषु गुरुद्वयं सर्वत्र लघुपंचमम् ।

द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घं मन्ययोः ॥ भूतबोधे ॥



नमः सर्वविदे तस्मै व्यासाय कविवेधसे ।

चक्रेपुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम् ॥४॥

<sup>१</sup>कविवेधसे, कवीनां, काव्यकर्तृणां, वेधाः, विधाता, ( कविभ्यः-अभिनव काव्य रचनामार्गं प्रदर्शनेन शिक्षयितारमित्यर्थः ) ( व्यस्यति, विभजति, वेदा-दानिति व्यासः ) तस्मै व्यासाय, नमः, प्रणतिः, योऽसौ कवि वेधाः व्यासः तदाख्य महाकाव्यं, भारतवर्षमिव, भरतराजः, स्थानमिव ( अत्र-भारतं इत्येकस्यैव पदस्य श्लेषनिबन्धेनोभयार्थे वर्षमिव इत्यनेनान्वयं ज्ञेयम् । सर-स्वत्या वागधिश्राव्यादेव्याः, ( पत्ने ) तदाख्यया नद्या, पुण्यंचक्रे, पवित्रं कृतवान् ।

प्रथमं वेदशास्त्रमावभक्तमासीत् तं पराशरमुनोव्यासः ( द्वैपायनः ) ऋग्यजु-नामाथर्वरूपं मन्त्रब्राह्मणात्मकभेदद्वयं विभज्य पञ्चमधेदभूतं महाभारतं पुराणा-दीनां च विभागं चक्रे तदास्य नाम व्यासेति प्रसिद्धिमगात् । भावः—प्रजापतिः स्वकर्म कौशलं सर्वतुमनोहरं रत्ननिचयमेकत्रप्रदर्शयितुं भारतवर्ष-अखिल दुरितनाशाय यथा पवित्र प्रवाहिण्या सरस्वत्या नद्या पवित्रोचकार, तथैव व्यासोऽपि विद्याप्रकाश रूपंकौशलं योगवलेन अन्तर्निगूढभावं लोकाति शायिनं महाभारतं वाग्देव्याः कला विलासेन पवित्रतामनयदिति—अत्र महाभा-रतस्य भारतवर्षेण सह अवैधर्म्यत्वादुपमालंकारः तादात्म्य संबंधेन च व्यज्यते व्यासोऽयं विधाता—अतः-उपमालंकारेण रूपकालंकारध्वनिरिति<sup>२</sup> ज्ञेयम् ॥४॥

कवीनां स्वभावं-पर्यालोचयन्नाहृश्लोकषट्केन । प्राय-इति—इह लोके रागः, अमदभिनिवेशः, तेन, अधिष्ठिता, आक्रान्ता, दृष्टिर्ज्ञानं, येषां ते, तथाभूताः, अतःएव कुक्कवयः, कुत्सिताः, घृणास्पदाः, कवयः, ( असत्संदर्भ-निर्मातार इति यावत् ) प्रायः, बाहुल्येन, लोके, जगति, दृश्यन्ते इति शेषः ।

१. अपारे काव्य संसारे कविरेवप्रजापतिः ।

यथास्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्तते ॥

२. रूपकं रूपिताद्रोपाद्विषये निरपन्हवे । साहित्य दर्पणे ॥

प्रायः कुक्कवयो लोके रागाधिष्ठित दृष्टयः ।

कोकिला इव जायन्ते वाचालाः कामचारिणः ॥५॥

( अज्ञानान्धतयात्र कुक्कवीनां यानि हि भूयांसि काव्यानि दृश्यन्ते लोके तानि आलंकारिकमार्गं रहितानि केवलमसारतरविषयकानि काव्याभ्येनृणामनिष्ट कारकाणि सर्वथा त्याज्यानि—इति भावः । तथैव ते तु केवलं कोकिलाइव, परमृत इव, वाचालाः, श्रुतिमधुरयावाचा, मूर्खाणां चित्ताकर्षकाः ( असंबद्ध प्रलापिन इत्यावत् ) कामचारिणः, शास्त्राननुशीलाः, यथेच्छया विचरन्तः, ( अनभिज्ञाहिते-इत्यर्थः ) कुक्कवयः, जायन्ते, उत्पद्यन्ते, कुक्कविनिन्दात्र—

यथैव कोकिलाः स्व कुहुरवेण प्राकृतानां जनानां मनांसि वशीकुर्वन्ति, तथैव पूर्वं कवीनामार्गं मननुसरन्तः स्वेच्छया काव्यकान्तारं पर्यटनशीलाः, ये केवलं बाह्याधुर्येण हि जनानां चेतांसि प्राणयितुं यतन्ते, परमभ्येनृणां श्रेष्ठ काव्येषु प्रवृत्तिं असत् काव्येषु निवृत्तिं च कर्तुं मत्तमास्तेषां काव्यालापवर्जनीय एवेतिभावः ।

कोकिल पक्षे-त्वेवं—रागः, लौहित्यं, तेज, अधिष्ठिता, व्याप्ता, दृष्टिः, चक्षुः, येषां तथा विधाः, वाचालाः, प्रलपनशीलाः, वाचा, वाण्या, ( स्वकीय कुहुरवेणेत्यर्थः ) आलाः, आसमन्तात्, लान्ति, आवर्जयन्ति, वशी कुर्वन्ति ( मानसमितिभावः ) येते तादृशाः कामचारिणः, कामोत्तेजनकराः, जायन्ते । ( काममुद्दीपयन्तीत्यर्थः ) ।

“वाचाला इत्यत्र अवाचालाः—इति पठान्तरे” केचित् कवयः कोकिला इव अवाचालाः मधुरभाषिणः कामचारिणः, स्वप्रतिभानुसारमभिनव संदर्भ कुर्वाणाः, सुकवि प्रशंसाव्रजेया । अत्रकविषु कोकिलानामवैधर्म्यत्वात् श्लिष्ट विशेषण प्रतिपादितः । श्लेषानुप्राणितोऽपमाऽलंकारः ॥५॥

सन्ति श्वान इवासंख्या जातिभाजो गृहे गृहे ।

उत्पादका न वहवः कवयः शरभा इव ॥६॥

अन्यवर्ण परावृत्त्या बन्धचिह्ननिगूहनैः ।

अनाख्यातः सतां मध्ये, कविश्चौरो विभाव्यते ॥७॥

सन्तीति—गृहेगृहे, प्रतिगृहम्, असंख्याः, संख्यातीताः, (गणयितुं मशक्या इति यावत्) जातिः जन्म, तन्मात्रं भजन्ते, इत्येवंभूताः, सामान्यसामर्थ्याः । ( नहि अभिनव रचनया किमपि जगतः-उपकर्तुं समर्था इति भावः) श्वानइव, कुक्कुरा इव, सन्ति, विद्यन्ते, ते हि यथा भुक्तोद्गीर्ण भोजनप्रियाः, अमेध्य भोजनेप्सया यथाकामं विचरन्तः, अगणनीयाः, कुक्कवयः, असत् काव्यरचनया कालंनयन्तः, एवं भूताः, निदास्पदाः, (सततं-निन्दनीयाः-एवेतिभावः) (उक्तकवयः निन्द्याः परं के अनिन्द्या इत्यपेक्षायामाह । उत्पादकाः, इति—किन्तु वहवः, भूयांसः, कवयः, कवित्वख्यातिमिच्छया काव्यकला प्रणयनोत्सुकाः, शरभाइव, अष्टापदमृगविशेषा इव, न उत्पादकाः, नाभिनवकाव्यरचना निपुणा इत्यर्थः । सन्तीति पूर्वेषासंबन्धः । अत्यल्पा एव विद्यन्ते इति तात्पर्यम् ।

यथैव 'शरभाणां कुत्रचिदेवावस्थानं नहि सर्वत्रलभ्यन्ते तथैव सत्काव्यनिर्मातारः सुकवयः अल्पसंख्याका एव विद्यन्ते संसारे इतिभावः । अत्र कुक्कविषु शुनां सुकविषु च शरभाणां अवैधर्म्यसाम्यप्रतिपादनात् उपमाद्वयं—अन्योऽन्यनैरपेक्ष्य तथा स्थितेश्वानयोः संसृष्टिः ॥६॥

अन्येति—अन्यस्य अपरस्य, कवेः, काव्यकर्तुः, वर्णानां, अक्षराणां, (रचितानां संदर्भाणामितिभावः) परावृत्तिः, विपर्यासेन, परिवर्त-

१. गंधर्वः शरभो रामः स्मरौ गवयो शशः—इत्यमरः ।

२. जाति सामान्य जन्मनोः..... ”

श्लेषप्रायमुदीच्येषु, प्रतीच्येष्वर्थमात्रकम् ।

उत्प्रेक्षा दाक्षिणात्येषु, गौडेष्वक्षरडम्बरः ॥८॥

नेनेत्यर्थः । ग्रथनं (पञ्चे) अन्यवर्णाः कृष्ण गौरादयः तेषां परावृत्तिः, वर्णा  
न्तरेणगृहनं निरोधानं तथा वंधानां गौडी पाञ्चाली वैदर्भ्यादीनां, चिह्नानां,  
श्राप्रभृति लिङ्गादीनां च, गूहनैः, गोपनैः (पञ्चे) बन्धचिह्नस्य शृङ्खलादेः,  
निगूहनैः । अनाख्यातः, अप्रकटितः, अथ च नना अनाः, अपुरुषः, ( का  
पुरुषः इतिभावः ) एवं ख्यातः, प्रसिद्धः, कविः, काव्यनिर्माता सतां, सहृदयानां,  
सज्जनानां मध्ये (सज्जन संसदीत्यर्थः) चौरः, तस्करः, विभाव्यते, ज्ञायते,  
योहि अपर कवीनां संदर्भादाकृष्यरचयति रचनां तस्कररूपेणासौहि सहृदय  
समाजे चौरा गण्यते ॥७॥

इदानीं देशभेदेन रचना शैलीं दर्शयति—श्लेषेति—उदीच्येषु उत्तर  
पथ वाग्मिषु, प्रदेशेषु, तत्रत्यानां कवीनां रचनायामितिभावः । श्लेषप्रायं,  
बद्धध्रुवाचकत्वं, श्लेष प्रयोगः, आधिक्येन दृश्यते, उदीच्याः हि कवयः श्लेषा-  
लंकाराश्रयेण काव्यं रचयन्तीतिभावः । प्रतीच्येषु, पाश्चात्येषु, पश्चिम देशो-  
ष्वित्यर्थः । अर्थमात्रकं, अर्थस्यैव प्राधान्यं, नच शब्दालंकारादीनामित्यर्थः ।  
तथाच प्रतीच्यादिशि अर्थस्यैव विशेषादरः नोदीच्यादीनामिव तेषां शब्दा-  
लंकारादिषु मात्रशब्देनार्थं व्यज्यते । दाक्षिणात्येषु तद्देशोद्भवेषु-उत्प्रेक्षायाः  
संशय मूलकप्रकृतस्यालंकारस्यैवविशेषादरः गौडेषु वङ्ग देशादारभ्य उत्कल  
देश पर्यन्तेषु, जनपदेषु, प्राच्येषु अक्षराणां, वर्णानां, डंबरः, ओजगुणवतांस-  
मासभूयिष्ठानांपदानामेव रचना सौकर्यमित्यर्थः ।

सर्वत्रैव देशेषु कविभिरेकैकोहि गुणः समाहितः परंनहि-सहृदयानां-  
संतोषकरः, अतःगुणनिचय मेव हि श्रेयानितिभावः ॥८॥

साम्प्रतं सहृदय प्रीति जनकं रचना प्रकारं वर्णयति—नव इति नवः, नूतनः,

नवोऽर्थो जाति रग्राम्या श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः ।

विकटाक्षरबंधश्च कृत्स्नमेकत्र दुष्करम् ॥९॥

किं कवेस्तस्य काव्येन सर्ववृत्तान्तगामिनी ।

कथेव भारती यस्य न व्याप्नोति दिगन्तरम् ॥१०॥

अन्यैः, कविभिरनिबद्धः, अर्थः, अभिधेयः, ( अविधा प्रतिपाद्यवान्यार्थः-  
इतियावत् ) अग्राम्या, नीच जनोच्चारितवाग्जालः ग्राम्यः सचदोषविशेषः  
तद्रहिता, जातिः, रचनाशैली, यत्रश्लेषः शब्दार्थोभयवृत्तिरलंकारः, अक्लिष्टः,  
सहृदयवेद्यः ( अतुर्वोध इति यावत् ) रसः शृंगारादि स्फुटः, सुव्यक्तः,  
विकटः, ( विकटत्वं पदानां न्यासविशेषः ) तद्गुणा युक्तः, बन्धः, प्रबन्धः,  
ओज गुण प्रकाशकं राडम्बर विशेषः गोडी रीत्यनुसारेणेतिभावः । ग्राम्यादि  
दोषरहितं सुबोध्य श्लेषादिकं स्फुटं रसं गौडीरीति बंधनं रचनयागुम्फनमित्यर्थः ।  
एतत्सर्वं कृत्वं कठिन्येनहि एकत्र, एकस्मिन्कवितरीति शेषः । दुष्करं  
( दुर्लभमिति यावत् ) एतेहि गुणाः एकस्मिन्सन्दर्भे न दृश्यन्ते, एतच्च सर्वं गुण  
सौष्ठवत्वं सहृदय प्रीति करमित्यर्थः । अथ च नूतन-अर्थः ग्राम्यत्वादि दोष  
रहितः, श्लेषादिऽलंकारैः शोभितः, अकठिनः, स्फुटः, अक्षर विन्यासादि-  
भिरलंकृतोहि संदर्भः सहृदयानांप्रीतिमुद्गावयति ॥६॥

ये हि कवयः पूर्वोक्त गुणयुक्तां रचनां कर्तुमसमर्थास्तेषां काव्यकरणां  
निरर्थकत्वमित्याशयेनाह । किमिति—यस्य कवेः, कवित्वख्यातिप्राप्तुमिच्छो,  
कथा, संदर्भविशेषः, तस्यवाक्, सर्ववृत्तान्तगामिनी, सर्वविषयप्रकाशिनी,  
प्रागुक्त नवार्थादिगुणोद्भासिनोत्यर्थः । अथवा सर्वाणि यानि वृत्तानि मात्रिक  
वार्षिकादीनि छंदांसि तेषामध्ययन परायणा सहृदयानन्दकारीणीत्यर्थः ।  
( पक्षे ) भारतीव, महाभारतमिव ( भगवतो व्यासस्यमहाकाव्यं सर्वैः कवि-  
भिराद्रीयते ) दिगन्तरं, दिग्भागपर्यंतं ( सर्वत्रेति भावः, ) नप्राप्नोति, 'कथा

उच्छ्वासान्तेऽप्यखिन्नास्ते येषां वक्त्रे सरस्वती ।

कथमाख्यायिकाकारा न ते वंद्याः कवीश्वराः? ॥११॥

कवीनामगलद्वर्षो नूनं वासवदत्तया ।

शक्त्येव पाण्डुपुत्राणां गतया कर्णगोचरम् ॥१२॥

नगच्छति, स्वकीयया प्रतिभया भट्टिति जनानां हृदयानि न व्याप्नोति, तस्य-  
कवेः, काव्येन, संदर्भेण किं-न किमपि प्रयोजनं जनानामित्यर्थः, ( वैफल्य मेव  
तस्य जगतीतिभावः ) पूर्वं निर्दिष्टरचनाशैलीमनुसृत्य महाभारत कथामिव यस्य  
संदर्भः दिगन्तरं न प्राप्तस्तस्य काव्येन किं प्रयोजनमिति भावः ॥१०॥

साम्प्रतं नमस्करोति कवीन् । उच्छ्वासेति—येषां कवीनां वक्त्रे, मुखे,  
सरस्वती वाग्निष्ठातृदेवी, विलसतीतिशेषः, उच्छ्वासस्येव, श्वासप्रश्वास मारुत-  
त्यग्नेनेव, यद्वा वाग्विश्रान्तिस्थानस्य प्रकरणसमाप्तेरिति भावः । अन्ते, श्रव-  
सान्तेऽपि, अखिन्नाः, कवित्व शक्तेःप्रभावाद्रचनायामनिवृत्ताः, आख्यायिका-  
काराः, आख्यायिका इतिवृत्तं तं कुर्वन्ति तथोक्ताः, संदर्भरचयितारः, ते प्रसिद्धाः,  
लब्धख्यातिकाः, कवीश्वराः, कविश्रेष्ठाः, कथं न वंद्याः, अपितु वंदनार्हाः,  
एवेति भावः, आख्यायिकाकारान् सर्वानेव कवीन् वंदे इतितात्पर्यार्थः । येषां  
कवीनां वदने विहरति सर्वदैव सरस्वती ते आख्यायिकाकाराः कविवराः पूज-  
नीया इति भावः ॥११॥

अधुना तद्वचित संदर्भ प्रशंसया महाकविं सुबधुंस्तौति । कवीनामिति—  
कर्णस्य, सूतपुत्रस्य, दुर्योधनसुहृदः, स्वनामविख्यातस्य वीरस्येत्यावत् । एव  
गोचरः स्थानं ( पक्षे ) कर्णः, कवीनां स्वीयं २ गोः, इन्द्रियं, श्रवणं, तस्य  
चरं, विषयं, कवीनांश्रवणपथवर्तिनमित्यर्थः ( कर्णसमीपेएकपुरुषाघातिनी

१. नारदोऽश्रावयद्देवानसितो देवलः पितृन् । गंधर्वयक्षरक्षांसि श्राव-  
यामास वैशुकः

पदबन्धोज्ज्वलो हारी कृतवर्णक्रमस्थितिः ।

भट्टारहरिचन्द्रस्य गद्यबन्धो नृपायते ॥१३॥

शक्तिरस्तीति पाण्डुपुत्राणां श्रवणकालमितियावत् ) गतया, प्राप्तया, ( पक्षे )  
श्रुतिविषयानीता, वासवः, इन्द्रः, तेन दत्ता तथा ( पक्षे ) वासवानुग्रहेण प्राप्ता  
स्त्री वासवदत्ता, तद्विवृतन्दः, तथा शक्त्या, तदाख्य अश्वविशेषेत्यर्थः ।  
पाण्डुपुत्राणां, युधिष्ठिरादीनामिव, वासवदत्तया, तदाख्य गद्यकाव्येन, कवीनां  
दर्पः, अहंकारः, नृनं निश्चयेन, अगलत ननाश । इन्द्रप्रदत्ताणकपुरुषा-  
घानिनं शक्तिनिशम्य पाण्डवाः यथा विजयाशा रदिताः हतदर्माश्चासन्, तथैव  
वासवदत्ताया संदर्भ सौख्यत्वमवलोक्य सर्वे कवयः अतः परमधिकमुत्कर्षजनक-  
काव्यं कर्तुं मत्तमाः अहंकारशून्याः—अभवन्नित्यर्थः । उपमाऽलंकारः ॥१२॥

महाकवेः हरिचन्द्रस्य गद्यकाव्यस्य प्राधान्यं दर्शयति—पदेति—  
पदानां, सुतिङ्गन्तानां, बन्धः, रचनाचातुर्यः ( पक्षे ) स्वस्थानपरायणश्च, तेन  
उज्ज्वलः, दीप्यमानः, हारी, मनाहरः, ( पक्षे ) हारालंकारशोभाच । अथवा  
( “अहारी” इति पाठे ) न हरति कस्यापि धनादिकमित्याहारी । कृता,  
स्थापिता, वर्णानां, अक्षराणां ( पक्षे ) ब्राह्मणादीनां च क्रमेण मर्यादानुमारेण  
च स्थितिः येन यस्मिन्वा, एवंभूतः भट्टारः, प्रभुः, हरिचन्द्रः तन्नामकश्चि-  
त्कावेः, तस्यगद्यबन्धः, गद्यग्रन्थः, नृपः, राजा, स इवाचरतांति नृपायते,  
नृपवत् शोभते इत्यर्थः । हरिचन्द्रकवेः काव्यं सर्वातिशायिनमिति व्यज्यते ।  
यस्मिन्गद्यकाव्ये पदानां वर्णानां च स्थितिक्रमः, अतीव शोभनः—असौ हरिच-  
न्द्रस्य गद्यग्रन्थः नृप इव विराजते—इति तात्पर्यार्थः ॥१३॥

अपर कविं सातवाहनं, स्तौति । अविनाशिनमिति—सातवाहनः,  
तदाख्यः कवि विशुद्धाः, निर्दोषा, जातिः, अलंकारादियेषु, तथाभूतैः, सुभा-  
षितैः, शोभना-भाः-कान्तिः, येषां तैः, शोभनैर्वाक्यैः, रत्नैरिव, अविनाशिनं

अविनाशिनमग्राम्यमकरोत् सातवाहनः ।

विशुद्धजातिभिः कोषं रत्नैरिव सुभाषितैः ॥१४॥

कीर्तिः प्रवरसेनस्य प्रयाता कुमुदोज्वला ।

सागरस्य परं पारं कपिसेनेव सेतुना ॥१५॥

अनश्वरं, अतिरमणीयं, स्थायिनं चेत्पर्यः, अग्राम्यं, ग्राम्यत्वादोपरहितं, कोषं, काव्यनिधिं अकरोत् ।

यथा च शोभनैः रत्नैः स्वकीयनिधिः पूर्यते जनेन तथैव सातवाहनेन कविना काव्यनिधिः विशुद्धैश्शब्दरत्नैः-आपुरी । उपमालंकारः । “साम्यं वाच्य सर्वधर्म्य वाक्यैक्य उपमाद्वयः” ॥१४॥

प्रवरसेननामानं कविं प्रशंसयति । कीर्तिरिति—प्रवरसेनस्य, तदाख्य-कवेः ( पत्ने ) प्रपे, प्लवने, ( कूर्दने-इत्यर्थः ) रसः, रागो, येषां ते प्रवरसाः, वानराः, तेषां, इनः, स्वामां, “इनः पर्यायं नृपार्कयोः” सुग्रीवः, तस्य वानर राजस्य, कवेः, कीर्तिः, काव्यरचना समुद्भवं यशः, “यशः कीर्तिः समता च— इत्यमरः” कुमुद वत, उज्ज्वला, प्रदीप्ता अथवा कुः, पृथिवी, तस्या-मुद आनन्दः, तथा उज्ज्वला, यद्वा कुमुदेन, तदाख्येन वानरमेनापतिना, उज्ज्वला, प्रशस्ता, सेतुना, तदाख्य-काव्यप्रंधेन, ( पत्ने ) तन्नाम मार्गेण नलनील निर्मितेन, कपिसेनेव, वानरवाहिनीव, सागरस्य समुद्रस्य परंपारं प्रयाता, गता, यथैव वानर मेना सेतुबंधेन सागरं समुत्तीर्य सागरपारस्थितां लङ्कां प्राप्ता, तथैव प्रवरमेनस्य यशः तदीय ग्रन्थस्य प्रचारेण सागरमभिसमुत्तीर्य देशान्तरं गतमिति निष्कर्षार्थः ॥१५॥

दृश्यकाव्यप्रणेतारं भासकविं प्रशंसति । सूत्रेति—भासः, तदाख्यकविः, सूत्रं, वृत्तं धारयतीति सूत्रधारः, नाटकमुख्यपुरुषः, “नाट्योपकरणादीनि सूत्र-मित्यभिधीयते, सूत्रं धारयतित्यर्थे सूत्रधारो निगद्यते ।”



सूत्रधारकृतारम्भैर्नाटकैर्बहुभूमिकैः ।

सपताकैर्यशो लेभे भासो देवकुलैरिव ॥१६॥

निर्गतासु न वा कस्य, कालिदासस्य सूक्तिषु ।

प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते ? ॥१७॥

( पक्षे ) स्थपतिश्च, तेन कृतः, आरम्भोयेषांनैः बह्विभूमिका अनुकरणा-  
वस्था, वेशपरिवर्तनादिकं ( पक्षे ) कक्ष्या च । येषु तथोक्तैः, सपताकैः पताका-  
स्थानविशेषैः, “यत्रार्थेचिन्तितेऽन्यस्मिस्तल्लिङ्गोऽन्यः प्रयुज्यते, आगन्तुकेन भावेन  
पताकास्थानकं तु तत्” । देवकुलैरिव, देवमन्दिरैरिव, नाटकैः रूपकभेदे “नाटकं  
ख्यातवृत्तस्यात् पञ्चसंधिसमन्वितम्” । यशो लेभे, कीर्तिमवाप । नाट्य-  
रचनाकुशलः भासो नाम कविः स्वकाय नाटकग्रन्थैः देवकुलैरिव यशो लेभे ।

यथा मन्दिरनिर्माता देवमन्दिरं निर्माप्य पताकां च स्थाप्य यशभाग्भवति  
तथैव भासोऽपियशमवाप ॥१६॥

महाकविं कालिदासं स्तौति—निर्गताष्विति—निर्गतासु उच्चरितासु,  
नवार्थप्रतिपादिकासुच, मधुराः, मनोहारिण्यः, सान्द्राः, धनाः, निविडाः  
( सुरसा इत्यावान् ) ( पक्षे ) मधु विद्यते यासु ताः मधुराः, मकरन्दवाहिन्यः,  
सान्द्राः, धनाः, पूर्णावस्थां प्राप्ता इत्यर्थः । तथाविधासु मञ्जरीष्विव, कुसुम-  
वत्तरीष्विव, कालिदासस्य कवेः सूक्तिषु, मनोहरेषुवाक्येषु, कस्य जनस्य वा  
प्रीतिः प्रेम न जायते, नात्पद्यते, अपितु सर्वस्यैव सहृदयस्य जनस्यप्रीतिर्भवत्ये-  
वेत्यर्थः, नहि कश्चिदपि जनः यस्य कालिदासकाव्येषु नास्ति प्रीतिरितिभावः—  
उपमासलंकारः ॥१७॥

समुद्दीपितेति—समुद्दीपितः, उत्तेजितः, कंदर्पः, कामो यया बहूनां  
कामिजनानां कथाश्रवणेन तदुत्पत्तेरित्यर्थः, उपवनगमनविहारैः शृंगाररसः  
समुद्भवतीति । तथोक्ता ( पक्षे ) समुद्दीपितः नेत्रानलेनः दग्धः, कंदर्पः, कामः

समुदीपितकंदर्पा कृतगौरीप्रसाधना ।

हरलीलेव नो कस्य विस्मयाय वृहत्कथा ? ॥१८॥

आढ्यराजकृतोत्साहैर्हृदयस्थैः स्मृतैरपि ।

जिह्वान्तः कृष्यमाणेव न कवित्वे प्रवर्तते ॥१९॥

यस्यां तथोक्ता, अथवा कृतं, विहितं, गौर्याः ईश्वर्याः, प्रसाधनं, पूजनं, नायेकन, नरवाहनदत्तेनेतिभावः । यस्यां तथाभूता (यद्वा) कृतं गौर्याः पार्वत्याः, प्रसाधनं, अराधनं, हरस्येति यावत्-यद्वा, गौर्याः, (कर्मभूतायाः,) प्रसाधनं अलंकरणं हरेण (कर्त्रेति भावः) यस्यां तथा भूता, वृहत्कथा, तदाख्य इतिहास काव्यं, हरलीलेव शम्भोः कान्तुकमिव, कस्य जनस्य आश्चर्याय विस्मयाय न, अपितु सर्वस्यैव सहृदय जनस्य विस्मयायेतिभावः । उपमाऽलंकारः ॥१८॥

आढ्यराजनामानं कविं प्रस्तौति । आढ्यराजेति आढ्यराजः, तन्नाम कविः तेन कृताः, रचिताः, ये उत्साहाः, ग्रंथविशेषाः, तैः, हृदयस्थैः, चित्त-निहितैः, आलोचितैरितिभावः । अपि किं वा स्मृतैः, स्मरणतानीतैः, विद्वद्भिः, जिह्वा, रसना (मम बाणभट्टस्येति भावः) अन्तः कृष्यमाणेव, आकृष्टा इव (वृथा तव प्रवर्तनमेतेषामुत्साहानां पुरस्तादित्याशयेनेत्यर्थः,) कवित्वे, कवित्व-शक्तिं प्रकटयितुं न प्रवर्तते नोत्सहते । सुमनोरमा आढ्यराजकृताः-उत्साहाः तेषां पुरस्ताद्बहि कस्यापि कवित्वशक्तिः प्रशरति एतदेव हि उत्साहाना-मुत्साहत्वमितिभावः । उत्प्रेक्षाऽलंकारः । भवेत्संभावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मनः “दर्पणे” ॥१९॥

एवंबहूनां कवीनां सन्ति काव्यानि परं नृपतेर्भक्त्या किमपि जिह्वा चापल्यकरोम्येवेत्याशयेनाह । तथापीति—तथापि जिह्वाया अन्तःकृष्य-माणोऽपि नृपतेः, राज्ञः, श्रीहर्षस्य समवंशोद्भवस्येति यावत् । भक्त्या, अनुरा-गेण, निर्वहणे, परिसमाप्तौ, आकुलः, संदर्भसमाप्तिर्भवेन्न वा-इत्येवंशंक्य-

तथाऽपि नृपतेर्भक्त्या भीतो निर्वहणाकुलः ।

करोम्याख्यायिकाम्भोधौ जिह्वाप्लवनचापलम् ॥२०॥

मुखप्रबोधललिता सुवर्णघटनोज्ज्वलैः ।

शब्देराख्यायिकाऽऽभाति शय्येव प्रतिपादकैः ॥२१॥

मानः । अत एव भोतः, व्रतः, सहृदयसंमति-अप्रतिभशंकया इत्यर्थः आख्या-  
यिका, इतिवृत्तं । “आख्यायिका कथावत् स्यात् कथ्यशानुकीर्तनम् । अस्या-  
मन्यकवीनां च वृत्तं पद्यं क्वचित् क्वचित् ॥

तदेव यमभोधिः, समुद्रः, तस्मिन् जिह्वया, रसनया, प्लवनं, संस्तरणं,  
तदेवचापलं चाश्रित्यं, कोमि । उडुपेन समुद्रतरणोत्पादवता जनेनेव किञ्चित-  
मात्रेण जिह्वासंस्तरणेन आख्यायिकाम्भोधिं संतरितुमिच्छामीति भावः ।  
स्वकमलंकारः ॥२०॥

दर्शकानमवतृणां च आख्यायिकायां प्रवृत्तिं जनयितुं सौकर्यदर्शयति ।  
मुखेति—मुखस्य, अलोचनाजनितस्य, प्रबोधः ज्ञानं, यद्वा मुखेन बोधः, “काव्यं  
यशसेऽर्थं कृते व्यवहार विदे शिवेतरक्तये । सवपरनिर्वतये, कान्ता  
सम्मिलतयोपदेशयुजे” भम्मटः । तेन ललिता, सुभगा, मनोहारिणीत्यर्थः  
( पत्ने ) सुखात्, मुखस्वापात्, प्रबोधः, जागरणं, तत्रललिता, मनोरमा,  
आख्यायिका, इतिदासकाव्यम्, सुवर्णानां, सुप्रयुक्तानां, “एकःशब्दः सुप्रयुक्तः  
सम्यग्ज्ञातःस्वर्गलोके कामधुग्भवति” ।

वर्णानां, अक्षराणां, ( पत्ने ) सुवर्णानां, हेम्नां, घटनया, योजनया,  
( पत्ने ) कारुकर्मनैपुण्येन, उज्ज्वलैः, प्रदीप्तैः, प्रतिपादकैः, विवक्षितार्थबोध-  
कैः शब्दैः, ( पत्ने ) प्रतिपादकैः, सोपान विशेषैः, चरणन्यासपीठैर्वा, शय्येव,  
पर्यकट्ठ, आभाति, विराजते । प्लेषानुप्राणितोऽपमाऽलंकारः ॥२१॥

साम्प्रतं ग्रन्थनायकं श्रीहर्षमाशिषा संवर्धयति । जयतीति—ज्वलत्,

जयति ज्वलत्प्रतापज्वलनप्राकारकृतजगद्रक्षः ।

सकलप्रणयिमनोरथसिद्धिशीर्षवतो हर्षः ॥२२॥

एवमनुश्रूयते—१ पुरा किल भगवान्स्वलोकमधितिष्ठत्परमेष्ठी  
विकासिनिपद्मविष्टरे समुपविष्टः सुनासीरप्रमुखैर्गोर्वाणैः परिवृतो ब्रह्मोद्याः  
कथाः कुर्वन्नन्याश्च निरवद्या विद्यागोष्ठीर्भावयन्कदाचिदासाञ्चक्रे ।

दीप्यमानः, प्रताप एव ज्वलन्, प्रतापानलः, स एव प्राकारः आवरणाः “प्राकारा  
वरणाः सालः—इत्यमरः” ( क्रेष्टविशेषः ) तेन कृता जगन्तारक्षा येन  
तथाभूतः ( क्रेष्टनिमित्ता हि पुरी शक्यते-अनायासेन रक्षयितुमितिभावः, )  
सकलानां, अखिलानां, प्रणयिनां, अर्थिनां, मनोरथस्य, ईप्सितस्य, सिद्धि,  
अर्थजातंरक्षितुं, परगो, शिष्यां, सम्पदां, विभूतीनां, पर्वतः, गिरिः, ( हर्ष-  
यति आनन्दयति जनानिति हर्षः ) तदाख्यः नृपतिः, जयति, सर्वोत्कर्षेण  
वर्तते-इत्यर्थः । अधिकप्रतापेन विराजमानः श्रीहर्षः नृपतिः जगद्रक्षकः  
सम्पूर्णमनोरथसिद्धिदः जयति सर्वदेव जयतु इति भावः । निरङ्गरूपकमलंकारः ।  
आख्यावृत्तम् ॥२२॥

एवमिति—एवं, अनेनप्रकारेण, अनुश्रूयते, परम्परया आकर्ष्यते ।  
पुरा किल भगवान् स्वलोके विद्यागोष्ठीं कुर्वन्आसाञ्चके-इत्यनेन संबन्धः । पुरा-  
इति—पुराकिल भगवान् पूर्वं समग्रे भगवान्, भगं, कल्याणां, विद्यते यस्यस  
भगवान्, कल्याणकरः, स्वस्य, आत्मनः, लोकं, ब्रह्मलोकं, अधितिष्ठन्,  
स्थितिकुर्वन्, परमे, सर्वोत्कृष्टे, स्थाने तिष्ठतीति परमेष्ठी, पितामहः, ब्रह्मा,  
विकासिनि, विकसिते, पद्ममेव, कमलमेव, विष्टरं, आसनं, तस्मिन्पद्मविष्टरे,  
सुनासीरप्रमुखैः, “वृद्धश्रवाः सुनासीरः पुरुहूतः पुरंदरः—इत्यमरः” इन्द्रादिभिः  
गोर्वाणैः, “गोर्वाणाः दानवारयः……इत्यमरः” देवैः, परिवृतः, चतुर्तः  
परिवेष्टितः, ब्रह्मोद्याः, “वेदस्तत्त्वं तपो ब्रह्मा—इत्यमरः” ब्रह्म वेदः, ईश्वरो वा  
“ब्रह्मोद्या सा कथा यस्यामुच्यते ब्रह्मशाश्वतम् ।” उच्यते कथ्यते कीर्ति विषयं

तथाऽऽसीनं च तं त्रिभुवनप्रतीक्ष्यं मनुदत्तचानुषप्रभृतयः प्रजापतयः सर्वे च सप्तर्षिपुरःसरा महर्षयः सिषेविरे । केचिद्वचः स्तुतिचतुराः समुदाचरन् । केचिदपचितिभाञ्जि यजुष्यपठन् । केचित्प्रशंसा सामानि जगुः ।

अपरे विवृतक्रतुक्रियातन्त्रान्मन्त्रान्व्याचचक्षिरे । विद्याविसंवादकृताश्च तत्र तेषामन्योन्यस्य विद्याविवादाः प्रादुरभवन् । आथातिनीयते इतियावत् । याभिः, तथाभूताः, कथाः, कुर्वन्, अन्याश्च वेदवाद्या इतिहास पुराणादीनामित्यर्थः । निरवद्याः, अनिन्याः, प्रशंशार्हा इतियावत् । विद्यागोष्ठीः, ज्ञानसमालोचिती, विद्वत्परिषदित्यर्थः “यागार्था सर्व विद्विष्टा या च स्वैर विसर्पिणी । पर हिंसात्मिका या च न तामवतरेदुबुधः लोक चित्तानुवर्तिन्या कीडा मात्रैक कार्यया । गोष्ठ्या सह चरन् विद्वान् लोक सिद्धिं निथच्छति ॥ भावयन्, सम्पादयन्, आसांचके, अवतस्थे ।

तथाऽऽसीनमिति—तथा पूर्वोक्तप्रकारेण, आसीनम्, उपविष्टं, त्रिभुवनप्रतीक्ष्यं, “प्रतीक्ष्यः पूज्यः-इत्यमरः ।” ( त्रयाणां भुवनानां समाहारः त्रिभुवनम् ) तेन प्रतीक्ष्यं, पूज्यं, लोकत्रय पूजनीयमितिभावः । मनुदत्तचानुषप्रभृतयः, आदयः, प्रजापतयः सर्वे च सप्तर्षिपुरःसरा-सप्तर्षि सहिता इतिभावः । महर्षयः, तं ब्रह्माणं सिषेविरे, सेवितवन्तः । केचित्स्तुतिचतुराः स्तुतिषु स्तोत्र पाठेषु चतुराः, दत्ताः, ऋचः, ऋग्वेदान्, समुदाचरन्, उक्तवन्तः । उदात्तादि स्वरभेदेन सम्यक् उच्चारितवन्तः, इत्यर्थः । “केचिदपचितिभाञ्जि,” पूजानमस्यापचितिः-इत्यमरः । अपचिति, पूजा, तां भजन्तीति, अपचितिभाञ्जि पूजा सन्बन्धीनीतिभावः । यजुषि, यजुर्वेद गतान्मन्त्रभागान्, अपठन्, पठुः, केचित्प्रशंसा सामानि, स्तुतिगर्भितानि, सामानि, सङ्गीत मयानि वेद भागानि । जगुः, गीतवन्तः, सामगायनमनुवर्त्तित्यर्थः ।

अपरे-इति—अपरे, अन्ये, विवृतानि, प्रकटितानि, क्रतुक्रियाणां,

रोषणाः प्रकृत्या महातपा मुनिरत्रेस्तनयस्तारापतेभ्राता नाम्ना दुर्वासा  
द्वितीयेन मन्दपालनाम्ना मुनिना सह कलहायमानः साम गायन  
क्रोधान्धो विस्वरमकरोत् ।

सर्वेषु च शापभयप्रतिपन्नमौनेषु मुनिषु, अन्यालापलीलया-  
अवधीरयति कमलसम्भवे च कुमारी किञ्चिदुन्मुक्तबालभावे भूषितन-

यज्ञादिकर्मणां, तन्त्राणि, प्रकरणाणि, यैः, येषु वा, तान् मंत्रान् व्याचचक्षिरे,  
कथयामासुः । विद्या विसंवादकृताः, विद्यानां वेदशास्त्रादीनां, यः, विसंवादः,  
मतभेदः, तेनकृताः, जनिताः, ( गतुरागमात्सर्वादिनेत्यर्थः ) तत्र, तस्मिन्स्थाने  
तेषां, ऋषीणां, अन्योन्यस्य, परस्परस्य, विद्याविवादाः, प्रश्नोत्तररूपाः, प्रादुर-  
भवन्, उत्पन्नाः । अथ सामगायन, क्रोधान्धोदुर्वासा विस्वरमकरोदित्यनेनसं-  
बन्धः । अथेति—अथ प्रादुर्भूतेविवादं, अतिरोषणः, अतिकोपनः, प्रकृत्या स्व-  
भावेनैव ( अन्यथाब्रह्मसंसदि कोपोऽयमयुक्तः ) महातपाः, अतितपस्वी, मुनिः,  
अत्रेस्तनयः, पुत्रः, तारापतेः, चन्द्रमसः, भ्राता, नाम्ना दुर्वासाः, द्वितीयः,  
अपरेण, मन्दपालनाम्ना, मन्दपालाभिधेयेन, मुनिना सह, कलहायमानः, कलहं-  
कुर्वन्, सामगायन्, सामवेदं, सङ्गीतस्वरेण पठन् क्रोधान्धः, क्रोधेन, मात्सर्येण,  
अन्धः, विवेकशून्यः, विस्वरम्, विकृताः, स्वराः, उदात्तादयः यस्मिन् तथाः  
भूत-अकरोत् ।

शापेति—शापभय प्रतिपन्नमौनेषु, शापादभयंशापभयं तेन व्रस्ताः, अत-  
एव प्रतिपन्नं, स्वीकृतं, मौनं, यैस्तथाभूतेषु-सर्वेषु मुनिषु, अन्यालापलीलया,  
( अपर कथाव्याजेनेतिभावः ) अवधीरयति, तिरस्कुर्वति, दुर्वाससमितिभावः ।  
कमल सम्भवे, कमलात् सम्भवोजन्मयस्य स कमलसम्भवः, तस्मिन्कमलसम्भवे,  
( पद्मयोनावित्यर्थः ) कुमारी, कामार व्रतं विद्यते यस्या सा कुमारी, अनूढावाला,  
( सामान्यवयस्का इत्यर्थः ) किञ्चिदुन्मुक्तबालभावे, ईषदुज्जितशैशवे, भूषितनव-  
यौवने, नवयौवनेनालंकृता-इत्यर्थः, नवे वयसि वर्तमानानूतनामवस्था-प्राप्ता,

वयौवने नवे वयसि वर्त्तमाना गृहीतचामरप्रचलद्भुजलता पितामहमुप-  
वीजयन्ती ।

निर्भर्त्सन्ताडनजातरागाभ्यामिव स्वभावारूपाभ्यां पादपल्ल-  
वाभ्यां समुद्रासमाना शिष्यद्वयेनेव पदक्रममुखरेण नूपुरयुगलेन वाचा-  
लितचरणा, मदननगरतोरणस्तम्भविभ्रमं विभ्राणा जङ्घाद्वितयं,  
सलीलम्-उत्कलकलहंसकुलकलालापिनि मेखलादान्नि विन्यस्तवाम  
गृहीतचामरप्रचलद्भुजलता, गृहीतेन, धारितेन, चामरेण, चमरीगोपुच्छनि-  
र्मितेनव्यजनविशेषेण, प्रचला, चलन्ती भुज-एव लता यस्या एवंभूता, पितामहं,  
ब्रह्माणं, उपवीजयन्ती, व्यजनं स्पन्दयन्ती ।

निर्भर्त्सनेति—निर्भर्त्सनाय, विस्वरपाठतयातिरस्करणाय, यत्ताडनं,  
प्रहरणं, रोषोद्भूतहननमितिभावः । तेन जातः, उत्पन्नः, रागः, लौहित्यं,  
ययोः, एवंभूताभ्यां स्वभावारूपाभ्यां, सहजरक्ताभ्यां पादपल्लवाभ्यां समुद्रास-  
माना, सम्यक् देदीप्यमाना, पदक्रममुखरेण, पादयोः यक्रमः, पादवि-  
न्यासः, तेन मुखरं सशब्दं, रणदितिभावः । तेन वाचालितचरणा वाचा-  
लितौ नदन्तौ, चरणौ, यस्यास्तथोक्ता । मदनेति—मदननगरतोरणस्तम्भ  
विभ्रमं, मदनस्य, कामस्य, यन्नगरं, पुरं, निवासस्थानं, तस्ययत्तोरणं वहि-  
द्वारं, तस्य स्तम्भौ, स्थूणा, तयोर्विभ्रम इवविभ्रमः, विलासः, यस्यास्तथा त्रिधं,  
जङ्घाद्वितयं, उरुयुगलंविभ्राणा, धारयन्ती । ( मदन नगरे तस्याःजङ्घाद्वि-  
तयंस्तम्भरूपेणवर्तते-इत्यर्थः ) उत्केति—उत्कानां, उत्सुकानां कलहंसानां,  
कुलस्य, समूहस्य, यः कलः, मधुररवः, सुं एव आलापः, भाषणविशेषः, तद्व-  
त्प्रलापिनि, सान्द्रशब्दकर्त्रात्यर्थः । मेखलादान्नि, काश्चिन्नजि, मालारूपधा-  
रिणात्यर्थः । विन्यस्तः, स्थापितः, किसलयः, नवपल्लवः, तद्वत्त्वाम हस्तो  
यया—विद्वन्मानसेति—विद्वन्मानस निवासलक्षणेन, विदुषां, शास्त्राध्ययनकृत  
परिश्रमाणां, मानसं, चित्तं, तत्र यो निवासः, अवस्थानं, तेन लग्नं, संसङ्गं,

हस्तकिसलया, विद्वन्मानसनिवासलघ्नेन गुणकलापेनेवांसावलम्बिना  
ब्रह्मसूत्रेण पवित्रीकृतकाया, भास्वन्मध्यनायकम्-अनेकमुक्कानुयातम्.  
अपवर्गमार्गमिव हारमुरसा समुद्रहन्ती, वदनप्रविष्टसर्वविद्यावधूचरणा-  
लक्तकरसपाटलेन इव स्फुरतादशनच्छदेन विराजमाना, संक्रान्तकम-  
लासन कृष्णाजिन प्रतिमां मधुरगीताकर्णनावतीर्णा शशिहरिणाम्-इव  
कपोलस्थलीं दधाना, तिर्य्यक्सावज्ञम् उन्नमितैकभ्रूलता श्रोत्रमेकम्,

गुणकलापेनेव, चातुर्यादिगुण समूहेनेव, अंसावलम्बिना, स्कंधे विलम्बमानेन,  
ब्रह्मसूत्रेण, यज्ञोपवीतेन “अमौक्तमसौवर्णं, ब्राह्मणानां विभूषणम् । देवानां  
पितॄणां च भागो येन प्रदीयते ॥” पवित्रीकृतकाया, पवित्रीकृता, शुद्धिनीताः  
काया, शरीरं यस्याः, भास्वनिनि—भास्वन्मध्यनायकं, भास्वन्, भाः, कान्तिः  
वियतेयस्य स भास्वन्, देदीप्यमानः, उज्ज्वलः मध्यनायको, मध्यमणिर्यस्य (पक्षे)  
भास्वतः, सूर्यस्य, अनेकमुक्कानुयातं, अनेकैः, मुक्ताफलैः, अनुयातं, प्रथितम्  
( पक्षे ) अनेकैः, मुक्तैः, “मोक्षमार्गगामिभिः,” अनुयातं, सेवितं अपवर्गमार्ग-  
मिव, मुक्ति पथमिव, ( अपवर्गमार्गस्य-मुक्ताजालस्य च विशुद्धत्वादुत्प्रेक्षितम् )  
हारं, मुक्ताकलार्पं, उरसा, वक्षःस्थलेन, समुद्रहन्ती, धारयन्ती, वदनेति—  
वदने, आनने, प्रविष्टानां, सर्वासां, विद्यानामेव, वधूनां, स्त्रीणां, चरणेषु पादेषु,  
यः अलक्तकरसः, लाक्षाद्रवः, तेनेव पाटलः, ईषद्रक्तः, तेनस्फुरता, विलसता,  
दशनच्छदेन, अधरेण, विराजमाना, शोभमाना ( सर्वाविद्याएव नार्यस्तासां  
मुखप्रवेशेनालक्तक रसेन ओष्ठयोःस्वभावारुणयोरुत्प्रेक्षितम् ) संक्रान्तेति—  
संक्रान्ता, संलग्ना, कमलासनस्य, ब्रह्मणाः, कृष्णमृगचर्मणाः,  
प्रतिमा, कान्तिः, यस्यास्तथाविधा । अत एव, मधुरस्य, मनोहरस्य, गीतस्य,  
गानस्य, आकर्णनाय, श्रवणाय, अवतीर्णाः, उपस्थितः, शशिनः, चन्द्रस्य,  
हरिणकलंकरूपो मृगो यत्र तादृशीं, कपोलस्थलीं, गंडप्रदेशं, दधाना, धार-  
यन्ती । तिर्यगिति—तिर्यक्, कुटिलं, यथास्यात्तथा सावज्ञं, अवज्ञया,



विस्वरश्रवणकलुषितं प्रज्ञालयन्तीव अपाङ्गनिर्गतेन लोचनांशु जल-  
प्रवाहेण इतरश्रवणेन च विकसित सिन्धुवार मञ्जरीजुषा हसतेव प्रक-  
टितविद्यामदा, श्रुतिप्रणयिभिः प्रणवैरिव कर्णावतंसकुसुम मधुकरकुलै-  
रुपास्यमाना, सूक्ष्मविमलेन प्रज्ञाप्रतानेनेवांशुकेनाच्छादितशरीरा,  
वाङ्मयमिव निर्मलं दिक्षु दशनज्योत्स्नालोकं विकिरन्ती देवी सरस्वती  
श्रुत्वा जहास ।

निरस्कृतभावेन, विस्वरपाठकं, दुर्वाससमित्यर्थः । उन्नमितकभ्रूलता, उन्न-  
मिता, ऊर्ध्वभागीनीता, एका भ्रूलता इव, वल्लरीरूपा, भ्रूलता यथा, एवं-  
भूतया, श्रोत्रमेकं, कर्णमेकं, विस्वर श्रवणेन, अशुद्धस्वराकर्णनेन, यत्—  
कलुषितं, दूषितं, ( कालुष्यतां नीतमिति यावत् ) अपाङ्गनिर्गतेन, नेत्र प्रान्त  
च्युतेन, लोचनस्य, नेत्रस्य, अंशवः, किरणा एव जलानि तेषां यः प्रवाहः,  
स्रोतः, तेन, इतर श्रवणेन, कर्णेन, प्रज्ञालयन्तीव, शुद्धतानयन्तीव । विकसि-  
तेति—विकसिता, प्रकुल्लिता, या सिन्धुवारस्य सम्भलतरोः, मञ्जरी, वल्लरी,  
तदजुषा, तद्वद्वकान्त्या, हसतेव, हास्यं कुर्वाणा-इव, अतएव प्रकटितविद्यामदा-  
प्रकटितः प्रकाशोनीतः, विद्यामदः, विद्याजनितः, अहंकारः । यया एवंभूता ।

श्रुतिप्रणयिभिरिति—श्रुतिप्रणयिभिः, श्रुतिर्वेदशास्त्रं, तत्र प्रणयिभिः,  
प्रेमकर्तृभिः, प्रणवैरिव, उं कारैरिव, कर्णेषु, श्रोत्रेषु, यानि, अवतंसानि, कर्ण-  
भूषणानि, तान्येव कुसुमानि, पुष्पाणि, मधुकरकुलैः, भ्रमरैः, उपास्यमाना,  
( मधुर ध्वनिना श्रुतिसुखजनयद्विरित्यर्थः ) सूक्ष्मेन, हस्वेन, अतएव, अति-  
विमलेन, परिशुद्धेन, प्रज्ञाप्रतानेनेव-प्रज्ञाप्रतानः, बुद्धिवैचित्र्यं, स एव प्रतानः,  
प्रसरः, तेनेव-अंशुकेन, वसनेन, पटेनेत्यर्थः ( अर्थात् बुद्धिवैचित्र्यमेव वस्त्रं यस्या-  
एवंभूता ) तेन-आच्छादितशरीरा, अच्छादितं, आवर्णितं, शरीरं यस्या,  
वाङ्मयेति—वाङ्मयमिव-विद्यामिव ( शास्त्रं ) निर्मलं, अतिशुद्धं, दशनानां,  
या ज्योत्स्ना, कान्तिः, तस्याः, यद्-आलोकं, द्योतं, त-इतस्ततः, दिक्षु,  
दिग्भागेषु, विकिरन्ती, प्रसारयन्ती, देवी सरस्वती, श्रुत्वा, आकर्ण्य, जहास ।

दृष्ट्वा च तां तथाहसन्तीं स मुनिः-आः पापे ? दुर्गृहीतविद्यालवा-  
वलेपदुर्विदग्धे ? मामपि-उपहससि । इत्युक्त्वा शिरः कम्पविशीर्यमाणा-  
बन्धविशरैः उन्मिषत्तडित्तन्तुपिङ्गलिम्बो जटासञ्चयस्य रोचिषा सिञ्च-  
न्निव रोषदहनद्रवेण दश दिशः कृतकालसन्निधानामिवान्धकारितललाट-  
पट्टाप्रापदाम्, अन्तकान्तः पुरमण्डनपत्रभङ्गमकरिकां भ्रुकुटिमावध्नन्,

दृष्ट्वा-इति—स मुनिः तां हसन्तीं वीक्ष्य शापजलं जग्राह इत्यनेनान्वयः ।  
तथेति—पादताडनभ्रुकुटिसंचरणपूर्वकमित्यर्थः । स मुनिः, दुर्वासाः, आः  
इति क्रोधाभिव्यञ्जकमव्ययम् । पापे, ? पापकारिणि, अनिष्टकर्त्रांत्यर्थः ।  
दुर्गृहीतेति । दुर्गृहीतः, दुष्टभावेनाभ्यस्तः, यः, विद्यालेशः, ( अत्यल्पविद्येति-  
भावः ) तेन यः, अवलेपः, अहंकारः, तेन दुर्विदग्धा, दुर्विनीता  
तत्सम्बुद्धौ, दुर्विदग्धे ? मामपि, लोकत्रय प्रसिद्धं दुर्वाससमर्पाति भावः ।  
उपहससि, हास्यास्पदं विदधासि । इत्युक्त्वा, एवमाभाष्य । शिरःकम्पेति—  
शिरसः, कम्पेन, विधूननेन, विशीर्यमाणाः, विकीर्यमाणाः, ये बन्धविशराः,  
बन्धनिचयाः, तैः । उन्मिषदिति—उन्मिषन्, उद्यन्, तडित्तन्तुनां, विद्यु-  
त्स्वजां, पिङ्गलिन्ना, पिङ्गलत्वं, पिङ्गलवर्णत्वंयस्य, तथाभूतस्य, जटासंचयस्य,  
जटानिचस्य, रोचिषा, कान्त्या “रोचि शोचि रुमे क्लीवे, इत्यमरः ।” सिञ्च-  
न्निव, वर्षन्निव, दशदिशः रोषदहनद्रवेण, क्रोधाभिप्रसृतस्वेदेन । कृतेति—कृतं,  
विहितं, कालस्य, यमस्य, कृष्णवर्णस्य वा, सन्निधानम्, उपस्थितिर्यस्यांतथा  
भूताम्, इव । अन्धकारितेति—अन्धकारितं, आकुञ्चनेनदुष्प्रक्ष्यं, ललाटप-  
ट्टमेव, मस्तकप्रदेशमेव, अष्टापदं, सुवर्णं, यया तादृशीं ( अनेनभ्रूविक्षेपेणाप्रका-  
शित स्वरूपेणास्यादर्शनीयत्वंस्पष्टं ) अन्तकेति—अन्तकस्य, यमस्य, अन्तः-  
पुरं, अवरोधगृहम्, तस्य मण्डनाय, अलङ्करणाय, पत्रभङ्गस्य मकरिकां, पत्रस्य  
यःभङ्गः, त्रुटनं, तद्वत् मकराकारधारिणं किसलयमितिभावः । ताम् भ्रुकुटिं,  
भ्रुविक्षेपं, आबध्नन् । धारयन् अतिलोहितेन, अतिरक्तेन, चक्षुषा, नेत्रेण, अमर्ष-

अतिलोहितेन चक्षुषामर्षदेवतायै रुधिरोपहारमिव प्रयच्छन्, निर्दयदष्ट  
 दशनच्छदोदंतांशुच्छलेनभयपलायमानांवाचमिव रून्धन्, अंसावन्नसिनः  
 शापशासनपट्टस्येव ग्रन्थन् ग्रन्थिम अन्यथाकृष्णाजिनस्य, स्वेदकणाप्रति  
 बिम्बितैः शापभयात्-शरणागतैरिव सुरासुरमुनिभिः प्रतिन्नपसर्वावयवः  
 कोपकम्पतरलिताङ्गुलिनाकरेण प्रसादनलग्रामक्षरमालामिवाक्षमाला-  
 माक्षिप्य कामण्डलवेन वारिणा समुपस्पृश्य शापजलं जग्राह ।

देवतायै, अमर्षः, क्रोधः, तस्याधिष्ठात्री या देवता तस्यै । रुधिरोपहारमिव,  
 रक्तपूजासाधनमिव, प्रयच्छन्, अर्पयन् । निर्दयेति । निर्दयं, दयारहितं,  
 यास्यात्तथा दष्टः, दंशितः, दशनच्छदः, ओष्ठः, ( दन्तानिदृश्यति,  
 आवृणोति, इति दशनच्छदः ) येन तथाभूतः, दन्तांशुच्छलेन, दन्तकिरणव्या-  
 जेन भयपलायमानां, भयात् ( शाप ) देशान्तरंगम्यमानां, इव, वाचं, रून्धन्,  
 अवरोधयन् । अंसेति—अंसावन्नसिनः, स्कंधावलम्बिनः, कृष्णाजिनस्य, मृग-  
 चर्मणः, शापस्य, यः शासनपट्टः, फलकं, तमिव, तस्य ग्रन्थि, बंधनं, अन्यथा,  
 वैपरीत्येन, ग्रन्थन्, बन्धन् । ( शापशासनं हि स्वभाव शुद्धलिपि कृष्णं च भवति  
 अत्रापि श्वेतकृष्णवर्णस्य कृष्णाजिनस्यसाम्यत्वात्, ( उत्प्रेक्षांकारः )  
 स्वेदेति—स्वेद कणेषु, क्रोधोद्ध्वेषुघर्मबिन्दुषु, प्रतिबिम्बितैः, प्रतीयमानैः, प्रति  
 पन्नसर्वावयवः, प्रतिपन्नानि, स्फुटिभूतानि, सर्वाणि, समग्राणि, अवयवानि, देह  
 भागानि, येषां तैः शापभयात्, शरणागतैः शरणां प्रातैः, सुरासुर मुनिभिः  
 ( स्वेदबिन्दुषुदृश्यन्ते हि सर्वे मुनिप्रभृतयः, तत्रोत्प्रेक्षितं कविना यदेते शापभया-  
 दस्य शरणागता इति ) कोपकम्पतरलिताङ्गुलिना, कोपेन, क्रोधेन, यः कम्पः,  
 तेन तरलिताः, प्रचलिताः, अङ्गुलयो यस्य एवं विधेन करेण, हस्तेन । प्रसा-  
 दनलगां, प्रमत्ततायै, लग्नां, आगतां ताम् । अक्षरमालामिव, वर्णावलीमिव  
 ( भारतीसंबंधेनैतदुक्तम् ) अक्षमालां, रुद्राक्षजपमालां, आक्षिप्य, परित्यज्य,  
 कामण्डलवेन, कामण्डलौभवः कामण्डलवः तेन स्वकरस्थितेन जलपात्रेण,

अत्रान्तरे स्वयम्भुवोऽभ्यासे समुपविष्टा देवी मूर्तिमती पीयूष-  
फेनपटलपाण्डरं कल्पद्रुमदुकूलवलकलं वसाना । विसतन्तुमयेनां-  
शुकेनोन्नतस्तनमध्यवद्गगात्रिकाग्रन्थिः, तपोबलनिर्जितत्रिभुवनजयप-  
ताकाभिरिव तिसृभिर्भस्मपुण्ड्रकराजिभिर्विराजितललाटाजिरा, स्क-  
न्धावलम्बिना सुधाफेनधवलेन तपःप्रभावकुण्डलीकृतेन गङ्गास्रोत-  
सेव योगपट्टकेन विरचितवैकट्यका, सव्येन ब्रह्मोत्पत्तिपुण्डरीकमुकुल-  
वारिणा, जलेन, समुपस्पृश्य, आचम्य शापजलं, जग्राह, गृहीतवान् ।

अत्रान्तरे-इति—अत्रान्तरे मूर्तेश्वतुभिर्वेदैः सह सावित्रीसमुत्तस्थौ, इत्य-  
नेनान्वयः । स्वयम्भुवोऽभ्याशे, प्रजापतेरन्तिके, समुपविष्टा, स्थिता, देवी,  
भगवती, मूर्तिमती, ( निश्चला इतिभावः ) पीयूषेति—पीयूषं, अमृतं, तस्य  
यत् फेनपटलं, फेननिचयं, तद्वत्, पाण्डरं, शुभ्रम् । कल्पद्रुमेति—कल्पद्रु-  
मस्य, सुरतरोः, दुकूलं, वसनं, इव, तरुवलकलं, छालं, वसाना, वक्त्ररूपेणधार-  
यन्तीत्यर्थः । विसतन्तुमयेन, कमलतन्तुनिर्मितेन, अंशुकेन, सुविमलवस्त्रेण ।  
उन्नतेति—उन्नतयोः, प्रवृद्धयोः स्तनयोः, कुचयोः, मध्ये बद्धा, गात्रिकाग्रन्थिः,  
बन्धनविशेषः, यया (सच स्वस्तिकाकारः स्तनोद्देशे भवति स्त्रीणां) तपोवलेति—  
तपसां, चान्द्रायणादिब्रतानां, बलेन, निर्जितस्य, नितरां वशाकृतस्य, त्रिभुवनस्य,  
जयपताकाभिरिव, जयध्वजैरिव, तिसृभिः, भस्म पुण्ड्रक राजिभिः, भस्मतिलकैः,  
विराजितललाटाजिरा, विराजितं, शोभितं, ललाटाजिरं, ललाटाङ्गणं,  
यस्याः तथाभूता । स्कन्धेति—स्कन्धौ, अंसौ, तदवलम्बिना, तत्संलग्नेन,  
सुधाफेनधवलेन, अमृतफेन पाण्डरेण, तपः प्रभावकुण्डलीकृतेन, तपसां प्रभावेन,  
बलेन, कुण्डलीकृतेन, कुण्डलवत् वतुलाकारेण । योगपट्टकेन, तदाख्य उपवाता-  
कारेण, वसनेन, विरचित वैकट्यका, “तिर्यग्बलसि विक्षिप्तं वैकट्यकमुदाहृतम्” ।  
विरचितं, निर्मितं, वैकट्यकं, कुक्षौ निहित तिर्यग्हारविशेषः, यया, सव्येन, वामेन,  
ब्रह्मोत्पत्तिपुण्डरीकमुकुलमिव, ब्रह्मणः उत्पत्तिः यस्मात् तत्पुण्डरीकं, श्वेतपद्मं,

मिव स्फटिककमण्डलुं करेण कलयन्ती, दक्षिणमक्षमालाकृतपरि-  
क्षेपम्, कम्बुनिर्मितोर्मिकादन्तुरितं तर्जनतरलिततर्जनीक्रम, उत्क्षि-  
पन्तीकरम्, आः पाप ? क्रोधोपहत ? दुरात्मन् ? अज्ञ ? अनात्मज्ञ ?  
ब्रह्मबन्धो ? मुनिष्वेत्कापमदनिराकृत ? आत्मस्खलितविलक्ष ? कथं  
सकल सुरासुरमुनिमनुजवृन्दवन्दनीयां त्रिभुवनमातरं भगवतीं सरस्वतीं  
शप्तमभिलषसि ? इत्यभिधाना, रोपविमुक्तवेत्रासनैरोङ्कारमुखरितमुखैः

तस्य मुकुलमिव, कुङ्कुमलमिव, स्फटिकं शुभ्रं कमण्डलुं, जलपात्रं, करेण,  
हस्तेन, कलयन्ती, धारयन्ती । दक्षिणमक्षमालाकृतपरिक्षेपम्, दक्षिणेन,  
दक्षिण करेण, अज्ञमालया, रुद्राज्ञपमालया, कृतः परिक्षेपः, वेष्टनं, यस्य-  
च तम् । कम्बुनिर्मितोर्मिकादन्तुरितं, कम्बुः, शंखः, तेन निर्मिता, या उर्मिका,  
अङ्गुलीयकं, तेन दन्तुरितः, दशनवदकृतः, (युक्त इतियावत्) तम् तर्जने,  
भर्तृमे, तरलिता, प्रचलिता, तर्जनी, तर्जनाङ्गुलीयकं, करं हस्तं, उत्क्षिपन्ती,  
ऊर्ध्वधेनयन्ती । आः पाप ! अनात्मज्ञ ! आत्मानं न विजानाति, इति,  
अनात्मज्ञः, तत्सम्बुद्धौ । ब्रह्मबन्धो ! निकृष्टब्राह्मण !, मुनिष्वेत्क !, मुनिषु  
ये ष्वेत्काः, अधमाः, तेषु अपमदाः, नीचाः, तैः निराकृतः धिक्कृतः,  
तत्सम्बुद्धौ (नीचकृत निरादर इतिभावः) आत्मस्खलितेति—आत्मनः,  
स्वस्य, स्वलितं, दोषः (विस्वरपाठजनितमित्यर्थः) तेन विलक्षः,  
लज्जितः, तत्सम्बुद्धौ । सकलेति—सकलैः, सर्वैः, सुरासुरमुनिमनुज-  
वृन्दैः, समूहैः, वन्दनीयां, पूज्यां, त्रिभुवनमातरं, जननीं, भगवतीं, कल्याण-  
कारिणीं, सरस्वतीं, वाग्देवीं, कथं शप्तमभिलषसि, इच्छसि । इत्यभि-  
धाना, कथयन्ती । रोपेति—रोषेण, क्रोधेन, विमुक्तानि, त्यक्तानि,  
वेत्रासनानि, वेतननिर्मितानि आसनानि, यैः तथाभूतैः । ओङ्कारेण, प्रणवेन,  
मुखरितं, ध्वनितं मुखं, येषां तैः (सततं, ओं ओं, इत्येवमुच्चरद्विरित्यर्थः) ।  
उत्क्षेपेति—उत्क्षेपेण-उत्थानेन, दोलायमानैः, प्रकम्पमानैः, (चलद्विरित्यर्थः)

उत्क्षेपदोलायमानजटाभारभरितशिरोभिः परिकरबन्धभ्रमितकृष्णा-  
जिनच्छायाश्यामायमानदिवसैः, अमर्षनिश्वासदोलाप्रेङ्खोलितब्रह्मलोकैः  
सोमरसमिव स्वेदविसरव्याजेनस्त्रवद्भिः—अग्निहोत्रपवित्रभस्मस्मेरलला-  
टैः कुशतन्तुचारूचामरचीरचीवरिभिः—आषाढिभिः प्रहरणीकृत-  
दण्डकमण्डलुमण्डलैः मूर्तेः श्रुतिभिर्वेदैः सह वृषीमपहाय सावित्री समु-  
त्तस्थौ । ततो मर्षय भगवन् ? अभूमिरेषा शापस्य इत्यनुनाथ्यमानोऽपि-  
जटाभारैः, जटामूढैः, भरितानि, पूरितानि, शिरांसि, येषां तैः ।

परिकरेति—परिकरबन्धः, कटिबन्धः, तेन, भ्रमितं, आवर्तितं, यत्,  
कृष्णाजिनं, मृगचर्म, तस्य छायाया, प्रभया, श्यामायमानाः, कृष्णत्वमापद्यमानाः,  
दिवसाः, अहानि, यैः, तथाभूतैः । अमर्षेति—अमर्षेण, कोपेन, यः निश्वासः,  
श्वसनम्, तदेव दोला, दोलनयंत्रं ( पूरकरचनेभयरूपत्वाज्निश्वासस्येत्यर्थः )  
तेन प्रेङ्खोलितः, प्रकम्पितः, ब्रह्मलोकः, यैः तथाभूतैः सोमरसमिव, सोमल-  
तारसमिव, स्वेदविसरव्याजेन, धर्मप्रसरच्छलेन, स्त्रवद्भिः, क्षरद्भिः ।  
अग्निहोत्रेति—अग्निहोत्रस्य, होमस्य, पवित्रं, शुद्धं यद् भस्म, तेन स्मेराः,  
विकसिताः, ललाटाः, मस्तकानि, येषां तैः । कुशेति—कुशानां, दर्भानां, तन्तवः,  
सूत्राणि, एव चारूणि, मनोहराणि, चामराणि, व्यजनविशेषाणि, तथा,  
चीराणि, वस्त्राणि, चोवराणि, कौपीनानि, येषां तथोक्ताः, तैः आषाढिभिः,  
पालाशदण्डधारिभिः “आषाढ संज्ञो दण्डस्तु पालाशो व्रतचारिणाम्”  
ब्रह्मचारिभिः । प्रहरणीकृताः, प्रहरणाय उत्थापिताः ( क्रोधादित्यर्थः )  
दण्डाः, पालाशाः, कमण्डलुमण्डलानि, कमण्डलुसमूहाः यैः । मूर्तेः देह-  
धारिभिः, चतुर्भिर्वेदैः, सह वृषीम्, आसनं, “व्रतीनामासनंवृषी, इत्यमरः” अप-  
हाय, त्यक्त्वा, सावित्री समुत्तस्थौ, उत्थिता । ततो मर्षय इत्यतः तच्छापोदकं  
विससर्ज इत्यनेनान्वयः । ततः, तस्मादनंतरं, मर्षय, क्षमस्व, एषा सरस्वती,  
शापस्य, अभूमिः, अस्थानं ( अयोग्येतिभावः ) एवं, विबुधैः, विद्वद्भिः, अनु

विबुधैः-उपाध्याय ? स्वलितमेकंक्षमस्वेतिबद्धाञ्जलिपुटैः प्रसाद्यमानोऽपिस्वशिष्यैः, पुत्र ? माकृथास्तपसः प्रत्यूहमितिनिवार्यमाणोऽप्यत्रिणा, रोषावेशविवशो दुर्वासा दुर्विनीते ? व्यपनयामि ते विद्यालवावलेप विशेषजनितामन्नतिमिमाम्, अधस्ताद्गच्छमर्त्यलोकम्. इत्युक्त्वा तच्छापोदकं विससर्ज । ततः प्रतिशापदानोद्यतां सावित्रीं सखि ? संहर रोषम्, असंस्तुतमतयोऽपि जात्यैव द्विजन्मानोमाननीयाः इत्यभिदधाना सरस्वती एव न्यवारयत् । अथतां तथा शप्तां सरस्वतीं दृष्ट्वा पितामहोभगवान् कमलोत्पत्तिलघ्नमृणालसूत्रामिव धवलयज्ञोपवीतिनी-

नाध्यमानः, प्रसाद्यमानः । उपाध्याय ? आचार्य ?, स्वलितं, अपराद्धम्, एकम् । बद्धाञ्जलिपुटैः, बद्धानि, अञ्जलिपुटानि, यैः एवंभूतैः स्वशिष्यैः, प्रसाद्यमानोऽपि, प्रसन्नतानीयमानोऽपि । पुत्र ? तपसः, प्रत्यूहं, विघ्नं, माकृथाः, माकुरु, (शापदानेन तपसः नाशसंभवादित्यर्थः) एवं अत्रिणा स्वपित्रा, महातपसा, निवार्यमाणोऽपि वर्जितोऽपि । रोषस्य, क्रोपस्य, यः, आवेशः तेन विवशः, पराधीनः, दुर्वासाः, दुर्विनीते? दुष्टे ! ते, तव, विद्यालवः, विद्यालेशः, (स्वल्पमात्र विद्याधारिणीत्यर्थः,) तेन यः, अवलेपः, गर्वः, तज्जनितां, तदुत्पन्नम्, उन्नितिमिमाम्, व्यपनयामि, दूरीकरोमि । अधस्ताद्, नीचैः मर्त्यलोकं, गच्छ, व्रज, । इत्युक्त्वा, एवमुक्त्वा, तत्-शापोदकं, पूर्ववृहीतशापजलं विससर्ज, त्यत्याज । ततः, शापदानानन्तरं, प्रतिशापदानोद्यतां, शापप्रतिकारकरणाद्योत्थितां, सावित्रीं, स्वसखीं, सखि ? संहर रोषम्, क्रोपं माकुरु । असंस्तुतेति-न संस्तुता, असंस्तुता, अविशुद्धा, मतिः बुद्धिः, येषां ते, असंस्कृतमतयः, इतिभावः (अपि) जात्यैव, द्विजन्मानः, ब्राह्मणाः, माननीयाः, पूजार्हाः । इत्यभिदधाना, कथयन्ती, सरस्वती एव न्यवारयत् न्यषेधयत् । अथेत्यादितःपितामहः, सुधीरमुवाच इत्यनेनान्वयः । तथेति-तेन प्रकारेण, (निर्दोषां सरस्वतीमित्यभिप्रायः) शप्तां सरस्वतीं, स्वपुत्रीं, दृष्ट्वा, अवलोक्य, पितामहः, ब्रह्मा, कमलोत्पत्तिः, कमलात्, नारायणनाभिपद्मात्, यद्, उत्पत्तिः, जन्म, तथा

तनुमुद्धहन्, उद्गच्छदच्छांगुलीयकमरकतमयूखलताकलापेन त्रिभुवनोपस्रवप्रशमकुशापीडधारिणोव दक्षिणेन करेण निवार्य शापकलकलम्, अतिविमलदीर्घैर्भाविभूतयुगारम्भसूत्रपातमिव दिक्षुपातयन् दशन किरणैः सरस्वतीप्रस्थानमङ्गलपटहेनेवपूरयन्नाशाः स्वरेणसुधीर-  
मुवाच-ब्रह्मन् ? न खलु साधु सेवितोऽयं पन्थाः येनासिप्रवृत्तः, निहन्त्येषपुरस्तात् । उद्दामप्रसृतेन्द्रियवाजि समुत्थापितं हि रजः कलुषयति

कारणभूतया, लग्नं, संसक्तं, मृणालसूत्रं, कमलतन्तुं, इव यज्ञोपवीतिनीं, ब्रह्म-  
सूत्रयुक्तं, तनुं, शरीरं, उद्धहन्, धारयन् । उद्गच्छदिति—उद्गच्छत्, उदय-  
मानः, अगच्छस्य, शुभ्रस्य, अङ्गुलीयकमरकतस्य ( मरकतमणिनिर्मिताङ्गुली-  
यकस्येत्यर्थः ) मयूखलताकलापः, किरणानिचयः, यस्मात्, तथाभूतेन ।  
त्रिभुवनस्य, त्रिलोकस्य, यः उपस्रवः, संचयः तस्य प्रशमाय, शान्तिकरणाय,  
कुशापीडं, दर्भतन्तुसमूहं, धारयतीति, तथोक्तेनेव ( माङ्गलिकत्वं हि कुशानामम-  
ङ्गलनाशायेत्यर्थः ) दक्षिणकरेण, हस्तेन, शापकलकलं, शापजनितकला-  
हलं, निवार्य, दूरीकृत्य । अतिविमलैः अतिशुभ्रैः, भाविनः, भविष्यतः, कृत  
युगारम्भस्य, सत्ययुगस्य, आरम्भे, पूर्वरूपे, यः, सूत्रपातः, विन्यासः, तमिव,  
दिक्षु, दिग्भागेषु, दशनकिरणैः, दन्तमयूखैः, पातयन्, निक्षेपयन्,  
सरस्वतीति—सरस्वत्याः, वाग्देव्याः, ( शप्तायाः-इतियावत् ) यत् प्रस्थानं,  
ब्रह्मलोकात् मर्त्यलोकगमनं, तस्य यः मङ्गलपटहः, माङ्गलिकवाद्यविशेषः ।  
तेनेव, आशाः, दिशाः, पूरयन्, स्वरेण, शब्देन, सुधीरं, गम्भीरं यथा-  
स्यात्तथा, उवाच, उक्तवान् । ब्रह्मनिति—ब्रह्मन्, न खलु साधुसेवितोऽयं पन्थाः,  
साधुभिः, सज्जनैः, नहि मार्गमिदं सेव्येत, येनासिप्रवृत्तः, येनपथाभवान् प्रच-  
लितुमुद्यतः । निहन्त्येषः, एषःपन्थाः, मार्गः, पुरस्तात्, अग्रतः, निहन्ति  
( गच्छन्तमितिभावः ) उद्दामेति—उद्दामं, उद्धतं, यथा तथा, प्रसृतानि प्रवृ-  
त्तानि, इन्द्रियाण्येव, वाजिनः, अश्वाः, तैः समुत्थापितं, समुद्धतं, रागः,



दृष्टिमनोज्ञिताम् । कियद्दूरं वा चतुरीक्षते । विशुद्धया हि धिया पश्य-  
न्ति कृतबुद्धयः, सर्वानर्थानमतः सतो वा । निसर्गविरोधिनी चेयं पयः पाव-  
कयोरिव धर्मक्रोधयोरेकवृत्तिः । आलोकमपहाय कथं तमसि निम-  
ज्जसि । क्षमा हि मूलं सर्वतपसाम् । परदोषदर्शनं दत्ता दृष्टिरिव कुपिता  
बुद्धिर्न ते आत्मरागदोषं पश्यति । क महातपोभारवैवधिकता । क  
पुरोभागित्वम् । अनिरोपणाश्चक्षुष्मानन्ध एव जनः । नहि कोपकलुषिता  
विमृशति मतिः कर्तव्यमकर्तव्यं वा । कुपतिस्य हि प्रथममन्धका-

“धूलिश्च” अनक्षजिताम्, अक्षाणि, इन्द्रियाणि, जयन्तीति अक्षजितः ते न  
सन्तीति अनक्षजिताः, तेषां, अजिनेन्द्रियाणाम्, दृष्टिं, नेत्रं “ज्ञानं च” कलुष-  
यति, मलिनयति । कियद्दूरं वा चतुरीक्षते, कियद्दूरं हि दृश्यते चक्षुषा ।  
( अल्पमेवेतिभावः ) कृतबुद्धयः, संस्कृतमनयः, विशुद्धया हि धिया, परिशुद्धम-  
तिता, सर्वान्, अनर्थान्, उत्पातान्, अमतः सतो वा, शुभान्यशुभानि वा,  
पश्यन्ति, अवलोकयन्ति । निसर्गेति—निसर्गविरोधिनी, स्वभाववैरिणी, पयः  
पावकयोः, जलाग्नयोः, इव, धर्मक्रोधयोः, पुण्यपापयोः, एकवृत्तिः, एकत्रा-  
वस्थानम् । आलोकमपहाय, आलोकं, प्रकाशं, अपहाय, त्यक्त्वा, कथं तमसि,  
अन्धकारे, निमज्जसि, पतसि । परेति—परस्य, अन्यस्य, दोषदर्शने, दोषाव-  
लोकने, दत्ता, चतुरा, दृष्टिरिव, कुपिता, कंप्रपात्रा, बुद्धिः, मतिः, ते, तत्र,  
आत्मरागदोषं, स्वर्कायदोषं ( आत्मस्खलनमित्यर्थः ) न पश्यति । महातपो  
भारवैवधिकता, महतां, तपसां भारस्य, वैवधिकः, बाही, धर्ता, तस्यभाव-  
त्तत्ता एव । पुरोभागित्वं, दोषैकदर्शित्वं, एव अनिरोपणः, अनिक्रोपनः, चक्षु-  
ष्मान्, नेत्रसहितः ( अपीतिशेषः ) जनः, अन्ध एव ( ज्ञानशून्यत्वादित्यर्थः )  
कुपितस्य, क्रोधितस्य, हि, निश्चयेन, ( हीतिनिश्चयबोधकमव्ययम् ) प्रथमतः  
विद्यां, ज्ञानं, अन्धकारिणी, अन्धकारान्छृङ्गा भवति, ( ज्ञानशून्या इत्यर्थः )  
ततः, तदनन्तरं, भ्रुकुटिः, भ्रूमङ्गः ( भवतीतिशेषः ) आर्दी, पूर्वं, इन्द्रियाणि,

रिणी भवति विद्या, ततो भ्रुकुटिः । आदौ इन्द्रियाणि रागः समास्कंदति चरमं चक्षुः । आरम्भे तपो गलति पश्चात्स्वेदसलिलम्, पूर्वमयशःस्फुरति अनन्तरमधरः । कथं लोकविनाशायते विषपादपस्येव वल्कलानि जानानि । अनुचिता खलु-अस्य मुनिवेशस्य हारयष्टिरिव वृत्तमुक्ताचित्तवृत्तिः । शैलूप इव वृथा वहसि कृत्रिममुपशमशून्येन चेतसा तापसाकल्पम् अल्पमपि न ते पश्यामि कुशलजातम् । अनेनातिलघिन्ना-अद्याप्युपर्येव सवसे ज्ञानोदन्वतः । न खलु अनेङ्मूकाः एडा जडा वा सर्वे एते महर्षयः । रोपदोपनिषदे स्व हृदये निग्राह्ये किमर्थमसि निगृहीतवाननागस्त्रं

रागः, समासक्तिः, लौहित्यंच, समास्कंदति, आश्रयति, चरमं, पश्चात् चक्षुः, नेत्रं, ( समास्कन्दतीत्यर्थः ) आरम्भे ( कंपस्येति भावः ) तपोगलति, नश्यति, पश्चात्स्वेदसलिलम्, स्वेदजलम् ( कुपितस्यहि स्वेदप्रवणं स्वभावः ) पूर्व, प्राक्, अशयः, अक्षीर्तिः, अनन्तरं, पश्चात्, अधरः, ओष्ठः, स्फुरति, कम्पते । कथमिति—लोकविनाशायः, विषयादपस्येव, विषयवृत्तस्येव, ते, तव, वल्कलानि, मुनिवस्त्राणि, ( त्वकूरुपाणीतिभावः ) जानानि, उत्पन्नानि ।

अनुचितेति—अस्य, पुरोदश्यमानस्य, मुनिवेशस्य, हारयष्टिरिव, मुक्ताहारमिव, वृत्तमुक्ता, सुचरितच्युता, “परिवर्तुल मुक्ताफला च” । अनुचिता, अयुक्ता, चित्तवृत्तिः, मनसङ्कल्पः । शैलूपेति—शैलूप इव, नट इव, उपशमशून्येन, शान्तिरहितेन, चेतसा, तापसाकल्पं, मुनिवेशं, कृत्रिमं ( नतु-यथार्थेनेतिभावः ) वृथैव, वहसि, धारयसि, अल्पमपि, किंचिदपि, ते, कुशलजातं, मङ्गलं, न पश्यामि । अनेन अतिलघिन्ना, अतिलाघवेन, अद्यापि, अधुनापि, ज्ञानोदन्वतः, ज्ञानसमुद्रस्य, उपरि एव, सवसे, संतरसि ( नतु मध्ये प्रविशसीतिभावः ) न खलु, अनेङ्मूकाः श्रोतुं वक्तुं चासर्थाः । “कथिता अनेङ्मूकाः श्रोतुं वक्तुं च खलु न ये शक्ताः । एडास्तुश्रुतिहीनाः जडास्तुमूर्खाः बुधैः प्रोक्ताः । एडाः, श्रुतिहीनाः, जडाः, मूर्खाः, सर्वे-एते महर्षयः, ( पुरः स्थिताः-इतिभावः )

सरस्वतीम् । एतानि तानि आत्मस्खलितवैलक्ष्याणि यैर्याप्यतां याति  
अविदग्धो जनः, इत्युक्त्वा पुनराह-वत्से सरस्वति ? विषादं मागाः ।

एषा त्वामनुयास्यति सावित्री । विनोदयिष्यति चास्मद्विरहि-  
ताम् । आत्मजमुखकमलावलोकनावधिश्चतेशापोऽयं भविष्यतीति । एता-  
वदभिधाय विसर्जितसुरासुरमुनिमनुज मण्डलः ससम्भ्रमोपगतना-  
रदस्कन्धविन्यस्तहस्तः समुचितान्हिक करणाय-उदतिष्ठत् सरस्वत्यपि

रोषेति—रोषः, क्रोधः, एव दोषः, तस्य, निर्षादति-अस्यामिति निषद्या, आपण  
गृहं, तत्सम्बुद्धौ, ( अथवा ) रोष, एव दोषः, तस्य निषद्या, आवासः, यत्रतादृशे  
स्वहृदये, चित्ते, निग्राह्ये, ( निग्रहीतुं योग्य-इत्यर्थः ) अनागसां, निरपराधाम्,  
सरस्वतीं, किमर्थनिगृहीतवानसि, शप्तवानसि । एतानीति—एतानि,  
आत्मनः, स्वस्य, स्खलितानि प्रमादाः, तैः, वैलक्ष्याणि, लजास्पदानि, ( साधु-  
संसदि मुखावनतिविधायकानीतिभावः ) यैः, याप्यतां, गर्हणीयतां, याति,  
प्राप्नोति, अविदग्धः, अज्ञः, जनः, इत्युक्त्वा, पुनराह, पुनः कथयामास, वत्से ?  
पुत्रि ? सरस्वति ? विषादं मा गाः, मा दुःखमनुभव, ।

एषा त्वां सावित्री अनुयास्यति, अनुगमनं करिष्यात् ( त्वयासार्धगमिष्य-  
तीत्यर्थः ) अस्मद्विरहितां, वियोगितां, च त्वां, विनादायेप्यात्, सुखयिष्यति ।  
( पुत्र मुखदर्शनपर्यन्तं हि ते शापः ) एतावदभिधाय, एवमुक्त्वा, विसर्जितः,  
प्रेषितः, सुराः, देवाः, असुराः, राक्षसाः, तेषां, मुनिमनुजादीनां च, मण्डलः,  
समूहो येन, तथाभूतः । ससंभ्रमं, सहसैव, उपगतः, प्राप्तः, नारदः, नारदभिः,  
स्कन्धे, अंशप्रदेशे, विन्यस्तः, स्थापितः, हस्तः, करो येन, समुचितान्हिक  
करणाय, समुच्चतं, युक्तं, यत्, आन्हिकं, दिवसकार्यं ( संन्यावन्दनादिकमिति-  
भावः ) तस्य यत्, करणं, कार्यरूपेण परिणयनं, तस्मै उदतिष्ठत्, उत्थितः ।  
सरस्वत्यपीत्यादितः सावित्र्यासमंगृहमगादित्यनेनान्वयः । शप्ताकिंचिदवनत-  
मुखी, धवलेति—धवल कृष्णशारां, धवलः, शुभ्रः, कृष्णः, नीलः, ताभ्यां,

शपा किञ्चिदधोमुखी धवलकृष्णाशारां कृष्णाजिनलेखामिव तपसेदृष्टि  
मुरसि पातयन्ती, सुरभिनिःश्वास परिमललग्नैर्मूर्तैः शापाक्षरैरिव  
षट्चरणचक्रैराकृष्यमाणा शोके शिथिलितहस्ताधोमुखी भूतेनोपदिश्यमा-  
नमर्त्यलोकावतरणमार्गेण नखमयखजालकेन नूपुररवव्याहार हृतैः भव-  
नकलहंसकुलैः ब्रह्मलोकनिवासिहृदयैरिवानुगम्यमाना समं सावित्र्यागृह-  
मगात् । अत्रान्तरे सरस्वत्यवतरण वार्तामिव कथयितुं मध्यमलोकमव  
ततार अंशुमाली । कमेण च मन्दायमाने मुकुलित विसिनी विरः

शारा, शवला, ताम्, शारशवलां ( धवलकृष्णामित्यर्थः ) ( शारग्रहणेन  
वर्णद्वयप्रतीतेरिति भावः ) कृष्णाजिनलेखामिव, कृष्णामृगचर्म श्रेणीमिव, तपसे,  
तपः कर्तुः उरसि, हृदये, दृष्टिं पातयन्ती, अवलोकयन्ती ।

सुरभितं, सुगन्धितं, यत्-निश्वासं, तस्य परिमलेन, गंधेन, मूर्तैः, देह-  
वद्भिः, लग्नैः, संलग्नैः, शापाक्षरैरिव, शापवर्णैरिव, षट्चरणचक्रैः, भ्रमरैः,  
आकृष्यमाणा, आकर्षिता, । शोकेति—शोकेन, शापाद्भवेन दुःखेन, शिथि-  
लितौ, तेजरहितौ, हस्तौ, करौ, यस्याः सा । अधोमुखीभूतेन, अधोमुखतां-  
गतेन, उपदिश्यमानं, उपदेशं दीयमानं, मर्त्यलोकावतरणमार्गा इव, मर्त्यलोके,  
भूलोके, यद्, अवतरणं, गमनं, तत्रदर्शितमार्गा, इव । नखमयूरवा नां,  
नखकिरणानां, जालकेन, समूहेन । नूपुरयोः रवाः, नूपुराः, पादाभूषण-  
विशेषाः तेषां, रवाः, निस्वनाः, एव व्याहाराः वचनानि, तैः हृताः, आकृष्टाः,  
भवन कलहंस कुलैः, ब्रह्मसमूहसमूहैः, ब्रह्मलोकनिवासिहृदयैः, ब्रह्मलोके,  
निवासः, स्थितिः, येषां, तेषां हृदयै चित्तैः, इव, अनुगम्यमाना, अनुकरणं क्रि-  
यमाणा ( सदैव कृतगमना इत्यर्थः ) सावित्र्यासमं, सार्धं, गृहमगात्, सद्गति  
गता । अत्रान्तरे, अतः परं, सरस्वत्यवतरण वार्ता कथयितुं, सरस्वत्या यत्  
अवतरणं, भुःगमनं, तस्य या वार्ता तां, कथयितुं वक्तुं, मर्त्यलोकं, भूलोकं,  
अंशुमाली, सूर्यः, अवततार, उदयं लेभे । ( पूर्वमागमनात् कृता गमनं संभा-

व्यसनविपणसरसि वासरे, मधुमदमुदितकामिनीकोपकुटिलकटाक्ष-  
क्षिप्यमाण इव क्षेपीयः क्षितिधरशिखरमवतरति तरुणतरकपिलपन  
लोहिते लोकैकचक्षुषि भगवति सवितरि प्रस्तुतमहिष्युधः क्षरत्क्षीरधारा  
धवलितेषु, आसन्नचन्द्रोदयोदामक्षीरोदक्षालितेषु-इव दिव्याश्रमोप-  
शल्यकेषु-अपराह्णप्रचारप्रचलिते चामरिणि चामीकरतटताडन-

व्यमेवेति भावः ) क्रमेणेत्यादितः सावित्री सरस्वतीसवादात्, इत्यनेनान्वयः ।  
क्रमेण, क्रमशः, मन्दायमानं, मन्दतांगते, ( सूर्ये इतियावन् ) मुकुलितानां,  
संकुचितानां, विभिन्नानां, पद्मिनीनां, विरहः, वियोगः, ( कान्तस्य सूर्यस्य-  
विच्छेदादितिभावः ) तद्वद्व्यसनं दुःखं, तेन, विपणणं, दुःखितं, ( निजकन्य-  
कानामिवपद्मिनीनां दर्शनादितिभावः ) सरः, सरोवरं, यस्मिन्, तथाभूते,  
वासरे, दिवसे, मधुमदेति—मधुमदेन, मद्यपानममुद्वेचनोत्साहेन, मुदिताः,  
सन्नातकामाः ( संभोगाभिलाषिण्य इतियावन् ) याः कामिन्यः, स्त्रियः,  
तामां कोपेन, ( कथमयमधुनापि नास्तेति अन्तराय भूतः, इति क्रोधेन )  
कुटिलः, वक्रः, यः कटाक्षः, तिर्यग्गच्छणं, तेन, क्षिप्यमाण इव, प्रक्षिप्त इव,  
क्षेपीयः, अतिक्षिप्रं, अतिसत्वरं, क्षितिधरशिखरं, अस्ताचलप्रदेशं, अवतरति,  
अवतीर्यमाणं, तरुणोति—तरुणतरः, अतियुवा, यः कपिः, वानरः, तस्य यत्,  
लपनं, मुखं, तद्वत् लोहितः, रक्तवर्णः, तस्मिन्, लोकैकचक्षुषि, लोकानां,  
जगतां, एकं, अद्वितीयं चक्षुः, नेत्रं, तस्मिन्, भगवति, कल्याणकरे, सवितरि,  
सूर्ये । प्रस्तुतेति—प्रस्तुतात्, प्रसवणात्, महिष्याः, ऊधसः, स्तनात्,  
क्षरन्ति, यानि क्षीराणि, दुग्धानि, तेषां, धारावत्, स्रोत इव, धवलितानि,  
शुभ्रवर्णानि, तेषु । आसन्नेति—आसन्नः, पार्श्ववर्ती, यश्चन्द्रोदयः, तेन,  
उदामः, उच्छलितः, यः, क्षीरोदः, समुद्रः, तेन क्षालितानि, धौतानि, तेषु,  
इव । दिव्याश्रमोपशल्यकेषु, दिव्याः, भव्याः, ये आश्रमाः, तेषां उपशल्य-  
कानि, प्रान्तभागानि, तेषु । अपराह्णे, द्वितीय प्रहरे, यः प्रचारः, प्रकर्षेण

रणितरदने रदति, सुरस्रवन्तीरोधांसि स्वैरमैरावते, प्रसृतानेकविद्याधरा-  
भिसारिकासहस्रचरणालक्तकरसानुलिप्त इव प्रकटयति च तारापथे  
पाटलताम, तारापथप्रस्थितसिद्धदत्तदिनकरास्तमयार्घ्यार्वजिते रञ्जितक-  
कुभि, कुसुम्भासि स्रवति पिनाकिप्रणति मुदितसन्ध्यास्वेदसलिल इव

चरणं ( प्रयटनमिति यावत् ) तस्मै प्रचलितः, प्रवृत्तः, तस्मिन्, चामरिणि,  
चामरयुक्ते । चार्माकरस्य, सुवर्णपर्वतस्य ( सुमेरोरित्यर्थः ) तटेषु, प्रान्त-  
भागेषु, यत्, ताडनं, वप्रकाडाकरणं, तेन, रणिताः, शङ्खिताः, रदनाः,  
दन्ताः, यस्य तथाभूते, रदति, शङ्खायमाने, सुरेति—सुराणां, देवानां,  
या स्रवन्ती, मन्दाकिनी, गंगा, तस्याः रोधांसि, तटानि, तत्र, स्वैरं,  
यथेच्छम्, ऐरावते, ( स्वेच्छया विचरणशीले इत्यर्थः ) इन्द्रवारणे ।  
प्रसृतेति—प्रसृतानां, प्रचलितानां, ( कान्तं प्रति अभिसरणायेतिभावः ) अने-  
कासां, बहूनां, विद्याधराभिसारिकाणां, विद्याधरसुन्दरीणां, “या दूतिका गमन  
काल मपाहरन्ती सोढुं स्मर ज्वर भरातिपिपासितेव, निर्याति वल्लभ जना-  
धर पानलोभात्, साकथ्यते कविवरंरभिसारिकेति ।” सहस्रस्य, चरणालक्तक-  
रसैः, चरणलाक्षाद्रवैः, अनुलिप्त इव, कृतलेप इव, प्रकटयति ! प्रकाशयति,  
तारापथे, नक्षत्रमार्गे ( आकाशे—इति यावत् ) पाटलतां, ईषद्रक्ततां, ताराप-  
थेति—तारापथेषु, गगनमार्गेषु, प्रस्थितैः, प्रचलितैः, सिद्धैः, देवविशेषैः,  
दत्तानि, अर्पितानि, दिनकराय, सूर्याय, यानि, अस्तमयार्घ्याणि, अस्तसमया  
र्पितानि, अर्घ्याणि, तेभ्यः, आवर्जितः, युक्तः, तस्मिन्, रञ्जितकुकुभि, रक्तकृत  
दिशि । कुसुम्भांसि, कुसुम्भपुष्पाणि, तद्वत्, भाः, कान्तिः, यस्य तादृशे,  
( रक्तवर्णे इत्यर्थः ) स्रवति, क्षरति, सति, पिनाकिने, पिनाकं,  
धनुःविद्यतेऽस्य इति पिनाकी, तस्मै शंकराय या प्रणतिः, प्रणामः, तत्र  
मुदिता, उल्लासिता, या, संख्या तस्याः, स्वेदसलिल इव, धर्मोद्भवजल इव,  
रक्तचन्दनद्रवे, चन्दनरसे, वन्दारु-इति—वन्दारुभिः, वन्दनशीलैः,

रक्तचन्दनद्रवे, वन्दारुमुनिवृन्दारकवृन्दबध्यमानसन्ध्याञ्जलिवने, ब्रह्मो  
त्पत्तिकमलसेवासमागतसकलकमलाकर इव राजति ब्रह्मलोके, समुच्चा-  
रितनृतीयसवनब्रह्मणिब्रह्मणि, ज्वलितवैतानज्वलनज्वालाजटाला-  
जिरेषु, आरब्धधर्मसाधनशिविरनीरात्रनेष्विव सप्तर्षिमन्दिरेषु, अघम-  
र्षणमुषितकिल्बिषगदोह्वावलघुषु यतिषु सन्ध्योपासनामीनतपस्विपंक्ति  
पूतपुलिते सवमानपद्मयोनिनानहंसहासदन्तुरीर्मणि मन्दाकिनीजले,

( पूजनीयैरित्यर्थः ) मुनिवृन्दारकाणां, मुनिधेयानां, वृन्दैः, समूहैः, बध्यमानं,  
संयम्यमानं, संन्यायां, संन्यासमये, अज्वलिवनं, अज्वलिभम्भूः, यस्मिन्, तथा-  
भूते ( सन्ध्या समये मुनिभिः क्रियमाणाज्वलिपुटे-इत्यर्थः ) ब्रह्मेति—ब्रह्मणः,  
प्रजापतेः, उत्पत्तिः, जन्म यस्माद् तत् कमलं ( नारायणनाभिकमलमित्यर्थः )  
तस्य सेवायै, समागताः, प्राप्ताः, सकलाः, सर्वे, कमलाकराः, पद्मनिचयाः,  
यस्मिन् । राजति, शोभमाने, समुच्चारितेति—समुच्चारितं, प्रातः पादितं,  
नृतीयसवनं, सायंकालिकस्नानं, तत्र, ब्रह्म, वेदो येन तथाभूते ब्रह्मणि,  
भूदेवे, ज्वलितस्य, प्रदीप्तस्य, वैतानज्वलनस्य, यज्ञाग्नेः, ज्वालाभिः,  
शिखाभिः, जटालानि, व्याहानि, अजिराणि, यज्ञरात्रि येषां तादृशेषु । आर-  
ब्धेति—आरब्धं, कृतारम्भं, धर्मसाधनाय, धर्मसंन्याय, शिविरस्य, स्कंधा-  
वारस्य ( येनानिवासस्थानस्येत्यर्थः ) नीराजनं, शान्तिकर्म, येषु, तथोक्तेषु,  
( विघ्नशंकयाकृतशान्तिकर्मष्वित्यर्थः ) सप्तर्षिमन्दिरेषु, सप्तर्षिसदृशेषु । अघ-  
मर्षणेति—अघानि, पापानि, मर्षयति, परिमार्जयति, इति अघमर्षणः  
वैदिक मंत्रः, तेन मुषितानि, हृतानि, किल्बिषाणि, पापानि, गदाः, रोगाश्च,  
तैः, उल्लाघाः, स्वस्थाः, ( नीरोगाः इति यावत् ) अतएव लघवः, सुदेहाः,  
शोभनो देहो, शरीरं, येषां ते सुदेहाः, तेषु यतिषु, ब्रह्मचारिषु । सन्ध्येति—  
सन्ध्योपासनाय, आसीनानां, उपविष्टानां, तपस्विनां पंक्तिभिः, तापसावलिभिः,  
पूतानि, पवित्रितानि, पुलिनानि, मैक्तानि, यस्य तादृशे । सवमानेति—सर्व-

जलदेवतातपत्रे पत्ररथकुलकलत्रान्तः पुरसौधे, निजमधुमधुरामादिनि कृ-  
तमधुपमुदि मुमुदिषमाणो कुमुदवने, दिवसावसानताम्यत्तामरसमधुरमधु-  
सपीतिव्रते मुपुप्सति मृदुमृणालकण्डकाण्डूयनकुण्डलितकन्धरे, धुतप-  
क्षराजिवीजितराजीवरजसि, राजहंसयूथे, तटलताकुमुमधूलिधूसरितस-  
मानः, संतरन्, यः पद्मयोनिः, प्रजापतेः, यानहंसः, वाहनः, तस्ययद्वाहसः  
हास्यं तेन दन्तुराः, उत्पन्नदशनाः, इव, उर्मयः, तरङ्गाः, यस्य, तथाक्ते ।  
**जलदेवतेति**—जलदेवतायाः, जलाधिष्ठय्यादेव्याः, यत्, आतपत्रं, वृत्रं,  
तास्मिन्, पत्ररथानां, पत्रं, पक्षं, एव, रथं, वाहकं, येषां ते पत्ररथाः तेषां पत्र-  
रथानां पक्षिणां, कुलं, समूहः, तस्य कलत्राणि, कलेन मधुरशब्देन त्रायते  
रक्ष्यते याभिस्ता, कलत्राणि स्त्रियः तेषामन्तः पुरस्य सौधं, सद्य, तस्मिन्,  
**निजेति**—निजेन, स्वर्कायन, मधुरसेन, मकरन्देन, आमोदते, उल्लसति ।  
**मध्विति**—मधुना कृतः, मधुपानां, पदपदानां, मुद्, आनन्दो यत्र तथाभूते,  
अथवा, निजमधुना, मकरन्देन, मयेन वा, मधुरः, मनोहरः, आमोदः, उत्साहः,  
यस्यतथाक्ते, कृता मधुपानां भ्रमराणां, मधुपानां वा, मुद् यत्र मुमुदिषमाणो,  
विकाशंप्राप्यमाणो, ( पक्षे ) मोदितुमिच्छति, इच्छितगानवाद्यादि गोष्ठ्यगते,  
कुमुदवने, कमलवने । **दिवसेति**—दिवसस्य, दिनस्य, अवसानेन, अन्तेन,  
ताम्यन्ति दुःखमनुभवन्ति, यानि, तामरसानि, रक्तकमलानि, तेषां, मधुरसस्य,  
सौरभस्य, पीतिः, पानं, तेन, व्रतं, नियमः, यस्य तथाभूते । **मुपुप्सति-निद्रामि-**  
**च्छति, मृद्विति**—मृदुना, कोमलेन, मृणालकाण्डस्य, पद्मनालकाण्डस्य, कण्ड-  
केन ( तृणेनेत्यर्थ ) यत् कण्डूयनं, रवर्जनं, तेन कुण्डलिता, समीकृता,  
कन्धरा, ग्रीवा येन तादृशे । **धुतेति**—धुताभिः कम्पिताभिः, पक्षराजिभिः,  
पक्षपंक्तिभिः, वीजितं, व्यजनितं, राजीवानां, श्वेतकमलानां, रजः, धूलिः  
येन तादृशे, राजहंसयूथे, तदाख्यहंससमूहे । **तटेति**—तटेषु, प्रान्तभागेषु, याः,  
लताः, वल्लर्यः, तासां, कुसुमानि, पुष्पाणि, तेषां, धूलिभिः, रजोभिः, धूस-



रिति सिद्धपुरपुरन्ध्रियम्मिज्जमल्लिकागन्धग्राहिणि सायन्तने तनी-  
यसि निशानिःश्रासनिभे नभस्वति, सङ्कोचोदञ्चदुश्चकेसरको-  
टिसङ्कटकुशेशयकोशकुटीकुटिलशायिनि षट्चरणचक्रे, नृत्योद्धृत-  
धूर्जटिजटाटवीकुटजकुड्मलनिभे नभस्तलं स्तवकयति तारागणो,  
सन्ध्यानुबन्धताम्रे परिणमत्तालफलत्विविषि कालमेघमेदुरे, मेदिनीं  
निमीलयति नववयसि तमसि तरुणतरतिमिरपटलपाटनपटीयसि

रिताः, धूसरवर्णतांनोताः, सरितः नद्यः येन तथा भूते । सिद्धेति—सिद्धानां,  
देवयोनिविशेषाणां, पुरे, नगरे, याः पुरन्ध्रयः, स्त्रियः, तासां, धम्मिल्लेषु, संय-  
तकेशेषु, याः, मल्लिकाः, मल्लिकापुष्पाणि, तेषां गन्धग्राही, गन्धं, सौरभं,  
गृह्णाति स्वोक्तीति-इति ग्रन्धग्राही, तस्मिन्, सायन्तने, सायंकालमवे । तनीय-  
सीति—तनीयसि, सुद्धे (मंदसंचारिणीत्यर्थः) निशा निः श्रासनिभे, निशा,  
रात्रिः ( नायिकेतिभावः ) तस्याः निधामं, श्रमनं तज्जिमे, तत्सदृशे, नभस्वति,  
आकाशे । प्रप्रेणात्र उपप्रेज्ञाऽलंकारः । सङ्कोचेति—सङ्कोचे, निमीलने,  
उदञ्चताम् उदञ्चताम्, उच्चकेसराणां, किञ्चनकानां, कोटिभिः, अग्रभागैः, सङ्क-  
टानि, व्याप्तानि, यानि कुशेशयानि, पद्मानि, तेषां कोशाः, आभ्यन्तरभागाः,  
एव कुशः, कुटीराणि ( नुदसञ्चानीत्यर्थः ) तेषु कुटिलं, यथा तथा शायिनि,  
शयनशीले, षट्चरणचक्रे, भ्रमरसमूहे, । नृत्येति—नृत्येषु, नर्तनेषु, उद्धृ-  
तानि, उत्पन्नानि, धूर्जटेः, शङ्करस्य, जटाऽटव्याः, जटा एव अटवी, अरण्यं,  
तस्मात् जटाजुटात्, कुटजानां, गिरिमल्लिकापुष्पाणां, कुञ्जलानि, कोरकाणि,  
तज्जिमे, तत्सदृशे । नभस्तलं, आकाशं, स्तवकयति, ( पुष्पगुच्छमिवाचरती-  
त्यर्थः ) तारागणो, नक्षत्रमण्डले । सन्धयेति—सन्ध्यायाः अनुबन्धेन, अनु-  
गमनेन, ताम्रं, रक्तवर्णं, तस्मिन्, अत एव, परिणमत्, पक्वावस्थां प्राप्तं यत्  
तालफलं, तस्य, त्विट्, इव, त्विषः, प्रभाः यस्य, तादृशे, कालमेघमेदुरे,  
कालमेघः, कृष्णवर्णमेघः, तद्वत् मेदुरः, चिक्कणः, तस्मिन्, मेदिनीं, पृथ्वीं,

समुन्मिवति, यामिनीकामिनीकर्णपूरचम्पककलिकाकदम्बके प्रदीपप्र-  
करे, प्रतनुतुहिनकिरणकिरणलावण्यालोकपाण्डुन्याश्याननीलनीर-  
मुक्तकालिन्दीकूलबालयुलिनायमाने शातक्रतवे कृशयति तिमिरमाशा-  
मुखे, खमुचि मेचकितविकचितकुवलयसरसि, शशधरकरनिकरकचप्रहा-

निमोलयति, आच्छादयति, नववयसि, ( सद्योत्पन्ने-इत्यर्थः ) तमसि, अन्ध-  
कारे, तरुणेति—तरुणतराणां, पक्ववयसां, तिमिरपटलानां, अन्धकार-  
चयानां, पाटने, दूरीकरणे, पटीयान्, चतुरः, तस्मिन्, समुन्मिवति,  
ज्वलति ( ईषत्प्रकटतां गते-इत्यर्थः ) यामिनीति—यामिनी, रात्री एव,  
कामिनी, स्त्रीः, तस्याः, कर्णपूरः, अवतंसः, एव चम्पकस्य, चम्पकाख्य  
पुष्पस्य, कलिकायाः, डोडिकायाः, कदम्बकं, गुच्छं, तस्मिन्, ( तत्सदृशेति-  
भावः ) प्रदीपप्रकरे, प्रदीपसमूहे, प्रतन्वति—प्रतनुभिः, अत्यल्पैः, तुहिनकि-  
रणस्य, चन्द्रस्य, किरणानां, रश्मीनां, यत्, लावण्यं, चारुत्वं, तस्य, आलोकैः,  
प्रकाशैः, तैः, पाण्डुनि ईषदृषीते, तस्मिन्, आश्यानम्, ईषत्शुष्कम्, नीलनरैः,  
कृष्णजलैः, मुक्तं, त्यक्तं, कालिन्दीकूलस्य, यमुनातटस्य, बालयुलिनं, सद्योत्थि-  
तसैकनं, ( तद्वदाचरतीति तादृशे ) शतानि कतवः, यज्ञाः, यस्य सः, शतक्रतुः,  
इन्द्रः, तस्यददं, ( अथवा ) स अधिप्यता, यस्य तत् शातक्रतवं, ऐन्द्रं,  
तस्मिन्, कृशयति, कृशयतांनयति, ( खण्डयतीतिभावः ) तिमिरं, अंधकारं,  
आशामुरवे, विग्भागे, खमुचि, रवं, आकाशं, मुखति त्यजति तथाभूते (आकाशं-  
परित्यज्यभूमण्डलमाच्छादयतीतिभावः ) मेचकितेति—मेचकितं, स्नि-  
ग्धतांनीतं, विकचिनां, विकशितानां, कुवलयानां, नीलोत्पलानां, सरः, सरो-  
वरं, येन तथाभूते, शशधरेति—शशधरस्य, चन्द्रस्य, करनिकरैः, किरणस-  
मूहैः, ( हस्तैरेत्यर्थः ) यः कचप्रहः, केशप्रहणं, तेन आविलं, मालिन्यं, म्ला-  
नतां, नीतं, प्राप्तं, तस्मिन्, अत एव विलीयमाने, निलयंप्राप्यमाणे, ( अन्योऽ-  
पि केशकर्षणेनावनतमुखोलजया अदर्शनं गच्छतीत्यर्थः ) मानिनीनां, मानवतीनां,

विले विलीयमाने मानिनीमनसीव शर्वरीशखरीचिकुरचये चापपक्ष्विपि  
तमस्युदितेभगवत्युदयगिरिशिखरकुहरहशिखरनखरनिवहदंतिनिहतनिज-  
हरिणगलगलितरुधिरनिचयनिचित मिव लोहितं वपुरुदयरागधरम-  
धरमिव विभावरीवध्वा धारयति श्वेतभानौ, अचलच्युतचन्द्रकान्तजल-  
धाराधौत इव ध्वस्ते ध्वान्ते, गोलोकगलितदुग्धविमरवाहिनि दन्तमयम-  
करमुखमहाप्रणाल इवापूरयितुं प्रवृत्ते पयोधिमिन्दुमण्डले, स्पष्टे प्रदोष

( कान्तं प्रतिकुपितानामित्यर्थः ) नाराणां, स्त्रीणां, मनसीव, चित्तइव, शर्वर्यां,  
रात्रौ, शखरीणां, शखरस्त्रीणां, चिकुरचये, केशममूढे, चापपक्ष्विपि, चापोनाम  
पक्षिविशेषः, तस्य पक्ष्वत्, त्विषः, कान्त्यः, यस्य तादृशो, तमसि, अन्धकारे, उदिते,  
प्रादुर्भूत, उदयगिरीनि—उदयगिरेः, उदयाचलस्य, शिखरेषु, प्रान्तभागेषु,  
यानिकुहराणि, गह्वराणि, तेषु ये हरयः सिद्धाः, तेषां, खराः, तीक्ष्णाः, ये  
नखाः, तेषां ये नखरनिवहाः, तीक्ष्णनखरममूढाः, एव हेतयः, अन्धाराणि, तैः  
निहतः, मारितः, यो निजहरिणः, स्वात्मज्ञागतमृगः, तस्यगलात्, कण्ठ-  
देशान्, गलितैः, च्युतैः, रुधिरनिचयैः, रक्तममूढैः, तैः, निचितमिव, व्याप्त-  
मिव, अत एव लोहितं, रक्तम्, वपुः, शरीरं, उदयरागधरं, उदयममये  
योरगः, लौहित्यं तं धरतीतिधरं, अधरं, ओष्ठं, इव, विभावरीवध्वा, विभा-  
वरी, रात्रिः, एव, वधूः, वधूटी, तस्याः, श्वेतभानौ, चन्द्रमसि धारयति ।  
अचलेति—अचलात्, पर्वतात्, च्युतानां, पतितानां, चन्द्रकान्तानां, चन्द्र-  
कान्तमणानां, जलधाराभिः, जलस्रोतैः, धौतमिव, प्रजालितमिव, ध्वान्ते,  
अन्धकारे, गोलोकेति—गोलोकान्, गोस्थानान्, ( गोष्ठादित्यर्थः ) मयूखसमूहाद्वा,  
गलितान्, निःसृतान्, दुग्धविमरान्, दुग्धप्रस्रवान्, वहति, धारयति, तथा-  
भूते । दन्तमयं, गजदन्तनिर्मितं यत् मकरमुखं, मकराननं, ( मकरःजल-  
जलजन्तु विशेषः ) तदेव महान् प्रणाल, जलनिष्कामन वर्तम, तस्मिन्निव,  
पूरयितुं, भरितुं, प्रवृत्ते, सञ्चले, पयोधिं, समुद्रं, एवंभूते, इन्दुमण्डले, चन्द्र-

समये सावित्री शून्यहृदयामिव किमपि ध्यायन्तीं साक्षां सरस्वतीम-  
वादीत् सखि, त्रिभुवनोपदेशदानदत्तायाम्भव पुरो जिह्वा जिह्वेति मे  
जल्पन्ती । जानासि एव यादुर्वश्याः विमंष्टुलाःगुणवत्यपि जने दुर्जन-  
वन्निर्दाक्षिण्याः क्षणभङ्गिन्यो दुरनिकर्मणीया न रमणीया देवस्य वामा  
वृत्तयः निष्कारणा च निकारकणिकापि क्लृपयति मनस्विनोऽपि  
मानसमसदृश जनादापतन्ती । अनवरतनयनजलसिच्यमानश्च तरुरिव  
विपल्लवोऽपि सहस्रधा प्ररोहति ।

मगडले, स्पष्टे प्रदोष समये, ज्ञानेप्रदोषकाले, सावित्री शून्यहृदयामिव,  
रिक्तचित्तामिव, किमपि ध्यायन्तीं, विचारयन्तीं, साक्षां, अश्रुमुखीं सरस्वतीं,  
अवादीत्, अकथयत् ।

सखि ? त्रिभुवनोपदेशदानदत्तायाः, भुवनत्रय उपदेशदाने, दत्तायाः, चतु-  
रायाः, तवपुरः, अग्रे, जल्पन्ती, कथयन्ती, मे, मम, जिह्वा, रमना, जिह्वेति,  
लज्जते । दुर्वश्याः, परवश्यतां आपादयितुमशक्याः, विमंष्टुलाः, मर्यादा  
रहिताः, गुणवत्यपिजने, दुर्जनवत्, निर्दाक्षिण्याः, निन्दुराः, क्षणभङ्गिन्यः,  
नष्टप्रायाः, दुरनिकर्मणीयाः, दुःखेनातिक्रान्तिशक्याः, न रमणीयाः, अमनोज्ञाः,  
देवस्य, भाग्यस्य, ( अदृष्टस्थेतियावत् ) वामाः, कुटिलाः, ( विरुद्धाः )  
वृत्तयः व्यवहाराः, “दुर्जनवद्गुणवत्यपिजने पतन्त्येवं, जानास्येव, इतिपूर्वेणा  
न्वयः”, निष्कारणा, कारणरहिता निकारकणिका, निकारः, तिरस्कारः,  
( धिक्कारइत्यर्थः ) तस्य कणिका अपि, लेशमात्रमपि (अर्पाति संभावनायाम्)  
असदृशजनात्, अयोग्यजनात्, आपतन्ती, मनस्विनः, श्रेष्ठजनस्य, मानसं,  
चित्तं, क्लृपयति, व्यथयति । अनवरतेति—अनवरतं, निरंतरं, नयनजलेन,  
अश्रुजलेन, सिच्यमानः, तरुरिव, वृक्षमिव, विपत्, आपत्, तस्य तवः, लेशः,  
( पक्षे ) पत्रशून्यश्च, सहस्रधा, सहस्ररूपेण, प्ररोहति, बर्धते ।

संतापपरमाणवः, दुःखलेशाः, सम्यक् तापःसंतापः, उष्णत्वं, च,

अतिसुकुमारं च जनं संतापपरमाणवो मालतीकुसुममिव  
 म्लानिमानयन्ति । महतां चोपरि निपतन्नगुरपि सृणिरिव करिणां  
 क्लेशः कदर्थनायालम् । सहजस्नेहपाशग्रन्थिवन्धनाश्च बान्धवभूता  
 दुस्त्यजा जन्मभूमयः । दारयति दारुणः क्रकचपात इव हृदयं संस्तुत-  
 जनविरहः । सा नार्हस्येवं भवितुम् । अभूमिः खल्वसि दुःखच्चे-  
 डांकुरप्रसवानाम् । अपि च पुराकृतेकर्मणि बलवति शुभेऽशुभे वा  
 फलकृति तिष्ठत्यधिष्ठातरि प्रष्टे प्रष्टनश्च कोऽवसरो विदुषि शुचाम् ।

इदं च ते त्रिभुवनमङ्गलैककमलममङ्गलभूताः कथमिव मुखमपवि-

मालतीकुसुममिव, मालतीपुष्पमिव, अतिसुकुमारं जनं, कोमलं जनं, म्लानि-  
 मानयन्ति, दुःखयन्ति, । अणुरपि, अणुमात्रमपि, क्लेशः, दुःखं, सृणिरिव,  
 अंकुश इव, करिणां हस्तिनां, कदर्थनाय, पीडनाय, महतां सज्जनानां, च, उपरि,  
 निपतन्, अलम् । सहजेति—सहजं, स्वाभाविकं, यत् स्नेह, प्रेम, एव पाशः,  
 रज्जुस्तेन, ग्रन्थिवन्धनं यासां, तादृशाः, बान्धवभूताः, कुटुम्बतांगताः जन्म-  
 भूमयः, दुस्त्यजाः, त्यक्तुमशक्याः । संस्तुतजनविरहः, संस्तुताः, प्रणयिनः,  
 तेषां विरहः वियोगः, दारुणः, कठोरः, क्रकचः, करपत्रं, ( दारुविदारण  
 लोहनिर्मितं करपत्रं ) तस्यपातः, अङ्गेपुपातनं, तद्वदिव, दारयति ( शकलतां  
 विभजतीत्यर्थः ) नार्हसि, अयोग्या । दुःखमेव च्चेडः, विधं, तस्य अंकुराः,  
 प्ररोहाः, तेषां, प्रसवानां, उत्पन्नानाम्, ( फलानामितिभावः ) अभूमिः,  
 अस्थानं, खलु असि । अपिच, पुराकृते, पूर्वजन्मनि, कृते, कर्मणि, बलवति,  
 फलकृति, शुभाशुभफलदातरि, अधिष्ठातरि, ईश्वरे, प्रष्टे, सर्वध्रेष्टे, तिष्ठति,  
 स्थिते, विदुषि, विद्वज्जने, शुचाम्, शोक्नानाम्, कोऽवसरः, कःसमयः, ( न  
 कोऽपीतिभावः ) ( शुभाशुभ कर्माणि, ईश्वरेच्छया सर्वदैवानुभूयन्ते, न ह्यत्र  
 विद्वांसः शोचन्तीतितात्पर्यम् ) ।

इदमिति—इदं त्रिभुवनमङ्गलैककमलं भुवनत्रय मङ्गलभूतं, ते मुखं,

त्रयन्त्यश्रुविन्दवः । तदलम् । अधुना कथय कतमं भुवोभागमलङ्कृतु-  
मिच्छसि । कस्मिन्नवनिनीर्षति ते पुण्यभाजि प्रदेशे हृदयम् । कानि वा  
तीर्थान्यनुग्रहीतुमभिलषामि केषु वा धन्येषु तपोवनधामसु तपस्यन्ती-  
म्यातुमिच्छसि । सज्जोऽयमुपचरणाचतुरः सहपांशुकीडापरिचयपेशलः  
प्रेयान्मग्वीजनः, क्षितितलावतरणाय ।

अनन्यशरणा चाद्यैवप्रभृति प्रतिपद्यस्व मनसा वाचा क्रियया च  
सर्वविद्याविधातारं धातारं च स्वश्रेयसाय स्वचरणारजः पवित्रितत्रिदशा-

अननं, अमङ्गलभृताः, अमाङ्गलिकाः, अश्रुविन्दवः, अश्रुकरिकाः, कश्मिव,  
अपवित्रयन्ति, म्लानयन्ति । कथय, अधुना, साम्प्रतं, कतमं, कं, भुवोभागां  
पृथ्वीतलं, अलंकर्तुमिच्छामि, सुशोभयितुमाह्वये । कस्मिन्, पुण्यभाजिप्रदेशे,  
पुण्यं भजतीति पुण्यक्षेत्रम्, ते, हृदयं, चित्तं, अवतिर्तापीति, अवतरितु  
मिच्छति । कानि वा, तीर्थानि, पुण्यस्थानानि, अनुग्रहीतु, अनुग्रहकर्तुं, अभि-  
लषामि, इच्छामि । केषु वा, धन्येषु, धन्यवादाहोषु, तपोवनधामसु, स्थानेषु,  
तपस्यन्ती, तपःकुर्वन्ती, म्यातुमिच्छामि । उपचरणाचतुरः, उपचरणां, सेवा, तत्र-  
चतुरः, निपुणः, सह, साथ, पांशुकीडायां, धूलिक्रीडने, यः परिचयः  
प्रणयः, तेन पेशलः, परवशः ( बाल्यकाले बालाः, क्रीडन्ति धूलिभिः, सहज  
स्वभावमेतत् बालानां, तत्रमैत्रित्वमधिगच्छन्ति च तेनैवमैत्रिप्रमणा परवश  
इत्यर्थः ) प्रेयान् सखाजनः, ( प्रियसखां सावित्रातिभावः ) सज्जः, प्रस्तुतः,  
क्षितितलावतरणाय, पृथ्वीतलमवतरितुं ।

अनन्यशरणा, नास्ति अन्यंशरणं यस्याः, एवंभूता, अद्यैव प्रभृति,  
साम्प्रतमेव, मनसा वाचा कर्मणा च, सर्वविद्याविधातारं, सर्वासां विद्यानां, जन-  
यितारं, धातारं, रक्षितारं, स्वश्रेयसाय, कल्याणाय, ( स्वस्य ) चरणारजसा,  
पदरेणुना, पवित्रिताः, पूताः, त्रिदशानां, देवानां, असुराणां, राक्षसानां च,  
मौलयः, किरीटाः, येन, एवभूतं । सुधेति—सुधा, अमृतं, सूते, उत्पद्यते,

सुरमौलिं सुधासूतिकलिकाकल्पितकर्णावतंसकं देवदेवं त्रिभुवनगुरुं त्र्यम्बकम् । अल्पीयसैव कालेन स ते शापशोकविरतिं वितरिष्यति, इति ।

एवमुक्ता-मुक्तमुक्ताफलधवललोचनजललवा सरस्वती प्रत्यवादीत्, प्रियसखि ? त्वया सह विचरन्त्या न मे कांचिदपि पीडा मुत्पादयिष्यति ब्रह्मलोकविरहः शापशोको वा । केवलं कमलासनसेवासुखमाद्रियति मे हृदयम् । अपि च त्वमेव वेत्सि मे भुवि धर्मसाधनानि सर्वयोगयोग्यानि च स्थानानि स्थातुम्, इत्येवमभिधाय विरराम । रणरणकोपनीत प्रजागरा च उन्मीलितलोचनैव तां निशामनयन् ।

अस्मात्, इति सुधासूतिः, चन्द्रः, तस्य कला एव, कलिका, कुड्यालिका, तया कल्पितः, कृतः, अवतंसकः, कर्णभूषणं, येन, तं, देवदेवं ( देवानामपि देवमिति यावत् ) त्रिभुवनगुरुं, भुवनत्रयाचार्यं, त्र्यम्बकं, महादेवं, प्रतिपद्यस्व, भजस्व, ( इत्यनेनान्वयः ) स, एव, भगवान्, ( इत्याभ्याहार्यम् ) अल्पीयसैव, कालेन अल्पसमयेनेव, ते शापशोकविरतिं, शापजनिनं, यत्, शोकं, तस्य विरतिं, नाशं, वितरिष्यति, करिष्यति ।

मुक्तेति—मुक्ताः, त्यक्ताः, ( पातिता इतियावत् ) मुक्ताफलवत्, धवलाः, शुभ्रवर्णाः, लोचनजललवाः, अश्रुविन्दवः, यया, एवंभूता, सरस्वती, वाग्देवी, प्रत्यवादीत्, प्रत्युत्तरमदान् । प्रियसखि ? त्वया सह विचरन्त्या, विहरन्त्या ( निवसन्त्या, इति यावत् ) कांचिदपि पीडां, किमपि दुःखं, ब्रह्मलोकविरहः, वियोगः, शाप शोको वा, दुर्वासादत्तशापोद्भवः शोको वा, नोत्पादयिष्यति, न जनयिष्यति । केवलं, ( एतदेवेति भावः ) कमलासनस्य, ब्रह्मणः, सेवासुखं, सेवया लभ्यमानन्दं, चित्तं, आद्रियति, स्नेहयति, ( प्रेमभावं प्रकटयतीत्यर्थः ) अपि च त्वमेव वेत्सि, जानासि, मे, मम, ( मदर्थमिति भावः ) स्थातुं, स्थितिकरणाय, भुवि, पृथिव्यां, धर्मसाधनानि, धर्मक्षेत्राणि, सर्व योगयोग्यानि, “योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः,” तद्योग्यानि, उचितानि । रणरणकेति—रणरणकेन

अपरेद्युरदिते भगवति त्रिभुवनशेखरे तुरङ्गमुख खगाखगायितखर  
खलीनकर्षणाक्षतक्षरक्षतजेनेवपाटलितवपुष्युदयाचलचूडामणौ जर-  
त्कृकवाकुचूडारुणारुणपुरः सरे विरोचने रोचमाने नातिदूरवर्ती पिता-  
मह विमानहंसकुलपालः पर्यटन्नपरवक्त्रमुच्चैरगायत् —

“तरलयमि दृशं किमुत्सुकामकलुषमानसवासलालिते” ?

अवतर कलहंसि ? वापिकां, पुनरपि यास्यसि पङ्कजालयम् ॥२२॥

उत्कण्ठया, उपनीतः, जातः, प्रजागरः, जागरणं, यस्याः तथाभूता, उन्मालितं,  
ईषद्विकसितं, लोचने, नेत्रे, यस्याः, एवंभूता, एव, तां, निशां, रात्रिं, अनयत् ।  
अपरेद्युरित्यादितः विमानहंसकुलपालः-उच्चैः, अगायत्-इत्यनेनान्वयः । अप-  
रेद्युः, अपरदिने, त्रिभुवनशेखरे, त्रिभुवनतिलके, भगवति, कल्याणकरे, तुर-  
गाणां, अश्वानां ( सप्तानामितियावत् ) सुवेषु, आननेषु, खगाखगायिताः,  
खगाखगाशब्दकुर्वन्तः, खगाः, तीक्ष्णाः, खलीनाः, कविकाः, तेषां कर्षणेन,  
आकर्षणेन, यः क्षतः, आघातः, ( व्रणोत्तियावत् ) तेन क्षतः, निःसरत् ,  
( घोटकानां सुवेभ्य इतिभावः ) क्षतजं, रक्तं, तेनेव, पाटलितवपुषि, ईषद्रक्त  
क्लेबरे, उदयाचलचूडामणौ, उदयगिरिभस्मरुके, जरत्, वृद्धो यः कृकवाकुः,  
ताम्रचूडः, तस्य चूडा, मस्तकं, तद्वत्, अरुणः, रक्तवर्णः, यः अरुणः, तन्नाम  
सारथिः, यस्य तथाभूते, विरोचने, सूर्ये, रोचमाने, शोभमाने, नातिदूरवर्ता,  
अनतिदूरस्थः ( पार्श्वस्थित एवेतिभावः ) पितामहस्य, ब्रह्मणः, विमानहंसस्य,  
वाहनभूतमरालस्य, पालः, रक्षकः, पर्यटन्, भ्रमन्, अपरवक्त्रं, तदारुणं वृत्तं,  
( आख्यायिकाषुप्रयोज्यंछन्द इतिभावः ) उच्चैः, तारस्वरेण, अगायत् ।

तरलयसीति—अकलुषं, अम्लानं, मानसं, तन्नामसरः, यद्वा, अकलुषं  
निर्मलं, मानसं चित्तं, यस्य सः, ब्रह्मा, तस्मिन् अथवा, अकलुषं मानसं, येषां  
ते अकलुषमानसाः, विद्वांसः, तेषु वासेन, निवसनेन, लालिता, विनोदिता,  
तत्सम्बुद्धौ, हे अकलुषमानसवासलालिते ? किं, कथम्, उत्सुकं, उत्कण्ठ



तच्छ्रुत्वा सरस्वती पुनरचिन्तयत् — अहमिदमेतन् पर्यनुयुक्ता ।  
भवतु । मानयामि मुनेर्वचनम् , इत्युक्तवोत्थाय कृतमहीनलावनरगा  
सङ्कल्पा परित्यज्य वियोगविक्रवं स्वपरिजनं ज्ञातिवर्गमवगम्य त्रिः  
प्रदक्षिणीकृत्य चतुर्मुखं कथमप्यनुनयन्ती निवर्तिताऽनुयायिब्रनिव्राता  
ब्रह्मलोकतः सावित्री द्वितीया निर्जगाम ।

व्यवृत्तिः, ( कानरामितिभावः ) दर्शः, दृष्टिः, तरल्यसि, चञ्चल्यसि, हे कल-  
हंमि ! वापिकां, दौर्धकम् ( पक्षे ) उच्यन्ते कर्मणि, अस्यां इति वापिका, कर्म-  
भूमिः, तां ( मर्त्यलोकमिति यावत् ) अचरत्, यादृ ।

अत्र हि न तदचिरमिति निर्गम्याशयेनाह । पुनरपि, पङ्कजानां, ( लज्ज-  
गया ) हेमकमलानां, आलयः, स्थानं, तं मानसं, सरः ( पक्षे ) पङ्कजालयं,  
पद्मयोनिं, ( ब्रह्माण्डमिति यावत् ) यास्यसि, प्राप्स्यसि । अत्र हि श्रष्ट विशेषणैः  
कलहंस्या वापिकावनरगारुपात्, अप्रस्तुतात्, सरस्वत्याः मर्त्यलोकावतरणस्य  
प्रस्तुतस्य वर्णनात्, अप्रस्तुतप्रशंसा, अलङ्कारः, अपरवक्तं वृत्तं । तच्छ्रुत्वा,  
तदपरवक्तं निशम्य, पुनः, अचिन्तयत् । अहमिवेति—अनेन, यानहंसपा-  
लेन, अहं, ( सरस्वती ) पर्यनुयुक्तेव, व्यङ्ग्येन प्रतिबोधितेव । भवतु, अस्तु ।  
मुनेर्वचनं, ( शापवाक्यमिति यावत् ) मानयामि, स्वाकरोमि । इत्युक्त्वा, कृत  
महीनलावनरगामङ्कल्या, कृतं, विहितं, महातलावतरणाय, मर्त्यलोकगमनाय,  
सङ्कल्पः, निश्चयः, यया, एवंभूता । वियोगेन, विच्छेदेन, विक्रवं, दुःखितं, स्व-  
परिजनं, स्वसखाजनं, परित्यज्य, त्यक्त्वा ज्ञातिवर्गं, बान्धवसमूहं च, अवग-  
म्य, अगमयित्वा, प्रदक्षिणीकृत्य, वारत्रयं प्रदक्षिणां विधाय, चतुर्मुखं, ब्रह्माणं  
कथमपि, अनुनयन्ती, मानयन्ती । निवर्तितेति—निषिद्धाः, ( मया सहना-  
गन्तव्यमिति यावत् ) अनुयायिनः, अनुगमन शीलाः, व्रतीनां, व्राताः, समूहाः  
यया, एवंभूता ब्रह्मलोकतः, स्वर्गतः । . .

ततः क्रमेण, इत्यतः आरभ्यमन्दाकिनीमनुसरन्ती मर्त्यलोकमवततार इत्य-

नतः क्रमेण ध्रुवपदप्रवृत्तां धर्मधेनुमिवाधोधावमानधवलपयो-  
धराम्, उद्धुरध्वनिमन्धकमथनमौलिमालतीमालिकाम्, आलीयमान  
बालखिल्यरुद्धरोधसमरुन्धतीधौततारवत्वचम् त्वङ्गत्तुङ्गतरङ्गतरत्तरल-  
तरतारतारकाम्, तापसवितीर्यातरलतिलोदकपुलकितपुलिनाम्, आस-  
वनपूत पितामहपानितपितृपिण्डपाण्डुरितपाराम्, पर्यन्तमुप्रसप्तर्षिकुश-  
नेनान्वयः । क्रमेण, क्रमशः, ध्रुवेति—ध्रुवस्य, नित्यस्य, वस्तुनः ( विष्णोरिति-  
यावत् ) पदान्, चरणान्, अथवा, पदान्, नृतीयपदस्थापनस्थानात्, ( आकाशा-  
दितिभावः ) प्रवृत्तां, निःसृतां, धर्मधेनुमिव, धर्मायधेनुः, धर्मधेनुः, ( होमधेनु-  
रितिभावः ) तामिव, अधोधावमानं, नीचैः, निः सरत्, धवलं, शुभ्रं, पयः,  
जलं, दुग्धम्, यस्यास्ताम्, ( पक्षे ) अधोधावमानाः, अधोमुखाः, धवलाः,  
शुभ्रवर्णाः, पयोधराः, स्तनाः, यस्यास्ताम् । उद्धुरध्वनिं, उद्धुराः, उत्कटाः,  
ध्वनयः, शब्दाः यस्यास्ताम्, अन्धकेति—अन्धको नाम कश्चिदसुरः, तंमथयति  
नाशयति, ( शिव, इतियावत् ) तस्य मौलिः, जटाजूटं, तस्य या मालती-  
मालिका, मालती पुष्पमाला, ताम् । आलीयमानेति—आलीयमानैः, ( अति-  
क्षुद्रत्वाद् नश्यद्भिरित्यर्थः ) बालखिल्यैः, मुनिविशेषैः रुद्धं, संश्लिष्टं रोधः,  
तटं यस्यास्ताम् । अरुन्धतीति—अरुन्धत्या, वषिष्ठपत्न्या, धौता प्रक्षालिता,  
तरोरियं, तारदा, ( वृक्षसंबन्धिनीत्यर्थः ) त्वक् यस्यां तथाभूताम् । त्वङ्गेति—  
त्वङ्गत्सु, प्रचलत्सु, त्वङ्गेषु, उन्नतेषु, तरङ्गेषु, लहरिकासु, तरन्त्यः, तरण-  
शीलाः, तरलतराः, आतचपलाः, ताराः, महत्यः, तारकाः, नक्षत्राणि,  
यस्यां ताम् । तापसंति—तापसैः, तपस्विभिः, वितीर्णानि, दत्तानि, तरलानि  
( तरङ्ग सम्पर्कान् ) चञ्चलानि, तिलोदकानि, तिलमिश्रिततर्पणजलानि, तैः,  
पुलकितानि, उल्लसितानि, पुलिनानि, सैकतानि, यस्यास्ताम् । आसवनेति—  
आसवनेन, स्नानेन, पूतः, पवित्रः, यः, पितामहः, ब्रह्मा, तेन पतितैः, पितृ  
पिण्डैः, पितृभ्यः, ( अग्निष्वातादिभ्यः ) अर्पितैः, पिण्डैः, ( तिलोदकमिश्र

शयनसूचितमूर्यग्रहणसूतकोपवासाम्, आचमनशुचिशचीपतिमुच्यमानार्चनकुसुमनिकरशाराम्, शिवपुरपतितनिर्माल्यमन्दरदामकानादरदारितमन्दरदरीदृषदम्, अनेकनाकनायककामिनी कुचकलशविलुलितविग्रहाम्, ग्राहप्रावग्रामस्खलनमुखरितबहु स्रोतसम्, सुपुम्नासुतशशिसुधाशीकरस्तवकतारकिततीराम्, धिषणाग्निकार्यधूमधूसरितैर्यवान्ननिर्मितैः पिरुडैः ) पाण्डुरितः, पाण्डुवर्णतानीतः, पारः, तटप्रदेशः, यस्यास्ताम् । पर्यन्तेति—पर्यन्तेषु, प्रान्तभागेषु, सुवेन, सुतानां, शयन मुखमनुभवतां, सप्तानां ऋषीणां, मरीच्यादीनां, कुशा एव शयनानि, पर्यङ्कास्तैः, सूचितः, प्रकटितः, सूर्यग्रहणस्य, सूतकेन, आशौचैः, ( गङ्गकेतुग्रसितस्यभानोरित्यर्थः ) उपवामः, अनशनम्, यस्यास्ताम् । आचमनेति—आचमनेन, शुचिः, पवित्रः, यःशचीपतिः, इन्द्रः तेन मुच्यमानैः, त्यक्तैः ( दीयमानैरितियावत् ) अर्चनकुसुमनिकरैः, पूजापुष्पनिचयैः, शारां, ( चित्रविचित्रवर्णां प्राप्तेत्यर्थः ) शिवेति—शिवपुरात्, ( कैलाशादितियावत् ) मन्दारदामकं, मन्दारपुष्पस्रजं, यस्यां तथाभूतां । अनादरेति—अनादरेण अपमानेन, दारिताः, खरिडताः, ( अतिवेगेनेतिभावः ) मन्दरदर्यः, मन्दराचल गुहायाः, दृषदः, पाषाणाः, यया, ताम् । अनेकेति—अनेकेषां, बहूनां, नाकनायकानां, सुराणां, याःकामिन्यः, स्त्रियः, तासां, कुचकलशैः, स्तनकुम्भैः, विलुलितः, प्रकम्पितः, ( आलोलित इत्यर्थः ) विग्रहं, शरीरं ( जलरूपकमितियावत् ) यस्यास्तथोक्तां । ग्राहेति—ग्राहणां, जलजन्तुविशेषाणां, प्रावग्रामाणां, पाषाणसमूहनाम्न, स्खलितेन, इतस्ततःनिपतनेन, मुखराणि, सशब्दानि, बहूनि, स्रोतांसि, जलनिःसरणमार्गाणि यस्यास्ताम् । सुपुम्नेति—सुपुम्नाख्यसूर्यरश्मेः, स्रुतः, निःसृतः, यःशशिः, चन्द्रः, तस्य, सुधानां, पीयूषानां, ( अमृतमयकिरणानामितिभावः ) शोकरस्तवकैः, विन्दुच्छैर्गुः, तारकितं, नक्षत्रपङ्क्तिमिव, तीरं, तटं, यस्यास्ताम् । धिषणेति—धिष

सैकताम्, सिद्धविरचितबालुकालिङ्गलङ्घनत्रासविद्रुतविद्याधराम्, निर्मो-  
कमुक्तिमिव गगनोरगस्य, लीलाललाटिकांमिव त्रिविष्टपस्य विक्रय-  
वीथिमिव पुण्यपण्यस्य, दत्तार्गलामिव नरकनगरद्वारस्य, अंशुको-  
ष्णीषपट्टिकांमिव सुमेरुनृपस्य, दुकूलकदलिकांमिव कैलासकुञ्जरस्य,  
पद्मतिमिवापवर्गस्य, नेमिमिवकृत युगस्य, सप्तसागरराजमहिषीं मन्दा-  
गस्य, वृहस्पतेः, यत्, अग्निकार्यं, अग्निहोत्रकर्म, तस्य धूमेन, धूसरितानि,  
धूसरवर्णानां प्राप्नानि (स्नानानि, इत्यर्थः) सैकतानि, पार्श्वभागानि, यस्यास्ताम् ।  
सिद्धेति—सिद्धैः, देवयोनिविशेषैः, विरचितानि, पूजार्थनिर्मितानि, यानि  
बालुका लिङ्गानि, बालुका मयाशिवलिङ्गानि (चिन्हानि) तेषां लंघनात्, उल्लं-  
घनान्, त्रासेन, भयेन (सिद्धाः साशापं दयुरितिभयेन) विद्रुताः, पलायिताः,  
विद्याधराः, देवयोनिभेदाः, यस्यां ताम् । निर्मोकेति—निर्मोकमुक्तिमिव,  
निर्मोकस्य, कञ्चुकस्य, मुक्तिः, उज्ज्वलं, तामिव, गगनं, आकाशं, एव, उरगः,  
( उरसा गच्छतीति उरगः, ) सर्पः, तस्य ( कृष्णवर्णत्वादाकाशस्य शुक्ल  
वर्णत्वाच्च निर्मोकस्य, इत्युत्प्रेक्षितम् ) लीलेति—त्रिविष्टपस्य, स्वर्गस्य, लीला  
ललाटिकांमिव, विनोदार्थमस्तक भूषणमिव । विक्रयवीथिमिव, विक्रयस्थानमिव,  
पुण्य पण्यस्य, व्यवहारार्थं पुण्य सञ्चयः एव विक्रेयद्रव्यं, तस्य पण्यं विक्रय-  
स्थानं, तमिव । दत्तार्गलामिव, दत्ता, स्थापिता, अर्गला, द्वारावरोधकाः दण्डाः,  
तामिव, नरकनगरस्य, नरकमेवनगरं, पुरं, तस्य, द्वारं, मुखं, तस्य । अंशुकेति—  
सुमेरुनृपस्य, राज्ञः, अंशुकं, सूक्ष्मवसनं, तेन, निर्मिता रचिता, उष्णीष-  
पट्टिका, शिरोवेष्टनपटी, तामिव । कैलासकुञ्जरस्य, कैलासाद्रिवारणस्य, दुकूल  
कदलिकांमिव, वज्ररचित वैजयन्तीमिव (स्रगिवेतिभावः) अपवर्गस्य, स्वर्गस्य,  
पद्मतिमिव, मार्गमिव कृतयुगस्य, सत्ययुगस्य, नेमिमिव, चक्राधारमिव । सप्तसा  
गर राजमहिषीं, सप्तानांसागराणां समाहारः, तस्य, यद्वा, सप्त च ते सागराः,  
सप्तसागराः, तेषां, “अथवा” सप्तसागरराजः, क्षीरसमुद्रः तस्य, महिषीं,

किनीमनुसरन्ती मर्त्यलोकमवततार । अपश्यच्चाम्बरतलस्थितैवहार-  
मिव वरुणस्य, अमृतनिर्भगमिव चन्द्राचलस्य, शशिमणिनिष्यन्दमिव  
विन्ध्यस्य, कर्पूरद्रुमद्रवप्रवाहमिव दण्डकारण्यस्य, लावण्य रस प्रस-  
वण मिव दिशाम्, स्फटिकशिला पट्टशयनमिवाम्बरश्रियाः, स्वच्छ  
शिशिरसुरसवारिपूर्णा भगवतः पितामहस्यापत्यं हिरण्यवाह नामानं  
महानदम् यं जनाः शोण इति कथयन्ति । दृष्ट्वा च तं रामणीयकंहत-  
हृदया तस्यैव तीरे वासमरचयत् । उवाच च सावित्रीम्—सखि,

पत्नीं, मंदाकिनीं, गंगा, अनुमगन्ती, अनुमरणां कुर्वन्ती, मर्त्यलोकं, भूलोकं,  
अवततार, अवतीर्णा, ( प्रायेणात्र, उत्प्रेक्षालंकारः ) अम्बरतलस्थितैव, आका-  
शस्थितैव, वरुणस्य, जलाधिपतेः, द्वारमिव, मुक्तास्रमिव । अमृतनिर्भगमिव,  
मुधास्रोतमिव, चन्द्राचलस्य, चद्राग्न्य पर्वतस्य । शशिमणि निष्यन्दमिव,  
चन्द्रकान्त मणिस्रवज्जिव, विन्ध्यस्य, विन्ध्यपर्वतस्य । कर्पूरगति — कर्पूरद्रुमस्य,  
कर्पूरवृक्षस्य, य द्रवः, स्वेदः, तस्य प्रवाहः, स्रोतः, तमिव, दण्डकारण्यस्य,  
दण्डकवनस्य । लावण्यस्य, मौर्दर्यस्य, य रसः, तस्य यत्, प्रस्रवणं, वहनं,  
तमिव, दिशाम् । स्फटिकशिला, स्फटिकमणिः, तस्याः पट्टमेव शयनं, पर्यङ्कं,  
तदिव, अम्बरश्रियाः, आकाशलक्ष्म्याः । स्वच्छेति—स्वच्छानि, निर्मलानि,  
शिशिराणि, शीतलानि, सुरसानि, मधुराणि, वारीणि, जलानि, तैः पूर्णाः,  
भरितः, भगवतः, पितामहस्य, ब्रह्मणः, अपत्यं, संततिं, हिरण्यवाह नामानं,  
तन्नाम प्रसिद्धं, महानदम्, अपश्यत्, अवलोकयत्, इति पूर्वोक्तान्वयः । यं  
नदं जनाः, मानवाः शोण इति, नाम्ना, कथयन्ती, वदन्ती । दृष्ट्वा च. अव-  
लोक्य च तं, ( नदमितियावत् ) ( तस्येत्याध्याहार्यम् ) तस्य रामणीयकं,  
मनोहारित्वं, तेन हृतं, स्ववशीकृतं, हृदयं यस्या तादृशी, तस्यैव तीरे तटे, वासं,  
स्थितिं, अरचयत् । सखि ? मधुराः, मुग्धकराः, मयूराणां, बर्हाणां, विरृतयः,  
शब्दाः । कुसुमेति—कुसुमानां, पुष्पाणां, पांशुपटलैः, धूलिसमूहैः, सिक-

मधुरमयूरविरुतयः कुसुमपांशुपटलसिकतिलतरुतलाः परिमलमत्तमधुप-  
वेणीवीणा रणितरमणीया रमयन्ति, मां मन्दीकृतमन्दाकिनी द्युतेर-  
स्यमहानदस्योपकण्ठभूमयः । पक्षपाति च हृदयमत्रैव स्थातुस्मे इति ।  
अभिनन्दितवचना च तथेति तथा तस्य पश्चिमे तीरे समवातरत् ।  
एकस्मिंश्च शुचौ शिलातलमनाथे तटलतामण्डपे गृहबुद्धिबबन्ध ।  
विश्रान्ता च नातिचिरादुत्थाय सवित्र्यासार्धमुच्चितार्चनकुसुमा-  
सखौ । पुलिनपृष्ठप्रतिष्ठित सैकतशिवलिङ्गा च भक्त्या परमया पञ्चब्रह्म-  
पुरः सरां सम्यङ्मुद्रांबबन्ध, विहितपरिकरा ध्रुवाणीतिगर्भाभवनिपवन  
तिला सैकतवन्तः, तरूणां, वृक्षाणां, तलाः, अधोभागाः, परिमलेन, सुग-  
न्धिना, मत्तानां, उन्मत्तानां, मधुपानां, पटचरणानां, वेणीसमूहः, संवेणीणा,  
तन्त्री, तस्याःरणितेन, रण रण शब्देन, रमणीयाः, शोभनाः, मन्दाकृता,  
मन्दाकिन्याः गंगायाः, द्युतिः, कान्तिः, येन तथोक्तस्य, अस्य महानदस्य,  
शोणस्य, उपकण्ठभूमयः, पार्श्व प्रदेशाः, मां रमयन्ति, प्राणयन्ति । मे हृदयं,  
अत्रैवस्थातु, अस्मिन्नेव तटेस्थितिं कर्तुं, पक्षपाति, प्रणयी । अभिनन्दितेति—  
अभिनन्दितं, समर्थितं, वचनं यस्यास्तथोक्ता, तस्य पश्चिमे तीरे, पश्चिमतटे,  
समावतरत् । एकस्मिंश्च, शुचौ, पवित्रे, शिलातलमनाथे, शिलातलयुक्ते, तट-  
लतामण्डपे, तटपार्श्ववर्तिलतागृहे, ( कुञ्ज-इत्यर्थः ) गृह बुद्धि, इदमावयोः  
गृहं, इति बुद्धि, मति बबन्ध, चकार ( कृतवतीत्यर्थः ) विश्रान्ता च मार्गश्रमं  
दूरीकृत्य, च नातिचिरात्, ( सर्वदेतिभावः ) उत्थाय, सवित्र्यासार्धं, स्वस-  
ग्न्यामहं, उच्चितानि, एकत्रिकृतानि, यानि, अर्चनकुसुमानि, पूजापुष्पाणि,  
तैः, सखौ, स्नानंकृतवती । पुलिनेति—पुलिनस्य, सैकतप्रदेशस्य, पृष्ठे, उपरि,  
प्रतिष्ठितं, स्थापितं, सैकतं, वालुकामयशिवलिङ्गं, यया सा परमया भक्त्या,  
श्रद्धया, पञ्चब्रह्माणि, ( सद्योजात वामदेवाघोर तत्पुरुषैशानरूपाणि ) पुरः  
सराणि, अग्रगण्यानि, यस्यां तादृशीं, मुद्रां, कराङ्गुलिसंयोग विशेषां,

गगनदहनतपनतुहिनकिरणयजमानमयीर्मूर्तीरष्टावपि ध्यायन्ती मुचिर-  
मष्टपुष्पिकामदान् । अयत्रोपनतेन फलमूलेनामृतममप्यतिशिशयिष्य  
माणेन च स्वादिश्रा शिशिरेण शोणवारिणा शरीरस्थितिमकरोत् ।  
अतिवाहितदिवसा च तस्मिन्लतामण्डपशिलातले कल्पित पल्लव-  
शयना मुष्वाप । अन्येद्युरप्यनेनैव क्रमेणानन्तदिनमत्यवाहयत् ।

एवमतिक्रामत्सु दिवसेषु गच्छति च काले याममात्रोद्भूते च रवा-  
वुत्तरस्यां ककुभि प्रतिशब्दप्रतिवनगद्गारं गम्भीरतारतम्यं, तुरङ्ग हेषित-  
मभ्यक्षुः, विधिपूर्वकं, चन्दनं, कृतवती । प्रथमंमशोज्ञानपूजामारभ्य क्रमशः,  
वामदेव, अक्षरं, तपस्व्यं इष्टानपूजाविधायिनात्वेवंपञ्चमुद्रा विधानेन  
पञ्चब्रह्माणि अपूजयदितिभावः । विहितपरिकरा, कृतपूजानिधाना, धृवाख्या-  
तज्ञान गतिरित्येकदशविशेषः, अस्ति गमेमध्ये, यस्यास्ताम्, अनन्तरान्तरगति-  
पूर्विकां, पुष्पाञ्जलिमदादित्यनेनान्वयः । अचनिः, पृथ्वा, पवनः, वायुः, गगनं,  
आकाशं, तपनः, सूर्यः, तुहिनकिरणः, चन्द्रः, दहनः अग्निः, सतिलंजलं,  
यजमानः, याज्ञिकः, एताः अवन्याद्यात्मिकाः, ताः, अष्टौ, मूर्तीः ( शंकरस्ये-  
त्यर्थः ) ध्यायन्ती, ध्यानं कुर्वन्ती, अष्टपुष्पिकां, अष्टपद्मान, अदान्, दत्तवती ।  
अयत्रोपनतेन, अनायासप्राप्तेन, फलमूलेन, कन्दादिना, अमृतमपि, पीयूषमपि,  
अतिशिशयिष्यमाणेन, अतिशयितुमिच्छता, स्वादिश्रा, अतिस्वादयुक्तेन, शिशि-  
रेण, शीतेन, शोणवारिणा, शोणनदजलेन, शरीरस्थितिं ( नत्वातृप्तभाजन-  
मितिभावः ) अतिवाहितदिवसा, अतिक्रान्तदिना, तस्मिन्लतामण्डपे, लतागृहे,  
शिलातले, प्रस्तरखण्डे, कल्पितं, निर्मितं, पल्लवानां, शयनं, शय्या, यया,  
एवंभूता, मुष्वाप, पर्याशयनेणैव निद्रालेभे इतिभावः । अन्येद्युरिति—अन्येद्युः,  
अपरदिने, अपि अनेनैवक्रमेण, क्रमशः, नन्तदिनं, अहर्निशं, अत्यवाहयत् ।

एवं अतिक्रामत्सु, गच्छत्सु, दिवसेषु, दिनेषु, गच्छति च काले, समये,  
याममात्रमिव, प्रहरमात्रमिव, उद्भूते, उदिते, रवां, सूर्ये, उत्तरस्यां, उदीच्यां,

हृदमशृणोत् । उपजातकृतुहला च निर्गत्य लतामण्डपाद्विलोकयन्ती  
 विकचकेतकीगर्भपत्रपाण्डुरं रजः संपातं नातिदवीयसि सम्मुखमापतन्त-  
 मपश्यत् । क्रमेण च सामीप्योपजायमानाभिव्यक्तिः तस्मिन्महति शफरोद-  
 रधूसरे रजसिपयसीव मकरचक्रं लवमानं पुरः प्रधावमानेन, प्रलम्बकुटि-  
 लकचपल्लवघटितललाटजटकेन, धवलदन्तपत्रिकाद्युतिहस्मितकपोलभि-  
 ककुम्भि, दिशि, प्रतिशब्देन, प्रतिध्वनिना, पुरितानि, पूरणानि, वनगह्वराणि,  
 काननकन्दराः, येन तं गम्भारतारतरं, अतिशयित गम्भारं, शब्दं, तुरङ्गमाणां,  
 अध्वानां, यानिहं पितानि, शब्दविशेषाः, तेषां, हृदः, निनादः, तं अशृणोत्,  
 कर्णकुहरतामनयत् । उपजातकृतुहला, च, उपजातः, उत्पन्नः, कृतुहलः,  
 आत्मसूक्ष्मं, यया एवंभूता, लतामण्डपात् लतागृहाद्, निर्गत्य, विलोकयन्ती ।  
 विकचेति—विकचं, विकसितं, केतकीगर्भपत्रं, तदाख्यपुष्पपल्लवं, तद्वत्,  
 पाण्डुरं, ईषच्छुभ्रम्, रजःसंपातं, धूलिसमूहं, नातिदवीयसि, अनतिदूरवर्तिनि,  
 ( पार्श्ववर्तिन्येतिभावः ) सम्मुखान्, पुरोयायिमार्गान्, आपतन्तं, आगच्छन्तं,  
 अपश्यत् । क्रमेण च, क्रमशः, सामीप्येति—सामीप्येन, नैकट्येन, उपजाय-  
 माना, प्रादुर्भूता, अभिव्यक्तिः, स्फुटता यस्य तादृशं, अश्ववृन्दं, अश्वसमूहं,  
 ददर्श, अवलोकयत्, इत्यनेनान्वयः । तस्मिन्, ( अश्ववृन्देत्यर्थः ) शफरोदर  
 धूसरे, शफरस्य, मत्स्यस्य, उदरवत् धूसरं, धूसरवर्णकं, तस्मिन्, रजसि,  
 पांशां, पयसाव, जलमिव, मकरेति—मकरचक्रं मकराः, जल जन्तवः, तेषां  
 चक्रं, मण्डलं, तदिव, लवमानं तरमाणां, पुरः, अग्रे, प्रधावमानेन, ( शीघ्र-  
 गमनेनेति भावः ) प्रलम्बेति—प्रलम्बनेन, लम्बमानेन, कुटिलेन, कुक्षितेन,  
 कचः, केशः ( चिकुरः कुन्तलो बालः कचः केशः शिरोरुहः इत्यमरः ) पल्लवइव,  
 नवपत्रमिव, तेन, घटिता, वद्धो, ललाटे, मस्तके, जटकेन, केशबंधेन, एवं-  
 भूतेन । धवलेति—धवलायाः, शुभ्रायाः, दन्तपत्रिकायाः, गजदन्तरचित  
 कर्णाभरणायाः, या, द्युतिः, कान्तिः, तथा हसिता, उद्भासिता, कपोलभित्तिः .



त्तिना. पिनद्धकृष्णागुरुपङ्कच्छुरणकषायकञ्चुकेन, उत्तरीयकृतशिरोवेष्टनेन, वामप्रकोष्ठनिविष्टहाटककटकेन, द्विगुणपट्टपट्टिकागाढग्रन्थिग्रथितासिधेनुना, अनवरतव्यायामकृशकर्कशशरीरेण, वातहरिणायूथेनेवमुहुर्मुहुः खमुड्डीयमानेन, लङ्घितसमविषमावटवटपेन, कोणधारिणा, कृपाणापाणिना, सेवागृहीतविविधवनकुसुमफलमूलपर्णेन, “चल चल याहि याहि, अपसर्पापसर्प पुरःप्रयच्छ पन्थानम्” इत्यनवरतकृतकल

गंडस्थलं, यस्य तेन । पिनद्धेति—पिनद्धः, धारितः, कृष्णागुरुपङ्कस्य, गंधद्रव्यविशेषद्रवस्य, चक्षुराणेन, अधिवासेनेन, कषाय, सुरभिः, कञ्चुकः, वारवाणः, येन, तथाभूतेन, उत्तराधेन, तद् वस्त्रेण, कृतं, शिरोवेष्टनं, उष्णाणं, येन, द्विगुणेति—द्विगुणा, द्विरावृत्ता, या, पट्टपट्टिका, वस्त्रखण्डं, ( पेटिका इति-प्रमिद्धा ) तस्या, गाढेन, कटकेन, ग्रन्थिता, ग्रथिता, निबद्धा, असिधेनुका, क्षुरिका, येन तथोक्तेन । अनवरतेति—अनवरतेन, निरन्तरेण, कृतः, व्यायामः, अङ्गचालनं, तेन, कृशं, ह्रस्वं, कर्कशं, कठिनं, एवंभूतेन शरीरेण, विग्रहेण । वातहरिणा, वाताभिमुखबंधावन्त ते, तेषां यः यूथः, समूहः, तेनेव, मुहुर्मुहुः वारम्बारं, खं, आकाशं, उड्डीयमानेन, अति वेगेनधावमानेनेत्यर्थः । लङ्घितेति—लङ्घितः अतिक्रान्तः, समानां, समतलानां, विषमाणां, विषमप्रदेशानां, अवटानां, उन्मार्गाणां, विटपः, विस्तरः, ( प्रसरेतिभावः ) येन तथा भूतेन । कोणधारिणा, लघुधधारिणा, ( कोणो वाद्य प्रभेदेस्यात् वीणादीनां च वादने, एक देशे गृहा दीनामश्रौं च लघुहेऽपि च इतिमेदिनी ) कृपाणापाणिना, धृतासि हस्तेन, च । सेवेति—सेवार्यं, स्वामिनः, स्वाभिष्टदेवस्य वा, सेवार्थं, गृहीतानि, विविधानि, नानाविधानि, वनस्य, कुसुमानि, पुष्पाणि, फलानि, मूलानि, कन्दानि, पर्णानि, प्रव्राणि, च, येन, तथाभूतेन, चल, चल, याहि, याहि, आगच्छ, आगच्छ, अपसर्पापसर्प, अपगच्छ, पुरः, अग्रतः पन्थानम्, मार्गं, प्रयच्छ, देहि, इति, एवं, अनवरतं, निरन्तरं, कृतः,

कलेन, युवप्रायेण, सहस्रमात्रेण पदातिवलेन सनाथमश्ववृन्दं सन्ददर्श ।

मध्ये च तस्य सार्धचन्द्रेण मुक्ताफलजाल मालिना विविधरत्न खण्डखचितेन शङ्खक्षीर फेन पाण्डुरेण क्षीरोदनेव स्वयं लक्ष्मीं दातु-  
मागतेन गगन गतेनातपत्रेण कृतच्छायम्, अच्छाच्छेनाभरणद्युतीनां  
निवहेन दिशामिव दर्शनानुरागलग्नेन चक्रवालेनानुगम्यमानम्, आनि-  
तम्ब विलम्बिन्या मालतीशेखरस्रजा सकलभुवनविजयार्जितया रूपप-

विहितः, कल कलः लालाहलः, येन तथाक्तेन, युव प्रायेण, तरुणबहुलेन,  
सहस्रमात्रेण, ( सहस्र परिमितेन ) पदातिवलेन, पद चारिसंन्येन, सनाथं,  
सहितां, अश्ववृन्दं, अश्वसमूहं, ददर्श ।

मध्ये इत्यादितः, अष्टादश वर्षायां कश्चिद् युवानमद्राक्षीत्, इत्यनेनान्वयः ।  
मध्ये च तस्य ( अश्ववृन्देत्यर्थः ) सार्ध चन्द्रेण, अर्द्धशशिना, ( इवेतिशेषः )  
मुक्ताफल जाल मालिना, मुक्ताफलानां, मौक्तिकानां, जालं, समूहः, तस्य माला  
यक्, तद्वत् । विविधेति—विविधानां, नानाविधानां, रत्नानां खण्डैः, शकलैः,  
खचितं, घटितं, तेन, शङ्खैः, कम्बुः, क्षीरं, दुग्धं, तस्य यः फेनचयः, डिण्डोर  
निचयः, तद्वत्, पाण्डुरं, श्वेतं, तेन, क्षीरोदनेव, क्षीरोदरागेणैव, ( लक्ष्मी  
जनकेत्यर्थः ) स्वयं, लक्ष्मीं, रमां, दातुमागतेन, प्राप्तेन, गगनगतेन, आकाश-  
स्थितेन, आतपत्रेण, छत्रेण, कृतच्छायम्, कृता छाया, अनातपं ( आतप  
निवारणमित्यर्थः ) कान्तिश्च, यस्य तं । अच्छाच्छेन, स्वच्छेन, आभरणद्युतीनां,  
भूषणप्रभाणाम्, निवहेन, समूहेन, दर्शनानुरागलग्नेन, दर्शने, अवलोकने, यः  
अनुरागः, प्रेम, तेन लग्नं, आसक्तं, तेन दिशां चक्र वालेन, मण्डलेन, अनु-  
गम्यमानं, अनुसृतं, आ नितम्बं, नितम्बपर्यन्तं, विलम्बिन्याः, लम्बमानायाः,  
मालतीशेखरस्रजा, मालतीलतायाः यत् शेखरं, पुष्पं, तेन रचितया शिरो-  
मालया, सकलानां, सर्वेषां, भुवनानां, ( भूःभुवःस्वः स्वरूपाणां ) विजयाय,  
जेतुं, अर्जितया, एकत्रितया ( प्राप्तया इत्यर्थः ) रूपपताकेव, सौन्दर्यं वैजय-

नाकयेव विराजमानम् , समुत्सर्पिभिः शिखण्डकपद्मरागमगोरगुरगुरंशु-  
 जालैरदृश्य मानवनदेवताविधृतैर्वालपल्लवैरिव प्रमृज्यमानमार्गरेणुपरुप-  
 वपुषम् वकुलकुडमलमण्डलीमुण्डमाल मण्डनमनोहरेणा कुटिल-  
 कुन्तलस्त ब्रकमालिना मौलिना मौलिनातपं पिवन्तमिव दिवस्म .  
 पशुपतिजटामुकटमृगाङ्ग द्वितीयशकलघटितस्येव, सहजलक्ष्मीसमालिङ्गि-  
 तस्य ललाटपट्टस्य मनः शिलापङ्कपिङ्गलेन लावण्येन लिम्पन्तमि-  
 न्येव . विराजमानम् , शोभन्तम् , समुत्सर्पिभिः , समुद्रच्छद्भिः , शिखण्डकपद्मरा-  
 गमणैः , शिखण्डकं , शिरो भूषणं , यः , पद्मरागमणिः , तदाख्यमणिः ( रत्नं )  
 तस्य , अरुणः , रक्तैः , ग्रंथुजालैः , किरणानिचयैः । अदृश्यमानेति—अदृश्य-  
 मानया , अदर्शनया , वनदेवतया , वनाधिपत्यादेव्या , विधृताः , धारिताः , तैः ,  
 वालपल्लवैरिव , नवकिमलयैरिव , प्रमृज्यमान मार्गरेणुं , प्रमृज्यमानाः , अपर्णा-  
 यमानाः , मार्गरेणवः , गमनादङ्गलान्नाधृतयः , यस्य तादृशं , अरुणवपुषं , रक्त-  
 शरीरं । वकुलेति—वकुल वृद्धमलानां , वकुलमुकुलानां , मण्डली , मालादिव ,  
 मुण्डमाला , मण्डमाला , तथा मण्डनं , शोभा , तेन , मनोहरेण । कुटिले-  
 ति—कुटिलः , झडिमान , यः कुन्तलानां , कचानां , स्तवकः , गृच्छः , तेषां  
 माला , समूहः , तद्वत् , मौलिना , किराटेन , ( शिरोभूषणं नातिभावः ) मौलिता-  
 तपं , दूरीकृतघर्मं (किराट प्रभावादित्यर्थः ) दिवसं , दिनं , पिवन्तमिव , पानंकृ-  
 तवन्तमिव । पशुपतीति—पशुपतेः , शङ्करस्यजटामु , यत् , मुकुटं , शिरोभूष-  
 णभूतं , यः मृगाङ्गः , अर्द्धचन्द्रः , तस्य द्वितीयं , अन्यं , शकलं , खण्डं , तेन ,  
 घटितस्येव ; रचितस्येव , ( अर्द्धचन्द्राकृतेरित्यर्थः ) सहजेति—सहजा , नैसर्गिकी ,  
 या लक्ष्मीः , शोभा , यद्वा , सहजा , सहोत्पन्ना , या लक्ष्मीः , रमा , ( अतिसौभाग्य-  
 त्वात् , श्रीः निरन्तर मेव सहोदर प्रेम्णा नावमदितिभावः ) तथा समालिङ्गितः ,  
 युक्तः , तस्य ललाट पट्टस्य , मस्तकप्रदेशस्य । मनः शिलेति—मनःशिलाः  
 रक्तवर्णाः , ( मैनमिलधातुविशेषः ) तस्य पङ्कः , द्रवः , तद्रत्नं , पिङ्गलः , गौर-

वान्तरिक्षम् , अभिनवयौवनारम्भावष्टम्भप्रगल्भदृष्टिपातनृणीकृतत्रिभु-  
वनस्य चक्षुषः प्रथिम्ना, विकच कुमुदकुवलय कमलसरः सहस्र संछा-  
दितदशदिशं शरदमिव प्रवर्तयन्तम् , आयतनयननदीसीमान्तसेतुब-  
न्धेन, ललाटनट शशिमणि शिलानलगलितेन कान्तिसलिलस्रोतसेव-  
द्राघीयसा घोणावंशेन शोभमानम् , अतिसुरभिसहकारकर्पूर कल्लोल  
लवङ्ग पारिजातक परिमलमुचा, मत्तमधुकर कुलकोलाहल  
स्वरेण सुखेन सनन्दनवनं वसन्तमिववसन्तम् , असुन्नसुहृत्परिहास-

वर्णः, तेन लावण्येन, सान्द्रयुग, लिम्पन्तामिव, लपन कुवन्तामिव, अन्तारक्षं,  
दिग्भागम् । अभिनवेति—अभिनवस्य, नूतनस्य, यौवनारम्भे, यः, अवष्टम्भः,  
गर्वः, तेनप्रगल्भः, चतुरः, यः, दृष्टिपातः, अवलोकनं, तेननृणी कृतं, तुच्छतां-  
नातं, त्रिभुवनं, त्रिलोकं, येन, तथोक्तस्य, चक्षुषः, नेत्रस्य, प्रथिम्ना, विस्तारेण ।  
विकचेति—विकचनां, विकसितानां, कुवलयानां, नालोत्पलानां, कुमुदानां,  
कमलानां च, सरः सहस्रैः, सरोवरसंघैः, संछदिता, दशदिशो येन, तथाभूतम्,  
शरदमिव, शरत्कालमिवप्रवर्तयन्तम् , प्रकटयन्तं । आयतेति—आयते,  
विशालं, दयने, नेत्रे, एव नयो, तपोः, सामान्तेषु, प्रान्तभागेषु, “यः” सेतु-  
बंधः, पुलनिर्माणं, तेन । ललाटेति—ललाटनटं, मस्तकं, एव शशि मणि  
शिलातलं, चन्द्र कान्त मणैः प्रस्तर तलं, तस्मात् गलितं, निःसृतं, तेन,  
कान्तिसलिल स्रोतसेव, सौन्दर्यजल प्रवाहेणैव, द्राघीयसा, अनिदीर्घेण,  
घोणा वंशेन, नासादगडनेन, शोभमानम् । अतिसुरभीति—अतिसुरभिः, अति-  
शयेन सुगंधवत्, अतएव, सहकारः, आम्रः, कपूरं, कल्लोलकं, लवङ्ग (लौग)  
पारिजातं, तेषां पुष्पविशेषाणां, परिमलं, सुगंधं, मुञ्चतीतिपरिगल मुचा, तेन ।  
मत्तानां, मधुकराणां, षट्पदानां, कोलाहलं, शब्दं, तेन सुखरं, सशब्दं, एवं-  
भूतेन, सुखेन, सनन्दन वनं, नन्दन काननं, वसन्तमिव, ऋतुमिव, वसन्तं,  
तल्लितं । आसन्नेति—आसन्नेन, पार्श्ववर्तिना, सुहृदा, मित्रेण, यः परिहासः,

भावनोत्तानित मुखमुग्धहसितैर्दशनज्योत्स्नास्त्रपितदिङ्मुखैः पुनःपुन-  
र्नभसि सञ्चारिणं चन्द्रालोकमिव कल्पयन्तम्, कदम्बमुकुल स्थूल-  
मुक्ताफल युगलमध्याध्यामितमरकतस्य त्रिकण्टककर्णाभरणास्य प्रेङ्खतः  
प्रभया समुत्सर्पन्त्या स कुसुमहरित कुन्दपल्लव कर्णावतंसमिवोपलक्ष्य-  
माणम् आमोदितमृगमदपङ्कलिखितपत्र भङ्ग भास्वरम्, भुजयुगलमुद्दा-  
ममकराक्रान्त शिखरमिव मकरकेतुदण्डद्वयं दधानम्, धवलब्रह्मसूत्र

हास्यं, तस्य भावना, भावावबोधः, तस्मिन्, उत्तानितं, उन्नमितं, यत्, मुखं,  
आननं, तस्य मुग्धानि, मनोज्ञानि, 'यानि, हसितानि, स्मितानि, तैः । दश-  
नेति—दशनानां, दन्तानां, ज्योत्स्नया, कान्त्या, स्तपितानि, धौतानि, दिङ्मु-  
खानि, दिग्भागानि, येषु तथाभूतैः । पुनः पुनः, वारंवारं, नभसि, आकाशे  
संचारिणं, प्रयटनशीलं, चन्द्रालोकमिव, शशिकिरण शुभ्रत्वमिव, कल्पयन्तं,  
विस्तारयन्तं । कदम्बेति—कदम्बमुकुलवत्, स्थूलं, पानं, यत्, मुक्ताफल  
युगलं, मौक्तिकयुग्मं, तस्य मध्ये, अध्याश्रितं, आश्रितं, मरकतं, तन्नामरत्नं,  
यस्य, यत्र वा, तथोक्तस्य, त्रिकण्टककर्णाभरणास्य, त्रीणि, कण्टकानि,  
( कण्टक सदृश्यः, शलाकाः, इतिभावः, ) यत्र तादृशं, यत्, कर्णाभरणं,  
कर्णाभूषणं, तस्य प्रेङ्खतः, दीप्यमानस्य, प्रकम्पतो वा, समुत्सर्पन्त्या, समुद्गच्छ-  
न्त्या, स कुसुमं, पुष्पमहितं, हरितं, हरिद्वर्णं, कुन्दपल्लवं, कुन्दाख्य वृक्ष  
पत्रं, तदेव, कर्णावतंसं, कर्णाभूषणं, तमिव, उपलक्ष्यमाणम्, प्रतीयमानं,  
आमोदीति—आमोदी, सौरभवान्, यः, मृगमदपङ्कः, कस्तुरिकारसः, तेन  
लिखितः, चित्रितः, यो पत्रभङ्गः, पत्ररचना, तेन भास्वरं, दीप्यमानम् ।  
उद्दामेति—उद्दामेन, उद्धटेन, मकरेण, ( बाहुस्थितमकराकार, मांस पिण्ड  
विशेषः ) तेन, आक्रान्तं, व्याप्तं, ( अधिष्ठितं ) शिखरं, अग्रभागं, यस्य,  
तादृशं, भुजयुगलं, बाहुयुग्मं, मकरकेतुदण्डद्वयं, मन्मथदण्डयुगलम्,  
दधानं, धारयन्तम् । धवलेति—लवलेन, मितेन, ब्रह्मसूत्रेण, यज्ञोपवीतेन,

सीमन्तितं सागरमथनसामर्षगङ्गास्रोतः संदानितमिव मन्दरं देहमुद्वह-  
न्तम्, कर्पूरक्षोदमुष्टिच्छुरणपांशुलेनेव कान्तोच्चकुचचक्रवाक्युगल-  
विपुलपुलिनेनोरःस्थलेनस्थूलभुजायामपुञ्जितम्, पुरो विस्तारयन्त-  
मिव दिक्चक्रम्, पुरस्तादीषदधोनाभिनिहितैककोणकमनीयेन पृष्ठतः  
कक्ष्याधिच्छिप्रपल्लवेनोभयतसंवलनप्रकटितोरुविभागेनहारीतहरितानिवि-  
डनिपीडितेनाधरवाससाविभक्ततनुतर मध्यभागम्, अनवरतश्रमोप-

सीमन्तितं, सन्नद्धम् । सागरेति—सागरस्य, समुद्रस्य, मथनेन, सामर्षा,  
सक्रोपा, ( पतिद्वेषादित्यर्थः ) या गङ्गा, भागीरथी, तस्याः, स्रोतसा, प्रवाहेण,  
सन्दानितमिव, बद्धमिव, मन्दरं, मन्दराचलम्, इव, देहं, शरीरं, उद्वहन्तम् ।  
कर्पूरेति—कर्पूरस्य, क्षोदः, चूर्णं, तस्य मुष्टिः, ( मुष्टिनिहित कर्पूरामतिभावः )  
तस्य च्छुरणं, लेपनं, तेन, पांशुलं, शुभ्रं, तेन । कान्तेति—कान्तायाः,  
स्त्रियाः, उच्च कुचावेव, स्तनौ, एव, चक्रवाक्युगलं, चक्रवाकमिथुनं, तस्य  
विपुलं, बृहत् . पुलिनं, सैकतं, तेनेव, उरःस्थलेन, वक्षःस्थलेन । स्थू-  
लेति—स्थूलेन, पीनेन भुजयोः, आयामेन, विस्तारेण, पुञ्जितं, समाहृतं,  
दिक्चक्रं, दिङ्मण्डलं, पुरः, अग्रे, विस्तारयन्तमिव, प्रसारयन्तमिव ।  
अधोनाभीति—नाभेरधः अधोनाभिः, तत्र, निहितः, स्थापितः, एकः, कोणः,  
अंशः, तेन, कमनीयं, लावण्यमयं, तेन पृष्ठतः, पश्चात् । कक्ष्येति—कक्ष्या-  
याः, काञ्च्याः, “कक्ष्या वृहत्किायां स्यात् काञ्च्यामथ्येभबन्धने” इति मेदिनी”  
अधिच्छिप्तः, वद्धः, पल्लवः, प्रान्तभागो यस्य तेन, उभयतः, उभयोः, भागयोः,  
संवलनेन, सङ्कोचनेन, प्रकटितः, प्रकाशितः, उर्वोर्विभागः, येन, तथाभूतेन,  
( ऊरुशब्दोऽत्र पाद मात्राभिव्यञ्जकः ) हारीत हरिता, हारितः, पक्षिविशेषः,  
तद्वत् हरिद्वर्णं तेन, निविड निपीडितेन, सुदृढनिबद्धेन, अधर वाससा, परिधान  
वस्त्रेण, विभक्तः, प्रकटितः ( विभाजितो वा ) तनुतरः, अतिकृशः, मध्यभागः,  
कटिप्रदेशः, यस्य, तम् । अनवरतेति—अनवरतं, निरन्तरं, कृतः, यः, श्रमः

चितमांसकठितविकटमकरमुखसंलग्नजानुभ्यां विशालवक्षःस्थलोपल-  
वेदिकोत्तम्भन शिलास्तम्भाभ्यां चारुचन्दनस्थासकस्थूलकान्तिभ्या-  
मुरुदण्डाभ्यामुपहसन्तमिवैरावतकरायामम्, अतिभरितोरुभारवहनखे-  
देनेव तनुतरजङ्घाकाण्डं, कल्पपादपपल्लवपाटलस्योभयपार्श्ववल्गु-  
पादद्वयस्य दोलायमानैर्नखमयूखैरश्रमण्डनचामरमालामिव रचयन्तम्,  
अभिमुखमुच्चैरुदञ्चद्विरितिचिरमुपरिविश्राम्यद्विरिव वलितविकटम्, पत-

व्यायामः, तेन, उपचितं, प्रवृद्धं, यत् मांसं, तेन, कठिनं, दृढं, विकटं, वृद्धं,  
मकरमुखं, जानुनोरुपरि प्रदेशं, तेन, संयते, संलग्ने, जानुनी, ययोः, ताभ्याम् ।  
विशालेति—विशालं, वृद्धं, यत् वक्षः स्थलं, उरुतटं, तदेव उपलवेदिका,  
प्रस्तररचितवेदिका, तस्याः, उत्तम्भनाय, धारणाय, शिला स्तम्भा, पाषाण  
स्तम्भा, ( तत्स्वरूपाविनिभावः ) ताभ्याम् । चार्विति—चारुणा, लावण्य-  
वता, चन्दनस्यामकेन, विन्यस्तमलयजेन, स्थूला, अतिशया, कान्तिः, प्रभा,  
ययोः, ताभ्यां, उरुदण्डाभ्यां, जङ्घाप्रदेशाभ्यां, ऐरावत कराऽऽयामम् । इन्द्र  
वारण शुगण्डादण्ड विस्तारम्, उपहसन्तमिव, हास्यं कुर्वन्निव । अतिभरि-  
तेति—अति, अन्यर्थ, भरितयोः, पूरितयोः, उर्वोः, भारस्य, वहनेन, धार-  
णेन, यः वेदः, परिश्रमः, तेनेव, तनुतरः, अतिक्रशः, जङ्घाकाण्डः, जानू,  
अधोभागः, यस्य तं । कल्पपादपेति—कल्पपादपस्य, कल्पतरोः, पल्लवः,  
किसलयः, तद्वत्, पाटलं, ईषद्वत्, तस्य, उभयपार्श्ववल्गु-  
पादद्वयोः, पार्श्वयोः, पार्श्वभागयोः, आलम्ब्यते, इति तादृशस्य, पादद्वयस्य, पाद-  
युगलस्य, दोलायमानैः, प्रकम्पमानैः, नखमयूखैः, नखकिरणैः, । अश्वेति—  
अश्वस्य, तुरगस्य, ( स्व बाहनस्येति भावः ) मंडनं अलंकरणं, चामरमाला,  
तामिव, रचयन्तम्, कुर्वन्तम् । अभिमुखेति—अभिमुखं, सम्मुखं, उच्चैः, उद-  
ञ्चद्विः, उत्पतद्विः, अनिचिरं, अतिसमयं, विश्राम्यद्विरिव, विश्रामं कुर्वद्वि-  
रिव, वलितं, गतिविशेषः, तेन, विकटं, उद्धटं यथा स्यात्तथा पतद्विः, उच्च-

द्विः खुरैः खण्डितभुवि प्रतिक्षणादशनविमुक्तखणाखणायितखरखलीने दीर्घघ्राणलीनलालिकेललाटलुलितचारुचामीकरचक्रके शिञ्जानशात-  
कौम्भजयनशोभिनि मनोरंहसि गोलाङ्गूलकपोलकायलोम्नि नील-  
सिन्धुवारवर्णो वाजिनीसमारुढम्, उभयतः पर्याणपट्टाश्लिष्टहस्ताभ्यामा-  
सन्नपरिचारकाभ्यांदोधूयमानधवलचामरिकायुगलम्, अग्रतः पठतो  
लद्धिः, खुरैः, शफैः, खण्डितभुवि, खण्डिता, खण्डशः कृता, ( उत्पादितेति-  
भावः ) भूः, पृष्ठा, येन, तादृशेन, प्रतिक्षणं, वारम्बारं, दर्शनैः, दन्तैः,  
विमुक्तः, अपसारितः, तेन खणाखणायितः, खणा खणा शब्दवत्, कृतः, खरः,  
कर्कशः, खलीनः, कविका, ( चर्वितेतिभावः ) येन तथाभूतं । दीर्घेति—  
दीर्घायां, वृद्ध्यां, घ्राणायां, नायिकायां, लीनः, लानः, लालिकः, कविकाशे-  
खरं यस्य तादृशे, ललाटे, मस्तके, लुलितं, चञ्चलितं, ( वेगनेतिभावः )  
चारुः, सुन्दरं, यत्, चामीकरचक्रं, सुवर्णवलयं, यस्य, तथाक्ते । शिञ्जा-  
नेति—शिञ्जानं, यत्, शातकौम्भजयनं, “जयनं स्यात्तुरङ्गादि सजाहे” इति  
मेदिनी स्वर्णं रचितं अश्ववर्म, तेन शोभिने, मनोरंहसिः, मन इव रंह, वेगः,  
यस्य तादृशे । गोलाङ्गूलेति—गोलाङ्गूलः, कृष्णमुखवानरः, ( लंगूर इति  
प्रसिद्धः ) तस्य कपोलवत्, गण्डप्रदेशवत्, कालाः, कृष्णवर्णाः, कायलोमानि,  
शरीररोमाणि, यस्य तादृशे । नीलेति—नीलं, यत्, सिन्धुवारं, तदाख्य  
पुष्पं, तस्यैव वर्णो, यस्य तथाभूते । वाजिनि, अश्वे, समारुढम्, स्थितं, उभ-  
यतेति—उभयतः ( उभयोः पार्श्वयोरित्यर्थः ) पर्याणोति—पर्याणपट्टः,  
अश्वपट्टस्थितासनः, तस्मिन्, आश्लिष्टः, संयतः, हस्तः, ( वामकरः,  
इतिभावः, ) याभ्यां, तथोक्ताभ्यां, आसन्नपरिचारकाभ्यां, पार्श्ववर्तिभ्यां, दोधू-  
यमानं, वीज्यमानं, धवलं, शुभ्रं, चामरिकायुगलम्, चामरयुग्मम् ।  
अग्रतः, पुरस्तात्, पठतः, पठनशीलस्य, वन्दिनः, स्तुतिपाठकस्य, सुभा-  
षितेन, सुभाषणेन, अकण्टकिते, रोमाञ्चिते, कपोलफलके, गण्डतटे, यत्र



वन्दिनः सुभाषितमुत्कण्ठकितकपोलफलकेन लग्नकर्णोत्पलकेसरपद्म-  
 शकलेनेव मुखशशिना भावयन्तम्, अनङ्गयुगावतारमिव दर्शयन्तम्, चन्द्र-  
 मयीमिव सृष्टिमुत्पादयन्तम्, विलासप्रायमिव जीवलोकं जनयन्तम्,  
 अनुरागमयमिव सार्गान्तरमानयन्तम्, शृङ्गारमयमिव दिवसमापादय-  
 न्तम्, रागराज्यमिव प्रवर्तयन्तम्, आकर्षणाञ्जनमिव चक्षुषोः, वशी-  
 करणमन्त्रमिव मनसः, स्वस्थावेशचूर्णमिवेन्द्रियाणाम्, असन्तोषमिव  
 कौतुकस्य, सिद्धयोगमिव सौभाग्यस्य, पुनर्जन्मदिवसमिव मन्मथस्य,  
 तथाभूतेन । लग्नेति—लग्नानि, संवत्सरानि, कर्णोत्पलस्य, कर्ण भूषणभूतस्य,  
 कुमुदस्य, केसराणि किञ्चलानि, पद्माणि, नेत्ररोमाणि, ( तेषां ) शक-  
 लानि, खण्डानि, यस्मिन्, तेनेव, मुखशशिना, मुखचन्द्रेण, भावयन्तं, चिन्त-  
 यन्तं । अनङ्गेति—अनङ्गस्य, कामस्य, युगे, समये, अवतारः, अवतरणं,  
 ( जन्मग्रहणमितियावत् ) तमिव, जीवलोकं, मर्त्यलोकं, दर्शयन्तं, चन्द्रमयी-  
 मिव, चन्द्रप्रायमिव, सृष्टिं, सर्गं, उत्पादयन्तम् । विलासप्रायमिव, कामोद्भवा-  
 नन्दमिव, जीवलोकं, जनयन्तम् । अनुरागमिव, प्रेमातिशयमिव, मार्गान्तरं,  
 पन्थानं, तद्भागं च, आनयन्तं, प्रापयन्तम् । शृङ्गारमयमिव, शृङ्गाराख्यरस-  
 मिव, दिवसं, दिनं, आपादयन्तम्, कुर्वन्तम् । रागराज्यमिव, रागः, स्नेहः,  
 तस्यराज्यमिव, एकाधियत्यमिव, प्रवर्तयन्तम् । आकर्षणाञ्जनमिव, कशीकरण-  
 कज्जलमिव, चक्षुषोः, नेत्रयोः, मनसः, चित्तस्य, वशीकरणमन्त्रमिव, वशी-  
 कर्तुं मन्त्रप्रयोगमिव, इन्द्रियाणां, ज्ञानकर्मेन्द्रियाणां, ( चक्षुरादीनामित्यर्थः )  
 स्वस्थावेशचूर्णमिव, ( स्वस्ययथास्थोत्तथा आवेशयतीति तथाभूतं ) चूर्णं,  
 वशीकरणद्रव्यं, तदिव । असन्तोषमिव, अतृप्तिमिव, कौतुकस्य, आश्चर्यस्य ।  
 सौभाग्यस्य, सौजन्यतायाः, सिद्धयोगमिव, सिध्यै, ( कार्याणामित्यर्थः ) योगः,  
 उपायः, तमिव । मन्मथस्य, कामस्य, पुनर्जन्म दिवसमिव, अपरजन्मदिन-  
 मिव । यौवनस्य, रसायनमिव, औषधमिव, ( गुणान्तराधानमित्यर्थः )

रसायनमिव यौवनस्य, एकराज्यमिव रामणीयकस्य, कीर्तिस्तम्भमिव रूपस्य, मूलकोषमिव लावण्यस्य, पुण्यकर्मपरिणाममिव संसारस्य, प्रथमाङ्कुरमिव कान्तिलतायाः, सर्गाभ्यासफलमिव प्रजापतेः, प्रतापमिव विभ्रमस्य, यशः प्रवाहमिव वैदग्ध्यस्य. अष्टादशवर्षं देशीयं युवानमद्राक्षीत् ।

पार्श्वे च तस्य द्वितीयमपरसंश्लिष्टतुरङ्गम्, परंप्रांशुमुत्तप्ततपनीयं स्तम्भावदातं, परिणतवयसमपि व्यायामकठिनकायम्, नीचनखश्मश्रुकचम्, शुक्तिखलतिम्, ईषत्तुन्दिलम्, रोमशोरः स्थलम्, रामणीयकस्य. सौन्दर्यस्य, एकराज्यमिव, अद्वितीयमिव । कीर्तिस्तम्भमिव, यशस्तम्भमिव, रूपस्य । मूलकोषमिव, प्रधाननिधिक्षेत्रमिव, लावण्यस्य, सौन्दर्यस्य, संसारस्य, प्रजायाः, पुण्यकर्मपरिणाममिव, पुण्यफलमिव, कान्तिलतायाः, प्रभावज्ञायाः, प्रथमाङ्कुरमिव, प्रवाहमिव, प्रजापतेः, ब्रह्मणः, सर्गाभ्यासफलमिव । सर्गस्ययत् करणं, निर्माणं, तत्र यः, अभ्यासः, ( अभ्यासनमभ्यासः, ) कर्मणि प्रौढत्वं तस्य यत् फलं, तमिव । विभ्रमस्य, विलासस्य, प्रतापमिव, कान्तिप्रवाहमिव । वैदग्ध्यस्य, नैपुण्यस्य, यशः प्रवाहमिव, यशसां, यत् प्रखण्डं विस्तारं तमिव । अष्टादश वर्षं देशीयं, अष्टादशवर्षवयस्कं, युवानं, प्रौढं, पुरुषं अद्राक्षीत्, अपश्यत् ।

पार्श्वे च तस्य, (दधीचस्येत्यर्थः) द्वितीयं, अपरं, अन्यं, संश्लिष्टतुरङ्गम्, संसक्तं, ( अश्वारूढमित्यर्थः ) परं, अधिकं, प्रांशुं, उन्नतशरीरकमिति यावत् । उत्तमेति—उत्तमं, प्रज्वलितं, यत्, तपनीयं सुवर्णं, तस्य स्तम्भवत्, स्थूणवत्, अवदातः, गौरवर्णः, तं, परिणतवयसमपि, परिणतम्, परिपाकतांगतम्, वयः, अवस्था, यस्य तं, तथाभूतमपि, ( वृद्धमपीति यावत् ) व्यायामेन, निरन्तरअङ्गप्रचालनपरिश्रमेण, काठिन्यतांप्राप्ताकाया, शरीरं, यस्य तं, नीचाः, निम्नाः, ( लम्बमानाः, इतिभावः ) नखाः, श्मश्रवः, मुखबाला

अनुल्बणोदारवेशतया जरामपिविनयमिव शिञ्जयन्तम्, गुणानपि गरिमाणमिवानयन्तम्, महानुभावनामपि शिष्यतामिवजनयन्तम्, आचारस्याचार्यकमिवकुर्वाणम्, धवलवारवाणधारिणम्, धौतदुकूलपट्टिकापरिवेष्टितमौलिं पुरुषम् ।

अथ स युवा पुरोयायिनां यथा दर्शनं प्रतिनिवृत्य विस्मयमानमनसां कथयतां पदानीनां सकाशादुपलभ्यदिव्याकृति, तत्कन्यायुगलकचाः, केशाश्च यस्य, तं, तथाविधं, शुक्लिवलतिं, शुक्लिवत्, शंवृकवत्, खलतिं, खलवाटम्, ईपत्, किञ्चित्, तुन्दिलं, स्थूलोदरं, रौमशं, बहुलामयुक्तं, उरःस्थलं, वक्षःस्थलं, यस्य तथाभूतं । अनुल्बणेति—अनुल्बणं, अनुकटः, ( सौम्येतिभावः ) उदारः, विशुद्धः, वंशो, (सौम्य वक्षपरिधारणमित्यर्थः ) यस्य, तस्य भावः तत्ता, तथा, जरामपि, वृद्धत्वमपि, विनयमिव, अतिनम्रभावमिव, शिञ्जयन्तं, ( पाठयन्तमित्यर्थः ) गौंश्च मिव, गरिमाणमिव, गुणानपि, दाक्षिण्यादानपि, गरिमाणं, गौंश्च तां, आनयन्तं, प्रापयन्तं । महानुभावनामपि, उदारतां ( महत्त्वतामितियावत् ) शिष्यतां, छात्रतां, जनयन्तं, उत्पादयन्तं, आचारस्य, आचार्यकं, ( अभ्यापकत्वमित्यर्थः, ) कुर्वाणं, कुर्वन्तं, ( विद्यानिपुणत्वादितिभावः, ) धवल वारवाणधारिणं, धवलं, सितं, यत् वारवाणं, ( वारयतिदूरीकरोतिवाणं शरमिति वारवाणं, ) कवचं, तं, धारिण, धौतेति—धौतया, प्रक्षालितया, दुकूलपट्टिकया, वस्त्रस्त्रिडकया, परिवेष्टितः, परिश्रितः, मौलिः, चूडा यस्य पुरुषं, ददर्शेत्येषः ।

अथेति—स युवा, पूर्वनिर्दिष्टस्तरूपाः, पुरोयायिनां, अग्रगामिनां, यथादर्शनं, ( पूर्वाङ्कशिलातलेस्थितां, दृष्ट्वेत्यर्थः ) प्रतिनिवृत्य, पुनरागत्य, विस्मयमानसां, विस्मयमानं, आश्चर्यान्वितं, मनः, येषां तथोक्तानां, कथयतां, वदतां, पदानीनां, पदसैन्य चारिणां, सकाशात्, पार्श्वतः, उपलभ्य, ज्ञात्वा,

मुपजात कुतूहलः प्रतूर्णतुरगा दिदृक्षुस्तं लतामण्डपोद्दशमाजगाम ।  
दूरादेव च तुरगादवततार । निवारितपरिजनश्च, तेन द्वितीयेन साधुना-  
सह चरणाभ्यामेव सविनयमुपससर्प । कृतोपसंग्रहणौ तौ सावित्री  
समं सरस्वत्या किसलयासनदानादिना कुसुमफलाध्यावसानेन वनवासो-  
चितेनानिश्चयेन तथाक्रममुपजग्राह । आसीनयोश्च तयोरासीना नातिचि-  
रमिव स्थित्वा तं द्वितीयं प्रवयसमुद्दिश्यावादीत्—‘आर्य, सहजलज्जा  
धनस्य प्रमदाजनस्य प्रथमाभिभाषणमशालीनता, विरोपतो वनमृगीमु-

दिव्या, दर्शन योग्या, आकृतिः, मूर्तिः—एवंभूतं तत् कन्यायुगलम्, दृष्टकन्या-  
युग्मं, उपजातकुतूहलः, उपजातः, उत्पन्नः, कुतूहलः, ( दर्शनाभिलाष इत्यर्थः )  
प्रतूर्णतुरगः, विद्वताश्च, दिदृक्षु, द्रष्टुमिच्छु, तस्य पूर्ववर्णितस्य, लतामण्डप-  
स्य, उद्देशं, प्रान्तभागं, आजगाम, आगतः, दूरादेव च, दूरतः, तुरगात्,  
अश्वात्, अवततार, निवारितपरिजनश्च, निवारितः, निषेधितः, परिजनः, पार्श्व  
वर्तीजनः येन तथाभूतः, तेन द्वितीयेन, अपरेण, साधुना सह वृद्धेनसार्धं, चर-  
णाभ्यामेव, पादाभ्यामेव, सविनयं, यथा स्या-तश्च, उपससर्प, अगमत् ।  
( चरणाभ्यामेवेत्यत्राति विनयं, सूच्यते ) कृतोपसंग्रहणं, कृतं, विहितं, उपसं-  
ग्रहणं, सममानेनग्रहणं, प्रणामादिकं वा ययोः, तथाभूतौ । किसलयासन  
दानादिना, पल्लवनिर्मितयासनदानादिना, कुसुमफलाध्या वसानेन, कुसुमेन,  
पुष्पेण, फलेन च, यत् आर्यं, अर्घ्यदानं ( पूजनमित्यर्थः ) तदेव, अवसानं,  
अन्तं, यस्य, तेन, वनवासोचितेन, वनवासयोग्येन, ( नहि वनवासे नगर  
वस्तूनि लभ्यन्ते अतः ) आतिथ्येन, अतिथिसत्कारेण, यथाक्रमं, यथानियमं,  
उपजग्राह, आदरं चकार ( आदत् वतीतिभावः ) आसीनयोः, उपविष्टयोः, तयोः,  
आसीना, स्थिताः, किञ्चिच्चिरं विलम्ब्य, तं द्वितीयं, प्रवयसं, स्थविरावस्थाकं,  
उद्दिश्य, उद्देश्यमभिनीय, अवादीत्, सहजेति—सहजा, स्वाभाविका, लज्जा-  
तद्गुणं धनं, यस्य एवंभूतस्य प्रमदाजनस्य, कुलम्बाजनस्य, प्रथमाभिभाषणं,

ग्यस्य कुलकुमारीजनस्य । केवलमियमालोकनकृतार्थाय चक्षुषे स्पृह-  
यन्ती प्रेरयत्युदन्तश्रवणकुतूहलिनीश्रोत्रवृत्तिः । प्रथमदर्शनेचोपायन-  
मिवोपनयति सज्जनः प्रणयम् । अप्रगल्भमपि जनं प्रभवता प्रश्रयेणार्पितं  
मनोमध्विव वाचालयति । अयत्रेनैव चातिनम्रेसाधौ धनुषीव गुणः परां  
कोटिमारोपयति विस्मम्भः । जनयन्ति च विस्मयमतिधीरधियामदृष्टपूर्वा  
दृश्यमाना जगति स्रष्टुः सृष्ट्यतिशयाः । यतस्त्रिभुवनाभिभावि रूपमिदं

प्रथमं, प्राक्, अभिभाषणं, आलापनं, अशालीना, शृष्टता, ( चापल्यमिति  
भावः ) विशेषतः, प्रायेण, वनमृगीमुग्धस्य, वनस्यमृगी, हरिणी, तद्वत्  
मुग्धः, सरलः तस्य, ( वनमृगी इत्यत्र जनसम्पर्क राहित्यं व्यज्यते ) कुल-  
कुमाराजनस्य, ( प्रथमाभिभाषणता नाचित्यमेवंत्यर्थः ) केवलं, इयंश्रोत्रवृत्तिः,  
श्रवणेन्द्रियव्यापारः, आलोकनेन दर्शनेन, ( युवयोरितियावत् ) कृतार्थाय,  
मनोरथसिन्धुं, चक्षुषे, नयनाय, स्पृहयन्ती, स्पृहां कुर्वन्ती, ( नेत्रवद् स्वय-  
मपि कृतार्थानां गंतुमिच्छन्तीत्यर्थः ) उदन्तस्य, वृत्तस्य, ( युवयोरितिभावः )  
श्रवणे, श्रोत्रविषयी करणे, कुतूहलिनी, उत्पन्नकुतूहला, प्रेरयति, नियोजयति,  
( आलापयितुंमामिति शेषः ) प्रथमं, अपूर्वमित्यर्थः । दर्शनं, अवलोकनं,  
तस्मिन्, उपायनमिव, उपहारमिव, प्रणयं, स्नेहं, सज्जनः, साधुजनः,  
उपनयति, प्रकटयति । अप्रगल्भमपि, मुग्धमपि, जनं, प्रभवता, महता,  
प्रश्रयेण, विनयेन ( विश्वासेनेत्यर्थः ) अप्रपितं, दत्तं, ( सज्जनायत्तीकृत-  
मितिभावः ) मनः चित्तं, मधु इव, मयमिव, वाचालयति, वाचालं करोति ।  
अयत्नेति—अयत्नेनैव, परिश्रमंविनैव, अतिनम्रेसाधौ, विनीतसाधुजने धनु-  
षीव, कामुकेइव, गुणः, विनयादि, ( मौर्वीच, ) परां कोटिं, परममुत्कर्षं,  
( धनुषः शिखाञ्च ) आरोपयति, स्थापयति, विस्मम्भः, विश्वासः, अतिधीरधियां,  
अतिधीराधीः, बुद्धिर्येषां तथा विधानां, अदृष्टपूर्वाः, पूर्वमनवलोकिताः, दृश्य-  
मानाः, दृष्टिपथं प्राप्ताः, स्रष्टुः, विधातुः सृष्टिः, सर्गः, तस्याअतिशयाः,

मस्यमहानुभावस्यकुमारस्य । सौजन्यपरतन्त्रा चेयं देवानांप्रियस्याति-  
भद्रता कारयति कथां, न तु युवतिजन सहोत्था तरलता । तत्कथयागम  
नेनापुण्यभाक्तमोविक्रमजृम्भित विरहव्यथयाशून्यतां नीतो देशः । क  
वा गन्तव्यम् । कस्य वायमपहतहरदुङ्काराहंकारोऽपर इवानन्यजो युवा ।

उत्कर्षाः ( सर्वश्रेष्ठ वस्तूनीतिभावः ) यतः, त्रिभुवनाभिभाविरूपमिदं,  
त्रिभुवनस्य, भूःभुवः स्वः, इत्यस्य, अभिभावितं, तिरस्कृतं, रूपं येन,  
तथोक्तस्य, महानुभावस्य ( योग्यस्येत्यर्थः ) कुमारस्य ( दधीचस्येति )  
विस्मयं, आश्चर्यं, जनयन्ति, उत्पादयन्ति । सौजन्येति—सौजन्यस्य, सौभा-  
ग्यस्य, परतन्त्रा, परार्थीना, इयं, देवानां, गीर्वाणानां, ( पूज्यानामित्यर्थः )  
अतिभद्रता, शिष्टाचारः, ( तवसर्मपे इतिभावः ) कथां कारयति, ( वद-  
तीत्यर्थः ) ( देवानांप्रियः, इति मूर्खं केचिद् व्याहरन्ति परंनात्र मूर्खशब्दवाच-  
कोऽयं शब्दः प्रणयातिशय बोधकोयमत्र ) युवतिजन सहोत्था, युवतिजनानां,  
प्रीदस्त्रीणां, सहोत्था, नैसर्गिकी, तरलता, चाञ्चल्यं, नतुकथां कारयतीति पूर्वण-  
सम्बन्धः । अथमुनिशार्पं विचिंत्य सरस्वत्याः, भर्तृयोग्यतां दधीचस्य च मनसि  
निधाय परिचयंपृच्छति । तत्कथयेति—तत्, तस्मात्, कथय, वद, आगम-  
नेन कतमोदेशः, अपुण्यभाक्, पुण्यरहितः, कृतः, विक्रमजृम्भितविरहव्य-  
थया, विक्रमेण, वलेन, जृम्भिता, उद्दीपिता, या विरहव्यथा, वियोगपीडा,  
( युवयोरित्यर्थः ) तथा, शून्यतां नीतः ( यस्मादेशाद्भवन्तावागतौ सदशः सां  
प्रतं युवयोः विच्छेदेनातितरंदुःखमनुभवति एतदेव तस्यापुण्यभाक्त्वमित्यर्थः )  
क्ववा गमनं युवयोः कस्येति—(कस्यापत्यमित्यर्थः,) अपहृतेति—अपहतः,  
नाशितः, हरस्य, शिवस्य, हृङ्काराहंकारः, गर्वः, येन, तथाभूतः ( हर क्रोधा-  
नलेनादग्धइत्यर्थः, ) अनन्यजः, नास्ति अन्यस्माज्जन्म यस्यसोऽनन्यजः,  
आत्मभूः, कामः, एवंभूतोऽयं युवा, तरुणः, कस्येति पूर्वणान्वयः । किञ्चान्नः, किं  
नामाभिधेयस्य, समृद्धः, प्रबृद्धः, तपः, यस्य, पितुः ( पातिरक्षतीति पिता )

किं नाम्नः समृद्धतपसः पितुरयममृतवर्षी कौस्तुभमणिरिवहरेर्हृदय-  
माह्लादयति । का चास्य त्रिभुवननमस्या प्रभातसन्ध्येव महतस्तेजसो-  
जननी । कानि वास्य पुण्यभाञ्जि भजन्त्यभिख्यामक्षराणि, आर्यं परि-  
परिज्ञानेऽप्ययमेव क्रमः कौतुकानुरोधिरोहृदयस्य' इत्युक्तवत्यां तस्यां  
प्रकटितप्रश्रयोऽसौ प्रतिव्याजहार 'आयुष्मति, सतां हि प्रियंवदता कुल-  
विद्या । न केवलमाननं हृदयमपि च ते चन्द्रमयमिव सुधाशीतलैरान-  
न्दयति वचोभिः । सौजन्य जन्मभूमयो भूयसाशुभेन सज्जननिर्माणशि-

तस्य अमृतवर्षी, अमृतं, प्रीयुषं, वर्षति, सिञ्चतीति, अमृतवर्षी, कौस्तुभमणि-  
रिव, तदाख्यरत्नमिव, हरेः, विष्णोः, हृदयं, चित्तं, आह्लादयति, आनन्दयति,  
( यथा कौस्तुभमणिः हरेः, हृदयमानन्दयति, तथैवायमपि आनन्दयति जनानां  
चेतांसीत्यर्थः ) ( कौस्तुभमणोरमृतप्रस्रवणं प्रसिद्धम् ) का चास्य ( पुरोदश्य-  
मानस्येतिभावः ) त्रिभुवननमस्या, त्रिलोकीपूज्या, प्रभातसंध्येव, प्रातः काली-  
नसंध्येव, महतस्तेजसः, समृद्धकान्तेः, जननी, माता ( संख्या समये सर्वेऽपि  
प्राणिनः भगवद्स्मरणं कुर्वन्ति, अतः त्रिलोकीपूज्येतिभावः ) तामिव । ( उपमा )  
कानि वास्य, पुण्यभाञ्जिपुण्यवन्तीत्यर्थः । अभिख्यां, संज्ञां, भजन्ति, कथय-  
न्तीत्यर्थः, अक्षराणि, वर्णाः, ( किं नामधेयोयमितिभावः ) आर्यपरिज्ञानेऽपि,  
अयं साधुरितिज्ञानेऽपि, कौतुकानुरोधिनः विशेषपरिचय कर्त्रेः, हृदयस्य, चित्त-  
स्य, अयमेवकमः, नियमः ( ज्ञानपरम्परा, इत्यर्थः ) इत्युक्तवत्यां, एवं कथयन्त्यां,  
तस्यां, ( सावित्र्यामित्यर्थः ) प्रकटित प्रश्रयः, दर्शितसौजन्यः, असौ, प्रतिव्या-  
जहार, प्रत्युत्तरमदात् । सतामिति —सतां, सज्जनानां, प्रियंवदता, मधुरभाषित्वं,  
कुलविद्या, वंशपरम्परागतकला, ( नैसर्गिकीवित्यर्थः ) न केवलमाननं, मुखं,  
अपितु हृदयमपि, चित्तमपि, ते, चन्द्रमयमिव, शशित्वमिव, सुधाशीकर  
शीतलैः, अमृतविन्दुवच्छिशिरैः, वचोभिः, वचनैः ( मधुरालापैरित्यर्थः )  
आनन्दयति, प्रीणयति । मौजन्येति—सौजन्यस्य, सदाचारस्य, जन्मभूमयः,

ल्पकला भवादृश्यो जायन्ते । दूरे तावदन्योन्यस्यालापनमभिजातैः सह दृशोऽपिमिश्रीभूतामहर्ती भूमिमारोपयन्ती । भूयताम् अयं खलु भूषणां भार्गववंशस्य भगवतो भूर्भुवःस्वस्त्रितयतिलकस्य, अदभ्रप्रभावस्तम्भितजम्भारिभुजस्तम्भस्य, सुरासुरमुकुटमणिशिलातलशयन दुर्ललितपादपङ्केरुहस्य, निजतेजः प्रसरलुप्तुलोम्रस्यवनस्य वहिर्वृत्तिजीवितं

उत्पत्तिस्थानानि, भूयसा, बहुलेन, शुभेन, पुण्येन, सज्जननिर्माणे, रचेन, शिल्पकला, शिल्पविद्या, इव, भवादृश्यः, भवत् शदृशाः, जायन्ते, उत्पद्यन्ते । दूरे-इति—अन्योन्यस्य, परस्परस्य, ( सज्जनानामितिशेषः ) आलापनं, भाषणं, दूरे, तावत्, ( तिष्ठन्तिवत्याध्याहार्यम् ) अभिजातैः, सत्कुलोत्पन्नैः, सह, सार्धं, मिश्रीभूताः, संमिश्राः, दृशोऽपि, दृष्टयोऽपि, महर्तांभूमि, स्थानं, ( स्वर्गमितियावत् ) आरोपयन्ति, नयन्ति । अयंखलु, भूषणं, अलङ्कारणं, भार्गववंशस्य, भृगोरयंभार्गवः, तस्य, वंशं, कुलं, तस्य, । भगवतः, भूः, पृथिवी, भुवः, अन्तरीक्षं, स्वः, स्वर्गः, तेषां त्रितयं, तस्य तिलकं, शिरोभूषणं, तस्य । अदभ्रेति—अदभ्रः, महान्, प्रभावः, तेनस्तम्भितः, रुद्धः, जम्भारेः ( जम्भः तदाख्यः, असुरस्तस्यारिशत्रुः ) इन्द्रः, तस्य, भुजएवस्तम्भः, येनतथोक्तस्य, ( पुरा अश्विनी कुमाराभ्यां, यज्ञभागभुजांकरू, इति प्रार्थितोऽयं तथा ताभ्यांभागं द दत्, कुद्धेन इन्द्रेण रोषित, ततश्चास्यसत्रज्रहस्तः, स्तम्भितोऽभूदितिपुराणे अवधेयम् ) सुरासुरेति—सुराणां देवानां, असुराणां, राक्षसानां, “च” मुकुटेषु, मौलिषु, यानि मणिशिलातलानि, रत्नप्रस्तराः, तेषु, शयनेन, दुर्ललितं, दुर्गम्यं, ( अत्यादृतमितिभावः ) पादपङ्केरुहं, चरणकमलं, यस्य, तथाभूतस्य, ( सुरासुर वन्द्यस्येत्यर्थः ) निजेति—निजानां, स्वकीयानां, तेजसां, प्रसरेण, विस्तारेण, झुष्टः, दग्धः, पुलोमा, तदाख्यराक्षसः, येन, तथाभूतस्य, ( पुरा गर्भवतीभृगोः पत्नी पुलोमाराक्षसेन हृता, तदानीं गर्भस्थोऽसौ मुनिर्गर्भाच्चुच्योत, ततश्चान्वर्धनात्प्रा



दधोचो नाम तनयः । जनन्यस्यजितजगतोऽनेकपार्थिवसहस्रानुयातस्य  
शर्यातस्य सुता राजपुत्री त्रिभुवनकन्या रत्नं सुकन्यानाम । तां खलु  
देवीमन्तर्वर्त्त्रां विदित्वा वैजनने मासिप्रसवाय पिता पत्युः पार्श्वात्स्वगृह-  
मानाययत् । असूय च, सा तत्रदेवी दीर्घायुषमेनम् । अनेहसावर्धत तत्रै-  
वायमानन्दितज्ञातिवर्गो बालस्तारकराजइव राजीवलोचनो राजगृहे ।  
भर्तृभवत मागच्छन्त्यामपि दुहितरिनासेचनक दर्शनमिमममुञ्जन्माता-  
महोमनोविनोदनं नप्तरम् । अशिक्ततायं तत्रैवसर्वा विद्याः सकलाश्च-

नेनच्यवनेन राक्षसादयः पुराणो अनुसंधेयाचैषावार्ता ) च्यवनस्य, च्यवननम्रः  
बहिः, बहिर्प्रदेशो, वृत्तिः, अवस्थानं यस्य तादृशं, जीवितं, जीवनाश्रयः, दधोचो-  
नाम, तनयः, पुत्रः, जितजगतः, जगद्विजयिनः, अनेकानि, बहूनि, पार्थिवानां,  
नृपाणां, सहस्राणि, तैः, अनुयातः, अनुगम्यमानः, ( सेवितइत्यर्थः ) तस्य-  
शर्यातस्य, तदाख्यराज्ञः, त्रिभुवनकन्यारत्नं, त्रिभुवने याः, कन्याः,  
तासु, रत्नभूता, सुकन्यानाम, सुकन्याभिधेया, अस्यजननी, माता । तांखलु,  
( सुकन्यामितियावत् ) देवीं, अन्तर्वर्त्त्रां, विदित्वा, ज्ञात्वा, वैजननेमासि,  
प्रसवाय, पिता, ( शर्यातः ) पत्युः, ( च्यवनस्य ) पार्श्वात्, स्वगृहं,  
स्वदेशम्, आनाययत्, अनेहसा, कालेन, आनन्दितः, ज्ञातिवर्गः, कुटुम्बजनः,  
बालस्तारक राज इव, बालचन्द्रइव, राजीवलोचनः, कमलाक्षः, तत्रैव,  
राजगृहे, मातामहेश्वरमनि, भर्तृभवनमागच्छन्त्यामपि मातरि, ( च्यवन-  
पार्श्वसमागतामपिसुकन्यामित्यर्थः ) आसेचनकं, अतितृप्तिकरं, दर्शनं यस्य,  
तदासेचनकंतृप्तेर्गास्तयन्तो यस्य दर्शने । तथाभूतं, मनोविनोदं, मनसः,  
आनन्द जनकं, इमं, मातामहः, शर्यातः, नप्तरं, दौहित्रं, ( दुहिता दूरेहिता  
दोर्धेर्वा पितुः सकाशात् ) न, अमुच्यत्, न प्रेषितवानितभावः । सर्वाविद्याः,  
सकलाः, सम्पूर्णाः, कलाः, चतुषष्टयात्मकाः, तत्रैव, अशिक्त, शिक्ता-  
लेभे । कालेति—कालेन, समयेन, उपारूढयौवनं, जातयौवनं, इमं,

कलाः । कालेन चोपाकृतं यौवनमिममालोक्याहमिवासावप्यनुभवतु मुख  
कमलावलोकनानन्दमस्येति मातामहः कथंकथमप्येनंपितुरन्तिकम-  
धुना व्यसर्जयत् । मामपि तस्य देवस्य सुगृहीतनाम्नः शर्यातस्याज्ञा-  
कारिणं विकृतिनामानं भृत्यपरमाणुमवधारयतु भवती । पितुः पादमू-  
लमायान्तं मया साभिसारमकरोत्स्वामी । तद्धि नः कुलक्रमागतं  
राजकुलम् । उत्तमानां च चिरंतनता जनयत्यनुजीविन्यपि जने किय-  
न्मात्रमपि मन्दाक्षम् । अक्षीणः खलु दाक्षिण्यकोशो महताम् ।  
इतश्चगव्यूति मात्रमिव पारेशोणं तस्य भगवत्स्च्यवनस्य स्वना-

आलोक्य, दृष्ट्वा, आह, उवाच, अहमिव ( मत्सदृशमित्यर्थः ) असावपि,  
( अस्यपिताच्यवनोऽपि, ) अस्य, मुखकमलावलोकनसुखं, मुखपद्मदर्शने यत्सुखं,  
आनन्दः, तं, अनुभवतु, नयतु । ( इतिवचारेयंतिभावः ) मातामहः, शर्यातिः,  
कथंकथमपि, अतिकृच्छ्रेण, पितुरन्तिकं, पितुः पार्श्वगमनाय, अधुना, साम्प्रतं,  
एनं, व्यसर्जयत्, प्रेषितवान् । मामपि, तस्यदेवस्य, नृपतेः, सुगृहीतनाम्नः,  
सुगृहीतनाम यस्य तथोक्तस्य, ( प्रातः स्मरणीयस्येतिभावः ) शर्यातस्य, तदा-  
ख्यस्य, आज्ञाकारिणं, सेवापरायणं, विकृतिनामधेयं, भृत्यपरमाणुं, लुप्ततरं  
किंकरं, भवती, अवधारयतु, जानातु । पितुः पादमूलं, पितुः पार्श्वं, आयान्तं,  
आगच्छन्तं, ( एनमितिशेषः ) मया साभिसारं, ससहायं, स्वामी, प्रभुः, अक-  
रोत् । ( आज्ञापयदित्यर्थः ) तद्धीति—तत्रराजकुलं नः, अस्माकं, कुलक्रमा-  
गतं, ( वंश परम्परासेवितमित्यर्थः ) ह्यति ( निश्चयार्थः ) उत्तमानां, सज्ज-  
नानां, चिरंतनता, ( चिरानुगत्यमित्यर्थः ) अनुजीविनि, सेवके कियन्मात्रमपि,  
अल्पमात्रमपि, मन्दाक्षं, लज्जां, ( चिरकालसेवके महतांलज्जा जायते, इति  
मामनुजीविनमपि स्वदैहित्र सहचरं कृतवानित्यर्थः ) खलु, निश्चयेन, महतां  
दाक्षिण्यकोशः, औदार्यनिधिः, अक्षीणः, ( नक्षयंप्राप्नोतीत्यर्थः ) ( स्वदाक्षि-  
ण्यदेवकृतवानितिभावः ) इतश्च, अस्मात् स्थानात्, पारेशोणं, शोणस्य, नद-

आनिर्मितव्यपदेशं च्यावनं नाम चैत्ररथकल्पं काननं निवासः ।  
तदवधिरेवनौयात्रा । यदि च गृहीतक्षणां दाक्षिण्यमनवहेलं वा हृद-  
यमस्माकमुपरि भूमिर्वा प्रसादानामयं जनः श्रवणार्हो वा ततो न  
विमाननीयोऽयं नः प्रथमः प्रणयः कुतूहलस्य । वयमपि शुश्रू-  
षवो वृत्तान्तमायुष्मत्योः । नेयमाकृतिर्दिव्यतां व्यभिचरति । गोत्र  
नामनी तु श्रोतुमभिलषति नौ हययम् । तत्कथय कतमोवंशः स्पृह-  
णीयतां जन्मना नीतः । का चेयमत्रभवती भवत्याः समीपे समवाय

स्य पारेइति पारेशोणम्, गव्यूतिमात्रं, कोशयुगं. (इव) तदेवतन्मात्रं, तस्मिन्,  
तस्य भगवतः, स्वनाम्ना, निर्मितः, कृतः, व्यपदेशः, संज्ञा यस्य तथोक्तं, चैत्ररथ-  
कल्पं, चैत्ररथं नाम कुबेरोद्यानं, ( तत्सदृशमित्यर्थः ) काननं, उद्यानं, तस्मिन्,  
निवासः, स्थितिः । नौ, आवयोः, यात्रा, गमनं, तदवधिरेव, तदुपर्यन्तमेव,  
गृहीतेति—गृहीतं, स्वीकृतं, क्षणदाक्षिण्यं, स्वल्प कालीन चातुर्यं, येन तथाभूतं,  
अनवहेलं, नास्ति अवहेला, अवज्ञा, ( अपमानं ) यस्य तादृशं, अस्माकंहृदयं  
प्रसादानां, अनुग्रहाणां, भूमिः, स्थानं, श्रवणार्हः, श्रोतुयोग्यः, अयं जनः, न,  
विमाननीयः, अनादरणीयः, ( नोपेक्षणीय इतिभावः ) नः, अस्माकं, अयं,  
प्रथमः, आद्यः, प्रणयः, स्नेहः, कुतूहलस्य, कौतुकस्य, ( श्रवणौत्सुक्यस्ये-  
त्यर्थः ) आयुष्मत्योः, युवयोः, वृत्तान्तं, इतिवृत्तं, शुश्रूषवः, श्रोतुमिच्छावः ।  
( वयमपि'' इत्यत्र द्विवचनपदवाच्ये, आदरार्थवहुवचनम् नाशङ्कनीयोऽयं दोषः )  
इयमाकृति, दिव्यतां, देवत्वमित्यर्थः, न व्यभिचरति, नातिक्रामति, ( नहि  
एतादृशी आकृतिर्दिव्यतांविनाभवितुंशक्यते ) गोत्रनामनो, गोत्रं, वंश प्रवर्तकः  
नाम, अभिधेयं, च, श्रोतुं, कर्णविषयीकर्तुं, नौ, आवयोः, हृदयं, अभिलषति,  
इच्छति । तत्कथय, वद, कतमोवंशः, कुलं, जन्मना, जन्मग्रहणेन, स्पृहणीयतां,  
स्पर्धायोग्यतां, नीतः, ( कस्मिन्कुले अस्या जन्म इतिभावः ) इयं, पुरोदश्यमाने-  
त्यर्थः, अत्रभवती, पूज्या, भवत्याः, तव, समीपे, पार्श्वे, विरोधिनां, परस्पर विरु-

इव विरोधिनां पदार्थानाम् । तथाहि । संनिहितबालान्धकारा भास्वन्मूर्तिश्च, पुण्डरीकमुखी हरिणलोचना च, बालातपप्रभाधरा कुमुदहासिनीच, कलहंसस्वना समुन्नतपयोधरा च, कमलकोमलकरा हिम-

द्धानां, पदार्थानां, वस्तूनां, समवायइव, नित्यसंबंधइव, का, (एषातिशेषः) तथा-  
हि, तमेवार्थमवगच्छेत्यर्थः । सन्निहित बालान्धकारा, सन्निहिताः, बालाः, नवाः,  
अन्धकाराः, तमांसि, भास्वन्मूर्तिश्च, भास्वतः, सूर्यस्य, मूर्तिः, ( सूर्यमूर्ति-  
सकासे अन्धकाराः नसम्भाव्यन्ते, अतः-विरोधः ) सन्निहिताः, सङ्गताः, बालाः,  
केशाः, अन्धकारा तमांसि, इव यस्याः सा, भास्वन्मूर्तिः, भास्वती, दीप्य-  
माना, मूर्तिर्यस्यास्तथोक्ता, इतिपरिहारः । पुण्डरीकमुखी, पुण्डरीकः, तदाख्य-  
दिग्गजः, सिंहो वा, तस्येव, मुखं, यस्याः, हरिणलोचना च, हरिण इव, मृग-  
इव, लोचने, वज्रे यस्याः, तथोक्ता, ( या च व्याघ्रमुखी सा हरिण लोचनाकथं,  
इति विरोधः ) पुण्डरीकं, श्वेतपद्मं तद्वदमुखंयस्याः, तथाभूता, हरिणलोचनाच,  
( याहि कमलमुखी सातुहरिण लोचनाभवितुं शक्या एवेतिपरिहारः ) बालात-  
पेति—बालातपस्य, सूर्यस्य, प्रभां, धरतीति, तथोक्ता, कुमुदहासिनी च, कुमु-  
दवत् हासोविद्यतेयस्याः, तथाभूता, ( यत्र हि बालातपः, तत्र कुमुद हसनं,  
नैवसंभवति तस्य रात्रौ विकसन शीलत्वात् अतः विरोधः ) बालातपः नव-  
सूर्यालोकः, ( ईषद्रक्तमित्यर्थः ) तस्यप्रमेव, प्रभा, कान्तिः, यस्य तथाभूतः,  
अधरः, ओष्ठः, यस्याः, तथाभूता, इति परिहारः । कलहंसेति—कलः,  
मधुरः, हंसस्य, स्वनः, शब्दः, यस्याः, तथाभूता, समुन्नतपयोधरा च, समुन्नताः,  
समुन्नदाः, पयोधराः, मेधाः, यस्यां तथोक्ता ( प्रावृडित्यर्थः ) ( नहि प्रावृट्  
काले हंसानां स्वनःश्रूयते, यतः ते मानसं प्रयान्ति तत्समये, अतः-विरोधः )  
कलः, मधुरः, हंसस्येव, स्वनो यस्यास्तथोक्ता, समुन्नताः, प्रवृद्धाः, पयोधराः,  
स्तनाः, यस्यास्तथोक्ता, इतिपरिहारः । कमलेति—कमलं, पद्मं, तद् कोमलौ,  
करौ हस्तौ, यस्याः, तथोक्ता, हिमगिरेः, हिमालयस्य, शिलावत्, पृथुः,

गिरिशिलाप्रथुनितम्बा च, करभोरुर्विलम्बितगमना च, अमुक्तकुमारभावा स्निग्धतारका च, इति । सा त्ववादीन्-आर्य, श्रोष्यसिकालेन । भूयसो दिवासानत्र स्थातुमभिलषति नौ हृदयम् । अल्पीयांश्चायमध्वा । परिचय एव प्रकटीकरिष्यति । आर्येण न विस्मरणीयोऽयमनुषङ्गदृष्टोजनः, इत्यभिधाय तूष्णीमभूत् । दधीचस्तु नवाम्भोभारगम्भीराम्भो

महान्, नितम्बः, कटकं, यस्याः, तथोक्ता, ( याहि कोमलकरा साकथं हिमशिला प्रथुनितम्बा तस्याश्चक्राठिन्यत्वात् विरोधः । सादृश्यात्, यथा हिमगिरेः शिला प्रवृद्धाशुभाचभवति तथैवास्याः नितम्बमपिभाति, इति परिहारः । करभोरुः, करभस्य, उष्ट्रस्य, उरु इव उरुः-यस्याः तथाभूता, विलम्बितं, अतिमंदं, गमनं, यस्याः, तथोक्ता, ( याउष्ट्रवद्गच्छति साकथं विलम्बितगमना इति विरोधः ) करभः, करप्रान्तभागः तद्वत्, उरुः, जङ्घायस्याः सा, ( अतिकोमल जङ्घा अतएव विलम्बित गमना इति परिहारः । अमुक्तकुमारभावा, नमुक्तः, नत्यक्त, कुमार भावः, वाल्यं ( शैशवमित्यर्थः ) स्निग्धतारका, स्निग्धा, स्नेह प्रकाशिका, ( प्रणयप्रकाशिनीत्यर्थः ) तारका, अक्षयः कनीनिका, यस्यास्तथोक्ता ( यथा बालभावः नत्यक्तः सानहिजानातिप्रेमबंधनं, इति विरोधः । कुमारे, कार्तिकेये, भावः, भक्तिर्यस्याः तथोक्ता, इति परिहारः । स्निग्धः, प्रेमपात्रं, तारकः, तन्नाम दैत्यः, ( कुमार भक्तायाः कुमार शत्रुं प्रति स्नेहोविरुद्धः, इति पूर्वार्धे परिहारः ) इति, एवं, सातु, अवादीत्, अकथयत् । आर्य ? कालेन, समयेन, श्रोष्यति, ( अस्याः वृत्तमितियावत् ) भूयसः, बहून्, दिवसान्, अत्र स्थातुं, नौ, आवयोः, हृदयं, अभिलषति, इच्छति । अल्पीयान्, अत्यल्पः, अध्वा, मार्गः, परिचयः, संस्तवः, प्रकटीकरिष्यति, प्रकाशयिष्यति । अनुषङ्गदृष्टः, अनुषङ्गेण, कार्यान्तर संलग्ने, दृष्टः, अवलोकितः, अयं जनः ( सरस्वती-रूपः ) आर्येण, भवता, नविस्मरणीयः, स्मृतिपथनेयः, रावेति भावः, इत्यभिधाय, इत्युक्ता, तूष्णीमभूत्, मौनं दधार । नवाम्भोभारेति—नवानां,

धरध्वाननिभया भारत्या नर्तयन्वनलताभवनभाजो भुजगभुजः सुधी-  
रमुवाच आर्य, करिष्यति प्रसादमार्याराध्यमाना । पश्यामस्तावत्ता-  
तम् । उत्तिष्ठ, व्रजामः, इति । तथेति च तेनाभ्यनुज्ञातः शनकैरुत्थाय  
कृतनमस्कृतिरुच्चचाल । तुरगारूढं च तम् प्रयान्तं सरस्वती सुचि-  
रमुत्तम्भितपद्मणा निश्चलतारकेण लिखितेनेवचक्षुषा व्यलोकयत् ।  
उत्तीर्य शोणमचिरेणैवकालेन दधीचः पितुराश्रमपदं जगाम । गते  
च तस्मिन्सा तामेवदिशामालोकयन्तीसुचिरमतिष्ठत् । कृच्छ्रादिव च  
संजहार दृशम् अथ मुहूर्तमिवस्थित्वा स्मृत्वा च तां तस्य रूपसंपदं पुनः

नूतनानां, ( सद्यसञ्चितानामित्यर्थः ) अम्भसां, जलानां, भारेण, गम्भीरोद्योऽ-  
म्भोधरध्वानः, पयोधरनादः, तन्निभया, तत्सदृशया, भारत्या, वाण्या, नर्तयन्,  
वनलताः, वल्लर्यः, एव, भवनानि, सद्धानि, भजन्ते, आश्रयन्ते, तथोक्तान्  
( भुजगान्, सपान्, भुज्रते इति भुजगभुजः ) तान्, मयूरान् । तैरिवयथा-  
स्यात्तथा, सुधीरं, धैर्याविष्टम्भपूर्वकं, उवाच, अगादीत् । आर्य ! आर्या, श्रेष्ठा,  
( एषा, इतिभावः ) आराध्यमाना, सेव्यमाना, ( सेवितेत्यर्थः ) प्रसादं, अनु-  
ग्रहं, करिष्यति । पश्यामस्तावत्तात, पितरम् । उत्तिष्ठं, व्रजामः, गच्छामः ।  
तथा, तेनप्रकारेण, तेनाभ्यनुज्ञातः, अनुमोदितः, शनकैः, शनैः, उत्थाय, कृत-  
नमस्कृतिः, विहितनमस्कारः, उच्चचाल, प्रतस्थे । तुरगारूढं, अश्वारूढंचतं,  
प्रयान्तं, गच्छन्तं, उत्तम्भितेन, निश्चलेन, पद्मणा, निश्चलतारकेण,  
स्थिरकिनीनिकया, च, लिखितेनेव, चित्रितेनेव, चक्षुषा, नेत्रेण, सुचिरं,  
अतिसमयं, व्यलोकयत्, ददर्श । शोणमुत्तीर्य, शोणमदावतरणं विधाय,  
अचिरेणैव, सत्वरमेव, कालेन, समयेन, दधीचः, पितुराश्रमपदं, पितुः पाद-  
मूलं, जगाम, गतः । गते च तस्मिन्, ( दधीचगमनानन्तरमित्यर्थः ) सा-  
तामेवदिशं, तमेवदिग्भागं, आलोकयन्ती, पश्यन्ती, सुचिरं, बहुकालं, अति-  
ष्ठत्, स्थितवती । कृच्छ्रात्, काठिन्येन, च, दृशं, दृष्टिम्, संजहार, न्यवर्तयत् ।

पुनर्व्यस्मयतास्याः हृदयम् । भूयोऽपि चक्षुराचक्राङ्क्षु तद्दर्शनम् । अव-  
शेव केनाप्यनीयत तामेव दिशं दृष्टिः । अप्रहितमपिमनस्तेनैव सार्धम-  
गात् । अजायत च नव पल्लव इव बालवनलतायाः कुतोऽप्यस्या अनु-  
रागश्चेतसि । सालसेव शून्येव सनिद्रेव दिवसमनयत् ।

अस्तमुपयाति च प्रत्यक्पर्यस्तमण्डले लाङ्गलिकास्तवकताम्र-  
त्विषि कमलिनीकामुके कठोरसारसशिरः शोणशोचिषि सावित्रे त्रयीम-

अथ, अस्मादनन्तरं, मुहूर्तमिव स्थित्वा, अल्पकालंस्थित्वा, तां, तस्य ( दधी-  
चस्तेति यावत् ) रूपसंपदं, रूपनिधिं ( लावण्यमित्यर्थः ) स्मृत्वा, च, स्मरणं  
विधाय, पुनः पुनः, बारं बारं, अस्याहृदयं, चित्तं, व्यस्मयत, विस्मयमगच्छत्  
भूयोऽपि, पुनरपि, चक्षुः, नेत्रं, तद्दर्शनं, आचक्राङ्क्षु, ऐच्छत् । अवशेति—  
अवशेव, परार्थमेव, केनापि, केनचिदपि, तामेव दिशं, दिग्भागं, दृष्टिः, अनी-  
यत, नीयते, अप्रहितेति—अप्रहितमपि, अप्रेरितमपि ( अनियुक्तमपीत्यर्थः )  
मनः, चित्तं, तेनैवसार्धं, ( दधीचेनसहेत्यर्थः ) अगात्, अगमत् । बाल वनल-  
तायाः, वनवल्ल्याः, कुतोऽपि, नवपल्लव इव, नूतनपत्र इव, अस्याः, ( सर-  
स्वत्या इति यावत् ) चेतसि, मनसि, अनुरागः, स्नेहः, अजायत, उत्पन्नः,  
शून्येव, रिक्तेव, सालसेव, आलस्ययुक्तेव, सनिद्रेव, निद्रितेव, दिवसं, दिनं,  
अनयत्, अत्यवाहयत् ।

अस्तमुपयाति, अस्तंगच्छति, प्रत्यक् पर्यस्तमण्डले, प्रतीच्यां, पश्चिमायां-  
दिशि, पर्यस्तं, पतितं, मंडलं, यस्य तथाभूते । लाङ्गलिका, औपध्वविशेषः,  
तस्याः, यत्, स्तवकं, गुच्छं, तद्वत्, तान्त्राः, रक्तवर्णाः, त्विषः, प्रभाः, यस्य  
तथाभूते । कमलिनीकामुके, ( विकाशशीलेत्यर्थः ) कठोरेति—कठोरः,  
कठिनः, ( वृद्धत्वमुपगत इत्यर्थः ) यः सारसः, पक्षिविशेषः, तस्यशिर इव,  
शोणा, रक्तवर्णा, शोचि, कान्तिः, यस्य, एवंभूते, सावित्रे, सवित्रुरिदं सावित्रं,  
तस्मिन् ( सूर्ये ) त्रयीमपे, ( ऋग्यजुः सात्रांत्रितयं त्रयी ) तदात्मके, तेजसि,

येतेजसि, तरुणातर तमालश्यामले च मलिनयतिव्योमव्योमव्यापिनि तिमिरसंचये, संचरत्सिद्धसुन्दरी नूपुररवानुसारिणि च मन्दंमन्दंमन्दाकिनीहंसइव समुत्सर्पति शशिनि गगनतलम्, कृतसंध्याप्रणामानिशामुख एव निपत्य विमुक्ताङ्गी पल्लवशयने, तस्थौ । सावित्र्यपि कृत्वा यथाक्रियमार्गं सायंतनं क्रियाकलापमुचिते शयनकाले किसलयशयनमभजत । जातिनिद्रा च सुप्वाप ।

इतरा तु मुहुर्मुहुर्अङ्गवलनैर्विलुलित किसलयशयनतला निमीलित-

( प्रमायुक्ते इत्यर्थः ) तरुणेति—तरुणातरः, नूतनः, तमालः, तदाख्यवृक्षः, तद्वत्, श्यामलः, ईषञ्चालवर्णः, तस्मिन्, व्योम, आकाशं, मलिनयति, मलिनतांनयति, व्योमव्यापिनि, आकाशमाच्छादिति, तिमिरसंचये, अन्धकार पटले सञ्चरदिति—सञ्चरन्तीनां, इतस्ततः गच्छन्तीनां, सिद्धसुन्दरीणां, सिद्धस्त्रीणां, नूपुररववत्, अलङ्कारशब्दवत्, अनुसरति, अनुगच्छति, मंदं मंदं, शनैः शनैः, मन्दाकिनी हंस इव, गंगा हंस इव, समुत्सर्पति, समुद्रच्छति, गगनतलं, आकाशे, शशिनि, चन्द्रे । कृतेति—कृतः, संध्यायां, संध्यायै वा, प्रणामः नमस्कारः, यथा तथोक्ता, ( उपासितसंभ्येतिभावः ) निशामुखमेव, प्रदोषसमय एव, ( नहि शयन कालेइत्यर्थः, ) निपत्य ( नच यथाशयनमितिभावः ) विमुक्ताङ्गी, निहितशरीरा, ( निःसहाया इतिभावत्, व्यज्यतेविमुक्ताङ्गीशब्देन ) पल्लवशयने, किसलयशयने, तस्थौ, स्थितिचकार । सावित्र्यपि, यथाक्रियमार्गं येनकेन प्रकारेण विहितं, सायंतनं, संध्यादिकर्म, यथा एवंभूता, उचिते, युक्ते, शयनकाले, समये, किसलय शयनं, पत्रशय्यां, अभजत, प्राप, जातिनिद्रा च, प्राप्तिनिद्रा च, सुप्वाप, शयनमकरोत् ।

इतरा तु, ( सरस्वतीत्यर्थः ) मुहुर्मुहुः, बारं बारं, अङ्गवलनैः, अङ्गचालनैः, ( इतस्ततः, अङ्गप्रक्षेपैरित्यर्थः ) विलुलितेति—विलुलितं, अवगाहितं, किसलयशयनतलं, पल्लवशय्या, यथाः, तथाभूता, निमीलित लोचनापि, निमी



लोचनापि नाभजत निद्राम् । अचिन्तयच्च—‘मर्त्यलोकः—खलु सर्व-  
लोकानामुपरि, यस्मिन्नेवं विधानि संभवन्ति त्रिभुवनभूषणानि सकल-  
गुणग्रामगुरूणि रत्नानि । तथाहि । तस्यमुख लावण्यविन्दुरिन्दुः । तस्य  
च चक्षुषो विल्लेपा विकचकुमुदकुवलयकमलाकराः । तस्य चाधरमणो-  
दीधितयोविकसितबन्धूकवनराजयः । तस्य चाङ्गस्यपरभागकराणाम-  
नङ्गः । आः! पुण्यभाञ्जि तानि चक्षूषि चेतांसि यौवनानि वा स्त्रीणानि,  
येषामसौ विषयोदर्शनस्य । क्षणं नु दर्शयता च तमन्यजन्मजनिकृते-

लिने, संकृषिते, लाचने, नेत्रे, यथा, तथाभूतापि, निद्रां, नाभजत, न, प्राप ।  
अचिन्तयच्च, चिन्तयामास, च, मर्त्यलोकः, भूलोकः, सर्वलोकानां, स्वर्गपाना-  
लादीनां, उपरि, श्रेष्ठः । यस्मिन् ( मर्त्यलोके, इतियावत् ) त्रिभुवनभूषणानि,  
( भूः-भुवः-स्वः, अलंकरणानि, सकल ग्राम गुरूणि, सकलाः, गुणाः, दाक्षि-  
ण्यादयः, तेषां ग्रामः, समूहः, तेनगुरूणि, महान्ति, एवंविधानि, एतादृशानि,  
रत्नानि, सम्भवन्ति, उत्पद्यन्ते । तस्य ( दधचीस्त्वत्यर्थः ) मुखस्य, वदनस्य,  
यत्, लावण्यं, चारुत्वं, ( सौन्दर्यमितियावत् ) तस्य, विन्दुः, कलाः, ( अल्प  
मात्रलावण्यमित्यर्थः ) इन्दुः, चन्द्रः, । तस्य, चक्षुषोः, नयनयोः, विल्लेपाः,  
निपाताः, ते, एव, विकचानां, विकसितानां, कुमुदानां, कैरवाणां, कुवलयानां,  
नीलोत्पलानां, कमलानां, पद्मानां, च, आकराः, निचयाः । अधरमणोः, अध-  
रोष्ठस्य, दीधितयः, किरणाः, ( एत्रेतिशेषः ) विकसितानां, प्रफुल्लितानां, बन्धू-  
कानां, पादपविशेषाणां, यत् वनं, काननं, तस्य राजयः, पङ्क्तयः । तस्य, च,  
अङ्गस्य, शरीस्य, परभाग करणं, ( अन्यावयवमित्यर्थः ) अनङ्गः, कामः ।  
( अस्य, दधौचस्यकामः द्वितीयंशरीरमितिभावः ) आः, इतिहर्षविषादयोः ।  
पुण्यभाञ्जि, पुण्यानिभजन्ते इति तानि, स्त्रीणानि, स्त्रीणां, नारीणां, इमानि  
( तत्सम्बन्धीनि-इत्यर्थः ) अथवा, स्त्रीणां समूहाः, स्त्रीणानि, नारीजातयः ।  
येषां, ( चक्षुरादीनामितिभावः ) असौ ( पूर्वनिर्दिष्टेयुवा ) दर्शनस्य, अवलोक

नेव मे फलितमधर्मेण । का प्रतिपत्तिरिदानीम्' इति चिन्तयन्त्येव कथं  
कथमप्युपजातनिद्राक्षणमशेत । सुप्ता च तं दीर्घलोचनं ददर्श । स्व-  
प्रासादितद्वितीयदर्शना चाकर्णाकृष्टकार्मुकेण मनसि निर्दयमताड्यत  
मकरकेतुना । प्रतिबुद्धाया मदनशरताडितायाश्च तस्या वार्तामिवोपल-  
ब्धुमरतिराजगाम । तथा हि । ततः प्रभृति कुसुमधूलिधवलिताभिर्वनल-  
ताभिरताडिताऽपि वेदनामधत्त । मन्दमन्दमारुनविधुतैः कुसुमरजोभिः

नस्य, विषयः, गांचरः, ( दर्शनपथि गत इत्यर्थः ) क्षणं, क्षणमात्रं ( निमेष-  
मात्रमितियावत् ) नु, ( इतिवितर्के ) दर्शयता, अवलोकयन्त्या, च, अन्येति—  
अन्यजन्मनि, पूर्वजन्मनि, यः, जनिः, जन्म, ( निन्दित कर्मणामित्यर्थः )  
तत्कृतेनैव, तदुद्धवेनैव, मे, मम, अधर्मेण, पापेन, फलितं, ( पूर्वजन्मकृतक-  
र्मणा ईदृशीविकृतिर्जाता, इतिभावः ) इदानीं, साम्प्रतं, का प्रतिपत्तिः, इति  
कर्तव्यता, ( किमनुष्ठेयमितिभावः ) इति चिन्तयन्त्येव, विचार्यमाणा एव, कथं  
कथमपि, केनापिप्रकारेण, ( अतिकृष्टादितिभावः ) उपजातनिद्रा, प्राप्तनिद्रा,  
क्षणं, क्षणमात्रं, ( नत्वधिकमित्यर्थः ) अशेत, सुप्ता ( च ) तं, दीर्घलोचनं  
( दधोचमितियावत् ) ददर्श, अपश्यत् । स्वप्नेति—स्वप्ने, निद्रावस्थायां,  
आसादितं, प्राप्तं, द्वितीयं, अपरं, दर्शनं, ( तस्येत्यर्थः ) यया एवंभूता ।  
आकर्णाकृष्टं, कर्णपर्यन्तं, आकृष्टं, कर्षितं, कार्मुकं, धनुः, येन, एवं भूतेन,  
मनसि, हृदि, निर्दयं, दयारहितं यथास्यात्तथा, ( निष्ठुरभावेनेत्यर्थः ) मकर  
केतुना, कामेन, अताड्यत, ताडिता । प्रतिबुद्धायाः, जागरितायाः, मदनशर  
ताडितायाः, कामबाणपीडितायाः, तस्याः, ( सरस्वत्याः, इतिभावः ) वार्ता,  
वृत्तं, उपलब्धुं, ज्ञातुं, अरतिः, वस्तु वैराग्य कामदशा । आजगाम, प्राप्तः ।  
ततः प्रभृति, तदारभ्य । कुसुमेति—कुसुमानां, धूलिभिः, परागैः, धवलिता,  
शुभ्रतानीता, ताभिः, वनलताभिः, अताडिताऽपि, अपीडिताऽपि, वेदनां,  
व्यथां, अधत्त, अनुबभूव । ( लता स्पर्शं सुखमनुभव एव जनानां परं अस्या-

अदूषित लोचना अपि अश्रुजलं मुमोच । हंसपक्षतालवृन्तचय विधुतैः  
 शोणशीकरैः असिक्ताऽपि आर्द्रतामगान् । प्रेङ्खन्कादम्बमिथुनाभि-  
 रनूढाऽप्यधूर्गत वनकमलिनी कल्लोलदोलाभिः । विघटमानचक्रवाक  
 युगलविस्मृष्टैः अस्पृष्टाऽपि श्यामनाम् आनतान विरहनिश्वासधूमैः ।  
 पुष्पधूलीधूसरैरदृष्टाऽपि व्यचेष्टत मधुकर कुलैः । अथ गणारात्रापगमे  
 निवर्तमानस्तेनैव वर्त्मना तं देशमागत्य तथैव निवारित परिजनश्छ-  
 स्तुविपरीतमेवेत्यर्थः ) मन्दं मन्दं, शनैः शनैः, यथास्यात्तथा, मारुत विधुतैः,  
 वायु प्रकम्पनैः, वृमुमरजोभिः, पुष्पधूलिभिः, अदूषित लोचना, अकलुषितनेत्रा  
 अपि, ( अर्पति संभावनायाम् ) अश्रुजलं, मुमोच, त्यत्याज । हंसानि—  
 हंसानां, पक्षाण्य तालवृन्तचयाः, व्यजन समूहाः, तैः, विधुताः, क्षिताः, तैः,  
 शोणशीकरैः, शोणस्य, तन्नाम नदस्य, शीकराः, जलकणाः, तैः, असिक्ताऽपि,  
 अलेखिताऽपि, आर्द्रतां, 'जाड्यं', अगान् । प्रेङ्खदिति—प्रेङ्खन्ति, सञ्चरन्ति,  
 कादम्बानां, कलहंसानां, मिथुनानि, युग्मानि, यासु, यथाक्ताभिः, वन कमलिनी  
 कल्लोल दोलाभिः, वनेषु, याः, कमलिन्यः, पद्मिन्यः, ताः, एव, कल्लोलदोलाः,  
 लहरि रूपाः, दोलन यंत्राणि, ताभिः, अनूढाऽपि, अनुपदेशिताऽपि, अधूर्गात्,  
 प्रकम्पत । निघटमानेति—विघटमानैः, विरहंप्राप्यमारुतैः, चक्रवाकानां,  
 युगलैः, मिथुनैः, विस्मृष्टाः, त्यक्ताः, तैः, विरहनिश्वासधूमैः, विरहे, वियोगे,  
 ये, निश्वासाः, ते धूमाश्च, तैः, अस्पृष्टाऽपि, अस्पर्शिताऽपि, श्यामनां,  
 कालुष्यं, ( शृङ्गाररसमलिनताज्ञापकमितिभावः ) आनतान, विस्तारितम् ।  
 पुष्पेति—पुष्पाणां धूलिभिः, रजैः, धूसराः, कपिशाः, तैः, मधुकरकुलैः,  
 षट्पदसमूहैः, अदृष्टाऽपि, अदर्शिताऽपि, व्यचेष्टत ( तेषां रचैः पीडिता भूमौ विलु  
 लित वतीत्यर्थः ) अथेति—गणारात्रापगमे, वक्ष्योनिशाः, गणारात्रं, तस्यापगमे,  
 अतिक्रान्ते, तेनैव वर्त्मना, मार्गेण, निवर्तमानः, प्रतिनिवृत्तः, तं देशं,  
 ( शोणप्रान्तमितियावत् ) आगत्य, तथैव ( पूर्वनिर्दिष्टमिव ) निवारितः,

त्रधारद्वितीयो विकुञ्चिर्दुर्दौके । सरस्वती तु तं दूरादेव संमुखमाग-  
च्छन्तं प्रीत्या सम्यक्समुत्थाय वनमृगोवोद्ग्रीवा विलोकयन्ती मार्गपरि-  
श्रान्तमस्त्रपयदिवधवलितदशदिशा दशा । कृतासनपरिग्रहं तु तं प्रीत्या  
सावित्री, पप्रच्छ—आर्य, कञ्चित्कुशली कुमारः' इति । सोऽब्रवीत्—  
आयुष्मति, कुशली । स्मरति च भवत्योः । केवलममीपुदिवसेषु तनी-

परिजनः, सहचरजनः, धन, तथाभूतः, छत्रधार द्वितीयः, ( छत्रधारंणमहे-  
त्यर्थः ) विकुञ्चिः, तन्नामदर्धाचसहचरः दुर्दौके, प्राप्तः, ( आगत इतियावत् )  
सरस्वती तु, तंदूरादेव, दूरतः, एव, सम्मुखं आगच्छन्तं, आगन्तं, प्रीत्या,  
प्रेम्णा, सम्यक्, यथास्यात्तथा, उत्थाय, वनमृगाव, हरिणाव, उद्ग्रीवा, ऊर्ध्व-  
नाता ग्रीवा यथा तथाभूता, विलोकयन्ती, पश्यन्ती, मार्गपरिश्रान्तं, क्लिप्तं, धव-  
लिता, शुभ्रगंतीना, दशदिशः यथा तथाभूतया, दशा, दृष्ट्या, अल्पयत्, इव,  
( स्नापितवतीत्यर्थः ) कृतेति—कृतासनपरिग्रहं तु, ( तिष्ठन्तमितियावत् ) तं,  
( विकुञ्चिणं ) प्रात्या, प्रेम्णा, पप्रच्छ, अपृच्छत् । आर्यकुशलं कुमारस्य ।  
इति । केवलं, अमीपुदिवसेषु, दिनेषु, तनीयमीं, ( अतिक्रशमितियावत् ) तनुं  
शरीरं, विभर्ति, धारयति । अविज्ञायमानां, अज्ञातां, अनिमित्तां, कारणरहितां,  
शून्यतां, अभावं, इव, आधत्ते, अनुभवति । ( सर्वदाभवत्योः स्मरणमेवकरो-  
तीत्यर्थः ) अन्वक्, मत्पश्चात्, ( सत्वरमेवेत्यर्थः ) वः, युष्माकं, वार्ता, वृत्तं,  
विज्ञानं, ज्ञानाय, मालतीतिनाम्ना, मालतीनामधेया, वारिणी, दूती, आर्गमि-  
ष्यति । सा, मालती, कुमारस्य, दर्धाचस्य, उद्ध्वमितं, जावनम्, ( प्राणसद-  
शीत्यर्थः ) तच्छ्रुत्वा, तदाकर्ण्य, सावित्री, पुनः, अभाषत, उवाच । खलु,  
( खल्विति निश्चयार्थबोधकमव्ययम् ) कुमारः, अतिमहानुभावः, अत्यौदार्य-  
शालः, यत्, अविज्ञायमाने, अविज्ञातकुलशाले, क्षणष्टेऽपि जने, परिचिति,  
परिचयं, अनुवध्नाति, दधाति । ( महानुभावा हि स्वपरभेदरहिताः विश्वमेवस्वं-  
मन्यन्ते—इतिभावः ) तस्य हि ( हीतिनिश्चयार्थबोधकमव्ययम् ) यदच्छ्रया, स्वे-

यसीमिव तनुं विभर्ति । अविज्ञायमानां चानिमित्तां शून्यतामिवाधत्ते । अपिच । अन्वकसमागमिष्यति मालनीतिनाम्ना वाणिनी वर्ती वो विज्ञातुम् । उच्छ्वसितं सा कुमारस्य' इति । तच्छ्रुत्वा पुनरपि सावित्री सम्भाषत—'अतिमहाऽनुभावः ख शुकुमारः यदेवमविज्ञायमानेक्षणदृष्टेऽपि जने परिचितिमनुवन्नाति । तस्याहि गच्छतो यदृच्छया कथमप्यंशुकमिव मार्गलतासु मानसमस्मासु मुहूर्तमासक्तमासीत् । अमूल्यं हि सौजन्यमाभिजात्येन वः स्वामिसूनोः । अलसः खलुलोको यदेवं सुलभसौहार्दानि येनकेनचित् क्रीणाति महतां मनांसि । सोऽयमौदार्यातिशयः कोऽपिमहात्मनामितरजनदुर्लभो येनोपकरणी कुर्वन्ति त्रिभुवनम्'

च्छया, गच्छतः गतवतः, कथं कथमपि, केनापि, प्रकारेण, मार्गलतासु, मार्गवल्लीरपि, ( लग्नमितिशेषः, ) अंशुकमिव, वस्त्रमिव, अस्मासु, मानसं, चित्तं, मुहूर्तं, घटिकाद्वयं, आशक्तं, अनुरक्तं, आसीत् । ( मार्गचलनशीलस्य अनवधानतया लतासु वस्त्रलम्पसंभाव्यते तथैव मार्गगतः, वल्लीरूपासु अस्मासु हृदयवस्त्रमासक्तमभूदित्यर्थः ) वः, युष्माकं, स्वामि सूनोः, प्रभु कुमारस्य, सदृशं प्रसूतत्वेन, सौजन्यं, हृदयग्राहिता, अमूल्यं हि, ( नहिकेवलं वाचिकं आन्तरभावेनापिसौहार्द्रता विद्यते तस्य मनसात्यर्थः ) अलेसेति—अलसः, चेष्टारहितः, ( मूर्खोवा ) लोकः, संसारः । सुलभेति—सुलभानि, सुप्राप्याणि, सौहार्दानि, मित्रताः, येषां, तानि, महतां, सज्जनानां, मनांसि, चित्तानि, येन, केनचित् ( साधारणेन वस्तुनेत्यर्थः ) न क्रीणाति, न केतुं प्रभवति । सोऽयं, औदार्यातिशयः, अतिशयेन औदार्यम् । महात्मनां, विदुषां, कोऽपि, कश्चिदपि, ( अनिर्वचनीयइतियावत् ) इतर जनदुर्लभः, लुद्रजनदुर्लभ्यः, येन, त्रिभुवनं उपकरणीकुर्वन्ति, अलं कुर्वन्ति ( वशीकुर्वन्तीति यावत् ) विकृतिः, उच्चावचैः, नानाविधैः, आलापैः, वचनैः, सुचिरं, चिरकालं, स्थित्वा, यथाभिलषितं, इच्छितं, प्रदेशं, स्थानं, अयासीत्, जगाम । ( सुचिरं वार्तालापविधायग-

इति । विकुक्षिरुन्नावचैर्गलापैः सुचिरमिवस्थित्वा, यथाभिलषितं देशम-  
यासीत् ।

अपरेद्युरदिते भगवतिद्युमग्नावुद्दामद्युतावभिद्रुततारके तिरस्कृ-  
ततमसि तामरसव्यसनिनि सहस्रशर्मौ शोणमुत्तीर्यायान्ती, तरलदेह-  
प्रभावितानच्छलेनात्यच्छं सकलं शोणसलिलमिवानयन्ती, स्फुटिता-  
तिमुक्तककुसुमस्तवक समत्विषि सटाले महति मृगपताविव गौरी तुर-  
ङ्गमेस्थिता, सलीलमुरोवधारोपितस्य तिर्यगुत्कर्णतुरगाकर्ण्यमाननूपु-  
तवानित्यर्थः ।

अपरेद्युरित्यतः मालतीममदृश्यत, इत्यनेनान्वयः । उदिते, उदयंप्राप्ते,  
भगवति, कल्याण करे, द्युमगौ, आकाशरत्ने ( सूर्ये इत्यर्थः ) उद्दामद्युतौ,  
उद्दामा, उत्कटा, द्युतिः, कान्तिः, यस्य तस्मिन्, अभिद्रुताः, ताडिताः, ( तिरि-  
हिता इति यावत् ) तारकाः, नक्षत्राणि, येन तथाभूते, तिरस्कृततमसि, विमानिता  
न्धकारे, ( दूरीकृते इत्यर्थः ) तामरसव्यासव्यसनिनि, तामरसस्य, रक्तात्प-  
लस्य, “यत्” व्यासः विकासः, तत्र व्यसनिनि, आसक्ते, सहस्रशर्मौ, सूर्ये,  
शोणं, पूर्वोक्तनदं, उत्तीर्य, अवतरणं विधाय, आयान्तीं, आगच्छन्तीं । तर-  
लेति—तरलाः, चञ्चलाः, याः, देहप्रभाः, तासां, वितानः, विस्तारः, स, एव,  
द्वलं, तस्य वा, तेन, अत्यच्छं, अतिशुद्धं, ( अमलमिति यावत् ) सकलं,  
सम्पूर्णं, शोणसलिलं, जलं, इव, आनयन्ती, सहचररूपेण आकर्षयन्ती ।  
स्फुटितेति—स्फुटितः, विकासंगतः, यः, अति मुक्तककुसुमस्तवकः, अति-  
मुक्तकः, माधवीलता, तस्या, पुष्पगुच्छः, तत्, समाः, सदृशाः, त्विषः,  
कान्तयः, यस्य तथाभूते, सटाले । जटावति—मृगपताविव, सिंह इव, गौरी,  
गौरवर्णा, ( पार्वती च ) तुरङ्गमे, अश्वे, स्थिता, सलीलं, लीलयासहितं, यथा-  
स्यात्तथा, उरोवध्रा, अश्वारूढस्य चरणं स्थापनाय द्रव्यं विशेषः ( रकेव इति  
प्रसिद्धः ) तत्र आरोपितस्य, स्थापितस्य, ( पाद युगलस्येति यावत् ) । तिर्य्य-

रपदुरणितस्यातिवद्नेन पिण्डालकृकेन पल्लवितस्य कुंकुमपिञ्जरितप्र-  
ष्ठस्यचरणयुगलस्य प्रसरद्विरतिलोहितैः प्रभाप्रवाहैरुभयतस्नाडनदो-  
हदलोभागतानि किसलयितातिरिक्तरक्ताशोकवानानीवाकर्षयन्ती, सक-  
लजीवलोकहृदयहठहरणाघोषणायेवरशनया शिञ्जानजघनस्थला, धौत-  
धवलनेत्रनिर्मितेननिर्मोकलघुतरेणाप्रपदीनेनकञ्चुकेन तिरोहिततनुलता,

गिति—तिर्यक्, वहं, यथास्यात्तथा, उत्कर्णेन, ऊर्ध्वनीतेन कर्णेन, तुरगेण,  
अश्वेन, आकर्ण्यमानं, श्रूयमाणं, ( श्रुतिमधुरत्वादित्यर्थः ) नूपुरयोः, पाद-  
भूषणयोः, पटुः, स्पष्टं, रणितं, शब्दं, यस्य, तथाविधस्य, अतिवहलेन, अधि-  
केन पिण्डालकृकेन, लाजारासेन, पल्लवितस्य, किसलय इवाचरतः । कुंकुमेति—  
कुंकुमेन, ( तदाख्यरक्तद्रव्य विशेषेण ), ( कुङ्गू इत्याख्येन ) पिञ्जरितं, ईषद्रक्ता-  
नीतं, पृष्टं यस्य, तथाभूतस्य, चरणयुगलस्य, पादयुग्मस्य, प्रसरद्विः, चलद्विः,  
अतिलोहितैः, रक्तवर्णैः, प्रभाप्रवाहैः, कान्तिप्रसरैः, । ताडनेति—ताडनं, प्रहारः  
एव, दोहदः, गर्भाभिलाषः, तत्र, यः लोभः, इच्छा, तेन, आगतानि, किसल-  
यानि, पल्लवानि, अत एव, अतिरिक्तानि, विसृतानि, रक्ताशोकवानानि, काननानि  
तानि, आकर्षयन्ती, आकृष्यनयन्ती, इव । सकलेति—सकलानां, जीवलोक-  
कानां, हृदयानि, मनांसि, तेषां, हठेन, सहसा, ( औदत्यपूर्णत्वमितियावत् )  
यत्, हरणं, स्ववशीकरणं, तस्य, घोषणा, वाद्यविशेषानुगता ( वचनानीत्यर्थः )  
तथैव, रशनया, काञ्च्या, ( मेखलयेतिभावः ) शिञ्जानं, रणत्, ( सशब्दमिति-  
यावत् ) जघनस्थलं, यस्याः, तथाविधा । धौतेति—धौतं, प्रक्षालितं, अतएव,  
धवलनेत्रं, वसनविशेषः, तेन, निर्मितः, रचितः, निर्मोकः, सर्पकञ्चुकः, तद्वत्,  
लघुतरः, सूक्ष्मः, तेन, आप्रपदीनेन, प्रपदं, पादाग्रं, प्रपदात्, आ, ( समन्ता-  
दित्यर्थः ) आप्रपदं, पादाग्रपर्यन्तं, ( पादाग्रमाच्छादेतमित्यर्थः ) कञ्चुकेन,  
वारबाणेन, तिरोहिता, आच्छादिता, तनुरेव, शरीरमेव, लता, वल्लरी, यया,  
तथाभूता । छातेति—छातः, सूक्ष्मः, कञ्चुकस्य, वर्मणः, ( शरीराच्छादनस्येति-

छातकञ्चुकान्तरदृश्यमानैराश्यानचन्दनधवलैः खयवैः स्वच्छसलिलाभ्य-  
न्तरविभाव्यमानमृणालकाण्डेव सरसी, कुसुम्भरागपाटलं पुलकबन्ध-  
चित्रंचण्डातकमन्तः स्फुटं स्फटिकभूमिरिव रत्ननिधानमादधाना,  
हारेणामलकीफल निस्तुलमुक्ताफलेन स्फुरितस्थूलग्रहणशारा, शार-  
दीव श्वेतविरलजलधरपटलावृता द्यौः, कुचपूर्णाकलशयोरुपरि, रत्नप्रा-  
लम्बमालिकामरुणहरित किरणकिसलयिनीं कस्यापिपुण्यवतो हृदय-

भावः ) अन्तरे, मध्यं, दृश्यमानाः, दृष्टिगताः । आश्यानेति—आश्यानानि,  
ईषत्-शुष्काणि, चन्दनानि, मलयजानि, तैः, धवलाः, शुभ्राः, तैः, अवयवैः,  
अङ्गैः, ( शरीरभागैरित्यर्थः ) स्वच्छेति—स्वच्छानि, अमलानि, सलिलानि,  
जलानि, तेषां, अभ्यन्तरेषु, मध्यभागेषु, विभाव्यमानः, लक्ष्यमाणः, मृणाल-  
काण्डः, पद्मलता, यस्याः, यस्यां वा, सरसीव । कुसुम्भेति—कुसुम्भ-  
रागेण, कुसुम्भः, पुष्पविशेषः, तस्यरागेण, वरणेन, पाटलं, ईषद्रक्तं, पुलक-  
बन्धेन, नानावर्णा निर्मितबिन्दुविन्यासेन, चित्रं, ( मनेऽभिमितियावत् ) चण्डा-  
तकं, अद्भोऽरुक्, ( उरोरधः पातिवस्त्रविशेषः ) अन्तः स्फुटं, ( अभ्यन्तरो  
ज्वलनमिति यावत् ) रत्ननिधानं, कोशं, आदधाना, धारयन्ती । हारेण, मुक्ता  
फलस्रजा । आमलकीति—आमलकीफलानि, ( आमला इति प्रसिद्धं ) निस्तु-  
लानि, तुलारहितानि, ( उपमारहितानीत्यर्थः ) मुक्ताफलानि, ( यत्र तादृशेन-  
त्यर्थः ) । स्फुरितेति—स्फुरितैः, राजितैः, स्थूलैः, (मुस्पष्टैरितियावत् ) ग्रह-  
णैः, नक्षत्रमण्डलैः, शारा, विचित्रा, शारदीव, शरत्समयमिव । श्वेतेति—  
श्वेतैः, शुभ्रैः, ( जलापगमादितियावत् ) विरलैः, अत्यल्पैः, जलधराणां,  
मेघानां, पटलैः, समूहैः, आवृता, अच्छादिता, द्यौः, अन्तरीक्षम् । कुचेति—  
कुचौ, स्तनौ, पूर्णाकलशाविव, कुम्भाविव, तयोरुपरि, रत्नप्रालम्ब मालिकां, रत्न-  
स्रजं । अरुणेति—अरुणेन, रक्तवर्णेन, हरितेन, श्यामलेन, किरणेन, मयूखे-  
नन, ( मरकतमणीनामिति यावत् ) किसलयाः, पल्लवाः, सन्ति अस्यां, तादृशी



प्रवेशवनमालिकामिव बद्धां धारयन्ती, प्रकोष्ठनिविष्टस्यैकैकस्य हाटक-  
कटकस्य मरकतमकरवेदिकासनाथस्य हरितीकृतदिगन्ताभिर्मयूख-  
सन्ततिभिः स्थलकमलिनीभिरिव लक्ष्मीशङ्क्यानुगम्यमाना, बह्वलता-  
म्बूलकृष्णकान्धकारितेनाधर संपुटेन मुखशशिपीतं ससन्ध्यारागं ति-  
मिरमिव वमन्ती, विकच नयनकुवलय कुतूहलालीनयालिकुलसंहत्या

( सञ्जातपत्रामित्यर्थः ) कस्यापिपुण्यवतः, पुण्यभाजः । हृदयं प्रवेशेति—  
हृदये, चित्ते, प्रवेशः, तस्मै, वनमालिका, पत्रपुष्परचिता माला, तामिव,  
( पूर्णकलतो वनमाला प्रदानं लोकेप्रसिद्धम् ) बद्धां, ग्रथितां, धारयन्ती, ।  
( कश्चित् पुण्यवान् जनः, अस्याः हृदयं प्रविशतीति मङ्गलाय पूर्णकुम्भस्थापन  
मित्यर्थः ) प्रकोष्ठेति—प्रकोष्ठः, मणिवन्धपर्यन्तहस्तावयवः, तस्मिन्,  
निविष्टः, धृतः, तस्य, हाटककटकस्य, सुवर्णकङ्कणस्य, मरकतेति—मरक-  
तस्य, मरकतमणोः, मकरवेदिका, मकराकृतिग्रन्थिः, तथा सनाथः, युक्तः,  
तस्य, ( तद्भूषितस्वेति यावत् ) हरिती कृतेति—हरिती कृताः, श्यामतांप्राप्ताः  
दिगन्ताः, दिग्भागाः, याभिः, तथाभूताभिः, मयूखसन्ततिभिः, किरणसमूहैः,  
स्थलकमलिनीभिरिव, भूपद्मेनीभिरिव, ( पत्रपुष्पसंहिताभिरित्यर्थः ) लक्ष्मीः  
शङ्क्या, लक्ष्मीरियंकमलहस्ता ( पद्मविलासिनीतिभावः ) इति बोधेन, अनु-  
गम्यमाना, अनुस्रियमाणा, बह्वलेति—बह्वलेन, बारम्बारं ( चर्वितेनेतियावत् )  
ताम्बूलेन, या, कृष्णका, कृष्णवर्णा रेखा, तथा, अन्धकारितः, सञ्जाततमः,  
तेन, अधर संपुटेन, अधरोष्ठेन । मुखेति—मुखमेव, शशीः, चन्द्रः, तेन, पीतं,  
कृत पानं, यद्द संध्या रागं सन्ध्यासमय लौहित्यम् ( तेन सहवर्तमानं ) ( स्वभावा-  
रुणस्याधरस्य ताम्बूलयोगादुत्प्रेक्षितम् ) तिमिरं, अन्धकारं, इव, वमन्ती, उद्गि-  
रन्ती ( भुक्तोद्गीर्णभोजनं वमनं, तमित्यर्थः ) विकचेति—विकचे, विकस्वरे,  
नयने, नेत्रे, कुवलये, नीलोत्पले, इव, तयोः, कुतूहलात्, कौतुकात्, आलोना,  
सक्ता, तथैव, अलि कुलसंहत्या, भ्रमरसंतत्या, नीलांशुक जालिकया, नीला,

नीलांशुक जालिकयेवनिरुद्धार्धवदना, नीलीरागनिहित नीलिम्बा शिति-  
गलशितिना वामश्रवणाश्रयिणासादन्तपत्रेण कालमेघ पल्लवेनेव विद्यु-  
दिवद्योतमाना, वकुलफलानुकारिणीभिस्तिष्ठभिर्मुक्ताभिः कल्पितेन  
वालिकयुगलेनाधोमुखेनालोकजलवर्षिणा सिञ्चन्तीवातिकोमले भुज-  
लते, दक्षिणकर्णावतंसितया केनकीर्गर्भपलाशलेखया रजनीकर  
जिह्वेयव लावण्यलोभेन लिङ्गमानकपोलतला, तमालश्यामलेन मृग-  
मदामोदनिष्यन्दिना तिलकबिन्दुना मुद्रतमिवमनोभवसर्वस्वं वदन-

नीलवर्णा, या, अंशुकजालिका, वसनघन्यिका, तथा, निरुद्धं, आच्छादितं,  
अर्द्धवदनं, मुखं, यथा, तथाविधा । ( मार्गेचक्षुषि कीटादर्पतनभयादित्यर्थः )  
नीलीति—नीलीरागेण, ( नील' इतिप्रसिद्धः ) तस्य, रागेण, वर्णेन, निहितः  
श्रुतः, नीलिमा, नीलत्वं, यत्र, तथाभूतेन । शितिगलेति—शितिगलः,  
नीलकण्ठः, ( शङ्कर इत्यर्थः ) तद्वत्, शितिः, नीलं, तेन, वामश्रवणाश्रयिणा,  
वामकर्णाश्रितेन, दन्तपत्रेण, कुन्दपुष्पाकारालङ्कारविशेषेण, कालमेघपल्लवेन,  
नीलमेघविस्तारेण, विद्युदिव, तड्दिव, द्योतमाना, दीप्यमाना । वकुलेति—  
वकुलफलानुकारिणीभिः, अनुकर्तृभिः, ( तद्वदाचरणशालैरित्यर्थः ) निष्ठभिः,  
त्रिभिः, मुक्ताभिः, मुक्ताफलैः, कल्पितेन, रचितेन, वालिकायुगलेन, बलयद्वयेन,  
अधोमुखेन, नताननेन । आलोकेति—आलोकः, उद्योतः, एव, जलं, पानीयं,  
तं वर्षतीति, तेन, अतिकोमले, भुजएव लते, ते, सिञ्चन्तीव, सेचनकुर्वाणा,  
इत्यर्थः । दक्षिणेति—दक्षिणकर्णे, अवतंसितया, अलंकृतया । केतकीति—  
केतक्यागर्भपलाशः, मध्यपत्रं, स, एव, लेखा, रेखा, तथा, रजनीकर जिह्वेयव,  
रजनीकरस्य, चन्द्रस्य, जिह्वा, रसना, तथेव, लावण्यलोभेन, सौन्दर्यलोभेन,  
लिङ्गमानं, चुप्यमाणं, कपोलतलं, गण्डस्थलं, यस्याः, तथाभूता । तमाल-  
श्यामलेन, तमालवत् श्यामलः, कृष्णवर्णः, तेन । मृगमदेति—मृगमदस्य,  
कस्तूरिकायाः, आमोदः, सौरभं, त, निष्यन्दते, स्रवतीति तथा विधेन, बिन्दुना

मुद्वहन्ती, ललाटलासकस्य सीमन्तचुम्बिनश्चटुलतिलकमणोरुदञ्चता चटुलेनांशुजालेन रक्तांशुकेनेवकृतशिरोवगुण्ठना. पृष्ठप्रेङ्खदनादर संयमन शिथिलजूटिकाबन्धा, नीलचामरावचूलिनीव चूडामणिमकरिकासनाथा, मकरकेतुकेतुपताका, कुलदेवतेव, चन्द्रममः, पुनः संजीवनौषधिरिव पुष्पधनुषः, वेलेवरागसागरस्य, ज्योत्स्नेव यौवन चन्द्रो-  
 कणकेन, मुद्रितं, चिन्हितं, इव, मनोभव सर्वस्वं, कामसर्वस्वधनं, वदनं, मुखं, ( मुखस्य सर्वोत्कृष्टेन, कामोद्दीपकत्वादित्यर्थः ) उद्वहन्ती, धारयन्ती । लला—  
 टेति—लल.टे. मस्तके, लासकः, नर्तकः, ( स्फुरन्नितियावत् ) तस्य, सीमन्त-  
 चुम्बिनः, सीमन्तः, केशपाशमध्यवर्तिरेखा ( सीमन्तो केशवशे ) कौसीमान्तोऽ-  
 न्यः ) तं, चुम्बति, स्पृशति, तस्य, ( सीमन्तस्पर्शिन इतियावत् ) चटुलः,  
 चञ्चलः, यः, तिलकमणिः, तिलकाकार पद्मरागमणिः, ( मस्तकभूषणमित्यर्थः )  
 तस्माद्, उदञ्चता, उद्वहता, चटुलेन, चञ्चलेन, ( तरलेनेत्यर्थः ) अंशुजालेन,  
 किरणसमूहेन, रक्तांशुकेनेव, रक्तवसननेन, कृतं, रचितं, शिरसः, अवगुण्ठनं,  
 आवरणं, यथा, तथाभूता । पृष्टेति—पृष्ठे, पृष्ठदेशे, प्रेङ्खत्, लम्बमानः,  
 अनादरसंयमनेन, हलावन्यनेन, शिथिलः, स्थलितः, यः, जूटिकाबन्धः,  
 केशजालः, यस्याः, तथाविधा । नीलेति—नीलं, नीलवर्णं, चामरमेव अव-  
 चूलं, पताकाधोवर्ति वसनं, चिन्हं वा, विद्यतेऽस्याः, तथाभूता । चूडाम-  
 णीति—चूडायां, मस्तके, या मणि मकरिका, मकराकारमणिः, तथा सनाथा,  
 युक्ता, ( सहितेत्यर्थः ) अतएव मकरकेतोः, मदनस्य, केतुपताकेव, ध्वजकेतन-  
 मिव, कुलदेवतेव, कुलस्य, वंशस्य, या, देवता, अधिष्ठातृदेवीव, चन्द्र-  
 मसः, इन्द्रोः, पुष्पधनुषः, कामस्य, पुनः, संजीवनं, हरक्रोधाग्नि जलितस्यपुन-  
 र्जन्मप्राप्तिः, तस्यौषधिरिव, सर्जावनाख्यलतेव । रागेति—रागः, प्रेम,  
 ( स्नेहातिशय इत्यर्थः ) सैव सागरः, समुद्रः, तस्यवेलेव, तीरमिव, यद्वा,  
 प्रवाहमिव, ( यथैवसमुद्रः—वेलाभक्तिकम्यनप्रसरति, तथैव, सौन्दर्यातिशयाद्युना

दयस्य, महानदीव रतिरसामृतस्य, कुसुमोद्गतिरिव सुरततरोः, बालविद्येव  
वैदग्ध्यस्य, कौमुदीपकान्तेः, धृतिरिव धैर्यस्य, गुरुशालेव गौरवस्य,  
बीजभूमिरिव विनयस्य, गोष्ठीवगुणानाम्, मनस्वितेव महानुभा-  
वतायाः तृप्तिरिव तारुण्यस्य, कुवलयदलदामदीर्घलोचनया पाटला-  
धरया कुन्दकुङ्कुमलस्फुटदशनया शिरीषमाला कुसुमारभुजयुगलया

दृष्टिर्नान्यापुस्त्रीपुप्रसरति, अस्यामेवस्थितेत्यर्थः ) ज्योत्स्नेवेति—यौवनं,  
प्राग्भावस्था, तदेव, चन्द्रोदयः, तस्य ज्योत्स्नेव, कान्तिरिव । ( यथा चन्द्रोदयेऽ  
पि यावन्नहि ज्योत्स्ना विकसति, तावन्नकिमपि विलसति, तथैवेतां विना यौवनं  
सुपमा न कुत्रापि शोभमाना दृश्यते इतिभावः ) रतिरसामृतस्य, रत्यायद्रसं,  
तदेवामृतं, तस्य, महानदीव, महासरिदिव । सुरततरोः, सुरतं, स्त्री पुरुष  
संगमं, तदेव, तरुः, वृक्षः, तस्य, कुसुमोद्गतिरिव, पुष्पोद्गम इव । वैदग्ध्यस्य  
चातुर्यस्य, बालविद्येव, नवशिक्षितेव, ( बालकाले पठिता मितेतिभावः )  
( बाल्य संस्कारः नहि त्यक्तुं शक्यते कदापि, तथैवेतां, वैदग्ध्यमपि )  
कान्तेः, प्रभायाः, कौमुदीव, चन्द्रिकेव । धैर्यस्य, धीरतायाः, धृतिरिव, धारणा  
कर्त्ताव । गौरवस्य, उत्कर्षस्य, गुरुशालेव, गुरुगृहमिव, यद्वा, गुवां महती,  
शाला, गुरुशाला, सेव । विनयस्य, नम्रतायाः, बीजभूमिरिव, वपनक्षेत्रमिव ।  
गुणानां, सौजन्यादिनां, गोष्ठीव, समाज इव । महानुभावतायाः, महद्गौर-  
वस्य, मनस्वितेव, प्रशस्तमनशालित्वमिव । तारुण्यस्य, यौवनस्य, तृप्तिरिव,  
संतोषमिव । कुवलयेति—कुवलयदलदाम, नीलकमलदलमाला, तद्वत्,  
दीर्घं, आयते, लोचने, नेत्रे, यस्याः, तथाभूतया । पाटलाधरया, ईषद्वक्त्राध-  
रोष्ठया । कुन्देति—कुन्दानां, माध्य पुष्पाणां, कुङ्कुमलानि, मुकुलानि, तानीव,  
स्फुटाः, उज्ज्वलाः, दशनाः, दन्ताः, यस्याः, तथोक्तया । शिरीषेति—शिरी-  
षाणां, तन्नाम कुसुमानां, मालावत्, स्रगिव, सुकुमारं, कोमलं, भुजयुगलं,  
बाहुयुग्मं, यस्याः, तथभूतया । कमलेति—कमलं, पद्मं, तद्वत् कोमलौ, करौ,

कमलकोमलकरया वकुलमुरभिनिःश्रसितया चम्पकावशतया कुसुम-  
मयेवताम्बूलकरङ्कवाहिन्या महाप्रमाणाश्रतरारूढयानुगम्यमाना, क-  
तिपयपरिचारकपरिकरा मालती समदृश्यत । दूरादेव च दधीच प्रेम्णा  
सरस्वत्या लुण्ठितेव मनोरथैः, आकृष्टेव कुतूहलेन, प्रत्युद्गतेवोत्क-  
लिकाभिः, आलिङ्गितेवोत्कण्ठया, अन्तः प्रवेशितेव हृदयेन, स्नपिते-  
वानन्दाश्रुभिः विलिप्तेव स्मितेन, वीजितेव उच्छ्वसितैः, आच्छादितेव  
चक्षुषा, अभ्यर्चितेव वदनपुण्डरीकेण, सखीकृतेवाशया, सविधमुप-  
हस्तां, यस्याः, तथोक्ताया । वकुलेति—वकुलवत्, तदाख्यपुष्पवत्, सुरभिः,  
सुगन्धिः, निश्चयितं, श्रमन, यस्याः, ताविधया । चम्पकावदातया, चम्पक  
पुष्पवत् । अवदातया, गौर वर्णाया, अनप्य, कुसुममयेव, पुष्पमयेव, ताम्बूल  
करङ्कवाहिन्या, ताम्बूलानां, करङ्कः, पात्रं, तं, वहति, धारयतीति, तथोक्ताया ।  
महेति महत् अधिकं, प्रमाणां, परिमाणां, यस्य तादृशः, ( अन्युन्नतमितियावत् )  
योऽश्वतरः, अश्वायांगर्दमेनजातः, अश्वाकारः पशुः ( खचर इतिप्रसिद्धः )  
यद्वा, तरुणः, प्रौढः, अश्वः, तुरङ्गमः ( वल्गोक्षाश्वर्षभेभ्यश्चतनुवन् ॥ ५ ।  
३ । ६१ । पा० इतिनुत्वे तरप् । तं, आरूढा, आश्रिता, तथा, अनुगम्य,  
माना, अनुश्रिता । कतिपयेति—कतिपयाः, केचनः, परिचारकाः, भृत्याः,  
परिकराः, ( परिवाराः, सहचरा इत्यर्थः ) यस्याः, तथोक्ता मालती समदृश्यत्  
दूरादेवच, रदूत एव, दधीच प्रेम्णा, स्नेहेन, सरस्वत्या ( कर्तृभृतयेत्यर्थः )  
लुण्ठितेव, हतेव, मनोरथैः, इच्छितैः, कुतूहलेन, औत्सुक्येन, आकृष्टेव,  
आकर्षितेव, उत्कलिकाभिः, औत्सुक्यैः, प्रत्युद्गतेव, उद्गच्छदेव, उत्कण्ठया,  
स्पृहया, आलिङ्गितेव, कृतालिङ्गनेव, हृदयेन, चेतसा, अन्तः, अभ्यन्तरं, प्रवे-  
शितेव, कृतप्रवेशा इव, स्नपितेव, कृतस्नानमिव, आनन्दाश्रुभिः, आनन्दाश्रु  
जलैः, स्मितेन, ईषडास्येन, विलिप्तेव, कृतलेपनेव, उच्छ्वासितैः, निश्वासैः,  
वाजितेव, कृतव्यजनेव, चक्षुषा, नेत्रेण, आच्छादितेव, आवृतेव, वदन पुण्ड-

ययौ । अवतीर्य च तुरगाद्दूरादेवानन्तेन मूर्ध्ना प्रणाममकरोत् ।  
आलिङ्गिता च ताभ्यां सविनयमुपाविशत् । सप्रश्रयं ताभ्यां संभाषिता  
च पुण्य भाजमात्मानममन्यत । अकथयच्च दधीच संदिष्टं शिरसि  
विनिहितेनाञ्जलिना नमस्कारम् । अगृह्णाच्चाकारतः प्रभृत्यग्राम्यतया  
तैस्तैरपि पेशलैरालापैः सावित्री सरस्वत्योर्मनसी ।

क्रमेण चातीतेमध्यदिनसमये शोणमवतीर्णायां सावित्र्यां स्ना-  
तुमुत्सारितपरिजना साकृता मालती कुसुमप्रस्तरशायिनीं समुप-  
रीकेण, मुखकमलेन, अभ्यर्चितेव, पूजितेव, आशया, स्पृहया, सखाकृतेव,  
कृतसौहृदेव, सविधं, पार्श्वं, उपययौ, प्राप्ता । अवतीर्येति—दूरादेव, दूरत एव,  
तुरगात्, अश्वात्, अवतार्य, अवतरणविधाय, अवनन्तेनमूर्ध्ना, नतशिरसा,  
प्रणाममकरोत्, प्रणतिं चकार । ताभ्यां, ( सरस्वतीसावित्रीभ्यां ) आलिङ्गिता,  
कृतालिङ्गना, सविनयं, यथास्यात्तथा, उपाविशत्, उपविष्ट । सप्रश्रयेति—  
स प्रश्रयं, सविनयं, ताभ्यां, संभाषिता, कृतवार्तालापा, आत्मानं, एवं, पुण्य-  
भाजं, पुण्यवंतं, ( कृतार्थं मितियावत् ) अमन्यत, । शिरसि, मस्तके,  
विनिहितः, कृतः, अञ्जलिः, यया, एवंभूता, दधीचसंदिष्टं, संदेशं, नमस्कारं,  
अकथयत्, उवाच । आकारेति—आकारतः प्रभृति, आकारात्, तथाविधात्  
पूर्वोक्तात्, ( सौम्यादित्यर्थः ) प्रभृति ( दर्शनादारभ्येत्यर्थः ) अग्राम्यतया,  
( ग्राम्यत्वदोष रहितयेतिभावः ) अतिपेशलैः, अतिसुबुमारैः ( सौजन्यपूर्णै-  
रित्यर्थः ) आलापैः, वचनैः, सावित्रीसरस्वत्योः ( द्वयोरित्यर्थः ) मनसी, चित्ते  
अगृह्णात्, स्व, वशवर्तिनमकरोत् ।

क्रमेण च अतीते, मध्यन्दिनसमये, मध्यान्हकाले, शोणं, तन्नामनदं,  
स्नातुं, स्नानाय, अवतीर्णायां, अवतरितायां, सावित्र्यां, उत्सारितपरिजना,  
दूरीकृतसेवका, साकृता, साभिप्राया, ( हृदयान्तरित निगूढभावा ) मालती,  
कुसुमेति—कुसुमं, पुष्पं, एव, प्रस्तरः, शयनं, ( प्रस्तीर्यतेऽसावितिप्रपदकात्,

सृत्य सरस्वतीमावभाषे—‘देवि’ विज्ञाप्यं नः किञ्चिदस्ति रहसि । अतो मुहूर्तमवधान दानेन प्रसादं क्रियमाणमिच्छामि’ इति । सरस्वती तु दधी च संदेशाशङ्किनी, किं वक्ष्यतीति स्तनविनिहितवामकरनखकिरणादन्तुरितमुद्भिद्यमानकुनूहलाङ्कुरनिकरमिवद्दयमुत्तरीयदुकूलवल्कलैकदेशेन संञ्जादयन्ते, गलतावतंसपल्लवेन कुनूहलान् श्रोतुं श्रवणेनेव धावमानेनानवरनश्वाससंदोहदोलायिनां जीविताशामिव समासन्नलतामव-

स्तरतेः कर्मण्यल् ) तत्रशेते या इति तथाभूताम् । सरस्वतीं समुपसृत्य, पार्श्ववर्तिनीभूय, आवभाषे, अवादीत् । देवि ? रहसि, एकान्ते, किञ्चित्, विज्ञाप्यं, कथनीयं, अस्ति । अतः, अनेनकारणेन, मुहूर्तं, घटिकाद्वयं, अवधानदानेन, सावधानेन, प्रसादं, प्रसज्जतां, क्रियमाणं, संपाद्यमानं, इच्छामि, ईहे । सरस्वतीतु, ( वाग्देवी ) दधीच संदेशं, वृत्तं, ( वाचिकं वा ) तदाशङ्किनी, आशङ्क्यमाना, किंवक्ष्यतीति, किंकथयिष्यतीति । स्तनेति—स्तने, पयोधरे, विनिहितस्य, दन्तस्य, वामकरस्य, वामहस्तस्य, नखानां किरणैः, कान्तिभिः, दन्तुरितं, सज्जानदंतं ( इव ) ( वर्तमानमितियावत् ) उद्भिद्यमानेति—उद्भिद्यमाना, उच्छेद्यमानाः ( कर्म कर्तरि शानच् ) कुनूहलाङ्कुराणां, कौतुकप्ररोहाणां, निकराः, निचयाः, यस्य, तथाभूतं, हृदयं, चित्तं, उत्तरीयेति—उत्तरीयं, यत् दुकूलं, वसनं, तदेववल्कलं, तस्य, एकदेशः, एकांशः, तेन, संञ्जादयन्ती, आञ्जादयन्ती, गलता, स्खलता, अवतंसपल्लवेन, कर्णालङ्कारपत्रेण, ( इत्थं-भूतलत्रणे इत्यनेनतृतीया ) श्रोतुं, कर्णविषयीकर्तुं, श्रवणेन, इव, श्रोत्रेन्द्रियेणैव, धावमानेन, प्रधावता । अनवरतेति—अनवरतानां, निरन्तराणां, श्वासानां, संशोहः, समूहः, एव, दोला, दोलनयन्त्रं, तां, आपिता, प्राप्ता, तां, ( यथा दोलनयन्त्रं स्वस्रगनादपगच्छतिपुनरागच्छतिच, तथैवनिश्वासः शरीरान्तराद् गच्छति पुनश्चोद्वास रूपेण शरीराभ्यन्तरमागच्छति, इति दोलास्थितामित्यर्थः ) जीविताशामिव, समासन्नलतां, सज्जि हेतु वल्लीं, अवलम्बमाना,

लम्बमाना, समुत्फुल्लस्य मुखशशिनो लावण्य प्रवाहेण शृंगाररसेनेव  
लावयन्ती जीवलोकम्, शयनकुसुमपरिमललग्नैर्मधुकरकदम्बकैर्मदना-  
नलदाहश्यामलैर्मनोरथैरिव निर्गत्य मूर्तैरुत्क्षिप्यमाणा, कुसुम शयनी-  
यात्स्मरशरसंज्वरिणी, मन्दं मन्दमुदगात् । 'उपांशु कथय' इति  
कपोलतल प्रतिबिम्बतां लज्जयेव कर्णमूलं मालतीं प्रवेशयन्ती मधुरया  
गिरा सुधीरमुवाच ।

‘सखि ! मालति ! किमर्थमेवमभिदधासि । काहमवधानदानस्य  
शरीरस्य प्रणानां वा । सर्वस्याप्रार्थितोऽपि प्रभवत्येवातिवेलं चक्षुष्यो  
जनः । सा न काचिद्या न भवसि मेस्वसा सखी प्रणयिनी प्राणसमा

आश्रयन्ती । लावण्य प्रवाहेण, सौन्दर्यस्त्रातसा, शृङ्गार रसेनेव, ( रतिप्रधानोहि  
रसः शृङ्गारः ) तेनेव, जीवलोकं, प्राणिजातं, लावयन्ती, उत्प्लवनंकारयन्ती ।  
शयनेति—शयनकुसुमानां, परिमलेन, सुगन्धिना, लग्नानि, संसक्तानि, तैः,  
मधुकरकदम्बकैः, भ्रमरसमूहैः । मदनानलेति—मदनानलेन, कामाग्निना,  
यः, दाहः, ज्वलनं, तेन, श्यामलाः, कृष्णवर्णाः, तैः, मूर्तैः, मूर्तिमद्भिः,  
उत्क्षिप्यमाणा, प्रक्षिप्यमाणा, कुसुमशयनीयात्, पुष्पपर्यङ्कात् । स्मरेति—  
स्मरस्य, कामस्य, शरैः, बाणैः, ( शरप्रहारैरित्यर्थः ) ( संभूतेशेषः ) यः,  
संज्वरः, सन्तापः, तद्वती । मन्दं, मन्दं, शनैः, शनैः, उदगात्, चचाल ।  
उपांशु, सुगूढं, ( सत्यमितियावत् ) कथय, वद । कपोलेति—कपोलतले,  
गण्डस्थले, प्रतिबिम्बिता, प्रतिफलिता, तां, लज्जयेव, व्रीडेव, कर्णमूलं, धाव-  
तदं, मालतीं, तन्नाम दूतिं, प्रवेशयन्ती, अभ्यन्तरं नयन्ती, मधुरयागिरा, मधु-  
रवाण्या, सुधीरं, यथास्यात्तथा, उवाच, उक्त्वती ।

अभिदधासि, कथयसि अप्रार्थितोऽपि, प्रार्थना रहितोऽपि, अतिवेलं,  
अतिमात्रं, चक्षुष्यः, नयनरञ्जनः, जनः, सर्वस्य, प्रभवति, योग्यः । सा न  
काचित्, कापि, या, मे, मम, स्वसा, भगिनी, सखी, प्रणयिनि, प्रेमास्पदा,



च । नियुज्यतां यावत्तः कार्यस्य क्षमं क्षोदीयसो गरीयसो शरीरक-  
मिदम् । अनवस्करमाश्रवं त्वयि मे हृदयम् । प्रीत्या प्रतिसरा विधेया-  
स्मि ते । व्यावृणु वरवर्णिनि ! विवक्षितम्' इति । सा त्ववादीत्—  
देवि जानास्येव माधुर्यं विषयाणाम् , लोलुपतां चेन्द्रियग्रामस्य,  
उन्मादितां च नवयौवनस्य, पारिप्लवतां च मनसः । प्रख्यातैव मन्म-  
थस्य दुर्निवारता । अनो न मामुपालम्भेनोपस्थातुमर्हसि । न च  
बालिशता चपलता चारणता वा बाचालतायाः कारणम् । न

प्राणसमा च, प्राण सदृशी च । नियुज्यतां, नियोक्तव्यं, क्षोदीयसः, अतिक्षु-  
द्रस्य, गरीयसः, अतिगुरूणः, कार्यस्यक्षमं, योग्यं, इदं, शरीरकं, देहं । अन-  
वस्करं, अवस्करः, मलः, तद्रहितः, ( परिशुद्धमितियावत् ) आश्रवे, वचने,  
स्थिते, मे, मम, त्वयि, हृदयं, चिन्तं, ( अकण्टकत्वेनकर्तव्यं त्वद्रचोमपेत्यर्थः )  
प्रीत्या, प्रेम्णा, प्रतिसरा, नियोज्या, ( अनुकूलवर्तिनीनित्यावत् ) ते, तव,  
विधेया, विधीयते, दीयते, ( आज्ञा इतियावत् ) यया, सा, ( वश्या )  
( आज्ञाकारिणीतियावत् ) अस्मि, इत्यनेनान्वयः । वरवर्णिनि ?, सुन्दरि !  
व्यावृणु, प्रकाशय, विवक्षितं, कथनार्हं, ( इच्छितमितियावत् ) देवि ?, विष-  
याणां, सक् चन्दनाद्युपभोग्यवस्तूनां, माधुर्यं, मनोहारित्वं, इन्द्रियग्रामस्य,  
चक्षुरादीन्द्रिय समूहस्य, लोलुपतां, लालसतां, जानासि, वेत्सि, एव । नव-  
यौवनस्य, प्रौढावस्थायाः, उन्मादितां, उन्मादकारित्वं, च, मनसः, चेतसः,  
पारिप्लवतां, चाञ्चल्यं, जानास्येवेति पूर्वेण सम्बन्धः । मन्मथस्य, कामस्य,  
दुर्निवारता, अवाध्यता, प्रख्याता, प्रसिद्धा, एव, अतः, माम्, ( मालती-  
मितियावत् ) उपालम्भेन, उपालम्भदानेन, ( तिरस्कारेणेत्यर्थः ) उप-  
स्थातुं, ग्रहीतुं, न, अर्हसि, योष्यासि । बालिशता, अज्ञता, चपलता,  
चाञ्चल्यं, चारणता, दौत्यं, ( यशः-शोषणशीलतेतियावत् ) बाचाल-  
तायाः, बहुभाषितायाः, कारणां, हेतुः, न, च, ( त्वदप्रेयदहंवच्चिन्तनं तज्जमम

किञ्चिन्न कारयत्यसाधारण स्वामिभक्तिः । सात्त्वं देवि, यदैव दृष्टा-  
सि देवेन, तत एवारभ्यास्य कामो गुरुः, चन्द्रमा जीवितेशः, मलय-  
मरुदुच्छ्वास हेतुः, आधयोऽन्तरङ्गस्थानेषु, संतापः परमसुहृत्, प्रजा-  
गर आप्तः, मनोरथाः सर्वगताः, निःश्वासा विप्रहाप्रेसराः, मृत्युः पार्श्व-  
वर्ती, रणरणकः सञ्चारकः, संकल्पाबुद्ध्युपदेशवृद्धाः । किं वा वि-  
वालिशतादयः, नैव हेतवरतिताप्तयार्थः ) किन्दित्यपेक्षायामाह । नेति—  
असाधारणा अनन्यसदृशी, स्वामिभक्तिः, प्रभौ अनुरागः, किञ्चित् । किमपि,  
न, कारयतीति न, अपितु सर्वमेव कारयतीतिभावः । सा त्वं, ( सरस्वतीरूपा )  
यदा, एव, देवेन दधीचेन, दृष्टासि, अवलोकित्वासि, तत एवारभ्य, ततः प्रभृति  
अस्य, कुमारस्य, कामः, मन्मथः, गुरुः आचार्यः ( उपदेष्टा इति यावत् )  
यथैवाज्ञापयति तथैव करोति, वशवर्तित्वादित्यर्थः । चन्द्रमा, जीवितेशः,  
प्राणेश्वरः, ( शिशिरतया कामाग्नि निर्वापण कारणत्वात्, अमृतमयत्वेन च  
जीवन रक्षण क्षमत्वादित्यर्थः ) यद्वा, जीवितेशः मृत्युः ( चन्द्रोदयसमयेका-  
मिनां सततमुपास्यमानाः कामाग्निवर्द्धकतया मृत्युं दिशन्तीतितात्पर्यार्थः )  
मलयमरुत्, मलयबायुः, उच्छ्वास हेतुः, उच्छ्वास कारणं, ( यदाहिमलयमरुद-  
हतितदैवासौनिश्वासितोत्यर्थः ) अन्तरङ्गस्थानेषु, अभ्यन्तरस्थानेषु, आधयः,  
मानसीव्यथाः ( स्वजनाः यथासर्वदा परिचरन्ति तथैवाधयः एनंनिरन्तरमाश्र-  
यन्तीत्यर्थः ) सन्तापः, परमसुहृत्, मित्रं, ( सतत सहचरमितिभावः ) यद्वा-  
परम-असुहृत् । प्राणहरः । प्रजागरः, जागरणं, आप्तः, विश्रम्भभाजनः,  
( आत्मीयइत्यर्थः ) नैनन्त्यजतीतिशेषः । मनोरथाः, अभिलाषः, सर्वगताः,  
सर्वगामिनः, निश्वासाः, श्वसनानि, विप्रहाप्रेसराः, विप्रहस्य, विशिष्टज्ञानस्य,  
देहस्य वा, अग्रगामिनः, शरीरं परित्यज्य गन्तुमिच्छन्तीत्यर्थः, मृत्युः, मरणं,  
पार्श्ववर्ती, पार्श्वचरः ( त्वदनङ्गी क्रियमाणे, मरणंनिश्चितमितितात्पर्यम् )  
रणरणकः, उत्कण्ठा, एव, सञ्चारकः, प्रेरकः । सङ्कल्पाः, मनसो कल्पनाः,

ज्ञापयामि । अनुरूपोदेवोदेव्या इत्यात्म संभावना, शीलवानिति प्रक्रम विरुद्धम्, धीरइत्यवस्था विपरीतम्, स्थिरप्रीतिरिति निपुणोपक्षेपः, जानाति सेवितुमित्यस्वामिभावोचितम्, इच्छति दासभाव-  
मामरणात्कर्तुमिति धूर्तालापः, भवनस्वामिनी भवसीत्युपप्रलोभनम्, पुण्य भागिनी भजतिभर्तारं तादृशमिति स्वामिपक्षपातः, त्वं तस्य मृत्यु-  
रित्यप्रियम्, अगुणज्ञासीत्यधिक्षेपः, स्वप्नेऽस्य बहुशः कृतप्रसादासी-

बुद्धेः, ज्ञानस्य, उपदेशः “इदं कुरु” एवंकरणीयं” इत्येवंरूपः, तस्मिन्, वृद्धाः, महान्तः, स्वविराश्च । किं वा, विज्ञापयामि, कथयामि, अनुरूपः, सुयोग्यः, देवः, दधीचः, ( उक्तेइतिशेषः ) ( एवं सर्वत्रैवज्ञेयम् ) इति, आत्म-  
संभावना, आत्मश्लाघा । शीलवान्, सुशीलः, ( असावितियावत् ) प्रक्रम-  
विरुद्धं, प्रसङ्गविपरीतम् ( ईदृग्व्यापारवतः वुतः शीलवत्वमित्यर्थः ) धीरः, धैर्यवान्, इति, अवस्था विपरीतम्, अवस्थाकामजनितदशा, तस्याः, विपरीतं  
विरुद्धं, ( धीराः नश्येवं विलपन्तीत्यर्थः ) स्थिरप्रीतिः, अचलप्रेमा, इति,  
निपुणोपक्षेपः, निपुणस्य, चतुरस्य, ( यथाकथञ्चित् कर्मणि दक्षस्येत्यर्थः )  
उपक्षेपः, उपक्रमः ( आलापइतियावत् ) ( स्थायित्वकीर्तनं विना नास्य कार्य-  
सिद्धिरित्येव मुक्तिः युज्यते इत्यर्थः ) सेवितुं परिचरितुं, जनाति । ( प्रणया-  
नुगमनमितियावत् ) अस्वामिभावोचितं, स्वामित्वानुपयुक्तं, ( नहिसेवन्तेस्वा-  
मिनः सेवकान् प्रत्युतः सेवकैरेव स्वामी सेव्येते ) आमरणात्, आजीवनं, दास-  
भावं, सेवकत्वं, इच्छति, इति, धूर्तालापः, प्रतारकवचनं, ( धूर्तैः स्वकार्य-  
सिद्ध्यैरेवं, कथ्यते इत्यर्थः ) भवनस्वामिनी, गृहकर्त्री, भवसि, इति, प्रलोभनं,  
लोभप्रदर्शनं । पुण्यभागिनी, धन्या, तादृशं, ( सुयोग्यमित्यर्थः ) भर्तारं, पतिं  
भजति, इति, स्वामि पक्षपातः, स्वामिनि ( यदर्थमहमागता ) तस्मिन्,  
प्रभौ, इतिभावः । पक्षपातः, अतिप्रणयः । त्वं, तस्य, मृत्युः, ( त्वां विना-  
मरिष्यत्सवावित्यर्थः ) इति; अप्रियं; निधुरवचनं । अगुणज्ञाः गुण परिज्ञाने-

त्यसाक्षिकम्, प्राणरक्षार्थमर्थयत इति कातरता, तत्रागम्यतामित्याज्ञा, वारितोऽपि बलादागच्छतीति परिभवः । तेद्वमगोचरे गिरामसीतिश्रु-  
त्वा देवी प्रमाणां इत्यभिधाय तूष्णीमभूत् ।

अथ सरस्वती प्रीति विस्फारितेन चक्षुषा प्रत्यवादीत्—‘अयि’  
नशक्नोमि बहु भाषितुम् । एषास्मि ते स्मितवादिनि वचसि स्थिता ।  
गृह्यन्ताममी प्राणाः, इति । मालती तु ‘यदाज्ञापयिष्यति प्रसादः’ इति  
असमर्था, इति, अधिक्षेपः, अपमानः, स्वप्ने, निद्रावस्थायां, बहुशः, बारं बारं,  
कृतप्रसादा, कृतः, विहितः, प्रसादः, अनुग्रहः, यथा, तथाभूता । ( त्वां  
स्वप्ने, दृष्ट्वा, असौमहतां प्रीतिमलभतेत्यर्थः ) इति, असाक्षिकम् । साक्षिरहितं,  
( स्वप्नेसाक्षिणामभावादित्यर्थः ) प्राणरक्षार्थ, जीवनरक्षितुं, अर्थयते, प्रार्थयते,  
( त्वत्प्रसादमित्यर्थः ) इतिकातरता, दैन्यं, ( दीनानामेवालापमेतदितिभावः )  
तत्र, तत्पार्श्व, आगम्यतां, इति, आज्ञा, आदेशः । वारितः, निषिद्धः, ( मागन्त-  
व्यंत्वयाम-समीपं, इति ) अपि, संभावनायां, बलात्, दृष्टात्, आगच्छतीतिप-  
रिभवः तिरस्कारः । तत्र, तस्मात्, गिरां, वाचां, अगोचरे, अविषये, असि,  
( नहिकिमपिवक्तुं समर्था इतिभावः ) इतिश्रुत्वा, निशम्य, देवी, भवती,  
प्रमाणां, ( प्रमीयते, अनुमीयते, इतिप्रमाणां । इत्यभिधाय, कथयित्वा, तूष्णी  
मभूत्, मौनं लेभे ।

अथ, अनन्तरं, प्रीतिविस्फारितेन, प्रीत्या, प्रेम्णा, विस्फारितं, विस्तारि-  
तं, ( उन्मीलितमित्यर्थः ) तेन, चक्षुषा, नेत्रेण, प्रत्यवादीत्, उक्तवती अपि ?  
बहु, अधिक्षं, भाषितुं, कथयितुं, नशक्नोमि ( असमर्थास्म ) स्मितवादिनि ?  
मधुरभाषिणि ?, एषा, अहं, ते, तव, वचसि, आज्ञायां, स्थिता, अस्मि  
अमीप्राणाः, ( मदीयं जीवनमित्यर्थः ) गृह्यन्तां, स्वीकुरु । मालतीतु, यदाः  
ज्ञापयामि, आज्ञां करोसि, अतिप्रसादः, अनुग्रहः, ( भवत्या इतिशेषः ) इति,  
व्याहृत्य, कथयित्वा, प्रहर्षः, आनन्द विशेषः, तेन, पलशा, पराधीना, ( सुखे-

व्याहृत्यप्रहर्षपरवशा प्रणम्य प्रजविना तुरगेण ततार शोणम् । अगाध  
दधीचमानेतुं च्यवनाश्रमपदम् । इतरा तु सखी स्नेहेन सावित्रीमपि  
विदित वृत्तान्तामकरोत् । उत्कण्ठाभारभृता च ताम्यता चेतसा  
कल्पायितं कथंकथमपि दिवसशेषमनैषीत् । अस्तमुपगतवति भगवति  
गभस्तिमति, स्तिमिततरमवतरति तमसि, प्रहसितामिव सितां दिशं  
पौरन्दरीं दरीमिव केसरिणिमुञ्चति चन्द्रमसि, सरस्वती शुचिनि  
चीनांशुकसुकुमारे तरङ्गिणी दुकूलकोमले, शयन इव शोणसैकते

नेतियावत् ) प्रणम्य, नत्वा, प्रजविना, द्रुतगामिना, तुरगेण, अश्वेन, शोणं,  
नदं, ततार, अवतीर्णा । दधीचमानेतुं, आनयनाय, च्यवनाश्रमपदं, च्यवन-  
स्थानं, अगात्, च, अगमत् । इतरा तु ( सरस्वती ) सखीस्नेहेन, प्रेम्णा,  
सावित्रीमपि, स्व सहचरीमपि, विदित वृत्तान्तां, विदितः, ज्ञातः, वृत्तान्तः,  
( दधीचेसरस्वत्याः अनुरागवृत्तं यस्यास्ताम् ) एवं भूतां, अकरोत् । चक्र  
( सावित्रीसविधेसर्ववृत्तमकथ्यदितिभावः ) उत्कण्ठाभारभृता, उत्कण्ठानां,  
औत्सुक्यानां, भारः, अतिशयः, तं, विभर्ताति, तेन, ताम्यता, क्लिश्यता,  
चेतसा, मनसा, कल्पायितं, ब्राह्मदिनं कल्पः, तद्वदाचरति, तं, ( कल्प शटश-  
मितिभावः ) कथंकथमपि, केनापि प्रकारेण, दिवसं, दिनं, अनैषीत्, व्यतीत  
यत् । गभस्तिमति, विरणशालिनि ( सूर्ये इतियावत् ) भगवति, कल्याणकरे,  
अस्तं, अस्ताचलं, उपगतवति, प्राप्ते, ( अस्तंगते इत्यर्थः ) स्तिमिततरं, मन्दं  
मन्दं, अवतरति, आविर्भवति, प्रहसितामिव, प्रकर्षेण, कृद्धास्यामिव, सितां,  
शुभ्रां, पौरन्दरींदिशं, पुरन्दरस्य, इन्द्रस्य, इयं, यद्वा, पुरन्दरः, अधिष्ठाता,  
यस्याः, सा पौरन्दरी, त, दिशं, ( पूर्वामितिभावः ) दरीमिव, गुह्यामिव, केस-  
रिणि, सिंहे, मुञ्चति, त्यजति, ( उदयमाने इत्यर्थः ) चन्द्रमसि, शशिनि । सर-  
स्वती-शुचिनि, स्वच्छे, चीनांशुकं, चीनदंशोद्भवं वस्त्रं, तद्वत्, सुवुमारः, अति  
कोमलः, तस्मिन्, तरङ्गिणि, ( प्रतिदिवसस्त्रीयमाणेनजलेन कृतरेवेत्यर्थः )

समुपविष्टास्वप्रकृतप्रार्थनापादपतनलम्नां दधीचचरणनखचन्द्रकामिव  
ललाटिकां दधाना, गरुडस्थलादर्श प्रतिबिम्बितेन, “चारुहासिनि?”,  
अयमसावाहृतो हृदयदयितो जनः’ इति श्रवणसमीपवर्तिना निवेद्यमान  
मदन सन्देशेवेन्दुना, विकीर्यमाणनखकिरणचक्रवालेनबालव्यजनी-  
कृतचन्द्रकलाकलापेनेवकरेणवीजयन्ती स्वेदिनं कपोलपट्टम्, ‘अत्र  
दधीचाहते न केनचित्प्रवेष्टव्यम्’ इति तिराश्चीनं चित्तभुवापतितां विला-  
दुकूलकमलं, दुकूलवत् सुकुमारे, शयनं, शय्यायां, इव, शोणसेकते, शोणनद-  
पुलनं, समुपविष्टा, स्थिता । स्वप्नेति—स्वप्ने, स्वप्नावस्थायां, कृता, या,  
प्रार्थना, “मामनुगृहाण,” इत्यभ्यर्थना, तस्या, यत्, पादयोः, (दधीचस्येत्यर्थः)  
पतनं, तेन, लग्ना, संसङ्गा, ताम् । दधीचेति—दधीचस्य, यः, चरणनखः,  
तस्य, या, चन्द्रिका, ज्योत्स्ना, तामिव, ललाटिकां, शिरोभूषणं, ( तिलक-  
मितियावत् ) दधाना, धारयन्ती । गरुडेति—गरुडस्थलं, कपोलतलं, एव,  
आदर्शः, दर्पणः, ( अतिस्वच्छमितियावत् ) तत्र, प्रतिबिम्बितः, प्रतिफलितः,  
तेन, चारुहासिनि ?, मधुरभाषिण ? अयमसौ, ( पूर्वनिर्दिष्टः ) हृदयदयितो-  
जनः, हृदयवल्लभः, आहृतः, आनीतः, ( मपेशेषः ) “इति” श्रवणसमीप  
वर्तिना, कर्ण पार्श्ववर्तिना, निवेद्यमानेति—निवेद्यमानः, विज्ञाप्यमानः, मदन-  
स्य, कामस्य, सन्देशः, वाचिकं, यस्यै, तथोक्ता, इन्दुना, चन्द्रेण । विकीर्य-  
माणेति—विकीर्यमाणं, इतस्ततः प्रसार्यमाणं, नखकिरणानां, मयूखानां,  
चक्रबालं, मण्डलं, यस्य तथोक्तेन अतएव, बालव्यजनीकृतः, नवचामरत्वेनधृतः  
अथवा, बालकृतं व्यजनं, चामरं, तत्कृतः, चन्द्रकला कलापः, चन्द्रकलानिचयः,  
येन, तथोक्तेन, स्वेदिनं, ( कामोद्भूत धर्माक्षमितियावत् ) कपोलपट्टं, गरुड-  
स्थलं, करेण, हस्तेन, उपवीजयन्ती, व्यजनं कुर्वन्ती । अत्र ( हृदये इति  
यावत् ) दधीचाहते, दधीचंविना, न, केनचित्, केनापि, प्रवेष्टव्यं । इति,  
तिरश्चीनं, तिर्धक्यथास्यात्तथा, चित्तभुवा, कामेन, पातितां, निक्षिप्तां, विलास

सवेत्रलतामिव बालमृणालिकामधिस्तनं स्तनयन्ती कथमपि हृदयेनव-  
हन्ती प्रतिपालयामास । आसीच्चास्यामनसि—‘अहमपि नाम सर-  
स्वती यत्रामुना मनोजन्मना जघन्येव परवशीकृता । तत्र का गणने-  
तरासुनपस्विनीष्वति तरलासु तरुणीषु’ इति ।

आजगाम च मधुमास इव सुरभिगन्धवहः, हंस इव कृतमृणाल-  
धृतिः, शिखण्डीव घनप्रीत्युन्मुखः, मलयानिल इवाहितसरसचन्दन-  
वेत्रलतामिव, विलासाय वेत्रयष्टिमिव, ( द्वारपालः अन्यप्रवेशनिवारणाय वेत्र-  
यष्टिं तिरश्चोनं स्थापयतीति लोकप्रसिद्धिः ) बालमृणालिकां, नवमृणाललतां,  
( विरहसन्तापशान्त्यर्थं धारितामित्यर्थः ) अधिस्तनं, स्तनोपरि, स्तनयन्ती  
कलयन्ती । कथमपि, हृदयेन, चेतसा, वहन्ती, धारयन्ती, प्रतिपालयामास,  
प्रतिक्षां चकार । आसीदिति—अस्याः, सरस्वत्याः, मनसि, हृदि, आसीच्च,  
अहमपि ( अतिधीरादेवताऽपीति यावत् ) नाम, यत्र, अमुना, अनेन, मनो-  
जन्मना, कामेन जघन्येव, नीचेव, परवशीकृता, परवशतांनीता । तत्र, का  
गणना, गणनं, ( किंकथनीयमित्यर्थः ) इतरासु, अन्यासु, तपस्विनीषु, तप-  
शीलाषु, अतितरलासु चञ्चलासु तरुणीषु, युवतीषु । ( अन्ययुवतीनां तु किंक-  
थनं, यदयं किंकरोतीति ) ।

आजगामेति—आजगाम इत्यतः मालतीद्वितीयोदधीचः, इत्यनेनान्वयः ।  
मधुमासइव, वसन्तइव, सुरभिः, सौरभशालिनं, गंधंवहति, धारयतीति,  
तथोक्तः ( पक्षे ) सुरभिः, सौरभवान्, गन्धवहः, पवनः, यत्रतथाभूतः ।  
हंसइव, कृता, विहिता, मृणालेन, ( कामसन्तापनिवृत्त्यर्थमितिभावः ) धृतिः,  
धैर्यं, येन, तथाभूतः, यद्वा, कृता मृणालेन, धृतिः, जीवनरक्षणं, येन, तथोक्तः,  
शिखण्डीव, मयूर इव, घना, सान्द्रा प्रीतिः ( स्नेहातिशयः ) तस्यां, उन्मुखः  
( तत्प्राप्तिले लुप इतियावत् ) ( पक्षे ) घने, मेघे, ( तद्दर्शने इतिभावः ) या, प्रीतिः,  
प्रेम, तस्यै, उन्मुखः, ऊर्ध्वमुखः । मलयानिल इव, मलयसरदिव, आहितः,

धवलतनुलतोत्कम्पः, कृष्यमाण इव कृतकरकचग्रहेणग्रहपतिना, प्रेर्य-  
माण इव कंदर्पोद्दीपनदक्षेण दक्षिणानिलेन, उद्यमान इवोत्कलिका-  
बहलेन रतिरसेन, परिमलसंपातिना मधुपपटलेन पटेनेव नीलेनाच्छा-  
दिताङ्गयष्टिः, अन्तःस्फुरता मत्तमदनकरिकर्णशङ्खायमानेन प्रतिमे-  
न्दुना प्रथमसमागमविलासविलक्ष्मिस्मितेनेव धवलीक्रियमाणैककपोलो-  
दरो मालतीद्वितीयो दधीचः ।

जनितः, सरसेन, सान्द्रेण, ( घृष्टेनेतियावत् ) चन्दनेन, धवलायाः, शुभ्रायाः,  
तनुलतायाः, अङ्गयष्टेः, उत्कम्पः, कम्पनं ( कामज्वरेणेत्यर्थः ) यस्य, तथा-  
भूतः ( पक्षे ) आहितः, जनितः, सरसानां, स्निग्धानां, चन्दनानां, धवाः, वृक्ष-  
विशेषाः, तानुलान्ति, आश्रयन्तीति, तथाभूताः । याः, तनुलताः, सूक्ष्मवल्लर्यः,  
तासाञ्चउत्कम्पः, कम्पनं, येन, तथाविधः । कृष्यमाण इव, आकृष्ट इव, कृतः,  
करेण, हस्तेन, मयूखेन च, कचग्रहः, केशग्रहणं, जेन, तथाभूतेन, ग्रहपतिना,  
चन्द्रमसा । प्रेर्यमाण इव, प्रेरित इव, कंदर्पोद्दीपनदक्षेण, कन्दर्पस्य, कामस्य, उद्दी-  
पने, उत्तेजने, दक्षेण, चतुरेण, दक्षिणानिलेन, दक्षिण वायुना । उद्यमान इव,  
नीयमान इव, उत्कलिका, बहलेन, रणरणवभूयिष्ठेन, रतिरसेन, रत्यास्वादेन ।  
परिमलेति—परिमलेन, गात्रसौरभेण, सम्पतति, निपततीति तथाभूतेन । मधुप  
पटलेन, भ्रमर समूहेन, पटेनेव, वसनेनेव, नीलेन, मीलवर्णेन, आच्छादिता,  
आवृता, अङ्गयष्टिः, शरीर, यस्य, तथाभूतः । अन्तः स्फुरता, अन्तर्विराजमा-  
नेन, मत्तः, दुर्मदः, मदनः, कामः, एव, करी, हस्ती, तस्य, कर्णे, श्रवणे, यः,  
शङ्खः, ( शङ्खनिर्मितभूषणविशेषः ) स इवाचरतीति, तेन, प्रतिमेन्दुना, प्रतिबिम्ब-  
तशशिना, प्रथमेति—प्रथमः, आद्यः, समागमः, सङ्गः, तस्मिन्, यः, विलासः.  
तेन, विलक्षं, सलज्जं, यत्, मृदु हास्यं, तेन इव, धवलीक्रियमाणं, शुभ्रतांनीय-  
मानं, एकस्य, कपोलस्य, गण्डप्रदेशस्य, उदरं, अभ्यन्तरं, यस्य, तथाभूतः, माल-  
तीद्वितीयः, ( मालत्यासहेत्यर्थः ) दधीचः, ( पूर्वनिर्दिष्टः कुमारः ) आजगाम, प्राप्तः ।



आगत्य च हृदयगतदयितानूपुरस्वमिप्रयेव हंसगद्गदया गिरा कृत संभाषणो यथा मन्मथः समाज्ञापयति, यथा यौवनमुपदिशति, यथानुरागः शिञ्जयति, यथा विदग्धताध्यापयति, तथा तामभिरामां रामा-  
मरमयत् । उपजातविश्रम्भा चात्मानमकथयदस्य सरस्वती । तथा तु सार्धमेकं दिवसमिवानयत्संवत्सरमधिकम् ।

अथ दैवयोगात् सरस्वती बभार गर्भम् । असूत चानेहसा सर्वं लक्षणाभिरामं तनयम् । तस्मै च जातमात्रायैव 'सम्यक्सरहस्याः सर्वे-

हृदयेति—हृदयंगता, ( मनसिप्रविष्टा इति यावत् ) या, दयिता, प्रिया, तस्याः, नूपुररवः, रणरणक शब्दविशेषः, तेन, मिश्रा, मिलिता, ( एकत्वंगते-  
त्यर्थः ) तथैव, हंसगद्गदया, ( हंसशब्द मधुरयेतिभावः ) गिरा, वाचा, कृत-  
संभाषणः, विहित वार्तालापः, ( देवि ? ते कुशल खविधमालपन् ) यथेति—  
यथा, येनप्रकारेण, मन्मथः, कामः, समाज्ञापयति, आज्ञां करोति । यौवनं, उप-  
दिशति, अनुशाशति । अनुरागः, प्रेम, शिञ्जयति, शिञ्जां ददाति । विदग्धता,  
चतुरता, अध्यापयति, पाठयति । तथा, तां, ( सरस्वतीं ) अभिरामां, मनो-  
रमां, रामां, प्रियां, अरमयत् । ( अनौचित्यं हि देवता विषयक शृङ्गारप्रदर्शन-  
मतः नात्र विस्तारेण प्रदर्शितं ) कुमारं त्वे गान्धर्व विवाह वर्णनौचित्येऽपि नात्र-  
तद्वर्णनं, शापावसान मात्रपरत्वादाख्यायिकायाः, अन्यथा, तथा, निन्दनीयः  
पतिपरित्यागः कथमकारि, इत्यादिकुतर्कप्रसङ्गात् ) उपजात विश्रम्भा, समुत्पन्न  
विश्वासा, अस्य, दधीचस्य, आत्मानं, ( स्वीयंभावमित्यर्थः ) सरस्वती, अक-  
थयत् । तथा, सरस्वत्या, ( शापादिकमिति यावत् ) सार्धं, सह, अधिकंसम्भ-  
त्सरं, वर्षमेकं, एकं दिनमिव, वासरमिव, अनयत्, व्यतीतयत् । अथेति—  
अथ, अनन्तरं, दैवयोगात्, भाग्यात्, सरस्वती, गर्भं, बभार, दधार । अने-  
हसा, कालेन, सर्वलक्षणभिरामं, मनोज्ञं, तनयं, पुत्रं, असूत । तस्मै, तनयाय  
जातमात्राय, ( उत्पन्नायेत्यर्थः ) सम्यक्, यथास्यात्तथा, सरहस्याः, रहस्यं,

वेदाः सर्वाणि च शास्त्राणि सकलाश्च कलाः मत्प्रसादात्स्वयमाविर्भव-  
प्यन्ति' इतिवरमदात् । सद्भर्तृश्लाघया दर्शयितुमिव हृदयेनादाय दधीचं  
पितामहदेशात्समं सावित्र्या ब्रह्मलोकमारुरोह । गतायां च तस्यां  
दधीचोऽपि हृदये ह्यादिन्येवाभिहतो, भार्गववंशसंभूतस्य भ्रातुर्ब्राह्मणस्य  
जायामक्षमालाभिधानां मुनिकन्यकामात्मसूनोः सम्बर्धनाय नियुज्य  
विरहातुरस्तपसे वनमगात् । यस्मिन्नेवावसरे सरस्वत्यसूत तनयं तस्मिन्ने-  
वाक्षमालापि सुतं प्रसूतवती । तौ तु सा निर्विशेषं सामान्यस्तन्या शनैः  
शनैः शिशू समवर्धयत् । एकस्तयोः सारस्वताख्य एवाभवत्, द्वितीयो-  
उपनिषत्, तेन, सद्भर्तृमानाः, सर्वेवेदाः, ऋग्यजुः सामाथर्वाणः, सर्वाणि च,  
शास्त्राणि, मीमांसादीनि, कलाः, चतुः षष्टिसंख्याकाः कामविद्याः । मत्प्रसा-  
दात्, स्वयं, आविर्भवप्यन्ति, प्रकटिप्यन्ति । इति, एवं, वरमदात्, वरं द-  
त्तवती । सद्भर्तृश्लाघया, सत्, उत्तमः, यः, भर्ता, पतिः, तस्मिन्, श्लाघा,  
गौरवं, तया, दर्शयितुं, प्रदर्शनाय, इव, दधीचं, हृदयेन, चेतसा, आदाय,  
नीत्वा, पितामहदेशात्, ( पुत्र मुखदर्शनानन्तरं ते शाप विरतिः, इत्यादेशात् )  
सावित्र्यासमं, ब्रह्मलोकं, पितामह स्थानं, आरुरोह, गता । गतायां च तस्यां,  
( सरस्वत्यामितिभावः ) दधीचोऽपि, हृदये, चेतसि, ह्यादिन्या, वज्रेण, इव,  
अभिहतः, ताडितः, भार्गववंशसम्भूतस्य, भार्गवकुलोद्भवस्य, भ्रातुः, ब्राह्मणस्य,  
जायां, दयितां, अक्षमालाऽभिधानां, अक्षमाला, नाम्नी, मुनिकन्यकां, पुत्रिं,  
आत्मसूनोः, स्वतनयस्य, संबर्धनाय, वर्धितुं, नियुज्य, विरहातुरः, विरह  
पीडितः, तपसे, तपः कर्तुं, वनम्, अगात्, गतवान् । यस्मिन्नेवावसरे, समये,  
सरस्वती, तनयं, पुत्रं, असूत, तस्मिन्नेव, ( समये-इतियावत् ) अक्षमालापि,  
सुतं, पुत्रं, प्रसूतवती, प्रसवंचकार । तौ तु, बालकौ, सा, अक्षमाला, निर्विशे-  
षम्, ( स्वपुत्रादभिन्न भावेनेत्यर्थः ) सामान्यस्तन्या, ( उभयोः साधारण  
मितियावत् ) स्तन्यं, दुग्धं, यस्याः, तथोक्ता । शनैः शनैः, समवर्धयत्,

ऽपि वत्सनामाभवत् । आसीच्च तयोः सोदर्ययोरिव स्पृहणीया प्रीतिः ।  
 अथ सारस्वतो मातुर्महिम्ना यौवनारम्भ एवाविर्भूताशेषविद्या संभा-  
 रस्तस्मिन्सवयसि भ्रातरिप्रेयसि प्राणसमेसुहृदि वत्से बाङ्मयं सम-  
 स्तमेव संचारयामास । चकार च कृतदारपरिग्रहस्यास्य तस्मिन्नेवप्र-  
 देशे प्रीत्या प्रीतिकूटनामानं निवासम् । आत्मनाप्याषाढी, कृष्णाजिनी,  
 वल्कली, अक्षवलयी, मेखली, जटी च भूत्वा तपस्यतो जनयितुरेव  
 जगामान्तिकम् । अथ तस्मात्प्रवर्धमानादिपुरुषात्जनितात्मचरणोन्नति-

पालितवती । तयोः ( पूर्वनिर्दिष्टयोः ) एकः, सारस्वतीपुत्रः, सारस्वताख्यः,  
 सारस्वत नामा, अभवत् । द्वितीयः, अक्षमाला पुत्रः, वत्सनामा, वत्साभिधेयः,  
 तयोः, बालकयोः, सोदर्ययोः, एक-उदरोद्भवयोरिव स्पृहणीया, प्रशंशनीया,  
 प्रीतिः, प्रेम, आसीत् । अथ, अनन्तरं, सारस्वतः, मातुः ( सारस्वत्याः )  
 महिम्ना, प्रभावेण, यौवनारम्भएव, प्रौढावस्थायामेव, आविर्भूताः, प्रादुर्भूताः,  
 अशेषाः, सकलाः, विद्याः, तासां, संभारः, सन्धः, तस्मिन्, सवयसि, समान  
 वयस्के, भ्रातरि, प्रेयसि, प्राणसमे, सुहृदि, मित्रे, वत्से, बाङ्मयं, शास्त्रं, सम  
 स्तं, सम्पूर्णं, एव, संचारयामास । प्रवेशयामास, ( सर्वास्ताविद्याः वत्समशिक्ष  
 यदित्यर्थः ) कृतदारपरिग्रहस्य, कृतविवाहस्य, अस्य ( वत्सस्येत्यर्थः ) तस्मिन्,  
 एव, प्रदेशे, स्थाने, प्रीत्या, प्रेम्णा, प्रीतिकूट नामानं, तदाख्यं, निवासं, स्थितिं,  
 चकार, अकरोत् । आत्मना, स्वयं, ( अपीतिसंभावनायां ) आषाढी, पालाश  
 दण्डधारी, कृष्णाजिनी, कृष्णाशार मृगचर्मावरणमितिभावः । वल्कली, वल्कलं  
 वृक्षत्वक्, तद्वान् ( तरुत्वगधारीत्यर्थः ) अक्षवलयी, रुद्राक्ष जपमालाधारी,  
 मेखली, मेखला, काञ्ची ( मुञ्जतृणरचित तडागी ) तद्वान् । जटी, जटा, रुद्र  
 संहतकेशः, तद्वान् । ( जटिल इति यावत् ) भूत्वा, एवं मुनिवेषंविधाय, तप-  
 स्यतः, तपस्यां कुर्वतः, जनयितुः, पितुः ( दधीचस्थेतियावत् ) अन्तिकं,  
 पार्श्वं, जगाम, अगमत् । अथेति—तस्मात्, प्रवर्धमानात्, वृद्धिगच्छतः,

निर्गतप्रघोषः, परमेश्वरशिरोधृतः, सकलकलागमगम्भीरः, महामुनिमान्यः, विपक्षक्षोभक्षमः, क्षितितललब्धायतिः, अस्खलितप्रवृत्तोभागी-

आदिपुरुषात्, पूर्वपुरुषात्, ( वत्सादितियावत् ) अथवा, प्रवर्धमानात्, सन्त-  
त्यावृद्धिगच्छन्तः, आदि पुरुषात्, पूर्वजात्, ( भार्गवादित्यर्थः ) ( पक्षे )  
नारायणात् । जनितेति—जनिता, वर्द्धिनीता, आत्मचरणेन, आज्ञानेन,  
या, उच्चतिः, अभ्युदयः, तथा, निर्गतः, ( दिगन्तगत इत्यर्थः ) प्रघोषः,  
ध्वनिः, ( कीर्तिरित्यर्थः ) यस्य, तथोक्तः । अथवा, जानिता, कृता, आत्मनां,  
स्वेषां, ( स्वदेशीयानामितियावत् ) चरणानां, कटादि शाखाध्यायिनां ।  
उच्चतिः, उत्कर्षः, तथा, निर्गतः, प्रघोषः, यशः यस्य, तथाभूतः ( पक्षे )  
जनितस्य, उत्पादितस्य, आत्मचरणस्य, ( वलिङ्गलनसमये, स्वकीयतृतीयपाद-  
स्वेतिभावः ) उच्चत्या, उर्ध्वगत्या, निर्गतः, प्रघोषः, कलकल शब्दः, यस्य,  
तथोक्तः । ( तदानन्तचरण स्पर्शेन, ब्रह्मकटाहभेदादित्यर्थः ) ब्रह्मकटाहस्थिता  
गङ्गा भगवच्चरण स्पर्शात् कटाहभङ्गे महीतले पपात, इत्यस्या विष्णोश्चरणोद्भ-  
वेति प्रसिद्धिः ) परमेश्वरशिरोधृतः, परमेश्वरः, सत्राट्, तेन, शिरसाधृतः,  
( सम्मानित इतियावत् ) ( पक्षे ) परमेश्वरेण, शङ्करेण, शिरसाधृत, धारितः,  
( हरशिरश्चारात्यर्थः ) सकलेति—सकलाः, सर्वाः, कलाः, विद्याः, तासां,  
आगमेन, प्राप्तेन, ( ज्ञानेनेतियावत् ) गम्भीरः, पूर्णः, ( पक्षे ) सकलकलेन,  
शब्दविशेषेण, सह, यः, आगमः, प्रवहणं, तेन, गम्भीरः, । महा मुनिमान्यः  
महान्तश्च ये मुनयः, तैः, मान्यः, आदरणीयः, अथवा, महामुनिवत्, मान्यः,  
मानार्हः ( पक्षे ) महामुनिः, जन्हुः, तेन, मान्यः, सेव्यः, ( पवित्र बुद्ध्या  
उदरेण धृतत्वादितियावत् ) विपक्षेति—विपक्षक्षोभक्षमः, विपक्षाणां, शत्रूणां  
क्षोभे, पराजये, क्षमः, समर्थः । ( पक्षे ) विपक्षाः, पक्षरहिताः, ( पर्वता इति  
यावत् ) तेषां, क्षोभे, तरङ्गाधातेन, खण्डने, क्षमः, शक्तः । क्षितितलेति—  
क्षितितलेषु, पृथ्वी भागेषु, लब्धा, प्राप्ता, आयतिः, प्रतिष्ठा, ( पक्षे ) आयतिः,

रथीप्रवाह इव पावनः प्रावर्तत विपुलो वंशः । यस्मादजायन्त वात्स्या-  
यना नाम गृहमुनयः, आश्रितश्रौता, अप्यनालम्बितालीकवक्रकाकवः,  
कृतकुक्कुटव्रता, अप्यवैडालवृत्तयः, विवर्जितजनवृत्तयः, परिहृतकपट-  
विस्तारः, येन, तथाभूतः । अस्खलितप्रवृत्तः, नास्तिस्खलितं, सदाचारभ्रंशः,  
यस्मिन्, तद्, यथास्यात्तथा, प्रवृत्तः, ख्यातः, (पक्षे) अस्खलितं, अनिरुद्धं,  
प्रवृत्तः, प्रवहणं, यस्य, तथाभूतः । भागीरथी प्रवाहइव, गङ्गास्रोतइव, विपुलः,  
महान्, पावनः, पवित्रः, वंशः, तुलं, प्रावर्तत (ख्यातिलेभे-इतिभावः) यस्माद्  
(वंशादितियावत्) वात्स्यायननाम, वत्सवंशंद्वाः, गृहमुनयः, गृहस्थिताः,  
मुनयः, (मुनिवदाचरन्त इतिभावः) आश्रितश्रौताः, आश्रितः, अवलम्बितः,  
श्रौतः, वेदविहितः, आचारः यैः, तथोक्ता, (कपटभावं परित्यज्यव्रदानुष्ठानक-  
र्तार इतिभावः) पक्षे, श्रौतं, श्रुतं, कर्णेणैव, आश्रितं, स्थितं, (चिरवृत्तमिति-  
भावः) आलम्बितः, स्वीकृतः वक्तव्य, पक्षविशेषस्य, काकुः, ध्वनिः, (भिन्न-  
कण्ठध्वनिधरैःकाकु रित्यभिधीयते) यैः, तथाभूताः, । (यैः वक्वृत्तिः (द्वय)  
स्वीकृता तैःकथं वेदमार्गमनुसर्यते) इतिविरोधः । परिहारे-अलीकं, तुल्यं परि-  
हृतं" अनालम्बितः, अस्वीकृतः, वक्तव्य काकुः, ध्वनिः, यैः तथोक्ताः, ।  
कृतेति—कृतं, कुक्कुटानां व्रतं, भक्षणं, यैः तथोक्ताः, अपि, अवैडालवृत्तयः,  
नास्ति वैडाली, विडाल सन्वध्नीनिवृत्तिः, व्यवहारो येषां तथाभूताः, ।  
यैः कुक्कुटभक्षणं कृतं ते कथं, अवैडालवृत्तयः, इतिविरोधः, परिहारे,  
कुक्कुटव्रतं, कुक्कुटाण्डप्रमाणं ग्रासभोजनं, एवंभूताः । चान्द्रायणादि  
व्रतेषु कुक्कुटाण्ड प्रमाणं ग्रास भोजनं क्रियते, एव । विवर्जितेति—  
विवर्जिता, जनानां, दुर्जनानां, अथवा, जनेषु, दुराचारपुरुषेषु, वृत्तिः,  
व्यवहारः, यैः, तथोक्ताः । परिहृतेति—परिहृतं, परित्यक्तं, कपटकीरस्य,  
दुष्टशुक्तस्य, कुचीकूर्वाकृतं, "किचरमिचिर" इति अव्यक्त शब्दोः, यैः,  
तथाभूताः, यद्वा, परिहृतं. कपटं, व्याजस्तुतिः, (निन्दास्तुतिरितियावत्)

कीरकुचीकूर्चाकृताः, अगृहीतगह्वराः, न्यकृतनिकृतयः, प्रसन्नप्रकृत यः, विगतविकृतयः, परपरिवादपराचीन चेतसः, वर्णत्रयव्यावृत्तिविशुद्धा-  
न्धसः, धीरधिषणावधूताध्येषणाः, असङ्क सुकस्वभावाः, प्रणतप्रणयिनः  
शमितसमस्तशाखान्तर संशीतयः, उद्धाटितसमस्तप्रार्थार्थग्रन्थयः, कवयः,

कीराणां, कुर्चाकूर्चाः, अनर्थकशब्दालापाः, तेषु, आकृतं, अभिप्रायः यैः,  
तथोक्ताः । ( यथापाठितादिशुकाः, रज्जयन्तिलोकानां मनांसि, परं नहि तेषां  
तादृशा प्रवृत्तिः, परमतेव्राह्मणास्तुसमव्यवहारिणो नकापटिका वाचाला इति-  
भावः ) अगृहीतेति—अगृहीतगह्वराः, न गृहीतं, धृतं. गह्वरं, पापं. यैः,  
तथोक्ताः । न्यकृतेति—न्यकृता, तिरस्कृतां निकृतिः, शाठ्यं, यैः, तथा-  
भूताः । प्रसन्नेति—प्रसन्ना, शुद्धा प्रकृतिः, स्वभावः, येषां ( सौम्या इति-  
यावत् ) विगतेति—विगता, विकृतिः, विकारो येषां ते, ( अविकृतचित्ता  
इतिभावः ) परेति—परंषां, परिवादं, निन्दायां, पराचीनं, पराङ्मुखं, चेतः,  
येषां ( परनिन्दा रहिता इत्यर्थः ) वर्णेति—वर्णत्रयाणां, क्षत्रिय, वैश्य,  
शूद्राणां, व्यावृत्त्या, विवर्जने ( प्रतिग्रहादि विसुख्येनेतिभावः ) विशुद्धानं,  
पवित्राणि, अन्धांसि, अज्ञानि, येषां तथाभूताः । धीरेति—धोरा, धैर्यशाल-  
नी, या, धीषणा, बुद्धिः, तया, अवधूता, तिरस्कृता, अधिषणा, याच्ना, यैः,  
तथाभूताः, ( परित्यक्त्याचनमित्यर्थः ) असङ्कसुकस्वभावाः. असङ्कसुकः, स्थिरः  
मृदुश्च, स्वभावः, येषां, तथोक्ताः । प्रणत प्रणयिनः, प्रणतेषु, नम्रेषु जनेषु,  
अनुरागिणः । शमितेति—शमिता, शान्तिनीता, ( सिद्धान्तेन निराकृत्यर्थः )  
समस्ताः, समग्राः, शाखान्तराणां, कठादि वैदिक शाखाविशेषाणां, संशीति,  
संशयः, यैः, तथाभूताः । उद्धाटितेति—उद्धाटिताः. स्फुटिकृताः, ( व्याकृ-  
ताइतियावत् ) समग्राणां, सम्पूर्णानां, ग्रन्थानां. शास्त्राणां, अर्थग्रन्थयः,  
गूढार्थाः यैः, तथोक्ताः, ( शास्त्र संशयदूरीकरणाशीला इति यावत् ) कवयः,  
काव्यनिर्मातारः, वाग्मिनः, सुवक्त्रारः, विमत्सराः, वि-विगतः, मत्सरः, द्वेषभावः

वाग्मिनः, विमत्सराः, सरसंभाषितव्यसनिनः, विदग्धपरिहासवेदिनः, परि-  
चयपेशलाः, नृत्यगीतवादित्रेष्ववाद्याः, ऐतिह्यस्यावितृष्णाः, सानुकोशाः,  
सत्यशुचयः, साधुसंमताः, सर्वसत्त्वसौहार्दद्वार्द्रद्वयाः, तथा सर्वगुणो-  
पेता राजसेनानभिभूताः, क्षमाभाज आश्रितनन्दनाः, अनिर्लिप्ता वि-  
द्याधराः, अजडाः कलावन्तः, अदोषास्तारकाः, अपरोपतापितो भास्व-

वेषां तथेत्ताः । सरसेति—सरसं, रसयुक्तं, भाषितं, वचनं, तत्र, व्यसनिनः,  
(सद्भाषिण इतियावत्) विदग्धेति—विदग्धः, चतुरः, यः, परिहासः, केलिः  
तद्वेदिनः, ज्ञातारः । परिचयपेशलाः, परिचयेषु, संस्तवेषु (सज्जनैरितियावत्)  
पेशलाः, निपुण्यः । नृत्यवादिष्वेषु, नर्तनगानादिषु, अवाद्याः, वह्निर्भावं रहिताः,  
(सर्वज्ञ इतिभावः) ऐतिह्यस्य, इतिहासस्य, अवित्रृष्णाः, आसक्ताः, ( इति-  
वृत्तं ज्ञानिन इतिभावः ) सानुकोशाः, सदयाः । सत्यशुचयः, सत्येन शुचयः,  
प्रताः । साधुसंमताः, सज्जनमान्याः । सर्वेति—सर्वेषु, सत्त्वेषु, जीवेषु, सौहा-  
र्दक्षेत्रेण, मैत्रीभावेन, आर्द्रं, लिङ्गं, हृदयं, येषां तथाभूताः । सर्वं गुणोपेताः,  
सर्वैः गुणैः, दाक्षिण्यादिभिः, उपेताः, युक्ताः, राज्ञः, नृपस्य, सेनया, सैन्येन,  
अनभिभूताः, । अनोक्तान्ताः, ( ये तु सर्वैर्गुणैः सत्वरजस्तमादिभिर्युक्तास्ते  
राजसेन रजः सम्बन्धिगुणैर्नदम्भाहंकारादीना इतिभावः ) अनभिभूताः, अपरा-  
जिताः, रजोगुण रहिता भवन्ति इति विरोधः । परिहारस्तुप्राक् । क्षमाभाजः,  
क्षमा, पृथ्वी, तां, भजन्ते, ते, आश्रितनन्दनाः, आश्रितं, सेवितं, नन्दनं,  
तदाल्पं सुरोद्यानं यैः तथाभूताः । पृथ्वी स्थितानां नन्दनाभ्यर्णमिति विरोधः  
असाम्यत्वात् । परिहारे, क्षमा, शक्तौ सहिष्णुता, तद्भाजः (तद्वन्त इतियावत्)  
आश्रितनन्दनाः, आश्रितान्, अनुगतान् जनान्, नन्दयन्ति, आभोदयन्ति,  
तथाभूताः । अनिल्लिप्ताः, खल्वर्जिताः, विद्याधराः, देवयोनिविशेषाः, इति-  
विरोधः, तेषां खल्वसाम्यत्वात् । परिहारे-अनिल्लिप्ताः, अनिर्हयाः, विद्याधराः,  
विद्वान्सः । अजडाः, अशीताः, ( उष्णा इतियावत् ) कलावन्तः, चन्द्राः ।

न्तः, अनुष्माणो हुतभुजः, अकुसुतयो भोगिनः, अस्तम्भाः, पुण्यालयाः, अलुप्तक्रिया दक्षाः, अव्यालाः कामजितः, आसाधारणा द्विजातयः ।

( ये उष्णाभवन्ति ते कथं चन्द्राः, इति विरोधः, तस्य शीतरश्मत्वात् ) परिहारे-अजडाः, अमूर्खाः, क्लान्तः, नृत्यगीतादिपुनिपुणाः । अदोषाः, दोषरात्रिस्तद्रहिताः, तारकाः, नक्षत्राणि, इति विरोधः, रात्रिविना तारकोद्गमत्वात् । परिहारे-अदोषाः, दोषरहिताः, तारकः, तारयन्ति, उद्धरन्ति लोकानिति, तथाभूताः ( उपदंष्टार इति भावः ) अपरोपतापिनः, न परान्, उपतापयन्ति, सन्तापयन्ति, इति, तथाभूताः, भास्वन्तः, सूर्याः, ( ये, सूर्यास्तैकथं नापरसंतापकराः, ) इति विरोधः । सूर्यस्य तापहेतुत्वात् । परिहारे-अपरोपतापिनः, परान् न उपतापयन्ति, पीडयन्तीति तथाभूताः । भास्वन्तः, प्रभाशालिनः, ( लोकसमाजेषु दीप्यमाना इति भावः ) अनुष्माणः, शीताः, हुतभुजः, अग्नयः, इति विरोधः, अग्नेः, उष्णत्वात् । परिहारे अनुष्माणः, उष्मरहिता, ( अग्नौ इति यावत् ) हुतभुजः, हुतं, यज्ञेषु देवभ्यो दत्तं, तं भुजते, इति तथाभूताः ( यज्ञवशिष्टाशिन इति भावः ) अकुसुतयः, नास्ति, कौ, पृथिव्यां, विवरे वा, सतिः, गतिः, स्थितिः, वा येषां, तथाभूताः, भोगिनः, सर्पाः, इति विरोधः, ( सर्पाणां विवरे पृथिव्यां वा अनवस्थानमसम्भवत्वात् ) परिहारे-अकुसुतयः, अकु-अकुसिता, सतिः, गतिः, आचारः, येषां, तथाभूताः, भोगिनः, संसारसुखभोगवन्तः । अस्तम्भाः, स्तम्भः, स्थूणा, तद्रहिताः, पुण्यालयाः, पुण्यस्थानानि ( मन्दिराणीति भावः ) इति विरोधः । स्तम्भविना गृहस्थिते रसम्भवात् । परिहारे-स्तम्भः, कामजनित सात्विकभावः, तद्रहिताः, पुण्यालयाः, पुण्यवन्तः । अलुप्तेति—न लुप्ता, अनष्टा, क्रतुक्रिया, यज्ञानुष्ठानं, येषां तथाभूताः, दक्षाः दक्षः, प्रजापतिः, सः, इति विरोधः, ( हरकोपेन तस्य यज्ञविध्वंसतत्वात् ) परिहारे-दक्षाः, चतुराः । अव्यालाः, सर्परहिताः, कामजितः, रुद्राः, इति विरोधः, महादेवैः सततं सर्पसन्निध्यात् । परिहारे-अव्यालाः, अहिहाः, कामजितः,



तेषु चैवमुत्पद्यमानेषुः संसरति संसारे, यात्सुयुगेषुः अवतीर्णो कलौ बहत्सु वत्सरेषु, व्रजत्सु वासरेषु, अतिक्रामति च काले, प्रसव-परम्पराभिरनवरतमापतति विकासिनि वात्स्यायनकुले, क्रमेण कुबेर नामा वैनतेय इव गुरुपक्षपातीद्विजो जन्म लेभे । तस्याभवन्नच्युत ईशानो हरः पाशुपतश्चेति चत्वारो युगारम्भा इव ब्राह्मतेजो जन्यमान-

कामजयिनः, ( निरभिलाष, इत्यर्थः ) असाधारणाः, असामान्याः, द्विजातयः ब्राह्मणाः, द्विजन्मानः, द्वाभ्यां गर्भसंस्काराभ्यां जायते इति द्विजन्मा । तेषु च, एवं, अनेनप्रकारेण, उत्पद्यमानेषु, जायमानेषु, संसरति, चलति, संसारे, जगति, यात्सु, गच्छत्सु, सत्यद्रापर त्रेतादिषु, अवतीर्णो, प्रादुर्भूते, कलौ, कलियुगे, बहत्सु, अतिक्रामत्सु, वत्सरेषु, व्रजत्सु, गच्छत्सु, वासरेषु, दिवसेषु, अतिक्रामति, गच्छति, च, काले, समये, ( प्रागभिहिते इतियावत् ) प्रसव परम्पराभिः, अपत्यजन्मप्रवाहैः, अनवरतं, निरन्तरं, आपतति, परिवर्द्धमाने, विकासिनि, विराजमाने, वात्स्यायनकुले, वंशे, क्रमेण, जनपरम्पराया, वैनतेय इव, “विनतायाः अपत्यं पुमान् वैनतेयः” गरुडः, स इव, गुरु पक्षपाती, गुरौ, आचार्ये, पितरि वा, पक्षपातः, भक्तिः, विद्यते अस्येति तथा-भनः, ( पक्षे ) गुरुभ्यां, महद्भ्यां, पक्षाभ्यां, पतति, उद्गच्छतीति तथाभूतः, द्विजः, ( द्वाभ्यां जन्म संस्काराभ्यां जायते इति द्विजः, ब्राह्मणः ) ( पक्षे ) द्वाभ्यां जन्मागडजाभ्यां जायते इतिद्विजः, पक्षी । कुबेरनामा कुबेराभिधेयः, जन्म लेभे, अजायत । तस्य, कुबेरस्य, युगारम्भा इव, युगानां, सत्यादीनां, चतुर्णां, आरम्भाः, प्रथम प्रवृत्तयः, ते, इव । ब्राह्मेति—ब्राह्मं, वैदिकं, तेजः, तेन, जन्यमानः, उत्पद्यमानः, प्रजानां, सन्ततीनां, विस्तारः येषां, तथोक्ताः, ( पक्षे ) ब्राह्मणः, विधातुरिदं ब्राह्मं, यत् तेजः, तेन, ( मनः प्रभावेणेतिभावः ) जन्यमानः, प्रजाविस्तारः, येषु, तथाभूताः । युगादौ ब्रह्मणः सनकसनन्दनादीनां चतुर्णांपुत्राणां मानमसृष्टिः, ततः जन्म हास कारणात्, सङ्कल्पान्मै-

प्रजाविस्तारा नारायणाबाहुदण्डा इव सच्चक्रनन्दकास्तनयाः । तत्र पाशुपतस्यैक एव भवद्भूभार इवाचल कुलस्थितिश्चतुर्दधिगम्भीरोऽर्थ-पतिरिति नाम्ना, समप्राप्रजन्मचक्रचूडामणिर्महात्मा सूनुः ।

सोऽज्जनयद्भृगुं हंसं शुचिं कविं महीदत्तं धर्मं जातवेदसं चित्रभानुं त्र्यक्षम् । अहिदत्तं विश्वरूपश्चेति—एकादश रूद्रानिव सोमामृतरसशीक-

धुनः च सृष्टि रिति शास्त्रेऽवधेयम् । नारायणस्य, विष्णोः, बाहुदण्डा, भुज-दण्डा, इव, ( विष्णोश्चतुर्भुजत्वात् ) सच्चक्रनन्दकाः, सतां सज्जनानां, चक्रं, समाजं, नन्दयन्ति, आह्लादयन्ति. इति तथाभूताः, ( पक्षे ) सत्, तिष्ठत्, चक्रं, मुदर्शनं, नन्दकः, खड्गः येषु तथोक्ताः । तनयाः, अच्युतादयः, एकादश-पुत्राः, अभवन्, बभूवुः । तत्र ( कुले इतियावत् ) पाशुपतस्य, एकः—एव, भूभार इव, भुवः पृथिव्याः, भार इव, अचल कुलस्थितिः, अचला, स्थिरा, कुलस्य; वंशस्य, स्थितिः, यस्य, तथाभूतः ( पक्षे ) अचलानां, पर्वतानां, कुलैः, समूहैः. ( सप्तभिः कुलपर्वतै रिति भावः ) एवं स्थितिर्यस्य तथोक्तः । ( शेषशिर' स्थायाः, भूमेः नमनोन्नमन निवृत्यर्थं परितः पर्वतानामवस्थापनादि-ति भावः ) चतुर्दधिगम्भीरः, चत्वारः, उदधयः, समुद्राः, तद्वत् गम्भीरः ( महाप्रभावत्वादविकार्यस्य ) ( पक्षे ) चतुर्भिः, उदधिभिः, समूहैः, गम्भीरः, वेष्टितः, इति भावः । अर्थपतिनाम्ना समप्रेति—समप्राणां, अप्रजन्मनां, ब्राह्मणानां, चक्रस्य सूनुस्य, चूडामणिः, शिरोरत्नभूतः. ( अप्रगण्य इतियावत् ) महात्मा—सूनुः, पुत्रः, अभवत्, बभूव ।

सः, अर्थपतिः, भृगुं हंसादीनेकादशरूद्रानिव, सोमेति—सोमः, तन्नाम लता; तस्य, अमृतमिव रसः, ( यज्ञशिष्ट इत्यर्थः ) तस्य, शीकरैः, विन्दुभिः, क्षुरितं, ( पूर्णमितियावत् ) मुखं, येषां, ( यज्ञकर्तृत्वात् सोमरस पायिन इति भावः ) ( पक्षे ) सोमस्य, चन्द्रस्य, अमृतरसानां, निःसृत किरणद्रवाणां, श्मीकरैः, क्षुरितमुखान्, आवृतवदनान्, पवित्रान्, विशुद्ध प्रवृत्तीन्, पुत्रान्,

रच्छुरितमुखान्पुत्रान्पुत्रान् । अलभत च चित्रभानुः स्तेषां मध्ये राज-  
 देव्यभिधानायां ब्राह्मण्यां बाणमात्मजम् । स बाल एव विधेर्बलवतो  
 वशादुपसम्पन्नया व्ययुज्यत जनन्या । जातस्नेहस्तु नितरां पितैवास्य  
 मातृतामकरोत् । अवर्धत च तेनाधिकतरमेधीयमानधृतिर्धाञ्चि निजे ।  
 कृतोपनयनादिक्रियाकलापस्य समावृत्तस्य चतुर्दशवर्षदेशीयस्य पिता-  
 पि श्रुतिस्मृतिविहितं कृत्वा द्विजजनोचितं निखिलं पुण्यजातं काले-  
 नादशमीस्थ एवास्तमगात् । संस्थिते च पितरि महता शोकेनाभी-  
 तनयान्, अजनयत् । तेषां ( पुत्राणामध्ये ) चित्रभानुः, तदाख्यः, राजदेव्य-  
 भिधानायां, राजदेवीं समाख्यायां, ब्राह्मण्यां, बाणं, बाण नामानं, आत्मजं,  
 पुत्रं, अलभत, प्राप्तवान् । सबाणः, विधेः, देवस्य, बलवतः, प्रबलस्य ( महा-  
 दुर्भाग्यस्येतिभावः ) वशात्, प्रभावात्, उपसम्पन्नया, मृतया, जनन्या, मात्रा,  
 व्ययुज्यत, वियोगितः । जातेति—जातः, उत्पन्नः, स्नेहः, प्रेम, एवंभूतः,  
 पिता एव, अस्य ( बाणस्य ) मातृतां, मातृभावं, अकरोत्, चकार । तेन,  
 ( चित्रभानुना ) अधिकतरं, बहुविधं, यथास्यात्तथा, एधीयमाना, ( इच्छते-  
 अभिरन्नेनेतिपदः, अभिप्रज्वालन काष्ठं, तद्वदाचर्यमाना, उद्दीप्यमाना, धृतिः,  
 धैर्यं, यस्य, तथाभूतः, स, निजधाम्नि, स्वकीयेगृहे, अवर्धत, अपालयत्,  
 ( च-इतिसमुच्चयार्थं बोधकमव्ययम् ) कृतेति—कृतं, विहितं, उपनयनादि,  
 क्रिया कलापं, क्रिया समूहं, यस्य, समावृत्तस्य, स्नातकस्य, ( वेदाध्ययनात्तरं  
 समावर्तननामसंस्कार संस्कृतस्येतिभावः ) चतुर्दशवर्षदेशीयस्य, चतुर्दशवर्षा-  
 यस्य, श्रुति स्मृति विहितं, श्रुतिः, वेदः, स्मृतिः, धर्मशास्त्रं, तद् विहितं,  
 कथितं, द्विजजनोचितं, ब्राह्मणजन योग्यं, निखिलं, सम्पूर्णं, पुण्यजातं,  
 ( श्रौतस्मार्तक्रियानिचयमितिभावः ) अदशमीस्थः, “शतायुर्वैपुरुषः,” इत्युक्तेः,  
 आयुषो दशधाविभागे दशमीनाम अन्तिमावस्था; तत्र, द्विष्टतीतिदशमीस्थः,  
 स न विद्यते अन्येति-अदशमीस्थः ( अपूर्णावस्थायामेवेतिभावः ) अस्तमगात्,

लभनुप्राप्तो दिवानिशं दह्यमानहृदयः कथंकथमपि कतिपयान्दिवसाना-  
 त्मगृहे एवानैषीत् । गते च विरलतांशोके शनैः शनैरविनयनिदानतया  
 स्वातन्त्र्यस्य, कुतूहलबहलतया च बाल भावस्य, धैर्यप्रतिपन्नतया च  
 यौवनारम्भस्य, शैशवोचितान्यनेकानि चापलान्याचरन्निर्वरो बभूव ।  
 अभवंश्चास्य वयसा समानाः सुहृदः सहायाश्च । तथा च । भ्रातरौ  
 पारशवौ चन्द्रसेनमातृषेणौ, भाषाकविरीशानः परमित्रम्, प्रणयिनौ  
 परलोकमगमत् । संस्थिते, मृते, पितरि, महता शोकेन, अतिदुःखेन, आभीलं,  
 कष्टं, अनुप्राप्तं, पतितः, दिवानिशं, नक्तं दिनं, दह्यमानहृदयः, प्रज्वलित-  
 चितः, कथंकथमपि, केनापिपकारेण, कतिपयान्दिवसान्, दिनान्, आत्मगृहे,  
 स्वर्गशमनि, एव, अनैषीत्, व्यतीतयत् । विरलतां, अल्पतां, गते, प्राप्ते, शोके,  
 शनैः शनैः, मन्दं मन्दं, अविनय निदानतया, अविनयः, दुराचारः, ( मदीन्द्र-  
 ल्यमितियावत् ) तस्य, निदानं, मूलकारणं, तस्यभावः, तत्ता, तया, स्वातन्त्र्य-  
 स्य, स्वाधीनायाः, कुतूहलं, आश्चर्यं, तस्य, बहलतया, आधिक्येन, बालभावस्य  
 शिशुत्वस्य, धैर्यप्रति पन्नतया, धैर्यविरोधितया, यौवनारम्भस्य, प्रौढवस्थायाः ।  
 शैशवोचितानि, बाल्योचितानि, अनेकानि, बहूनि, चापलानि, आचरन्, इतरः  
 गमनशीलः, बभूव, अभवत् । अभवंश्चेत्यादिना आत्मनः सर्वविध कला  
 विशारदत्वं प्रकटयति । अस्य, बाणस्य, वयसा समानाः, समान वयस्काः,  
 ( ब्राह्मणात् शूद्र कन्याया मूढ्यां जातौ पारशवौ ) सुहृदः, मित्राणि, सहा-  
 याश्च, अभवन्, बभूवुः । भ्रातरौ, पारशवौ, चन्द्रसेनमातृषेणौ, तन्नामाभि-  
 धेयौ, भाषाकविः, भाषायां, ( संस्कृतादिवाक्ये इति यावत् ) कविः, काव्यर-  
 चयिता, यद्वा, भाषाः, गेयवस्तुवाचः, तासु कविः, गाथादिषुगीतिनिर्माता,  
 ईशानः, तन्नामधेयः, परं, उत्कृष्टं, मित्रं, सुहृत् । रुद्र नारायणौ, तन्नामकौ,  
 यद्वा, विष्णु महेशौ, प्रणयिनौ, प्रेमपात्रौ, वार बाण बासबाणौ, तदाख्यौ,  
 विद्वांसौ, परिडतौ, वर्णकविः, वर्ण रचनायां कविः, वेणीभारतः, तदाख्यः ।

रुद्रनारायणौ, विद्वांसौ वारवाणवासबाणौ, वर्णकविर्वेणीभारतः,  
प्राकृतकृतकुलपुत्रो वायुविकारः, वन्दिनावनङ्गबाणसूचीबाणौ, कात्या-  
यनिका चक्रवाकिका, जांगलिको मयूरकः, ताम्बूलदायकश्चण्डकः,  
भिषक्पुत्रो मन्दारकः, पुस्तकवाचकः सुदृष्टिः, कलादश्रामीकरः,  
हैरिकः सिन्धुषेणः, लेखको गोविन्दकः, चित्रकृद्भीरवर्मा, पुस्तककु-  
मारदत्तः, मार्दङ्गिको जीमूतः, गायनौ सोमिलप्रहादित्यौ, सैरिन्ध्री कुर-  
ङ्गिका, वांशिकौ मधुकरपारावतौ, गान्धर्वोपाध्यायो दर्दुरकः, संवाहिका  
केरलिका, लासकयुवा ताण्डविकः, आक्षिप्य आखण्डलः, कितवो

प्राकृतकृतः, प्राकृतभाषानिर्माता, वायुविकारः, तन्नामा । वन्दिनौ, स्तुतिपाठकौ,  
वाणसूचीबाणौ, तदाख्यौ । कात्यायनिका, विधवास्त्री । चक्रवाकिका, तदा-  
ख्या । जाङ्गलिकः, विषवैद्यः, मयूरकः, तदाख्यः, ताम्बूलदायकः, पर्णविक्रेता  
चन्द्रकः, तदाख्यः । भिषक्पुत्रः, वैद्यसुतः, मन्दारकः, तन्नामा । पुस्तकवाचकः  
वक्त्रा, सुदृष्टिः, तदाख्यः । कलादः, स्वर्णकारः, (स्वर्णकारः कलादः स्यात्तथ्य-  
क्षस्तु हैरिकः) चामीकरः, तन्नामा । हैरिकः, होरकपण्योपजीवी, सिन्धुषेणः,  
तदाख्यः । लेखकः (पुस्तकस्थेति यावत्) गोविन्दकः, तन्नामधेयः । चित्रकृत  
आलेख्यकर्ता, वीरवर्मा, तन्नामा । पुस्तकृतः, ग्रन्थकर्ता, यद्वा, पुस्तं, लेख्यादि  
शिल्पकर्म, तत्कृतः, शिल्पकर्मकारी, कुमारदत्तः, तदाख्यः । मार्दङ्गिकः,  
मृदङ्गवादकः, जीमूतः, तन्नामा, गायनौ, गायकौ, सोमिलप्रहादित्यौ, तन्नामानौ  
सैरिन्ध्री, प्रसाधनोपचारज्ञा, कुरङ्गिका, तन्नामनी । वांशिकौ, वंशीवादकौ,  
मधुकरपारावतौ, तन्नामानौ, गान्धर्वोपाध्यायः, गान्धर्व सङ्गीतशास्त्रं, तस्य,  
उपाध्यायः, पाठकः, दर्दुरकः, तदाख्यः । संवाहिका, सेविका, केरलिवा,  
तन्नाम कापि स्त्री । लासकः, नर्तकः, स च, असौ, युवा, तरुणः, ताण्डविकः,  
तदाख्यः । आक्षिप्य, अक्षैः, पाशकैः, दीव्यति, कोडतीति, आक्षिप्यः, द्यूत-  
करः, आखण्डलः, तदाख्यः । कितवः, धूर्तः, भीमकः, तन्नामा । शंलाली,

भीमकः, शैलालियुवा शिखण्डकः, नर्तकी हरिणिका, पाराशरी सुमतिः, क्षपणको वीरदेवः, कथको जयसेनः, शैवो वक्रघोणः, मन्त्रसाधकः करालः, असुरविवरव्यसनी लोहिताक्षः, धातुवादविद्विहङ्गमः, दार्दुरिको दामोदरः, ऐन्द्रजालिकश्चकोराक्षः, मस्करी ताम्रचूडः । स एतैश्चान्यैश्चानुगम्यमानो बालतया निव्रतामुपगतो देशान्तरालोकन कौतुकाक्षिप्रहृदयः सत्स्वपि पितृपितामहोपात्तेषु ब्राह्मणजनोचितेषु स्वयंनर्तकः, सचासौ युवा, तयोक्तः, ( तरुणशैलूष इति यावत् ) शिखण्डकः, तन्नामा । हरिणिका, तदाख्या, नर्तकी । सुमतिः, तन्नाम्नी, पारशरी, भिन्नुः । वीरदेवः, तदाख्यः, क्षपणकः, भिन्नुः जयसेनः, तन्नामा, कथकः, पुराणव्याख्याता । वक्रघोणः, तदाख्यः, शैवः, शिवभक्तः । करालः, तन्नामा, मन्त्रसाधकः, साधित मन्त्रः । लोहिताक्षः, तन्नामा, असुर विवर व्यसनी, असुराणां, विवर, पानालमितिभावः । अथवा-असुराणां, विवरं, रन्ध्रं, ( दोष इति यावत् ) तस्मिन्व्यसनी, ( तज्ज्ञानानुशीलकइतिभावः ) विहङ्गमः, तदाख्यः, धातुवादविद, धातवः, स्वर्ण रजतादयः, तेषां, उद्यते अनेनेतिवादः, गुणः, तं वेत्तीति तथाभूतः । ( रसायन ज्ञाता इतिभावः ) दामोदरः, तदाख्यः दार्दुरिकः, वाद्यविशेष वादकः, अथवा-न्दुराः, भेकाः, तान् वेत्तीति, दार्दुरिकः, ( भेकगुणज्ञ इतियावत् ) चकोराक्षः, तदाख्यः, ऐन्द्रजालिकः, इन्द्र जालविद्यावित् । ताम्रचूडः, तन्नामा । मस्करी, परिवाट्, ( सन्यासीति यावत् ) सः, बाणः, एतैः, पूर्वोक्तैः, ( सहचरैरितियावत् ) अन्यैश्च, अनुगम्यमानः, अनुसृत्यमाणः, बालतया, शैशवत्वेन, निव्रतां, वश्यतां, उपगतः, प्राप्तः । देशान्तरेति—देशान्तराणां, विभिन्नदेशानां, अवलोकने, दर्शने, यत्, कौतुकं, आत्सुक्यं, तेन, आक्षिप्तं, आकृष्टं, ( नचधनलेभादित्यर्थः ) हृदयं, यस्य, तथाभूतः । सत्सु, विद्यमानेषु, अपि, पितृ पितामहोपात्तेषु, पात्रकेषु, ब्राह्मण जनोचितेषु, योग्येषु, विभवेषु, सम्पत्सु, अविच्छिन्ने, अनुचिते, विद्या प्रसङ्गे,

विभवेपु सति चाविच्छिन्ने विद्याप्रसङ्गे गृहान्निर्गतात् । अगाच्च निरवग्रहो  
ग्रहवानिव नवयौवनेन स्वैरिणा मनसा महतामुपहास्यताम् ।

अथ शनैः शनैरत्युदारव्यवहृतिमनोहन्ति बृहन्ति राजकुलानि  
वीक्ष्यमाणः । निरवग्रविद्याविद्योतितानि च गुरुकुलानिसेवमानः, महार्हाऽ  
लापगम्भीर गुणवद्गोष्ठं उपतिष्ठमानः, स्वभावगम्भीरधीर्धनानि विदग्ध-  
मण्डलानि च गाहमानः, पुनरपि तामेव वैपश्चितीमात्मवंशोचितां  
प्रकृतिमभजत् । महत्तश्च कालात्तामेव भूयो वात्स्यायनवंशाश्रयमात्मनो  
जन्ममुवं ब्राह्मणाधिवासमगात् । तत्र च चिरदर्शनादभिनवीभूतस्नेह-

विद्याऽनुशालने, सति, गृहात्, निर्गतात्, अगमत् । निरवग्रहः, स्वतन्त्रः,  
ग्रहवानिव, भूताविष्ट इव, स्वैरिणा, स्वच्छाचारवता, मनसा, चेतसा, महतां,  
सज्जनानां, उपहास्यतां, उपहास पात्रतां, अगात्, प्राप, च, ।

अथेति—शनैः, शनैः, क्रमेण, अत्युदारा, महती, या, व्यवहृति,  
व्यवहारः, ( आचारइतिभावः ) तथा, मनोहन्ति, यानि, तद्वन्ति, बृहन्ति,  
राजकुलानि, राजकानि, वीक्ष्यमाणः, पश्यन्, निरवग्रेति—निरवद्याभिः,  
अनिन्दनीयाभिः, विद्याभिः, कौशलादिभिः, विद्योतितानि, शोभमानानि, गुरु-  
कुलानि, अध्ययनस्थानानि, सेवमानः । महर्हेति—महार्हाः, मधुराः,  
आलापाः, वचनानि, तैः, गम्भीराः, प्रदीप्ताः, गुणवत्यः, विविधगुणशालिन्यः  
गोष्ठ्यः, समाजाः, ताः, उपतिष्ठमानः, सेव्यमानः । स्वभावेति—स्वभावेन,  
प्रकृत्या, गम्भीराणि, धीराणि, धीर्धनानि, प्रज्ञाधनानि, येषां तानि, विदग्ध-  
मण्डलानि, विद्वज्जनममृद्धानि, गाहमानः, आश्रयन् । गाहमानः इत्यनेन,  
सूचितमात्मनस्तेजस्त्वम् । पुनरपि, पुनश्च, तामेव, वैपश्चितीं, विद्वज्जोचितां,  
प्रकृतिं, स्वभावं, अभजत्, अदधत् । महत्तश्च कालात्, अति समयानन्तरं,  
भूयः, पुनः, तामेव, वात्स्यायन वंशाश्रयां, वात्स्यायन वंशोद्भवैरलंकृतां,  
आत्मनः, स्वस्य, जन्मभूमिं, ब्राह्मणाधिवासं, विप्राधुषितं, पुरं, नगरं, अगात्

सद्भावैः ससंभ्रमप्रकटितज्ञातेयैराप्तैरुत्सवदिवस इवानन्दिताभिगमनो  
बालमित्रमण्डलस्य मध्यगतोमोक्षसुखमिवान्वभवत् ।

इति श्रीबालभट्टकृते हर्षचरिते वात्स्यायन,  
वंशवर्णनं नाम प्रथम-उच्छ्वासः ।

तत्र, पुरे, चिरदर्शनात्, कालान्तरावलोकनात् । अभिनवाभूताः, नूतनतायाताः  
स्नेहसद्भावाः, येषां, तथाभूतैः । ससंस्तवेति—ससंस्तवं, सपरिचयं, ( सादर  
मितियावत् ) प्रकटितं, प्रकाशितं, ज्ञातेयैः, कुटुम्बजनैः, आसैः, आर्त्मायैः,  
( पक्षे ) योगिभिः, उत्सवदिवस इव, आनन्दितः, आल्हादितः, अभिगमनः,  
सहचराः, येन, एवंभूतः, बालमित्रमण्डलस्य, शैशवसखमूहस्य, ( पक्षे )  
बाल-इव ( निस्तेजस्त्वादितियावत् ) यः मित्रः, नवसूर्यः, तस्यमण्डलं,  
विम्बं, तस्य, मध्यगतः, मोक्षसुखमिव, निर्वाणानन्दमिव, अन्वभवत्, अनुभूत  
वान् । आख्यायिकासुखविभिर्निजवंश वर्णनंक्रियते, अतः पूर्वप्रसङ्गेन, वारो-  
नाऽपि, हर्षचरेत पूर्व प्रसङ्गेकिमप्यालेखि स्वकीयं वृत्तमिति ।

इति श्रीबालभट्ट कृतहर्षचरिते व्याख्यायां,  
आशुतोषिण्यां प्रथम-उच्छ्वासः ।







श्री कृष्ण जी

❖ श्रीहर्षचरितम् ❖

द्वितीय-उच्छ्वासः

अतिगम्भीरे भूपे कूप इव जनस्य निरवतारस्य ।

दधतिसमीहितासिद्धिं गुणवन्तः पार्थिवा घटकाः ॥ १ ॥

रागिणि नलिने लक्ष्मीं दिवसो निदधातिदिनकर प्रभवाम् ।

अनपेक्षित गुणदोषः परोपकारः सतां व्यसनम् ॥ २ ॥

अनुकूलमुपायमाश्रित्याशङ्कते श्रीहर्षात् स्वभिप्सितम्—  
अतिगम्भीरेति—अत्यधिकं यद् गाम्भीर्यं, तस्मिन्, एवं भूते  
“पक्षे” दुरवगाहत्वं, यत्र, भूपे, राजनि, कूपइव, निरवतारस्य, नि-  
नास्ति, अवतारः, अवतरणं, सुसहायकादीनामाश्रयो यस्य, तथाभूतस्य,  
“पक्षे” सोपानादि विरहितस्य, जनस्य, लोकस्य, गुणवन्तः, गुणाः  
विद्याविनयादयस्तैर्युक्ताः, ( पक्षे ) रज्जुवन्तः, पार्थिवाः, राजनः,  
एव, घटकाः, योजकाः, ( सहायभूता इतिभावः ) ( पक्षे ) पार्थिवाः,  
पृथिव्या, भुवः सम्भूताः ( मृण्मया इतिभावः ) घटाः, एव, घटकाः,  
कलसाः, समीहितसिद्धिं, राजभवनेप्रवेशरूपमिष्टसाफल्यं ( पक्षे )  
सलिलोत्तोलनरूपमिष्टसिद्धिं, दधाति, सम्पादयन्ति । अवतरणिकादि-  
रहितेनाति दुरवगाहादतिगम्भीरादपि कूपात् रज्ज्वादिमुक्तेन कुम्भेन  
यथा जलमधिगम्यते, तथैवातिगम्भीरतया दुरधिगम्यादपिराज्ञोगुणवतां  
सहायकानां सम्पर्केण जनस्याभिवाञ्छितसिद्धिर्जायते इतिभावः ।  
एतेन भूपतौ गुणवान् कृष्ण एव सहाय भूतो वाणस्येष्टसिद्धिं  
सम्पादयिष्यतीतिध्वनितम् । भूपे कूपस्यावैधर्म्यसाम्यप्रतीतेरत्र,  
श्लेषोपमालङ्कारः । अर्यावृत्तम् ॥ १ ॥

परोपकार प्रिया हि मानवाः गुणदोषाननवलोक्यैवपरेषामुप  
कुर्वते । रागिणीति—दिवशः, ( दिवाभागे इतियावत् ) रागिणि,

अथ तत्रानवरताध्ययनध्वनिमुखराणि, भस्मपुण्ड्रक-  
पाण्डुरललाटैः कपिलशिखाजालजटिलैः कृशानुभिरिव क्रतु-  
रागमस्मिन्—अस्ति रागिणि, लोहितरागवति, ( पक्षे ) अनुरागयुते,  
नलिने, कमले दिनकरप्रभवां, दिनङ्करोतीति दिनकरः सूर्यस्तस्य,  
प्रभोत्पन्नां, लक्ष्मीं, श्रियं, ( शोभामितिभावः ) ( पक्षे ) सम्पदं,  
निदधाति, ददाति, तथाहि, अनपेक्षितौ, अविचारितौ, गुण दोषौ  
यत्र, तथोक्तः, परोपकारः, परेषामुपकृतिः, सतां, सज्जनानां, व्यसनं,  
( व्रतमितिभावः ) भवति । साधवः न विचारयन्ति गुणदोषान्  
परोषामुपकृतिरेवाश्रयते तैः । अनेन परोपकारीकृष्णः—एवं विध  
गुणसम्पन्ने बाणोराजसम्पदमाधास्यति-इति-सूचितम् । पूर्वार्धेचात्र  
अप्रस्तुतस्य नलिनेदिनकृत लक्ष्मी निधानस्योपन्यासेन, बाणभट्ट  
कृष्णविहितायाः, श्रीहर्षस्य सभापण्डितसौभाग्यलक्ष्मीः निधानरूपस्य  
प्रस्तुतस्य प्रतीतेर प्रस्तुतप्रशंसाऽलंकारः, “अप्रस्तुत प्रशंसास्यात्सायत्र  
प्रस्तुताश्रया ।” उत्तरार्धे च सामान्यतया प्रथमार्धगतस्य सोपपत्तिकत्व  
विधानात् सामान्येन विशेषसमर्थनरूपोऽर्थान्तरन्यासोऽलंकारः,  
अनयोश्चाङ्गाङ्गिभावत्वेनसंकरः ॥ २ ॥

अथेति—अथ-ब्राह्मणाधिवासगमनानन्तरम्, तत्र ( ब्राह्मणाधि-  
वासे ) अनवरतेति—अनवरतं, निरन्तरं, यत्, अध्ययनं, अधीतिः,  
तस्य, या ध्वनिः, शब्दः, तेन, मुखराणि, शब्दायमानानि, ( बान्ध-  
वानां भवनानि, इत्यनेनान्वयः ) भस्मेति—भस्मपुण्ड्रकेण, भस्मना  
कृतं यत् पुण्ड्रकं तिलकं, तेन, पाण्डुराणि, धवलानि, ललाटानि,  
मस्तकानि, येषां, तथोक्तैः, ( बहुभिरित्यनेनान्वयः ) कपिलेति—  
कपिलाः, पिङ्गलाः, ये, शिखाजालाः, चूडासमूहाः, ( पक्षे ) शिखा-  
जालाः, अर्चिसङ्घाः, तैः, जटिलाः, जटावन्तः, तैः ( पक्षे ) युक्ताः तैः

लोभागतैर्बटुभिरभ्यास्यमानानि, सेकसुकुमारसोमकेदारिका-  
हरितायमानप्रघनानि, कृष्णाजिनविकीर्णशुष्यत्पुरोडाशीयश्या-  
माकतण्डुलानि, बालिकाविकीर्यमाणनीवारबलीनि, शुचि-  
शिष्यशतानीयमानहरितकुशपूलीपलाशसमिन्ध्र, इन्धन गोमय-  
पिण्डकूटसंकटानि, आमिक्षीयक्षीरक्षारिणीनामग्निहोत्रधेनूनां  
खुरचलयैर्विलिखिताजिरवितर्दिकानि, कामण्डलव्यमृत्पिण्ड-

कृशानुभिरिव, अग्निभिरिव, क्रतोः, यज्ञस्य, लोभात्, मिषात्,  
आगतैः, समुपस्थितैः, वटुभिः, ब्रह्मचारिभिः, अभ्यास्यमानानि, अधि-  
ष्ठीयमानानि । सेकेति—सेकेन, सलिलसेचनेन, सुकुमारा, मृदु  
( स्निग्धा वा ) सोमकेदारिका, यज्ञार्थरोपितंसोमवल्ल्याः स्वल्पक्षेत्रं,  
यत्र तथा, (प्रघनेषु—अल्पक्षेत्रसम्भवत्वादितिभावः) हरितायमानानि,  
श्यामायमानानि, प्रघनानि, अङ्गुणानि, येषां, तानि । कृष्णाजिनेति—  
कृष्णाजिनेषु, असित हरिणचर्मसु, विकीर्णाः, प्रक्षिप्ताः, शुष्यन्तः,  
शोषमाणुवन्तः, ये, पुरोडाशीयाः, हव्याः, श्यामकाः धान्यविशेषाः,  
तण्डुलाः, येषु, तानि । बालिकेति—बालिकाभिः, कन्यकाभिः,  
विकीर्यमाणाः, प्रक्षिप्यमाणाः, नीवाराः, धान्यविशेषाः, एव, वलयः,  
पूजार्थं द्रव्याणि, येषु तानि । शुचीति—शुचयः, पूताः, ये, शिष्याः,  
अन्तेवासिनः, तेषां, शतैः, शतसंख्याकैः, आनीयमानाः, आह्विय-  
माणाः, हरिताः, श्यामवर्णाः, ये, कुशानां, दर्भाणां, पूत्यः, समूहाः,  
पलाशसमिधः, काष्ठानि, येषु तानि । इन्धनेति—इन्धनानां, काष्ठानां,  
गोमयपिण्डानां, उपलानां, च, ये कूटाः, राशयः, तैः, सङ्कटाः,  
सङ्कुलाः, येषु, तानि । आमिक्षीयेति—आमिक्षा, दुग्धदधियोगः,  
( खाना इति प्रसिद्धा ) तस्यै, हितानि, आमिक्षीयाणि, यानि क्षीराणि,  
दुग्धानि, तानि, क्षरन्ति, तासां अग्निहोत्र धेनूनां, क्रतवेपालितानांगवां,

मर्दनव्यग्रयतिजनानि, वैतानवेदीशङ्कव्यानामौदुम्बरीणां शा-  
 खानां राशिभिः पवित्रितपर्यन्तानि, वैश्वदेवपिण्डपंक्तिपाण्डुरि-  
 तप्रदेशानि, हविर्धूमधूसरिताङ्गनविटपिकिसलयानि, वत्सीयबा-  
 लकलालितललत्तरलतर्णकानि, क्रीडत्कृष्णशारच्छागशावकप्रक-  
 स्तुरबल्यैः, शफ्ससमूहैः, विलिखितानि, कुट्टितानि, अजिरेषु, अङ्गन  
 वसुधासु, वितर्दिका, वेदिका, येषां, तानि । कामण्डलव्येति—  
 कमण्डलुः, मुनीनां जलपात्रं, तदर्थमिदं, कामण्डलव्यं, यत्,  
 मृत्पिण्डं, तस्य, मर्दने, पेषणो, व्यग्रः, संलग्नः, यतिजनः,  
 संन्यासिसमूहः, येषु तानि । वैतानेति—वितानः, क्रतुः, तस्मै,  
 इयं, वैतानी, यज्ञीयामिभूः, तादृशा, या, वेदिः, तत्र शङ्कव्यानां,  
 शङ्कवः, कीलकाः, तेभ्यो हितानां, (शङ्कुसम्पादिनीनामितिभावः)  
 औदुम्बरीणां, तदाख्यवृक्षाणां (जन्तुफलकानामितियावत्) याः,  
 शाखाः, तासां, राशिभिः, समूहैः । पवित्रेति—पवित्रितानि, पूतानि,  
 यानि, पर्यन्तानि, प्रान्तभागाः, येषां तानि । वैश्वदेवेति—विश्वेभ्योः,  
 देवेभ्यः, देयानि, पिण्डानि, अन्नानि, तेषां, पंक्तिभिः, राज्ञिभिः,  
 पाण्डुरिताः, धवलिताः, प्रदेशाः, येषु, तानि । हविरिति—हविषां,  
 क्रतूनां, धूमैः, धूसरिताः, धूसरतानीताः, अङ्गनविटपिनां, अजिर  
 वृक्षाणां, किस्सलयाः, पल्लवाः, येषु तानि । वत्सीयेति—वत्सीयाः,  
 वत्सेभ्योहिताः, (वत्ससेवाकुशला इतिभावः) ये बालकाः, मुनिशिशवः,  
 तैः, लालिताः, श्रमेणपोषिताः, ललन्तः, लम्फन्तः, तरलाः, चञ्चलाः,  
तर्णकाः, सद्योजातावत्सा, येषु तानि । क्रीडदिति—क्रीडन्तः,  
 चरन्तः, कृष्णशाराः, कृष्णवर्णाः, येच्छागाः, (पशुविशेषाः) तेषां,  
 शावकैः, शिशुभिः, प्रकटितः, प्रकाशितः, पशुबन्धः, (पशवो बध्यन्ते  
 यस्मिन् तथा भूतोयज्ञः) तस्य प्रबन्धः (सातत्यमितियावत्) येषु

टितपशुबन्धप्रबन्धानि, शुकसारिकारब्धाध्ययनदीयमानोपाध्या-  
यविश्रान्तिसुखानि, साक्षात्रयीतपोवनानीवचिरदृष्टानां बान्ध-  
वानां प्रीयमाणो भ्रमन्भवनानि, बाणः सुखमतिष्ठत् ।

तत्रस्थस्य चास्य कदाचित्कुसुमसमययुगमुपसंहरन्नजृम्भत  
ग्रीष्माभिधानः संकुलमल्लिकाधवलादृहासो महाकालः ।  
प्रत्यग्रनिर्जितस्यास्तमुपगतवतो वसन्तसामन्तस्य बालापत्ये-  
तानि । शुकेति—शुकशारिकाभिः, कीरशारिकाभिः, आरब्धं, प्रक्रान्तं,  
यद् अध्ययनं, वेदानांपठनं, तेन, दीयमानं, सम्पाद्यमानं, उपाध्यायानां  
आचार्याणां, विश्रान्ति, सुखं, येषु तानि । त्रयी, ऋग्यजुः साम्नां त्रितयं,  
येषु तानि । तपोवनानीव । चिरदृष्टानां, बहुकालेनावलोकितानां,  
बान्धवानां, कुटुम्बिनां, प्रीयमाणः, अत्यन्तप्रीतिमुपागतः, भ्रमन्,  
परिभ्रमन्, भवनानि, गृहाणि, सुखं, अतिष्ठत्, तस्थौ । तत्रेति—  
तत्रस्थितस्य, अस्य, बाणस्य, कदाचित्, कस्मिंश्चित्समये, कुसुम-  
समयस्य, वसन्तस्य, युगं, युगं, ( मासद्वयमितिभावः ) उपसंहरन्,  
दूरीकुर्वन्, ग्रीष्माभिधानः, घर्मसमयः, अजृम्भत, प्रादुर्बभूव ।

सम्कुल्लेति—सम्कुल्ला, पुष्पिता, मल्लिका, तदाख्या, लता एव,  
धवलाः, शुभ्राः, अदृहासाः, हासविशेषाः, यत्र, तथाभूतः, महाकालः,  
ग्रीष्मः ( पक्षे ) भयङ्करः । प्रत्यग्रनिर्जितस्य, अचिरविजितस्य, अस्तं,  
क्षयं, उपगतवतः गच्छतः, वसन्तः कुसुमाकरः, एव, सामन्तः, सम्राट्,  
तस्य, बालापत्येषु, शिशुतनयेषु, इव, पयः पायिषु, सलिलपान  
योग्येषु ( पक्षे ) दुग्धपायिषु । नवोद्यानेषु, विहारेषु, ( पक्षे ) नवं, नवीनं  
यदुद्गमनं येषां, तेषु ( पूर्वमेव संसारे आगमनं प्रवृत्तत्त्वितिभावः )  
दर्शितस्नेहः, दर्शितः, प्रकटितः, स्नेहः, प्रीतिः, येन, सः, मृदुः, कोमलः  
( पक्षे ) सद्यः ( ग्रीष्मसमयेनूतनानि, उद्यानानिसिच्यन्ते-इतिभावः )

ष्विव पयः पायिषु नवोग्रानेषु दर्शितस्नेहो मृदुरभूत् ।  
 अभिनवोदितश्च सर्वस्यां पृथिव्यां सकलकुसुमबन्धनमोक्ष-  
 मकरोत्प्रतपन्नुष्णसमयः । स्वयमृतुराजस्याभिषेकार्द्राश्चामरक-  
 लापा इवागृह्यन्त कामिनीनां चिकुरचयाः कुसुमायुधेन ।  
 हिमदग्धसकलकमलिनीकोपेनेव हिमालयाभिमुखीं यात्रामदा-  
 दंशुमाली ।

अथ ललाटंतपे तपति तपने चन्दनलिखितललाटिका-  
 अभिनवोदितेति—अभिनवोदितः, सद्योजातः; सर्वस्यां, अखिलायां;  
 पृथिव्यां, भूमौ; सकलानां, सर्वेषां, कुसुमानां, पुष्पानां; ( वासन्ति-  
 कानामितिभावः ) बन्धनमोक्षं, वृन्तस्खलनं, उष्णसमयः ग्रीष्म-  
 कालः, प्रतपन्, ( नवाभिषिक्तो हि नृप आनन्दातिशयात्कारासु  
 पूर्वनिबद्धानां बन्धनमोक्षं सम्पादयति ) स्वयं, आत्मनः ऋतु-  
 राजस्य, ग्रीष्मस्य, अभिषेकार्द्रः, अभिषेकेन, स्नानेन; आर्द्रः,  
 ( पक्षे ) माङ्गलिकसलिलसिञ्चनसबन्धादार्द्रत्वम् । चामरकलापाः,  
 चामर बालव्यजनसमूहाः, इव, कुसुमायुधेन, कामेन, कामिनीनां,  
 युवतिनां, चिकुरचयाः, केशकलापाः, अगृह्यन्त । ( ग्रीष्मसमये  
 स्नानार्द्रतया असंयमनात् अतिकोमलत्वेन प्रतीयमानाः युवतिनां  
 विशेषेण काममुदीपयन्तीति भावः ) हिमेन, तुषारेण; दग्धः,  
 भस्मीकृतः; सकलानां, सर्वासां; कमलिनीनां, पद्मिनीनां; कोपेन,  
 क्रोधेन; इव, हिमालयाभिमुखीं, तदाख्यपर्वतानुगामिनीं, यात्रां, गमनं;  
 अंशुमाली, सूर्यः; अदात् ( उत्तर दिशिगमदितिभावः )

अथेति—ललाटं, मस्तकं; तपति, पीडयति, तस्मिन्  
 ( कठोरे—इति यावत् ) तपने, सूर्ये तपति, द्योतमाने । “असूर्य-  
 ललाटयोर्दृशितपोः” अनेन खच् । चन्दनेन, लिखितः, रचितः,

पुण्ड्रकैरलकचीरचीवरसंवीतैः स्वेदोदबिन्दुमुक्ताक्षवल्यवाहि-  
भिर्दिनकराराधननियमा इवागृह्यन्त ललनाललाटेन्दुभिः ।  
चन्दनधूसराभिरसूर्यपश्याभिः कुमुदिनीभिरिव दिवसमसुष्यत  
सुन्दरीभिः । निद्रालसा रत्नालोकमपि नासहन्त दृशः, किमुत  
जरठमातपम् । अशिशिरसमयेन चक्रवाकमिथुनाभिनन्दिताः  
सरित इव तनिमानमानीयन्त सोडुपाः शर्वर्यः । अभिनवपटु-

ललाटिका, भालालंकार एव, पुण्ड्रकं, तिलकं येषु तैः अलकाः,  
केशाः, एव, चीरचीवरं, वसनं, तेन, संवीताः, वेष्टिताः, तैः ।  
स्वेदोदकस्य, घर्मजलस्य, बिन्दवः, कणाः, एव, मुक्ताक्षवलया,  
मौक्तिक जपमालिकाः, तान्, वहन्ति, धारयन्ति, तैः । दिनकरस्य,  
यद्, आराधनं, पूजनं, तस्य ये नियमाः, विधयः, ( व्रतानि वा )  
ललनानां, स्त्रीणां, ललाटेन्दुभिः मस्तकचन्द्रैः, अगृह्यन्त, इव ।  
( गृहीतमितियावत् ) ( धृत् पुण्ड्रको जपमालां गृह्णीतीति तत्साम्यम् )  
चन्दनेति—चन्दनेन, यद्वा, चन्दनवत्, धूसराः, ताभिः, सूर्यं न  
पश्यन्तीति, ताभिः, ( सूर्योदयादारभ्यास्तसमयान्तं कामिन्य आतप  
भिया स्वपन्ति सद्यसु कुमुदिन्यस्तुदिवा संकुचिता इत्युभयोः  
साम्यम् ) स्वापाधिक्ये अवस्थां वर्णयति—निद्रेति—निद्रया अलसा,  
दृशः, रत्नालोकं, रत्नप्रकाशं, अपि, ( इति संभावनायाम् ) नास-  
हन्त, न सोडुसक्ताः । किमुत, जठरं, कठोरं, आतपं, घर्म ।  
अशिशिरसमयः प्रीष्मः, तेन, चक्रवाकमिथुनैः, चक्रवाकयुगलैः,  
अभिनन्दिताः, स्तुताः ( तेषां रात्रिषु वियोगात्स्वल्प रात्र्यभिनन्दनं  
युक्तमेव ) सोडुपाः, स चन्द्राः ( नक्षत्राणि ) सनौकाश्च । ( नदीषु  
जलाभावाच्चौ सहिता नद्यः क्षययान्तीतिभावः ) शर्वर्यः, रात्रयः,  
तनिमानं, अल्पतां, आतीयन्त, नीयन्ते । अभिनवेति—अभिनवः,



पाटलामामोदसुरभिपरिमलं न केवलं जलम्, जनस्य पवनमपि पातुमभूदभिलाषो दिवसकरसन्तापात् ।

क्रमेण च खरखरमयूखे, खण्डिततडिच्छैश्वे, शुष्यत्सरसि, सीदत्स्रोतसि, मन्दनिर्भरे, भिल्लिकाभांकारिणि, कातरकपोत-कूजितानुबन्धबधिरितविश्वे, विश्वसत्पतत्रिणि, करीषंकषम-नूतनः पटुः, प्रसरन्, पाटलामोदः, पाटलस्याति निर्हारी परिमलः, तेन, सुरभिः, सुगन्धिः, परिमलः सुवासः, यस्य तत् न केवलं जलं, पयः, पवनं, वायुं, अपि, पातुं, पानाय, जनस्य, प्राणिनः दिवसकर-सन्तापात्, सूर्यतापात्, अभिलाषः अभिलषनं-अभिलाषः, ( घव्-चपापुंसि ) ईच्छा अभूत् ।

क्रमेण इत्यतः—प्रावर्तन्तोन्मत्ता मातरिश्वानः—इत्यनेनान्वयः । क्रमेण, खरखर मयूरवे,—खरः, तीक्ष्णः, खरमयूरवः, सूर्यः, यस्मिन्, तथाभूते, ( निदाघकाले ) इत्युत्तरस्थितेन संबंधः । खण्डितेति—खण्डितं, निर्जितं, तडितां, विद्युतां, शैशवं, बाल्यं, ( शिशु चापल्य-मितिभावः ) येन, तथाभूते । ( विद्युदालोकादपि अतितीक्ष्णालोक-शालिनीत्यर्थः ) । शुष्यदिति—शुष्यन्ति शोषं गच्छन्ति, सरांसि, तडागानि, यस्मिन् तथोक्ते । सीददिति—सीदन्ति, अवसादंगच्छन्ति, स्रोतांसि, यस्मिन् तादृशे । मन्दनिर्भरे—मन्दाः, स्वल्पाः, निर्भराः, प्रस्रवणानि, यत्र तथाभूते । भिल्लिकेति—भिल्लीकाः, चुद्राः कीट-विशेषाः, तासां भङ्गारो विद्यते यस्मिन् तथोक्ते । कातरेति—कातराणां, ग्रीष्मार्त्तानामित्यर्थः । कपोतानां, कूजितानुबन्धेन, कूजनसात्त्येन, बधिरितं, बधिरिकृतं, विश्वं, जगत्, येन तथाभूते । ( अतीवमेदोमय-त्वात् दुःसहः ग्रीष्मतापः कपोतानांकृते, अतः पतत्रित्वेऽपि पृथग्ग्रहण-मेतेषां ) विश्वसत्पतत्रिणि-विशेषेणाश्वसन्तः, क्लान्ततयेतिभावः, पत-

रुति, विरलवीरुधि, रुधिरकुतूहलिकेसरिकिशोरकलिह्यमान-  
कठोरधातकीस्तवके, ताम्यस्तम्बेरमयूथवमथुतिम्यन्महामही-  
धरनितम्बे, दूयमानद्विरददीनदानाश्यानश्यामिकालीनमूकमधु-  
लिहि, लोहितायमानमन्दारसिन्दूरितसीमि, सलिलस्यन्दसं-  
त्रिणाः, पक्षिणाः, ( कपोतेभ्योऽन्येइतिभावः ) यस्मिन् तथोक्ते ।  
करीषङ्कषेति—करीषाणि, गोमयानि, कषन्ति, शोषयन्तीतितादृशाः,  
मरुतः, वायवः, यस्मिन्, तथाभूते । विरलवीरुधि, विरलाः, अल्पाः,  
वीरुधः, लताः यत्र तादृशे । रुधिरेति—रुधिरेषु, रक्तेषु, कुतूहलिनः,  
लोलुपाइतिभावः । ये केशरिकिशोरकाः, सिंहशिशवः, तैः, लिह्य-  
मानः, आस्वाद्यमानः, ( रक्तधियेतिभावः ) कठोरः, परिणतः, धातकी-  
स्तवकः, धातकीलतायाः पुष्पगुच्छः, यस्मिन् तथोक्ते । ताम्यदिति—  
ताम्यताम्, आतपतापेनक्तिश्यामिति यावत् । स्तम्बेरमयूथानां,  
हस्तिसङ्घानां, वमथुभिः, उद्गारैः, ( करशीकरैरित्यर्थः ) तिम्यन्तः,  
आर्द्रीभवन्तः, महतांमहीधराणां, पर्वतानां, नितम्बाः, कटप्रकदेशाः  
यस्मिन् तथाभूते । दूयमानेति—दूयमानानां, ताम्यतां, द्विरदानां,  
हस्तीनां, दीनस्य, क्षीणतांगतस्य, दानस्य, मदस्य, आश्याना,  
ईषच्छुष्का, या श्यामिका, मदलेखा, तस्यां लीनाः, अतितर्षात्  
संसक्ताः, मूकाः, आर्ततयानिःशब्दाः, मधुलिहः, भ्रमराः, यस्मिन्  
तथोक्ते । लोहितायमानेति—लोहितायमानैः, आलोहिता लोहिताः  
भवन्तः तैः ( पुष्पविकासात् रक्तायमानैरित्यर्थः ) मन्दारैः, पारिजाता-  
रुच्यतरुविशेषैः, “मन्दारः पारिजातकः” इत्यमरः । सिन्दूरिताः,  
सञ्जातसिन्दूराः, ( दत्तसिन्दूराइवेत्यर्थः ) सीमानः, प्रान्तभागाः,  
( ग्रामाणामितिशेषः ) यस्मिन् तथोक्ते । सलिलेति—सलिलानां,  
जलानां, स्यन्दाः, स्रवाः, तेषां सन्दोहः, समूहः, तस्य सन्दोहेन,

दोहसंदेहमुह्यन्महामहिषविषाणकोटिविलिख्यमानस्फुटस्फटि-  
कटपदि, धर्ममर्मरितगर्मुति, तप्तपांशुकुकूलकातरविकिरे,  
विवरशरणश्चाविधि, तटार्जुनकुर्रकूटज्वरविवर्तमानोत्तानशफर  
शारपङ्कशेषपल्वलाम्भसि, दावजवितजगन्नीराजने, रजनीराज-  
यक्ष्मणि, कठोरीभवति निदाघकाले, प्रतिदिशमाढौकमाना  
भ्रमेण, मुह्यद्भिः, चित्तविकृतिगच्छद्भिः, महद्भिः महिषैः विषाणानां,  
शृङ्गणां, कोटिभिः, अग्रभागैः, विलिख्यमानाः, संघृष्यमाणाः, स्फु-  
रन्त्यः, ( सौरातपेन उद्भासमाना इति यावत् ) स्फटिकटपदः, स्फटिक-  
शिलाः यस्मिन् तथाभूते ।

धर्मेति-धर्मेण, उष्मणा, मर्मरिताः, शुष्कत्वेन मर्मर ध्वनियुक्ताः,  
गर्मुतः, लताविशेषाः यस्मिन् तादृशे । ( गर्मुन् स्त्री स्वर्णनड्योगोर्गोपति  
शिवषण्डयोः, नृपभास्करयोः पुंसि, इति मेदिनी ) तप्तेति—तप्ताः  
पांशवः, रजांसि एव कुकूलाः, तुषानलाः, तैः कातराः, विकिराः,  
कुकुटादिपक्षिभेदाः यस्मिन् तादृशे । विवरेति—विवराणि-गर्ता  
एव शरणम् आश्रयः येषां ते श्वाविधः-शलयाः (मृगविशेषाः) यस्मिन्  
तादृशे । तटेति—तटेषु-तीरेषु ये अर्जुनाः-तरुभेदाः तेषु ये कुरराः-  
पक्षिभेदाः ( कूज इति हिन्दी भाषायाम् ) तेषां कूटज्वरेण अति-  
कटुरवसन्तापेन, विवर्तमानाः उत्सवमानाः उत्तानाः-उर्ध्वमुखाः ये  
शफराः-मत्स्याः तैः शाराः-शवलाः, पङ्काः-कर्दमा, एव शेषाः येषु  
तथाविधानां पल्वलानां क्षुद्रजलाशयानाम्, अम्भांसि-जलानि,  
यस्मिन् तथोक्ते । दावेति—दावेन-वनाग्निना, जनितं-उत्पादितं,  
यत् जगतां नीराजनम् आरात्रिकारव्यं शान्ति कर्मविशेषः, यस्मिन्  
तथाविधे । रजनीति—रजन्याः निशायाः राज्यक्षमा-क्षयरोगः  
यस्मिन् । कठोरी भवति वृद्धिगच्छति, निदाघकाले-ग्रीष्मावसरे

इवोषरेषु प्रपावाटकुटीपटलप्रकटलुण्ठकाः, प्रपक्कपिकच्छू-  
गुच्छच्छटाच्छोटनचापलैरकाण्डकण्डूला इव कर्पन्तः शर्करिलाः  
कर्करस्थलीः, स्थूलदृषच्चूर्णमुचः, मुचुकुन्दकन्दलदलनदन्तुराः,  
समन्ततः पतन्मुखरचीरीगणमुखशीकरशीक्यमानतनवः, तरु-  
णतरतरणितापतरले तरन्त इव तरङ्गिणि मृगतृष्णिकातरङ्गिणी-  
प्रतिदिशम्-दिशिदिशि । आढौकमानेति—ऊपरेषु-मरुभूमिषु,  
आढौकमाना इव गम्यमाना इव । प्रपेति—प्रपा-पानीयशाला,  
वाटः-पन्था, कुटी-क्षुद्रगेहम्, पटलम्-छदिः, एतेषां प्रकटं-प्रकाशम्,  
यथा स्यात्तथा लुण्ठकाः-अपहारकाः, इति यावन् । प्रपक्वेति—प्रपक्का-  
पक्तांगता या कपिकच्छूः-मर्कटी ( मर्कट सदृश लोमत्वान् कपि-  
कच्छुरपि मर्कटी भवति ) ( ऋष्यप्रोक्ता शूकशिंविः कपिकच्छूश्च  
मर्कटी ) तस्याः गुच्छच्छटाः-स्तवकराशयः, तासां छोटने-लूने,  
चापलैः । अकाण्डे-अनवसरे कण्डूलाः-खर्जनरोगप्रस्ता इव ।  
कर्पन्तेति—शर्करिलाः-पाषाणकणिकायुताः, कर्करस्थलीः-पाषाण-  
खण्डयुतामहीः ( कंकरभूमी ) कर्पन्तः-कण्डुं कुर्वन्तः । स्थूलेति—  
स्थूलानि-विपुलानि, दृषदां-शिलानां चूर्णानि-कणिकाः तानि  
मुञ्चन्ति-प्रक्षिपन्ति इति तथोक्ता । मुचुकुन्देति—मुचुकुन्दानां-  
माध्यपुष्पाणां, कन्दलानां-तन्नामपुष्पाणाम् । दलनेन, दन्तुराः-  
संजातदन्ता इव । समन्ततः-चतुर्दिक्षु । पतदिति—पतन्तः-उडडीय-  
मानाः, मुखराः-कणन्तः, ये चीरीगणाः-पक्षिभेदाः ( चील या ईल )  
तेषां मुखशीकरैः-आननजलकणैः शीक्यमानाः सीच्यमानाः तनवः-  
शरीराणि येषां तथा विधाः ।

तरुणेति—तरुणेन-अतिप्रौढेन, तरणितापेन-सूर्यातपेन, तरङ्गिणि-  
संजाततरङ्गे, मृगतृष्णिकाः-मरीचिकाः ( मृगतृष्णा मरीचिका इत्य-

नामलीकवारिणि, शुष्यच्छमीमर्मरमारवमार्गलङ्घनलाघवजव-  
जङ्गालाः, रैणवावर्तमण्डलीरेचकरासरसरभसारब्धनर्तनारम्भा-  
रभटीनटाः, दावदग्धस्थलीमयीमिलनमलिनाः, शिञ्जितक्षपण-  
कवृत्तय इव वनमयूरपिच्छचयानुच्चिन्वन्तः, सप्रयाणगुञ्जा इव  
शिञ्जानजरत्करञ्जमञ्जरीबीजजालकैः सप्ररोहा इवातपातुरग्वन-  
महिषनासानिकुञ्जस्थूलनिः श्वासैः, सापत्या इवोड्डीयमानजवन-  
मरः) एव तरङ्गिण्यः-नद्यः, तासाम् अलीकवारिणि-अलीकजले,  
तरन्त इव-स्रवमाना इव । शुष्यदिति—शुष्यन्ती-शुष्कतांयान्ती,  
शमीवत्-तरुविशेषवत्, मर्मरः-विशेषवन्नियुक्तः, मारवः-मरुदेशीयः,  
मार्गः-पन्था तल्लंघने, लाघवं यस्य तथाविधेन जवेन-वेगेन, जंयालाः-  
जंघाद्युक्ताः । रैणवेति—रैणवी-तत्सम्बन्धिनी, आवर्तमण्डली,  
तस्याः रेचकस्य ( रेचयति वहिकरोति तथाभूतस्य ) लासकस्य-नर्त-  
कस्य, रसरभसेन-रागवेगेन, आरब्धं यन्नर्तनं तस्यारम्भे, आर-  
भटीआराश्च = भटाश्च तेषामियमारभटी-वीररसप्रधानविशेषः, तत्र  
नटाः, ताण्डवावसानेनिपुणा इत्यर्थः । दावेति—दावेन-वनानिलेन,  
दग्धा स्थली एव मसी तस्याः मिलनेन मलिनाः । शिञ्जितेति—  
शिञ्जिता-अभ्यस्ता, क्षपणकानां वृत्तिः-व्यवहारो, यैः एवंभूताः,  
मयूरपिच्छचयान्, उच्चिन्वन्तः-धारयन्तः ( पुच्छार्थकत्वलाभात्  
मयूरपदमत्राधिकम् ) (क्षपणका अपि निजशास्त्राज्ञया मलिनपुच्छधार-  
यन्ति ) प्रयाणे-यात्रायां, गुञ्जाः ढक्काः तैः सह वर्तमाना इत्यर्थः ।  
शिञ्जानेति—शिञ्जानाः-शब्दवन्त्यः, जरतां-प्राचीनानां, करञ्जानां-  
तरुभेदानां, मंजर्यः, तासां बीजजालकैः बीजसमूहैः, सप्ररोहा इव-  
सांकुरा इव । आतपेति—आतपेन-संतापेन, आतुराणाम् आर्त्तानाम्,  
वनमहिषाणां, नासाभ्यः निकुञ्जेभ्य इव-लतापिहितोदरेभ्य इव निर्गतैः-

वातहरिणपरिपाटीपेटकैः, सभ्रुकुटय इव दह्यमानखलधानबुस-  
कूटकुटिलधूमकोटिभिः, सावीचिवीचय इव महोष्ममुक्तिभिः,  
लोमशा इव शीर्यमाणशाल्मलिफलतूलतन्तुभिः, दद्रुला इव  
शुष्कपत्रप्रकराकृष्टिभिः, सिराला इव तृणवेणोविकिरणैः,  
उच्छ्रयाश्रव इव धूयमाननवयवशूकशकलशंकुभिः, दंष्ट्राला इव

स्थूलनिश्वासैः, सापत्या इव ससन्ताना इव । उड्डीयमानेति—उड्डीय-  
मानानां-उत्पततां, जवनतराणाम्-अतिवेगिनाम्, हरिणानां, परिपा-  
ट्यः-पर्यायाः । तासां पेटकाः-समूहाः तैः सभ्रुकुटय इव-सभ्रूभङ्गा इव ।  
दह्यमानेति—दह्यमानानाम्-आतपेन दग्धानाम्, खलधानानां-धान्या-  
नाम्, ये वुसकुटाः-तुषराशयः, कुटिलाः-कुटिलगामिन्यः, धूमकोटय  
इव-धूमराजय इव, तैः, सावीचिवीचय इव-अवीचिः-नरकविशेषः,  
तस्य वीचयः-तरङ्गाः-ज्वाला वा तैः सहवर्तमाना इव, महोष्ममुक्तिभिः-  
महान्तः उष्माणः तेषां मुक्तिभिः-त्यागैः-वृष्टिभिरित्यर्थः ।

लोमशेति—लोमशा इव-रोमपूर्णा इव । शीर्यमाणेति-शीर्य-  
माणानां-विदीर्यमाणानाम्, शालाम्लफलानाम्, तूलतन्तुभिः-  
तूलसूत्रैः, दद्रुला इव-दद्रुवन्त इव । शुष्केति-शुष्काणां, पत्राणां,  
प्रकराः-समूहाः, तेषां, आकृष्टयः-आकर्षणानि, ताभिः, शिराला  
इव-शिरासमूहशालिन इव । तृणेति—तृणानां, वेणी-राजिः, तस्याः  
विकिरणैः-विद्येपैः, उच्छ्रया-अविरतानि, अश्रूणि-नयन जलानि,  
येषां तथा भूता इव । धूयमानेति—धूयमानानां, कम्पमानानां,  
यवानाम्, शूकाः-शुङ्गाः, ( शिखासूचय-इत्यर्थः ) ( शूकोऽस्त्री  
शुङ्गदययोः इति मोदिनी ) तेषां शकलाः-खण्डाः, शङ्खवः-कीलाः  
तैः दंष्ट्रालाः-दंष्ट्रावन्तः इव । चलितेति—चलितानां-चलतां, शलला-  
नाम्-शल्यकीनाम्, सूचीशतैः-सूक्ष्माप्रभागैः, ( श्वावित्तु शल्यस्त-

चलितशललसूचीशतैः, जिह्वाला इव वैश्वानरशिखाभिः,  
उत्सर्पत्सर्पकञ्चुकचूडाला ब्रह्मस्तम्भरसाभ्यवहरणाय कवल-  
ग्रहमिवोष्णैः कमलमधुभिरभ्यस्यन्तः सकलसलिलोच्छ्रोषधर्म-  
घोषणापटहैरिव शुष्कवेणुवनास्फोटनपटुरवैस्त्रिभुवनविभीषि-  
कामुद्गावयन्तः, च्युतचलचापदक्षश्रेणीशारितसृतयः, त्विषिम-  
न्मयूखलतालातलोषकलमापवपुष इव स्फुटितगुञ्जाफलस्फुलि-

ल्लोम्नि शलली शललं शलम्-इत्यमरः) जिह्वाला इव-रसनावन्त  
इव । वैश्वानरेति—वैश्वानरशिखाभिः—अग्निशिखाभिः, ।  
उत्सर्पदिति—उत्सर्पद्भिः-उद्गच्छद्भिः, सर्पाणां कञ्चुकैः-निमोकैः,  
चूडलाः-शिखावन्तः । ब्रह्मेति—ब्रह्मस्तम्भस्य-ब्रह्मखण्डस्य रसाभ्य-  
वहरणाय-रसशोषणाय-रसानां-मधुरादीनांभोजनाय वा कवलग्रहं-  
प्रासग्रहणम्, उष्णैः कमलमधुभिः, अभ्यस्यन्तः-पुनः पुनः कुर्वन्तः ।  
सकलेति—सकलानां, सलिलानाम्-जलानाम्, उच्छ्रोषः-अतिशयेन  
शोषकः यो धर्मः-आतपः, तस्य घोषणा-प्रचारः तस्याः पटहाः,  
तैरिव । शुष्केति—शुष्काणां, वेणुवनानां, स्फोटनस्य-विदारणस्य,  
पटुरवाः-महानिनादाः तै रिव । त्रिभुवनेति—त्रिभुवनविभीषिकाम् ।  
त्रिलोकभीतिकाम्, उद्गावयन्तः-जनयन्तः । च्युतेति—च्युताभिः-  
स्खलिताभिः, अतएव चलिताभिः, उत्पतन्तीभिः, चापपक्षिश्रेणिभिः-  
नीलकण्ठपत्रिपङ्क्तिभिः, शारिता-व्याघ्रा, सृतयः-मार्गाः यैः  
तथाविधाः ( मृतिः स्त्रीगमने मार्गे इति कोषः ) त्विषिमदिति—  
त्विषिमतः-सूर्यस्य, मयूखलतानां-किरणज्वलानाम्, अलतस्य ज्वल-  
दङ्गारस्य यः शोषः-दहनम्, तेन कलमाषं-चित्रमितकृष्णारक्तम्,  
वयुः-शरीरं येषां तथाविधाः । स्फुटितेति—स्फुटितानि-विकसितानि,  
गुञ्जाफलानिवत् ये स्फुलिङ्गाः-अग्निकणाः तेषां अंगारैः अङ्किताङ्गाः,

झाङ्गाराङ्किताङ्गाः, गिरिगुहागम्भीरभांकारभीषणभ्रान्तयः, भुवनभस्मीकरणाभिचारचरुपचनचतुराः, रुधिराहुतिभिरिव पारिभद्रद्रुमस्तवकवृष्टिभिस्तर्पयन्तस्तारवान्वनविभावसून, अशिशिरसिकतातारकितरंहसः, तप्तशैलविलीयमानशिलाजतुरसलवल्लिप्तदिशः, दावदहनपच्यमानचटकाण्डखण्डखचिततरुकोटरकोटपटलपुटपाकगन्धकटवः, प्रावर्तन्तोन्मत्ता मातरिश्वानः ।

प्लुषिताङ्गाः । गिरि-इति—गिरिगुहासु-पर्वतकन्दरासु, गम्भीरभांकारेण, भीषणा, भ्रान्तिः-धूर्णनं येषां ते । भुवनेति—भुवनस्य-जगतः, भस्मीकरणा-दहनं, तदेवाभिचारः-वेदविहितनिष्ठुरकर्म, तत्रचरुपचने-हविषाके, चतुराः-पटवः, रुधिराहुतिभिरिव रक्ताहुतिभिरिव, परिभद्रनामद्रुमस्य, स्तवकानां-गुच्छानाम्, वृष्टिभिः-पातैः, तारवान्-वृक्षसम्बन्धिनः, विभावसून-दावानलान्, तर्पयन्तः-प्रीणयन्तः । अशिशिरेति—अशिशिराभिः-उष्णाभिः, बालुकाभिः, तारकितम्, रंहः, वेगो येषां तथोक्ताः । तप्तेति—तप्तेषु-शैलेषु, गिरिषु, विलीयमानानां-गलतां, शिलाजनूनां-धातुभेदानाम्, रसलवैः-जलकणैः, लिप्ताः-दिशो यैः तथोक्ताः । दावेति—दावदहनेन-वनाग्निना, पच्यमानानां-दग्धानां, चटकानां-पक्षिविशेषाणाम्, अण्डखण्डैः-डिम्बशकलैः, रवचितेषु-व्याप्तेषु, तरुकोटरेषु-वृक्षगुहासु यानि कीटपटलानि-तद् भक्षणार्थमागतानि, पिपिलिकावृन्दानि, तेषां पुटपाकस्य-अभ्यन्तरपाकस्य, गन्धेन कटवः-उद्वेजका इत्यर्थः । उन्मत्ताः-उच्छृङ्खलाः, मातरिश्वानः-वायवः, प्रावर्तन्तः । सर्वतेति—पुनर्तानेव दावाग्नीन् विशिनष्टि भूरित्यादिभिः । जरठानां वृद्धानां, अजगराणां, सर्पाणां, गम्भीराः गलाः, कण्टप्रदेशाः एव गुहा ताभ्यः, बाहिनः, बहिर्निःसरन्तः, वायवः येषु तथा भूताः । अतएव-भूरिभिः, वृहद्भिः, भस्त्राणां, अग्निसंधूक्षणयंत्राणां सहस्रैः, सन्धुक्षणेन, समुद्दीपनेन, क्षुभिताइव, समुत्तेजिताइव ।



सर्वतश्च भूरिभस्त्रासहस्रसंघुक्षणाक्षुभिता इव जरठाजगरग-  
म्भीरगलगुहाघाहिवायवः क्वचित्स्वच्छन्दतृणचारिणो हरिणाः,  
क्वचित्तरुतलविवरविवर्तिनो बभ्रवः, क्वचिजटावलम्बिनः  
कपिलाः, क्वचिच्छकुनकुलकुलायपातिनः श्येनाः, क्वचिद्विलीन-  
लाक्षारसलोहितच्छवयोऽधराः, क्वचिदासादितशकुनिपक्षकृत-

स्वच्छन्देति—स्वच्छन्दं-स्वैरं, तृणेषु, चरन्ति-प्रसरन्ति,  
( पक्षे ) तृणानिभक्षयन्ति हरिणाः-पाण्डुवर्णाः, ( पक्षे ) मृगाः ।  
तरुतलेति—तरुतलेषु यानि विवराणि-गर्तानि तेषु वर्त्तिनः, विभ्रवः-  
पिङ्गलाः ( पक्षे ) नकुलाः । शकुनेति—शकुनकुलानां-पक्षिविशेषा-  
णाम्, कुलायान्-नीडानि, पातयन्ति-दहन्ति इति यथोक्ताः श्येनाः  
शुक्लवर्णाः, ( पक्षे ) पक्षिसमूहकुलायास्थितघातकाः पक्षिभेदाः ।  
जटेति—जटाऽवलम्बिनः-जटाः-मूलानि, अवलम्बन्ते-आश्रयन्ति  
इति तथोक्ताः ( पक्षे ) जटाधारिणः, कपिलाः-पिङ्गलाः ( पक्षे )  
कपिलमुनिविशेषव्रतधारिणः तापसाः । विलीनेति—विलीनः-  
द्रवीभूतः, यो लाक्षारसः-अलक्तकद्रवः तद्वत्, (अथवा) तेन लोहिताः-  
रक्ताः छवयः-कान्तयः, येषां, तथा भूताः, अधराः-धर्तुमशक्याः,  
निम्नोष्ठाः वा ( पक्षे ) धराः-पर्वताः । आसादितेति—आसादितेषु-  
प्राप्तेषु अवसादंगतेषु, वा शकुनिनां-पक्षिणां, पक्षेषु, कृता-लब्धा  
पटुगतिः, सम्यक् प्रसरणं यैः अन्यत्र-आसादिता-प्राप्ता, शकुनि-  
पक्षेण-पक्षिगरुता, कृता-जनिता, पटुगतिः-सत्त्वरगमनं यैः तथोक्ताः ।  
वि-विविधा, शिखा ज्वाला येषां तथोक्ताः ( पक्षे ) शराः ।  
दग्धेति—दग्धाः-भस्मीकृताः, निष्शेषाः-समस्ताः, जन्महेतवः-स्वो-  
त्पत्तिकारणानि, तृणकाष्ठादीनि यैः ( पक्षे ) दग्धाः-क्षयिताः  
समस्ताः पूर्वपूर्वं जन्ममर्जिताः संसारागमनकारणानि, पापपुण्यानि

पटुगतयोविशिखाः, कचिद्दग्धनिःशेषजन्महेतवो निर्वाणाः,  
कचित्कुसुमवासिताम्बरसुरभयो रागिणः, कचित्सधूमोद्गारा  
मन्दरुचयः, कचित्सकलजगद्ग्रासघस्मराः सभस्मकाः,  
कचिद्वेणुशिखरलघ्नमूर्तयोऽत्यन्तवृद्धाः, कचिदचलोपयुक्तशिला-  
जतवः क्षयिणः कचित्सर्वरसभुजः पीवानः, कचिद्दग्धगुग्गुलोव  
रौद्राः, कचिज्ज्वलितनेत्रदहनदग्धसकुसुमशरमदनाः कृतस्थाणु

यैः तथोक्ता निर्वाणाः शान्ताः ( पक्षे ) मुक्तिगताः । कुसुमेति -  
कुसुमैः-धूमैः ( पक्षे ) पुष्पैः वासितं-छादितं ( पक्षे ) सुरभितम्, यत्  
अम्बरं नभः ( पक्षे ) वस्त्रम्, तेन सुरभयः-शोभनदर्शनाः ( पक्षे )  
सौरभशालिनः । रागिणः रक्तवर्णाः ( पक्षे ) रागवन्तः । सधूमेति—  
सधूमोद्गाराः-धूमनिर्गमेन सहवर्तमानाः अमन्दाः अतिप्रवृद्धाः, रूचयः  
कान्तयः येषां, ( पक्षे ) धूमनामकरोगेण मन्दारुचिः-इच्छा, भोजना-  
दिषु येषाम् ते । सकलेति सकलं, जगदेवप्रासः-कवलम्, तद्  
घस्मराः, भक्षकाः, सभस्मभूरिकाः-भस्मनां, भूरिभिः सहवर्तमानाः ।  
वेण्वति-वेणूनां, वशानां, शिखरेषु, लग्नाः-संसक्ताः, ( पक्षे ) वेणुख-  
ण्डाग्रेषु, लग्नाः कृतभराः पूर्णयः अङ्गानि येषां यथोक्ताः । अत्यन्तवृद्धाः  
अतिप्रवृद्धाः, अतिस्थविराश्च ( वृद्धा हि वंशलगुडेन सहगच्छन्ति )  
अचलेति अचलेषु पर्वतेषु, उपयुक्तानिभक्षितानि, दग्धानीति-  
भावः, शिलाजतूनि-शिलाजत्वाख्या धातुविशेषाः यैः, पक्षे अचलम्  
अविच्छिन्नम्, यथा तथा-उपयुक्तम्, सेवितम्, औषधरूपेणेतिभावः  
शिलाजतुः यैः तथोक्ता । क्षयिणः निर्माणांगताः-झयरोगिणश्च सर्वानिति-  
सर्वाणि अन्नानि, रसान्, जलादीं भुज्जते इति तथोक्ताः अतएव पीवानः  
स्थूलकलेवराः । कचिदिति—दग्धगुग्गुलवः-भस्मीकृतगन्धद्रव्याणि,  
यैः तथोक्ताः, रौद्राः-भीषणाः-(पक्षे) शिवसेवकाः । ज्वलितेति-ज्वलि-

स्थितयः, चटुलशिखानर्तनारम्भारभटीनटाः क्वचिच्छुष्कका-  
सारसृतिभिः स्फुटत्रीरसनीवारबीजलाजवर्षिभिर्ज्वालाञ्जलि-  
भिरर्चयन्त इव घर्मघृणिम्, अघृणा इव हठह्यमानकठोरस्थल-  
कमठवसाविस्त्रगन्धगृध्नवः, स्वमपि धूममम्भोदसमुद्भूतिभि-  
येव भक्षयन्तः, सतिलाहुतय इव स्फुटद्बहलबालकीटपटलाः

तानां, नेत्रा-णाम्-मूलात्ताम्, दहनेन दग्धाः, सकुसुमाः-सपुष्पाः, शराः-  
तृणभेदाः, मदनाः-वृक्षभेदाश्च यैः तथोक्ताः । (पक्षे)-ज्वलिततृतीयनय  
नाग्निना भस्मीकृतः कुसुमशरसहितः मदनः-कामः यैः तथोक्ताः रुद्राः ।  
कृतेति—कृताः-स्थाणुपु-द्धिन्नशाखापु स्थितिः यैः, (पक्षे) स्थाणो-  
हरस्य स्थितयः-व्यवहारा यैः । चटुलेति—चटुलशिखाः-चंचल-  
ज्वालाः, येषाम्, (अन्यत्र) चूडाः येषाम् । नर्तनारम्भे यः आरभटी-  
प्रधानवीररसविशेषः तत्र नटाः उभयत्रतुल्यम् । शुष्केति—शुष्केपु-  
कासारेषु तडागेषु, सृतिः प्रसारो येषां तैः । स्फुटदिति—स्फुटन्ति  
निर-रसानि यानि निवारबीजानि-धान्यविशेषाः तेषां लाजान् वर्षन्ति  
तथोक्ते । ज्वालाऽञ्जलिभिः-शिखाऽञ्जलिभिः । घर्मघृणिम्-उष्ण-  
रश्मिम्, अघृणा इव अजुगुप्सा इव अर्चयन्तः-पूजयन्तः । हठेति—  
हठात्-बलात्, ह्यमानाः-दह्यमानाः, कठोराणां, स्थलकमठानां-  
स्थलवर्त्तिकच्छपानाम्, याः वसाः-मेदांसि तासां यो विस्त्रगन्धः-  
आमगन्धः तस्यगृध्नवः-लोलुपाः । अम्भोदेति—अम्भोदानां-पयो-  
दानां, समुद्भूतिभिया-समुत्पत्तिभयेन, धूमं भक्षयन्तः । सलिलाहुतय  
इव-जलाहुतय इव । स्फुटदिति—स्फुटन्ति-निर्गच्छन्ति, बहलानि-  
भूरीणि, बालानि-क्षुद्राणि, कीटपटलानि, क्षुद्रप्राणिवृन्दानि, यथा  
तथोक्ताः शिवत्रिणाः कक्षेषु-बहल कृमिवृन्दानि, निसरन्ति । श्लोषेति-  
श्लोषेण-दहनेन, विचरन्ति-चटत् चटत् इति कुर्वन्ति, यानि बल्कलानि-

कन्देषु, ध्वनिण इव श्लोषविचटद्वल्कलधवलशम्बूकशुक्यः  
शुष्केषु सरःसु, स्वेदिन इव विलीयमानमधुपटलगोलगलित-  
मधुच्छिष्टवृष्टयः काननेषु, खलतय इव परिशीर्यमाणशिखासंह-  
तयो महोषरेषु, गृहीतशिलाकवला इव ज्वलितसूर्यमणिशकलेषु  
शिलोच्चयेषु, प्रत्यदृश्यन्त दारुणा दावाग्रयः ।

तथाभूते च तस्मिन्नत्युग्रे ग्रीष्मसमये कदाचिदस्य स्वगृहा-  
वस्थितस्य भुक्त्वतोऽपराहसमये भ्राता पारशवश्चन्द्रसेननामा  
प्रविश्याकथयत्—‘एष खलु देवस्य चतुःसमुद्राधिपतेः सकल-  
राजचक्रचूडामणिश्रेणीशाणकोणकपर्णनिर्मलीकृतचरणनखमणैः

तरुत्वचः तैः धवलाः शम्बूकाः शंखाः, शुक्तयः मुक्तास्फोटाख्याजलज-  
न्तुविशेषाः येषां तथोक्ता स्वेदिन इव धर्मिण इव । शुष्केषु नीरसेषु सरःसु  
तडागेषु । विलीयमानेति—विलीयमानेभ्यः-विलयंगच्छद्भ्यः, मधुप-  
टलगोलेभ्यः-मधुचक्रेभ्यः, गलिता-निःसृता, मधुच्छिष्टानां, वृष्टिः, यैः  
तथोक्ताः । खलतय इव-खल्वाटा इव । महोषरेषु-मरुभूमिषु, परीति—  
परि-प्रान्तभागे, शीर्यमाणाः-प्रसरन्तः, शिखासंहतयः-ज्वालासमूहाः  
(पक्षे) चूडासमूहाः येषां ते तथोक्ताः । गृहीतेति—गृहीतं, शिला एव  
शकलं ग्रासो यैः तादृशाः । ज्वलितसूर्यमणिशकलेषु-दीप्तसूर्यकान्त-  
मणिखण्डेषु, शिलोच्चयेषु-गिरिषु, दारुणाः भयानकाः, दावाग्रयः-वना-  
नलाः, प्रत्यदृश्यन्तः । देवेति—देवानां-राज्ञां, देवस्य-राज्ञः, चतुःसमुद्रा  
धिपतेः, चतुः सागरस्वामिनः । सकलेति—सकलानां, समस्तानां,  
राजचक्राणां-नृप-मण्डलानाम्, याः चूडामणिश्रेण्यः-शिरोरत्न पङ्क्तयः,  
द्वा एव शाखाः, निकषपापाण्यविशेषाः, तेषां कोणेषु, प्रान्तभागेषु,  
यत्कषणां, वर्षणाम्, तेन निर्मलीकृताः, विशदीकृता, चरणयोः, नखा  
एव मणयः, रत्नानि यस्य तथाविधस्य ।

## श्रीहर्षचरितं

सबचक्रवर्तिनां धौर्यस्य महाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीहर्षदेवस्य  
भ्राता कृष्णनाम्ना भवतामन्तिकं प्रज्ञाततमो दीर्घाध्वगः प्रहितो  
द्वारमध्यास्ते' इति । सोऽब्रवीत्—'आयुष्मन्, अविलम्बितंप्रवेश-  
यैनम्' इति । अथ तेनानीयमानम्, अतिदूरगमनगुरुजडजङ्घम्,  
कार्दमिकचेलचीरिकानियमितोच्चण्डचण्डातकम्, पृष्ठप्रेङ्खत्पटच्चर-  
कर्पटघटितगलितग्रन्थिम्, अतिनिबिडसूत्रबन्धनिम्नितान्तराल-  
कृतव्यवच्छेदया लेखमालिकया परिकलितमूर्धानम्, प्रविशन्तं  
लेखहारकमद्राक्षीत् । अप्राक्षीच्च दूरादेव—'भद्र, भद्रमशेषभुवन-  
निष्कारणबन्धोस्तत्रभवतः कृष्णस्य' इति । सः 'भद्रम्'

सर्वेति—सर्वेषां, चक्रवर्तिनां सार्वभौमानां, धौर्यस्य अग्रग-  
ण्यस्य । महेति—महतां, राजाधिराजानां, परमेश्वरस्य-सर्वनियन्तुः,  
श्रीहर्षदेवस्य । प्रज्ञाततमः अनिप्रनीतः, (अतिशयेन विज्ञात इत्यर्थः)  
दीर्घाध्वगः-दीर्घम्, अध्वानं-मार्गं गच्छतीति तथोक्तः । प्रहितः-  
प्रेषितः । अतिदूरेति—अतिदूरगमनेन, गुरु भारवत्यौ, जडे-चलना-  
शक्ये, जङ्घे, यस्यतम् । कार्दमिकेति—कार्दमिकस्य-कर्दमेनलिप्तस्य,  
चेलस्य, चीरिकया-खण्डेन, नियमितं संयमितम्, उच्चण्डम्-कर्कशम्,  
चण्डान्तकम्-अरूपद्वोर्यन्तव्यापकम् वसनं येन तम् । पृष्ठेति—पृष्ठे,  
प्रेङ्खन्-चलत्, पटच्चरं-जीर्णवसनम्, कर्पटम् धर्ममज्जनार्थवस्त्रभागम् च  
ताभ्याम्, घटितः-रचितः, गलितः-शिथिलः, ग्रन्थिः-वस्त्रसन्धिः येन  
तम् । अतिनिविडेति—अतिनिविडेन-अतिघनेन, सूत्रबन्धेन, निम्नितः  
नमितः, अन्तराले-मध्ये, कृतः, व्यवच्छेदो यस्याः, तथा, लेखमालि-  
कया-लिपिसञ्चयेन, परिकलितेति—परिकलितः-वेष्टितः, मूर्द्धा-मस्तक-  
म्, येन तम्, लेखहारकम्-पत्रवाहकम् । अप्राक्षीत्-अपश्यत्- (दृशिर-  
प्रेक्षणं) अप्राक्षीत्-अपृच्छत् । भद्र, साधो ! अशेषेति—अशेषायाम्,

इवयुक्त्वा प्रणम्य नातिदूरे समुपाविशत् । विश्रान्तश्चाब्रवीत्-  
 'एष खलु स्वामिना माननीयस्य लेखः प्रहितः' इति विमुच्य  
 चार्पयत् । अथ बाणः सादरं गृहीत्वा स्वयमेवावाचयत्—  
 'मेखलकात्संदिष्टमवधार्य फलप्रतिबन्धी धीमद्भिरपहरणीयः  
 कालातिपात इत्येतावदत्रार्थजातम् । इतरद्वार्तासंवादनमात्रकम्' ।  
 अवधृतलेखार्थश्च समुत्सारितपरिजनः संदेशं पृष्ठवान् ।  
 मेखलकस्त्ववादीत्—'एवमाह मेधाविनं स्वामी—जानात्येव  
 मान्यः यथैकगोत्रता वा, समानजातिता वा, समं संवर्धनं वा,  
 एकदेशनिवासो वा, दर्शनाभ्यासो वा, परम्परानुरागश्रवणं  
 वा, परोक्षोपकारकरणं वा, समानशीलता वा, स्नेहस्य  
 हेतवः । त्वयि तु विना कारणेनादृष्टेऽपि प्रत्यासन्ने बन्धाविव  
 बद्धपक्षपातं किमपि स्निह्यति मे हृदयं दूरस्थेऽपीन्दोरिव  
 कुमुदाकरे । भवन्तमन्तरेणान्यथा चान्यथा चायं चक्रवर्ती  
 संवेष्टाम्, भुवननाम्-जगताम्, निष्कारणः-अहेतुकः, बन्धुः, तस्य ।  
 प्रहितः प्रेषितः अवाचयत्-अपपठत्, मेखलकः, तदाख्यः प्रागुक्तः  
 पत्रवाहकः । सन्दिष्टम्-वाचिकम्, फलप्रतिबन्धी-फलकार्यम्  
 वध्नानि । अपहरणीयेति-कार्यव्याघातकः । कालातिपातः,  
 समयविलम्बः, वार्तासम्वादनमात्रकम्, वृत्तान्तालोचनमात्रम् ।  
 अवधृतलेखार्थः, ज्ञातलिपिनिबद्धोदन्तम् । समुत्सारितपरिजनः,  
 परिवर्जितपरिजनः । मेखलकः, पत्रवाहकः । अवादीत्-प्रोवाच ।  
 एकगोत्रता, एककुलोत्पत्तिः । समानजातिता, तुल्यजातित्वम्,  
 दर्शनाभ्यासः, पुनः पुनः साक्षात्करणम्, परम्परानुरागश्रवणम्—  
 अन्योऽन्यसद्भावाकर्णनम् । परोक्षोपकारकरणम्—प्रत्यक्षाभावेऽपि  
 उपकारकरणम् । प्रत्यासन्ने, समीपे, कुमुदाकरे, कैवोत्पत्तिभुवि ।

दुर्जनैर्ग्राहित आसीत् । न च तत्तथा । न सन्त्येव ते येषां  
सतामपि सतां न विद्यन्ते मित्रोदासीनशत्रवः । शिशुचापला-  
पराचीनचेतोवृत्तितया च भवतः केनचिदसहिष्णुना यत्किञ्चि-  
दसदृशमुदीरितम् । इतरो लोकस्तथैव तद्गृह्णाति वक्ति च ।  
सलिलानीव गतानुगतिकानि लोलानि खलु भवन्त्यविवेकिनां  
मनांसि । बहुमुखश्रवणनिश्चलीकृतनिश्चयः किं करोतु पृथिवी-  
पतिः । तत्त्वान्वेषिभिश्चास्माभिर्दूरस्थितोऽपि प्रत्यक्षीकृतोऽसि ।  
विज्ञप्तश्चक्रवर्ती त्वदर्धम् — यथा प्रायेण प्रथमे वयसि सर्वस्यैव  
चापलैः शैशवमपराधीति । तथेति च प्रतिपन्नं स्वामिना ।  
अतो भवता राजकुलमकृतकालक्षेपमागन्तव्यम् । अवकेशीवा-  
दृष्टपरमेश्वरो बन्धुमध्यमधिवसन्नासि मे बहुमतः । न च सेवा-

चक्रवर्त्तीसार्वभौमः । ग्राहितः-अवबोधितः । मित्रेति- मित्राणि  
सुहृदः, उदासीनाः, मध्यस्थाः शत्रवः-वैरिणः, न विद्यन्ते न तिष्ठन्ति ।  
शिश्विति शिशोश्चापलम् — शैशवचापल्यम्, तत्रपराचीना, अप-  
राङ्मुखी, चित्तवृत्तिर्यस्य तत्ता, तथा । असहिष्णुना, सोढुम-  
शक्नुवता, अदृशम्, अयुक्तम्, उदीरितम् उक्तम् । गतानुगतिकानि,  
गतं गमनम्, अनुगतिः, पश्चाद्गमनम्, अविवेकिनाम्, ज्ञानरहितानाम् ।  
वद्विति-बहूनां, सुखानाम्, श्रवणोन्निश्चलीकृतः निश्चयः,  
अवधारणाम् यस्य, तथाभूतः । प्रत्यक्षीकृतः, साक्षात्कृतः । चापलैः,  
चपलकर्मभिः । अपराध्यतीति, अपराधि, सदोषं भवति इति यावत् ।  
प्रतिपन्नम् विदितम् । अकृतकाल क्षेपम्, समयविलम्बमकृत्वा ।

अवकेशीव-निष्फलतरुरिव अदृष्टपरमेश्वरः-नदृष्टः, परमेश्वरः-  
राजाधिराजः रविश्च येन तथाभूतः । अदृष्टरविस्तरुमध्यगतच्छायाप्रधानः  
अवकेशी अपि न कस्यचित् प्रियः । बन्धुमध्यम्-बन्धूनां ज्ञातीनां

वैषम्यविषादिना परमेश्वरोपसर्पणभीरुणा वा भवता भवित-  
व्यम् । यतो यद्यपि—

स्वेच्छोपजातविषयोऽपि न याति वक्तुं

देहीति मार्गणशतैश्च ददाति दुःखम् ।

मोहात्समुत्क्षिपति जीवनमप्यकाण्डे

कष्टं मनोभव इवेश्वरदुर्विदग्धः ॥ ३ ॥

मध्यम, अधिवसन् अधितिष्ठन् मे मम बहुमतः, बह्वाहतः । सेवेति—  
सेवायां, परिचर्यायां, यद् वैषम्यं तेन विधीदतीति तेन । दुष्टात्प्रभोः  
मर्यादाऽभावमाशङ्कमानाय बाणाय उपदिशन् कृष्णः स्वकीय स्वामिन्  
प्रशंसितुं प्रसङ्गान् दुर्विनीतप्रभोः स्वरूपमुपवर्णयन्नाह । स्वेच्छेति—  
ईश्वरदुर्विदग्धः, दुर्विदग्धः, अपण्डितः, ईश्वरः, प्रभुः ( निग्रहानुग्रह-  
असमर्थः, इत्यर्थः ) ( पक्षे ) ईश्वरेण-हरेण दुर्विदग्धः-दुः-दुःखं  
कष्टकरं यथा तथा ( विद्वेकरहित इतियावत् ) तथा वि-विशेषेणा  
दग्धः-भस्मीकृतः नेत्रजवह्निनेतिभावः, मनोभव इव, काम इव कष्टं  
( क्लेशहेतुरित्यर्थः ) अल्पबुद्धेः प्रभोः सेवा क्लेशकरीतिभावः । अथ च  
पादत्रयेण दुःशक्यत्वमुपपादयितुमाह । स्वेच्छेति—स्वेच्छया,  
निजंस्वेच्छया, उपजाताः, उपस्थिताः, विषयाः, भोग्यवस्तूनि यस्य  
तथाभूतः, ( पक्षे ) स्वेच्छं, यथेष्टम्, उपजाताः, उपगताः,  
विषयाः, लक्ष्याणि यस्य तथाभूतः । देहीति, प्रयच्छ इति वक्तुं, कथयि-  
तुम्, न याति न ददाति ( धातूनामनेकार्थत्वात् अत्र पा धातु, दानार्थायः )  
( पक्षे ) देहीति, कायावान् इति वक्तुं वचनं न याति न गच्छति ।  
मार्गणशतैः, यांचाशतैः ( पक्षे ) शरशतैः, ( मार्गणो याचके शरे” इति  
मेदिनी ) दुःखं ददाति, क्लेशं जनयति, एकत्र, अनुजीविभ्यः ( पक्षे )  
कामिभ्य इति, अकाण्डे, सहसाकारणान्तरे, असत्यपीति यावत्,



तथाप्यन्ये ते भूपतयः, अन्य एवायम् । न्यक्कृतनृगनलनिष-  
धनहुषाम्बरीषदशरथदिलीपनाभागभरतभगीरथययातिरमृतमयः  
स्वामी । नास्याहंकारकालकूटविषदिग्धदुष्टा दृष्टयः, न गर्वगुरु-  
गरगलग्रहगदगद्गदा गिरः, नातिस्मयोष्मापस्मारविस्मृतस्थै-

मोहान्, अज्ञानान्, यथायथं दोषादोषयोः बोधशून्यान्, ( पक्षे )  
मोहान् स्वविकारजनितमोहान् जीवनमपि प्राणानपि, एकत्र अनुजीवि-  
नाम्, ( पक्षे ) कामिनामितिशेषः समुत्तिष्ठपति, समुत्कर्षति दण्डयती-  
त्यर्थः ( पक्षे ) हरति । श्लेषानुप्राणितोपमालंकारः वसन्ततिलकं वृत्तं ।

न्यक्कृतेति—नृगः, इक्ष्वाकुपुत्रः, नलः, निषधाधिपः, निषधः,  
रामप्रपौत्र, “रामस्यतनयो जज्ञे कुश इत्यभि विश्रुतः । अतिथिस्तु  
कुशाजज्ञेनिषधस्तस्यचात्मजः । हरिवंशे” नहुषः, आयुषः पुत्रः, ( पुरु-  
रवाप्रपौत्रश्च ) अम्बरीषः “अम्बरीषस्तुनाभाभिः सिन्धुद्वीपं पिताभवत्”  
दशरथः, रामपिता, ( रघुवंशे समुत्पन्नः ) पिलीपः, रामप्रपितामहः,  
नाभागोऽम्बरीषपिता, भरतः, दुष्यन्ततनयः, भगीरथः, सगरप्रपौत्रः,  
( गंगया आनेता ) ययातिः, शर्मिष्ठायाभर्ता, च, ( द्वन्द्वसमासः )  
इमे नृपाः, न्यक्कृताः, तिरस्कृताः, येन सः, ( अत्र गुणाधिक्यं द्योति-  
तम् ) अमृतमयः, अमृतविकारः, ( अग्रिमकाल कूटादि राहित्य  
वर्णनममृत मयत्वादेव सर्वं युज्यते ) नास्येति—अस्य, हर्षस्य,  
अहंकारः, अहंभावः, एव कालकूटविषं तेन दिग्धा, उपलिप्ता, अत  
एव, दुष्टा, दृष्टयः, अवलोकितानि, न । नेति—गर्वः, अभिमान एव,  
गुरुगरं, महाविषं, तेन जातो यो गलग्रहः, कण्ठावरोधः, ( यस्य  
श्लेष्मा प्रकुपितातिष्ठत्यन्तर्गले स्थिरः, आशु संजनयेत्कोपं जायते-  
ऽस्य गलग्रहः ) चरके । स एव गदः, रोगः, तेन गद्गदाबाधः न  
( आमयकारणो न वाचोऽस्पष्टत्वम् ) अतिस्मयः, अतिगर्वः, तेन य

र्याणि स्थानकानि, नोदामदर्पदाहज्वरवेगविकृवा विकाराः, नाभिमानमहासंनिपातनिर्मिताङ्गभङ्गानि गतानि, न मदादित-  
वक्रीकृतौष्ठनिष्ठयूतनिष्ठुराक्षराणि जल्पितानि । तथा च । अस्य  
विमलेषु साधुषु रत्नबुद्धिः, न शिलाशकलेषु । मुक्ताधवलेषु

उष्मा, औद्धत्यं स एव, अपस्मारः, ( मृगिः ) व्याधिः, तेन विस्मृतं,  
स्मरणाविषयंगतं, स्थैर्यं, स्थिरता, यैः, तानि स्थानकानि, स्थितयः  
न । नोदामेति— उदामः, प्रचण्डः, यः, दर्पः स एव ज्वरः,  
( उष्णोत्पादकत्वात् ) तस्य वेगेन, विकृवाः, पीडिताः, विकाराः,  
न । नाभिमेति— अभिमान एव महासन्निपातः, ( श्वासः कासो भ्रमो  
मूर्च्छा प्रलापो मोहवेषथुः । पार्श्वस्यवेदना जृम्भा कषायत्वं मुखस्य च  
वातोल्बणस्यलिङ्गानि, सन्निपातस्यलक्षणेत् ) रोगः, तेन, कृतः, विहितः,  
अंगानां, अवयवानां, ( पक्षे ) स्वजनानां भंगः, येषु, तानि, गतानि, गमनानि  
च न । मदेति— मदः, सौभाग्ययौवनाद्यवलेपजो विकारः “मदो विकारः  
सौभाग्ययौवनाद्यवलेपजः “दर्पणो,” तेन, अर्दितः पीडितः, ( आक्रान्त  
इति यावत् ) अत एव वक्रीकृतः, अथवा मद एव अर्दितः, वातव्याधि  
विशेषः तेन वक्रीकृतः, यः, औष्ठः, तस्मात्, निष्ठयूतानि, निर्गलितानि,  
निष्ठुराणि, दारुणानि, कर्कशानि वा, अक्षराणि, वर्णाः ( कवर्गादय  
इति यावत् ) येषु तानि, जल्पितानि, वचनानि, न । अस्येति—  
अस्य, चक्रवर्तिनः, विमलेषु, अनघेषु, ( अपापेष्वितिभावः ) ( पक्षे )  
निर्मलेषु, ( भास्वरतयासुच्छ्रायेष्वित्यर्थः ) साधुषु, सज्जनेषु,  
रत्नबुद्धिः, रत्नानि एते इति बुद्धिः ( ज्ञानमिति भावः ) शिला शकलेषु  
प्रस्तरखण्डेषु, ( हीरकादिषु इति भावः ) न । परिसंख्याऽलंकारः ।  
मुक्तेति— मुक्ताधवलेषु, मौक्तिकवत् विशदेषु, गुणेषु, विद्या विन  
यादिषु, ( पक्षे ) मुक्ताभिः धवलेषु, गुणेषु, सूत्रेषु, ( मौक्तिक हारे-

गुणेषु प्रसाधनधीः, नाभरणभारेषु । दानवत्सु कर्मसु साधन-  
श्रद्धा, न करिकटेषु । सर्वाग्रेसरे यशसि महाप्रीतिः, न जीवित-  
जरत्तरे । गृहीतकरास्वाशासु प्रसाधनाऽभियोगः, न निजकलत्र-  
चर्मपुत्रिकासु । गुणवति धनुषि सहायबुद्धिः न पिण्डोपजी-  
विनि सेवकजने । अपि च । अस्य मित्रोपकरणमात्मा, भृत्योप-

ष्वित्यर्थः) प्रसाधनधीः, अलङ्कार बुद्धिः, अथवा, प्रसाधनं, प्रकृष्टम्,  
अर्जनं, गुणार्ज्जनमेव अर्जनं, ( नतुआभरणार्ज्जनमितिभावः )  
आभरणभारेषु, भारभूतेषु आभरणेषु, ( कटककुण्डलादि समूहेषु ) न ।  
दानवत्सु, दानयुक्तेषु, ( पक्षे ) मदयुक्तेषु ( दानं गजमदं त्यागं पालन-  
च्छेदशुद्धिपु" मेदिनी ) साधनश्रद्धा, निष्पादनानुरागः, ( पक्षे )  
साध्यते अनेन इति साधनं, सैन्यं ( सेनाङ्गमितिभावः ) तद्विषयिणी-  
श्रद्धा, ( सेनाङ्गत्वेन युद्धादि कर्म सम्पादनबुद्धिरित्यर्थः ) करिकटेषु,  
हस्तिगण्डेषु, ( मदजलवर्षिष्वित्यर्थः ) न । मदमुचां हस्तिनां संग्रहानु-  
रागोनेतिभावः । अग्रेसरे, अग्रगामिने, यशसि, महाप्रीतिः, प्रेम,  
जीवितजरत्तरे, जीवने ( जगन्भङ्गरे-इतिभावः ) न । गृहीतेति—  
गृहीतः करः स्वप्राप्त्योभागः, याभ्यः तथाविधासु ( पक्षे ) गृहीतः, धृतः  
करः पाणिः यासां, तासु, आशासु दिक्षु, ( चेतसः अनधिगतविषय-  
तृष्णाषु वा ) प्रसाधनाऽभियोगः, वशीकरणाप्रयासः ( रञ्जनानुरागो वा )  
निजेति—निजकलत्राणि, स्वीयभार्याः, ( न परकीया इति ध्वनिः )  
तान्येव चर्मपुत्रिकाः, चर्माच्छादितपुत्तलिकाः तासु न । गुणवति,  
मौर्वीसमन्विते, ( पक्षे ) विद्याविनयादिसम्पन्ने, पिण्डोपजीविनि, ( अन्न-  
दानेन भरणीये इत्यर्थः ) सहायबुद्धिः, न । अस्य ( हर्षस्येतियावन् )  
मित्रोपकरणां, सुहृद्रूपं, उपकरणां उपकारकं वस्तु, आत्मा, स्वस्वरू-  
पम् । ( आत्मप्रभावेणैव सर्वमसौ संसाधयति, न परमुखमपेक्षते इत्यर्थः )

करणं प्रभुत्वम्, पण्डितोपकरणं वैदग्ध्यम्, बान्धवोपकरणं लक्ष्मीः, कृपणोपकरणमैश्वर्यम्, द्विजोपकरणं सर्वस्वम्, सुकृत-संस्मरणोपकरणं हृदयम्, धर्मोपकरणमायुः, साहसोपकरणं शरीरम्, असिलतोपकरणं पृथिवी, विनोदोपकरणं राजकम्, प्रतापोपकरणं प्रतिपत्तः । नास्याल्पपुण्यैरवाप्यते सर्वातिशायि-सुखरसप्रसूतिः पादपल्लवच्छाया' इति । श्रुत्वा च तमेव चन्द्र-

भृत्योपकरणां, भृत्यानामुपकारसाधनं, प्रभुत्वं, प्रभावः ( संवकादीनां दानादिसम्पादनमेवास्य प्रभुत्व फलमितिभावः ) पण्डितोपकरणां, पण्डितानामुपकारसाधनं, वैदग्ध्यं विद्यावत्त्वं, वैचक्षण्यं वा । बान्ध-वोपकरणां, बान्धवानामुपकारसाधनं, लक्ष्मीः, सम्पत्, ( सम्पद्भिः बान्धवा उपक्रियन्ते इतिभावः ) कृपणोपकरणां, कृपणानां, दीनानां, उपकरणां, पोषणम्, ऐश्वर्यं । ( अस्य ऐश्वर्यं दरिद्राणां दारिद्र्यमोच-नार्थमेवेतिभावः ) द्विजोपकरणां, द्विजानां, ब्राह्मणानां, उपकरणां, सर्वस्वं, सर्वधनम्, सुकृतेति—सुकृतस्य, कृतोपकारस्य, संस्मरणां, तस्य, उपकरणां, उपकारकं, हृदयं, चित्तम् ( कृतज्ञोऽयमितिभावः ) धर्मो-पकरणां, धर्मोपार्जनसाधनं, आयुः, जीवनसमयः ( धर्मोर्जनायैवजीवितमि-त्यर्थः ) साहसोपकरणां, सहसाप्राग् विविच्य बलेन, क्रियमाणं कर्म साहसं, तस्य उपकरणां, उपकार साधनं, शरीरं । असीति—असिलता, खड्गं, तस्या उपकरणां, उपार्जनवस्तु, ( खड्गबलेनैवानेन पृथिवी आयत्तीकृता इतिभावः ) विनोदोपकरणां, विनोदस्य, प्रीतेः, उपकरणां, राजकं, राजचक्रम्, ( अनुगत राज्ञांसाहचर्येणैवायं प्रीतिमनुभवति ) । प्रतापेति—प्रतापस्य, तेजसः, उपकरणम्, ख्यापनसाधनम्, तस्य प्रतिपत्तः, शत्रुः, । अल्पपुण्यैः, लघुभागधेयैः । सर्वेति—सर्वाति-शायी, सर्वेभ्यः उत्कर्षवान् यः सुखरसः तस्य प्रसूतिः, उत्पत्तिहेतुः ।

सेनं समादिशत् - 'कृतकशिपुं विश्रान्तसुखिनमेनं कारय' इति ।

अथ गते च तस्मिन्, पर्यस्ते च वासरे, संघट्टमानरक्तपङ्कज-  
संपुटपीयमाने इव क्षयिणि क्षामतां व्रजति बालवायसास्था-  
रुणेऽपराङ्मुखातपे, शिथिलितनिजवाजिजवे जपापीडपाटले-  
ऽस्ताचलशिखरस्खलिते खञ्जतीव कमलिनीकण्टकक्षतपादपल्लवे  
पतंगे, पुरः परापतति प्रेङ्खन्धकारलेशलम्बालके शशिविरह-

पादपल्लवच्छायाः, पादपल्लवस्य, चरणाकिसलयस्य छाया, अनातपः,  
(आश्रय, इत्यर्थः) कृतकशिपुम्, रचितशयनम्, वा सम्पादितभोजना-  
च्छादनव्यापारम्, पर्यस्ते, अवसिते । संघट्टेति—सङ्घट्टमानः, सम्मीलन्  
यः रक्तपङ्कजसम्पुटः, रक्तकमलसम्पुटः, तेन पीयमाने इव प्रस्यमाने इव ।  
क्षयिणि, क्षयोन्मुखे, क्षामतां, क्षीणतां, व्रजति, गच्छति । बालेति—  
बालः, सद्योजातः, यः वायसः, काकः, तस्य आस्यानं, मुखं तद्वत्  
अरुणं, रक्तं । परेति—परङ्मुखाः, प्रतिकूलाः, आतपाः, मयूग्वाः, यस्य  
तथोक्तं । शिथिलेति—शिथिलितः, मन्दः, निजवाजिनाम्, स्वाश्वानां,  
जवः, वेगो यस्मिन् तथोक्ते । जपेति—जपा, सूर्यप्रियकुसुमभेदः, तस्य  
आपीडः, स्तवकः, तद्वत् पाटले, रक्ते अस्ताचलशिखरस्खलिते, पश्चिम-  
गिरिचूडावलम्बिनि । खञ्जतीव, खञ्जइवाचरतीव । कमलिनीति—कम-  
लिन्याः, पद्मिन्याः, कण्टकैः, क्षतः, विद्धः, पादपल्लवः, चरणाकिस-  
लयः यस्य तथाभूते पतङ्गे, सूर्ये । पुरः, पूर्वस्यांदिशि, परापतति,  
आगच्छति । प्रेङ्खदिति—प्रेङ्खन्तः, आविर्भवन्तः, अन्धकारलेशाः,  
तिमिरबिन्दवः एव लम्बाः, अलकाः, चूर्णकुन्तलाः यस्मिन् तथा भूते ।  
शशीति—शशिनः, चन्द्रस्य विरहेण, विच्छेदेन, यः शोकः तेन  
श्यामे, मलिने इव श्यामा, रात्री तस्याः मुखे, प्रारम्भे । अत्र श्यामा  
स्त्री मुखे, च, वदने, (पतिविच्छेददुःखेन श्यामामुखोऽपि मलिनो भवति

शोकश्याम इव श्यामामुखे, कृतसंध्योपासनः शयनीयमगात् ।  
अचिन्तयच्चैकाकी—किं करोमि । अन्यथा संभाविऽतोस्मि  
राज्ञा । निर्निमित्तबन्धुना च संदिष्टमेवं कृष्णेन । कष्टा च सेवा ।  
विषमं च भृत्यत्वम् । अतिगम्भीरं महद्राजकुलम् । न च तत्र  
मे पूर्वजप्रवर्तिता प्रीतिः, न कुलक्रमागता गतिः, नोपकारस्म-  
रणानुरोधः, न बालसेवास्नेहः, न गोत्रगौरवम्, न पूर्वदर्शन-  
दाक्षिण्यम्, न प्रज्ञासंविभागोपप्रलोभनम्, न विद्यातिशयकुतू-  
हलम्, नाकारसौन्दर्यादरः, न सेवाकाकुकौशलम्, न विद्वद्गो-

(इति रूपकालंकारः) कृतेति—कृतसन्ध्योपासनः, विहितशायंकालि-  
ककर्म, शयनीयम्, शयनागारम् । एकाकी, अद्वितीयः । अन्यथा,  
विरुद्धप्रकारेण, सम्भाविनः, तर्कितः, निर्निमित्तबन्धुना, अकारण-  
मित्रेण । कष्टा, कष्टकारी । भृत्यत्वम्, भृत्यभावः, विषमम्, असह-  
नीयम् । अतिगम्भीरम्, दुर्ज्ञेयस्वभावम् । पूर्वजैति—पूर्वजैः, पितृभिः,  
प्रवर्तिता, जनिता प्रीतिः, प्रणयः । कुलक्रमागता, वंशपरम्परागता ।  
उपकारस्मरणानुरोधः, राजकुलेन कदाचित् मयोपकारः कृतः तस्य  
स्मरणां तदनुरोधः । बालसेवास्नेहः, बाल्यात्प्रभृतिसंवानिमित्तं मम-  
त्वम् । गोत्रगौरवम्, कुलसम्माननम् । पूर्वदर्शनदाक्षिण्यम्, पूर्व-  
दर्शनं, साक्षात्कारः, तेन दाक्षिण्यं, सारल्यम् । प्रज्ञेति—प्रज्ञायाः,  
बुद्धेः, संविभागः, समालोचनम्, तस्य उपलोभनम्, लोभो पापसन्धा-  
नम् । विद्यातिशयकुतूहलम्, मे विद्या अतिशायिनी भविष्यति इति  
कुतूहलम्, कौतुकम् । नाकारसौन्दर्यादरः, आकारस्य, अवयवस्य,  
सौन्दर्ये आदरः, सम्मानः । सेवाकाकुकौशलम्, सेवायां, काकुः, ध्वनि-  
विकारः तस्य कौशलं, पाटवम् । विद्वदिति—विदुषां, गोष्ठी,  
समाजः तस्याः बन्धे, आयत्तीकरणे वैदग्ध्यं, नैपुण्यम् न । वित्तव्यय-

ग्रीवन्धवैदग्ध्यम्, न वित्तव्ययवशीकरणम्, न राजवल्लभपरि-  
चयः । अवश्यं गन्तव्यम् । सर्वथा भगवान्पुरारातिर्भुवनगुरुर्ग-  
तस्य मे सर्वं सांप्रतमाचरिष्यति' इत्यवधार्य गमनाय मतिम-  
करोत् ।

अथान्यस्मिन्नहन्त्युत्थाय, प्रातरेव स्नात्वा, धृतधवलदुकूल-  
वासाः, गृहीताक्षमालः, प्रास्थानिकानि सूक्तानि मन्त्रपदानि च  
बहुशः समावर्त्य, देवदेवस्य विरूपाक्षस्य क्षीरस्नपनपुरःसरां  
सुरभिकुसुमधूपगन्धध्वजबलिविलेपनप्रदीपकबहलां विधाय  
पूजाम्, परमया भक्त्या प्रथमहुततरलतिलत्वग्विचटनचटुल-

वशीकरणम्, वित्तस्य, धनस्य, व्ययः तस्य वशीकरणम्, बाध्यता  
न । (अस्तीति शेषः) राजसेवायां प्रचुरं वित्तं लभ्यते समापितस्य व्ययं  
आवश्यकं इति । राजवल्लभः, राजप्रियः, तस्य परिचयः, परिचितिः ।  
पुराराति—त्रिपुरारिः, भुवनगुरुः, लोकगुरुः, महादेवः । अवधार्य, विचि-  
न्त्य । धृतधवलदुकूलवासाः, परिदिन शुभ्रपट्टवसनः । गृहीताक्षमालः,  
जपमालाधारी । प्रस्थानिकानि, प्रस्थानकाले वक्तव्यानि । सूक्तानि,  
वेदमन्त्रभागानि । बहुशः, बारम्बारम् । समावर्त्य पठित्वा । देवदेवस्य,  
महादेवस्य । विरूपाक्षस्य, त्रिलोचनस्य । क्षीरेति—क्षीरेण, दुग्धेन,  
स्नपनं स्नानं, पुरःसरां, पूर्वं यस्याः ताम् । सुरभिति—सुरभीणि,  
सुगन्धीनि, कुसुमानि पुष्पाणि, धूपाः, गन्धाः, ध्वजाः, पताकाः, बलि-  
विलेपनानि, पूजार्थविलेपनद्रव्याणि, तैः बहला भूयिष्ठा ताम् ।  
प्रथमेति—प्रथमं, प्राक् हुतानां, देवोद्देशेनप्रक्षिप्तानाम् तरलानां,  
चपलानाम्, तिलानां त्वचः, आवरणानि, तासां विघटनेन, विसरणेन  
चटुलाः, चंचलाः, अत एव मुखराः पटत्पटदिति शब्दं कुर्वाणाः,  
शिखाः, ज्वालाः, शेखराणि, शिर आभरणानि यस्य तम् ।

मुखरशिखाशेखरं प्राज्याज्याहुतिप्रवर्धितदक्षिणाचिषं भगवन्त-  
माशुशुक्षणिं हुत्वा, दत्त्वा द्युम्नं यथाविद्यमानं द्विजेभ्यः, प्रद-  
क्षिण कृत्य प्राङ्मुखी नैचिकीम्, शुक्लांगरागः शुक्लमाल्यः, शुक्ल-  
वासाः, रोचनाञ्चितदूर्वाग्रपल्लवप्रथितगिरिकणिकाकुसुमकृत-  
कर्णपूरः, शिखासक्तसिद्धार्थकः, पितुः कनीयस्या स्वस्रा मात्रेव  
स्नेहार्द्रहृदयया श्वेतवाससा साक्षादिव भगवत्या महाश्वेतया  
मालत्याख्यया कृतसकलगमनमंगलः, दत्ताशीर्वादो बान्धव-  
वृद्धाभिः, अभिनन्दितः परिजनजरतांभिः, वन्दितचरणैरभ्यनु-  
ज्ञातो गुरुभिः, अविवादितैराघ्रातः शिरसि कुलवृद्धैः, वर्धितगम-  
नोत्साहः शकुनैः, मौढ्वितिकमतेन कृतनक्षत्रदोहदः, शोभने मुहूर्ते

प्राज्येति—प्राज्याहुतिभिः, प्रचुरवृताहुतिभिः, प्रवर्द्धिताः, वृद्धिं नीताः,  
दक्षिणादक्षिणादिर्वर्तिन्यः अर्चिषः, शिखायस्य तथोक्तम् । आशुशु-  
क्षणिम्, अग्निम् । (पावकोऽनलः रोहिताश्वो वायुसखा शिखावाना-  
शुशुक्षणिः इत्यमरः । द्युम्नम्—धनम्, (द्युम्नं वित्ते विलेऽपि च इति  
मेदनी) नैचिकीं, गाम्, (उत्तमागौषु नैचिकी इत्यमरः) शुक्लाङ्गरागः,  
श्वेतचन्दनदिग्धस्नेहः । रोचनेति—रोचनया, गोरोचनाख्यमांगल्य-  
द्रव्येण, अञ्चिताः, रञ्जिताः दूर्वाणां, कुशानाम्, अग्रपल्लवाः तैः प्रन्थितं,  
गुम्फितम्, यत् गिरिकणिकाकुसुमम्, अश्वखुरीनाम् मांगलिकी  
औषधिः, तस्याः, पुष्पं, तेन कृतः, रचितः, कर्णपूरः कर्णभूषणं येन  
तथोक्तः । शिखेति—शिखासु, चूडासु, सक्ताः, लग्नाः, सिद्धार्थकाः,  
श्वेतसर्षपाः यस्य तथा भूतः । स्वस्रा, भगिन्या । श्वेतवाससा धवलव-  
सनया । महाश्वेतया, सरस्वत्या । कृतेति—कृतम्, अनुष्ठितम्,  
सकलं, गमनाय मंगलं यस्य तथोक्तः । दत्ताशीर्वादः, वितरिताशिः,  
परिजनजरतीभिः, परिजनेषु या जरत्यः, स्थविराः ताभिः । आघ्रातः,



हरितगोमयोपलिप्ताजिरस्थण्डिलस्थापितमसितेतरकुसुममाला-  
परिक्षिप्तकण्ठं पिष्टपञ्चाङ्गुलपाण्डुरं मुखनिहितनवचूतपल्लवं  
पूर्णकलशमुदीक्षमाणः, प्रणम्य कुलदेवताभ्यः कुसुमफलपाणि-  
भिरप्रतिरथं जपद्भिर्निजद्विजैरनुगम्यमानः, प्रथमचलितदक्षिण-  
चरणः, प्रीतिकूटाभिरगात् ।

प्रथमेऽहनि घर्मकालकष्टं निरुदकं निष्पन्नपादपविषमं-

शिरसि चुम्बितः । शकुनैः, सुनिमित्तभूतपक्षिभिः, मुहूर्त्तिकेति—  
मुहूर्त्तं जानन्ति इति मौहूर्त्तिकाः, गणाकाः इत्यर्थः, ( देवज्ञगणाकावपि-  
स्युमौहूर्त्तिक इत्यमरः ) तेषां मतेन, अभिप्रायेण । कृतेति—कृतम्,  
नक्षत्रेषु, अश्विन्यादिषु दोहदम्, अनुरागविशेषः येन तथोक्तः ।  
शोभनेमुहूर्ते, शुभवटिकायाम्, हरितेति—हरितेन, अशुष्केण, गोम-  
येन, गव्येन, उपलिप्तम्, प्रलिप्तम्, यन् अजिरम्, अंगाराम्, तदेव  
स्थण्डिलं, परिष्कृताभूमिः, तत्र स्थापितः तम् । असितेति—असि-  
तेतराभिः, श्वेताभिः, कुसुममालाभिः, परिक्षिप्तः, परिवेष्टितः, कण्ठः,  
यस्य तथोक्तम् । पिष्टेति—पिष्टानां, “पिटिली” इति प्रसिद्धानां  
मांगलिक द्रव्याणां पंचांगुलं, पंचांगुलाकारः प्रसाधनविशेषः, तेन  
पाण्डुरः, शुभ्रः ( पंचांगुल गृहीतपिष्टेन चित्रित इति भावः ) तम् ।  
मुखेति—मुखं, कलसस्येतिशेषः, निहितः, अर्पितः, नवः चूतपल्लवः,  
आम्रपल्लवः यस्य तथोक्तम् पूर्णकलसम्, भरितकुम्भम्, उदीक्ष्यमाणः,  
पश्यन् । अप्रतिरथम्, नास्तिप्रतिरथः, प्रतिद्वन्दी यत्र तद् । जपद्भिः,  
वाणस्पर्द्धाकोऽपिमाभूत्, इति मंत्रं जपद्भिः, निजद्विजैः, स्वकीयैः,  
ब्राह्मणैः । अनुगम्यमानः, प्रथमं, पूर्वं चलितः, दक्षिणचरणः, वामे-  
तरपादः यस्य सः । प्रीतिकूटात्, एतन्नाम नगरात्, निरगात् ।

प्रथमेति—मल्लकूटनामानं ग्राममगात् इत्यनेनान्वयः । प्रथमेऽहनि,

पथिकजननमस्क्रियमाणं, प्रवेशपादपोत्कीर्णकात्यायनीप्रतियातनं,  
शुष्कमपि पल्लवितमिव तृषितश्रापदकुललम्बितलोलजिह्वाल-  
तासहस्रैः पुलकितमिवाच्छभल्लगोलाङ्गूललिह्यमानमधुगोल-  
चलितसरघासंघातैः, रोमाञ्चितमिव दग्धस्थलीरूढस्थूलाभीरु-  
कन्दलशतैः, शनैश्चण्डिकाकाननमतिक्रम्य मल्लकूटनामानं  
ग्राममगात् । तत्र च हृदयनिर्विशेषेण भ्रात्रा सुहृदा च जगत्पति-  
नाम्ना संपादितसपर्यः सुखमवसत् । अथापरेद्युस्तीर्य भगवतीं

आदिमेदिवसे । धर्मेति—धर्मकाले, ग्रीष्मावसरं कष्टं, दुःखं यत्र  
तत् । निरुदकं, जलहीनम् । निष्पत्रेति—निष्पत्रैः, पत्ररहितैः, पादपैः,  
तरुभिः, विषमं, कठोरम् । (छायाहीनाद् दुःखगाहम्) पथिकेति—  
पाथिकैः, पान्थजनैः, नमस्क्रियमाणं, प्रणम्यमानम् । प्रवेशेति—  
प्रवेशे, प्रवेशनारम्भे यः पादपः, तरुः तत्र उत्कीर्णं खोदिता कात्या-  
यन्याः, दशभुजायाः, प्रतियातना, प्रतिकृतिः, यत्र तथोक्तम् । शुष्क-  
मपि नीरसमपि । पल्लवेति—पल्लवितमिव, पत्रवदिव, तृषितैः, पिपा-  
सितैः, श्रापदकुलैः, हिंस्रजन्तुसमूहैः, लम्बितानि, वहिष्कृतानि,  
लोलानां, चपलानां, जिह्वालतानां, रसनावल्लीनां, सहस्राणि यैः,  
“इत्युत्प्रेक्षा” पुलकितमिव, रोमाञ्चितमिव, अच्छेति—अच्छभल्लैः,  
भल्लजूकैः, गोलाङ्गूलैः, कपिभेदैः, (लंगूर इति ख्यातैः) लिह्यमानानि  
आस्वाद्यमानानि, यानि मधुगोलानि, मधुचक्राणि, तेभ्यः चलिताना-  
नाम्, उड्डीयमानानां, सरघाणां, मधुमक्षिकाणां, संघातैः, समूहैः ।  
रोमाञ्चितमिव । दग्धेति—दग्धासु, भस्मीकृतासु, स्थलीषु, उपर-  
भूमिषु, रूढानां, जातानाम्, अभीरूणां, शतावरीनामौषधविशेषाणां,  
कन्दलशतैः, नवाङ्कुरसमूहैः । पूर्वैरङ्गान्वयः । हृदयनिर्विशेषेण, हृदयात्  
निर्विशेषः, अभिन्नः तेन, सम्पादितसपर्यः, अनुष्ठितसत्कारः ।

भागीरथीं यष्टिगृहकनाम्नि वनग्रामके निशामनयत् । अन्यस्मि-  
न्दिवसे स्कन्धावारमुपमणितारमन्वजिरवति कृतसंनिवेशमास-  
साद् । अतिष्ठच्च नाति दूरे राजभवनस्य ।

निर्वर्तितस्नानाशनव्यतिकरो विश्रान्तश्च मेखलकेन सह  
सह याममात्रावशेषे दिवसे भुक्नवति भूभुजि प्रख्यातानां क्षिति-  
भुजां बहुशिविरसंनिवेशान्वीक्षमाणः शनैः शनैः पट्टबन्धार्थ-  
मुपस्थापितैश्च, डिण्डिमाधिरोहणायाहृतैश्चाभिनवबद्धैश्च, विज्ञे-  
पोपार्जितैश्च, कौशलिकागतैश्च, नागवीथीपालप्रेषितैश्च, प्रथम-

स्कन्धावारम्, सेना निवेशार्थरचितपटमण्डपादिरूपम् । उपमणितारम्,  
मणिताराख्यपत्तनसमीपे । अन्वजिरवति - अजिरवती नाम नदी  
तामनु, अन्वजिरवति । कृतसंनिवेशं, कृतस्थितिम् । आससाद्, प्राप ।  
निर्वर्तितेति—निर्वर्तितः, कृतः, स्नानाशनयोः, स्नानभोजनयोः,  
व्यतिकरः त्रिविधः येन तथोक्तः । विश्रान्तः, कृतविश्रामः । मेखलकेन,  
एतन्नामपत्रवाहकेन । याममात्रावशेषे, प्रहरमात्रावशिष्टे । भूभुजि,  
राजनि । प्रख्यातानां, प्रसिद्धानाम् । क्षितिभुजां, महिभुजम् । शिवर-  
संनिवेशान्, पटमण्डपानि । वीक्षमाणः, पश्यन् । पट्टबन्धार्थम्,  
सिंहासनमण्डप रचनार्थम् । उपस्थापितैः, आनीतैः । डिण्डिमाधिरोह-  
णाय, पटहस्थापनाय, गजस्योपरि इति भावः । विज्ञेपेति—विज्ञेपेण,  
प्रेरणेन, नृपवृन्दैः उपायनार्थमिति भावः । उपार्जिताः, लब्धाः तैः ।  
कौशलिकम्, नैपुण्यम्, आगतैः, प्राप्तैः । नागेति-नागवीथी,  
गजोत्पत्तिभूमिः, तस्याः पालः, रक्षकः, तेन प्रेषितैः, प्रेरितैः । प्रथ-  
मेति—प्रथमं, प्राक् यत् दर्शनम्, अवलोकनम्, तस्मिन् यत् कुतू-  
हलम्, कौतुकम्, तेन, उपनीतैः, प्राप्तैः । दूतेति—दूतानां, राज-  
वार्तावहानां, सम्प्रेषणेन, प्रेरणेन, प्रेषितैः । पल्लीति—पल्ली, व्याधानां,

दर्शनकुतूहलोपनीतैश्च, दूतसंप्रेषणप्रेषितैश्च, पत्नीपरिवृढढौकितैश्च  
स्वेच्छायुद्धकीडाकौतुकाकारितैश्च, दीयमानैश्चाच्छिद्यमानैश्च,  
मुच्यमानैश्च, यामस्थापितैश्च, सर्वद्वीपजिगीषया गिरिभिरिव  
सागरसेतुबन्धनार्थमेकीकृतैर्ध्वजपटपटुपटहशङ्खचामरांगरागर-  
मणीयैः, पुण्याभिषेकदिवसैरिव कल्पितैर्वारणेन्द्रैः श्यामायमा-  
नम्, अनवरतचलितखुरपुटप्रहतमृदंगैर्नर्तयद्भिरिव राजलक्ष्मी-

क्षुद्रग्राम, नस्य परिवृढः, अधिपः, तेन ढौकितैः, प्रेषितैः । स्वेच्छेति—  
स्वेच्छया, निजेच्छया, राज्ञ इति भावः । या युद्धकीडा तस्याम्  
यत्कौतुकम्, औत्सुक्यम्, तेन आकारितैः, आहूतैः दीयमानेति—  
दीयमानैः, राजभिः, उपढौक्यमानैः । आच्छिद्यमानैः, अपसार्यमाणैः ।  
मुच्यमानैः, बन्धनान् इति भावः । यामस्थापितैः, प्रहरकालावस्थितैः ।  
सर्वेति—सर्वे, सकलाः, द्वीपाः, देशाः, तेषां जिगीषया, जेतुमिच्छया ।  
सागरेति—सागरस्य, समुद्रस्य सेतुः, पुलम्, तद्वन्धनार्थम् गिरि-  
भिरिव, पर्वतैरिव । एकीकृतैः, एकत्रानीतैः । ध्वजेति—ध्वजपटाः,  
पताकाः, पटवाः, गम्भीरनादाः, पटहाः, ढक्काः, शंखाः, चामराणि,  
बालव्यजनानि, अङ्गरागाश्च, विलेपनद्रव्याणि च तैः रमणीयैः,  
सुदर्शनैः । पुण्याभिषेकदिवसैरिव, ( पुष्यनक्षत्रयुक्तेदिने मङ्गलालङ्कृतः  
स्नाति तत्र ध्वजादिरम्यवस्तूनि सज्जीक्रियन्ते तादृशैः दिनैरिव )  
कल्पितैः, सज्जितैः, वारणेन्द्रैः, गजेन्द्रैः, श्यामायमानम्, श्यामा,  
निशा तद्वत् आचरतीति तथोक्तम् । अनवरतेति—अनवरतं, निर-  
न्तरम्, चलितं यत् खुरपुटम्, शफाग्रम्, तेन प्रहतानि, ताडितानि,  
मृदः, मृत्तिकायाः, अङ्गानि, अवयवानि, यैः तथोक्तैः, नर्तयद्भिरिव,  
नृत्यं कारयद्भिरिव । ( तत्रापि वाद्यविशेषाः मृदंगाः ताडिताः भवन्ति )  
सृक्केति—सृक्पुटम्, ओष्ठप्रान्तम्, ( प्रान्तावौष्ठस्य सृक्काणी “इत्य-

मुपहसद्भिरिव सृक्पुटप्रसृतफेनादृहासेन जवजडजङ्घां हरिण-  
जातिमाकारयद्भिरिव संघट्टहेतोर्हर्षहेषितेनोच्चैः श्रवसमुत्पतद्भि-  
रिव दिवसकररथतुरगरुषा, पक्षायमाणमण्डनचामरमालैर्गगन-  
तलं तुरंगैस्तरंगायमाणम्, अन्यत्र प्रेषितैश्च प्रेष्यमाणैश्च, प्रेषि-  
तप्रतीपनिवृत्तैश्च, बहुयोजनगमनगणनसंख्याऽक्षरावलीभिरिव  
घराटिकाऽऽवलीभिर्घटितमुखमण्डनकैस्तारकितैरिव संध्याऽतप-  
च्छेदैरुणचामरिकाश्चितकर्णपूरैः सरक्तोत्पलैरिव रक्तशालिशाले-

मरः) तस्मात् प्रसृतः, निमृतः, यः फेनः स एवादृहासः, हास्यविशेषः  
तेन । जवेति—जवे, वेगे, जडा, गन्तुमसमर्था, जङ्घा, यस्याः ताम्  
हरिणजातिं, सृगजातिम्, आकारयद्भिरिव, आह्वयमानैरिव । संघ-  
ट्टेति—संघट्टहेतोः, परस्परसम्प्रेतनहेतोः । दिवसकरस्य, सूर्यस्य ये  
रथतुरगाः, स्यन्दनाश्वाः, तेभ्यः, रुट्, क्रोधः, तथा, गगनतलं, नभ-  
स्तलम्, समुत्पतद्भिरिव, उड्डीयवावद्भिरिव, पक्षेति—पक्षवदाचर-  
न्तीति, पक्षायमाणाः याः मण्डनचामरमालाः, भूषणार्थवृत्तचामररा-  
जयः, येषां तैः । तरंगायमानम्, तरंगवदाचरतीति तथोक्तम् ।  
साम्प्रतम् क्रमेलककुलैः कपिलायमानं राजद्वारमिति विशिनष्टि ।  
अन्यत्र—अन्यस्मिन् प्रदेशे, प्रेषितैः, प्रेरितैः । प्रेष्यमाणैः, प्रेर्यमाणैः  
प्रेषितप्रतिनिवृत्तैः, प्रथमं प्रेषिताः पश्चात् प्रतिनिवृत्तैः । वह्निति—वहूनि  
योजनानि यद्गमनं, तस्य गणना, संख्या तस्याम्, अक्षरावलीभिः,  
गणनचिह्नभूताङ्कैः । घराटिकावलीभिः—कर्पादिकाभिः । घटितेति—  
घटितं, खचितम्, मुखमण्डनकं, वदनभूषणं येषां तैः तारकितैरिव,  
प्रकटिततारामण्डलैरिव । सन्ध्या-शायंमुखम्, तस्याऽऽतपच्छेदैः, आत-  
पखण्डैः । अरुणेति—अरुणाः, रक्ताः, याः चामरिकाः, ताभिः रचिताः,  
खचिताः कर्णपूराः, कर्णाभरणाः येषां तैः सरक्तोत्पलैरिव, अरुण-

यैरनवरतभ्रणभ्रणायमानचारुचामीकरधुरुधुरुकमालिकैर्जरत्कर-  
ञ्जवनैरिवरणितशुष्कबीजकोशीशतैः, श्रवणोपान्तप्रेङ्गत्पञ्चराग-  
वर्णोर्णाचित्रसूत्रजूटजटाजालैः कपिकपोलकपिलैः क्रमेलककुलैः  
कपिलायमानम्, अन्यत्र शरज्जलधरैरिव सद्यः स्तुतपयः पटल-  
धवलतनुभिः, कल्पपादपैरिव मुक्ताफलजालकजायमानाऽऽलोक-  
लुप्तच्छायाभगडलैर्नायणनाभिपुण्डरीकैरिवाश्रितगण्डपत्तैः,

कमलवद्भिरिव । रक्तानां, शालीनां, धान्यानां, शालेयाः, क्षेत्राणि तैः ।  
अनवरतेति—अनवरतं, निरन्तरम्, भ्रणभ्रणायमानैः, एतच्छब्दकुर्वद्भिः,  
चारुभिः चामीकरैः, सुवर्णैः ( घटिता इति शेषः ) धुरुधुरुकाः,  
एतच्छब्दक्रियमाणाः मालाः येषां तैः । जरत्करञ्जवनैः, जीर्ण-  
कमलकननैरिव । रणितेति—रणितानि यानि शुष्कबीजानि येषां,  
केशीनां, पद्मानां शतैः शतसंख्याकैः । श्रवणयोः कर्णयोः, उपान्तेषु,  
प्रान्तेषु, प्रेङ्गन्ति, चलन्ति, पंचभिः, पंचविधैः रागैः, वर्णैः, रचिता  
याः उर्णाः, मेषादीनां लोमानि ताभिः चित्राणि, मनोज्ञानि, सूत्र-  
जूटा इव जटाजालानि केशवृन्दानि येषां तैः । कपिकपोलकपिलैः,  
वानरगण्डस्थलवत् पिङ्गलैः । क्रमेलककुलैः, उपवृन्दैः । कपिलायमानम्  
पिङ्गलायमानम् । अन्यत्र—अन्यस्मिन्देशे आतपपत्रखण्डैः श्वेतद्वीपा-  
यमानम् इति राजद्वारं विशिनष्टि, शरज्जलधरैरिव, शरत्कालमधैरिव ।  
सद्य इति—सद्यः तत्क्षणम्, क्षुतानां, क्षरितानाम्, पयसां, दुग्धा-  
नाम्, पटलवत्, राशिवत् धवलम्, शुभ्रम् तनुः, येषां तथाविधैः ( पक्षैः )  
सद्यः स्तुतैः, अचिर निर्गलितैः, पयसां, जलानां पटलैः समूहैः,  
धवलाः श्वेताश्च ते तनवः तथा भूतैः कल्पपादपैरिव, सुरतरुभिरिव  
मुक्तेति—मुक्ताफलानां, मौक्तिकानाम्, जालकैः, मालाभिः, जाय-  
मानः, उत्पद्यमानः, यः आलोकः, प्रभा, तेन लुप्तं, छिन्नम् यत्

क्षीरोदोद्देशैरिव द्योतमानविकटविद्रुमदण्डैः, शेषफणाफलकैरिव  
 उपरिस्फुरत्स्फीत माणिक्यखण्डैः, श्वेतगङ्गापुलिनैरिव  
 राजहंसोपसेवितैरभिभवद्भिरिव निदाघसमयमुपहसद्भिरिव  
 विवस्वतः प्रतापमापिवद्भिरिवातपं चन्द्रलोकमयमिव जीवलोकं  
 जनयद्भिः कुमुदमयमिव कालं कुर्वद्भिर्ज्योत्स्नामयमिव वासरं  
 विरचयद्भिः फेनमयीमिव दिवं दर्शयद्भिरकालकौमुदीसहस्राणीव

द्वायामण्डलम्, अनातपसमूहः यैः तैः (पक्षे) मुक्ताफलानां जालकैः,  
 कल्पवृक्षप्रसूतैः मौक्तिकैः, अन्यत्रसामान्यम् । नारायणस्य विष्णोः,  
 नाभिपुण्डरीकैः, नाभिजश्चेतकमलैरिव, आश्लिष्टाः, संलग्नाः, गरुडपक्षाः,  
 रत्नविशेषाः (अन्यत्र) गरुडपक्षिणः यत्र तैः । क्षीरोदोद्देशैरिव, क्षीरसा-  
 गरविभागैरिव । द्योतेति—द्योतमानाः, दिप्यमानाः, विकटाः, विषमाः, विद्रु-  
 मदण्डाः, प्रवालद्रुमाः यत्र तैः शेषफणाफलकैरिव, उपरीति—उपरि,  
 शिखरदेशे, स्फुरत् दीप्यमानम्, स्फीतम् स्थूल माणिक्यखण्डम्, येषां  
 तैः (पक्षे) उपरि-फणाया उपरिभागे, स्फुरत् स्फीतं माणिक्यखण्डम्,  
 येषु तैः । श्वेतगङ्गापुलिनैरिव, धवलगङ्गासैकतदेशैरिव । राजहंसेति—  
 राजानो हंसा इव तैः नृपोत्तमैः, (पक्षे) हंसविशेषैश्च । उपसेवितानि,  
 व्यवहृतानि; चरितानि च तैः । निदाघसमयं, ग्रीष्मकालम्, अभिभव-  
 द्भिरिव, जयद्भिरिव, (आतपनिवारणात्) विवस्वतः, सूर्यस्य, प्रतापं  
 प्रभावम्, उपहसद्भिरिव (सर्वतः सूर्यदर्शनाभावात्) चन्द्रलोक मय-  
 मिव जीवलोकम्, मनुष्यलोकम्, जनयद्भिः, उत्पादयद्भिः (तस्यातिधा-  
 वल्यात्) कुमुदमयमिव, कैरवमयमिव कालं, समयं कुर्वद्भिः सम्पादयद्भिः ।  
 ज्योत्स्नामयमिव कान्तिमयमिव, वासरं, दिनं विरचयद्भिः, कुर्वद्भिः ।  
 फेनमयीमिव, दिवम्, अन्तरीक्षम् दर्शयद्भिः, आलोकयद्भिः ।  
 अकालकौमुदीसहस्राणीव, कौमुदीसहस्राणि, चन्द्रिकासमूहान्, सृजद्भिः,

सृजद्भिरुपहसद्भिरिव शातक्रतवीं श्रियं श्वेतायमानैरातपत्रखण्डैः  
श्वेतद्वीपायमानम्, क्षणदृष्टनष्टादृष्टिमुखं च मुष्णद्भिरिव भुव-  
नमाक्षेपोत्क्षेपदोलायितं दिनं गतागतानीव कारयद्भिरुत्सारय-  
द्भिरिव कुनृपतिकलङ्ककाली कालेर्यां स्थितिं, विकचविशदका-  
शवनपाण्डुरदिशं शरत्समयमिवोपपादयद्भिरिविसतन्तुमयमिवा-  
न्तरिक्षमावेभांवयद्भिः शशिकरशुचीनां चलतां चामराणां सह-  
स्रैर्दौलायमानम्, अपि च हंसयूथायमानं करिकर्णशङ्खैः, कल्प-  
लतावनायमानं कदलिकाभिः, माणिक्यवृक्षकवनायमानं मायू-

उत्पादयद्भिः, शातक्रतवीं, ऐन्द्रीं, श्रियम्, सम्पदम्, उपहसद्भिरिव ।  
श्वेतायमानैः, श्वेतैव आचरन्ति तैः, आतपत्रखण्डैः, छत्रनिवहैः,  
श्वेतायमानम् । चामराणां सहस्रैः, दौलायमानमिति विशिनष्टि । क्षणेति-  
क्षणोन्, दृष्टं नष्टं च, अष्टानां, दिशां, मुखानि यस्य तादृशम्, भुवनम्,  
लोकम्, मुष्णद्भिरिव, हरद्भिरिव । आक्षेपेति—आक्षेपः, प्रसारणम्,  
उत्क्षेपः, ऊर्ध्वोत्क्षेपणम् ताभ्यां दोलायितम् दिनं, दिवसम् गता-  
गतानि, यातायातानि, कारयद्भिरिव । कुनृपेति—कुनृपाः, एव  
कलङ्काः, अपवादाः, तैः, काली, मलिना तां कालेर्यां, कलिसम्बन्धिनीं,  
स्थितिं, मर्यादाम्, उत्सारयद्भिरिव, अपनयद्भिरिव । विकचेति—  
विकचैः, स्फुटैः अतएव विशदैः, काशवनैः, काशनामनृणाविशेषैः,  
पाण्डुराः, धवलाः, दिशो यत्र तथा भूतम् शरत्समयम्, शरत्कालम्,  
उत्पादयद्भिरिव । विषतन्तुमयम्, मृणालसूत्रमयम्, अन्तरीक्षं, गगन-  
तलम्, आविर्भांवयद्भिरिव प्रकटयद्भिरिव । शशिनः, चन्द्रस्य कराः,  
किरणा इव शुचीनि, स्वच्छानि तेषाम्, पूर्वेणान्वयः । करिकर्णशङ्खैः,  
हस्तिकर्णेषु भूषणार्थं, विन्यस्तशङ्खैः । हंसयूथायमानम्, हंससमूह-  
मिवाचरन्तम् । कदलिकाभिः, पताकाभिः, (रम्भावृक्षेथकदली पताका-



रातपत्रैः, मन्दाकिनीप्रवाहायमाणमंशुकैः, क्षीरोदायमानं क्षौमैः  
 कदलीवनायमानं मरकतमयूखैः, जन्यमानान्यदिवसमिव पद्म-  
 रागबालातपैः, उत्पद्यमानापराम्बरमिवेन्द्रनीलप्रभापटलैः, आर-  
 भ्यमाणापूर्वनिशमिव महानीलमयूखान्धकारैः, स्यन्दमानानेक-  
 कालिन्दीसहस्रमिव गरुडमणिप्रभाप्रतानैः, अंगारांकितमिव  
 पुष्परागरश्मिभिः, कैश्चित्प्रवेशमलभमानैरधोमुखैश्चरणनखपति-  
 मृगमेदयोः ) कल्पलतावनायमानम्, कल्पद्रुमवनमिव आचरन्तम् ।  
 मयूरातपत्रैः, मयूरपिच्छनिर्मितच्छत्रैः । माणिक्यवृत्तकाणाम्, माणि-  
 क्यभूषितं क्षुद्रतरुणाम् । वनायमानम्, काननायमानम् । अंशुकैः,  
 वसनविशेषैः, मन्दाकिनी गंगा, तस्याः प्रवाहमिवाचरति, इति तथो-  
 क्तम् क्षीरोदः, क्षीरसागरः सङ्वाचरतीति, क्षौमैः, श्वेतपट्टवसनैः ।  
 मरकतमयूरवैः, हरिन्मणिकिरणैः । कदलीवनायमानम्, रम्भावनाय-  
 मानम्, पद्मरागाणाम्, पद्माख्यरत्नानाम्, बालातपाः, अरुणालोकाः,  
 तैः, जन्यमानः, उत्पद्यमानः, अन्यः दिवसः तमिव । इन्द्रनीलानाम्,  
 मणिविशेषाणाम्, प्रभापटलैः, कान्तिनिचयैः, उत्पद्यमानम्, जन्य-  
 मानम्, अपराम्बरमिव, अन्यद्गगनमिव । गरुडैति—गरुडमणी-  
 नाम्, रत्नविशेषाणाम्, प्रभाप्रतानैः, कान्तिप्रतानैः । पुष्परागाणाम्,  
 पद्मरागाणाम्, रश्मिभिः, किरणैः, अंगारांकितमिव, अग्निस्फुलिगा-  
 ङ्कितमिव । कैश्चित्प्रवेशमलभमानैः, समन्तादासेव्यमान-  
 मिति विशिनष्टि । कैश्चित्, कतिपयैः, प्रवेशमलभमानैः, प्रवेशमप्राप्नु-  
 वद्भिः । अतएव अधोमुखैः, अवन्तवदनैः । चरणेति—चरणेषु,  
 पादेषु, नखाः तत्र पतितानाम्, वदनप्रतिबिम्बानाम्, मुखच्छायाणाम्,  
 निभेन, व्याजेन, लज्जया, व्रीडया, स्वांगानीव, स्वशरीराणीव विशङ्भिः,  
 नदन्तलीयमानैः । कैश्चित्, कतिपयैः, अंगुलीति, अंगुलिभिः, लिखि-

तवदनप्रतिबिम्बनिभेन लज्जया स्वांगानीव विशद्भिः कैश्चिदङ्गुली-  
लिखितायाः क्षितेर्विकीर्यमाणकरनखकिरणकदम्बकव्याजेन  
सेवाचामराणिवार्पयद्भिः कैश्चिदुरःस्थलदोलायमानेन्द्रनीलतरल-  
प्रभापट्टैः स्वामिप्रकोपप्रशमनाय कण्ठवज्रकृपाणपट्टैरिव कैश्चि-  
दुच्छ्वाससौरभभ्राम्यद्भ्रमरपटलान्धकारितमुखैरपहतलक्ष्मी-  
शोकधृतलम्बशमश्रुभिरिवान्यैः शेखरोद्गीयमानमधुपमण्डलैः  
प्रणामविडम्बनाभयपलायमानमौलिभिरिव निर्जितैरपि सम्मा-

तायाः, खनितायाः, क्षितैः, प्रथिव्याः, विकीर्यमाणानाम्, उत्तिष्ठप्यमा-  
णानाम्, करनखकिरणानाम्, हस्तप्रभागमयूरवानाम्, कदम्बकम्,  
समूहः, तस्य व्याजेन, छलेन, सेवाचामराणि इव, परिचर्यावालव्य  
जनानीव, अर्पयद्भिः, ददद्भिः । कैश्चित्, उरःस्थलेति—उरःस्थलेषु,  
वक्षःस्थलेषु, दोलायमानानाम्, लम्बमानानाम्, इन्द्रनीलानाम्,  
नीलकान्तमणानाम्, तरलानि, चपलानि, प्रभापट्टानि, कान्तिपट्टा-  
नि तैः । स्वामिनः, प्रभोः, यः प्रकोपः, क्रोधः तस्य प्रशमनाय,  
शान्त्यर्थम् । कण्ठेति—कण्ठेषु वद्वानि कृपाणपट्टानि, असिफलकानि,  
यैः तथा भूतैरिव । उच्छ्वासेति—उच्छ्वासस्य, निश्वासपवनस्य,  
सौरभेण, सद्गन्धेन, भ्राम्यद्भिः, संचरद्भिः, भ्रमरपटलैः, अलिवृन्दैः,  
अन्धकारितम्, अन्धकार इवाचरितम्, मुखं येषां तैः । अपहृतेति—  
अपहृतायाः, वलाद्गृहीतायाः, लक्ष्म्याः, राजश्रियाः, शोकेन, धृताः,  
लम्बाः, शमश्रवः यैः । शेखरेति—शेखरेभ्यः, शिरोभ्यः, उद्गीयमा-  
नानि, उत्पतन्ति, मधुपमण्डलानि, अलिवृन्दानि येषां तथोक्तैः ।  
प्रणामेति—प्रणामे, प्रणत्याम् विडम्बनायाः, अवमाननायाः, भयेन  
पलायमानाः, मौलयः किरीटाः येषां तथोक्तैः । निर्जितैरपि, पराजितै-  
रपि, सम्मानितैरिव, आहतैरिव, अनन्यशरणैः, अन्याश्रयरहितैः ।

नितैरिधानन्यशरणैरन्तरान्तरा निष्पततां प्रविशतां चान्तरप्रती-  
 हाराणामनुमार्गप्रधावितानेकार्थिजनसहस्राणामनुयायिनः पुरु-  
 षान्प्रान्तैः, पुनःपुनः पृच्छद्भिः 'भद्र अद्य भविष्यति भुक्त्वा  
 स्थाने दास्यति दर्शनं परमेश्वरः, निष्पतिष्यति वा बाह्यां  
 कक्ष्याम्' इति दर्शनाशया दिवसं नयद्भिर्भुजनिर्जितैः शत्रुमहा-  
 सामन्तैः समन्तादासेव्यमानम्, अन्यैश्च प्रतापानुरागागतैर्ना-  
 नादेशजैर्महीपालैः प्रतिपालयद्भिर्नरपतिदर्शनकालमध्यास्यमा-  
 नम्, एकान्तोपविष्टैश्च जैनैरार्हतैः पाशुपतैः पाराशरिभिर्वर्णि-  
 मिश्च सर्वदेशजन्मभिश्च जनपदैः सर्वाभ्योधिबेलावनवलयवा-

अन्तरान्तरा, मध्येमध्ये, निष्पतताम्, निर्गच्छताम्, प्रविशताम्,  
 अन्तरप्रतिहाराणाम्, अन्तरं, मध्ये, प्रतिहाराः, रक्षिणः, येषाम्  
 तेषाम् । अनुमार्गम्, अनुपथम्, प्रधावितानि, अनेकानि, अर्थिजन-  
 सहस्राणि, याचकवृन्दानि, येषां तेषामनुयायिनः, पृष्ठगामिनः, पुरु-  
 षान्, जनान् । अथान्तैः, न अन्तं येषां तैरविरतैरित्यर्थः, पुनः-पुनः,  
 बारम्बारं पृच्छद्भिः । भविष्यति दर्शनमिति शेषः । स्थाने, समुचिते-  
 प्रदेशे । परमेश्वरः, राजधिराजः । कक्ष्याम्, प्रकोष्ठम् ( कक्ष्याप्रकोष्ठे  
 हर्म्यादेः-इत्यमरः ) शत्रुमहासामन्तैः, शत्रवश्च ते महान्तः सामन्ता-  
 श्च तैः । आसेव्यमानम्, उपास्यमानम् । प्रतापेति—प्रतापेन, तेजसा,  
 अनुरागेण च प्रेम्णा च आगताः तैः । प्रतिपालयद्भिः, प्रतीक्षमाणैः ।  
 अध्यास्यमानम्, अधिष्ठीयमानम् । एकान्तोपविष्टैः, एकदेशासनैः ।  
 जैनैः, जैनमतावलम्बिभिः । आर्हतैः, क्षपणकैः । पाशुपतैः, शैवैः ।  
 पाराशरैः, पराशरमुनिमतानुवृत्तिभिः । वर्णिभिः, ब्रह्मचारिभिः । सर्व-  
 देशजन्मभिः, सार्वदेशीयैः । सर्वेति—सर्वेषाम्, अभ्योधीनाम्, साग-  
 राणाम्, बेलावनानि, तीरकाननानि, तेषां वलयं, मण्डलम्, तस्मिन्

सिभिश्च स्वेच्छजातिभिः सर्वदेशान्तरागतैश्च दृतमण्डलैरुपास्य-  
मानम्, सर्वप्रजानिर्माणभूमिमिव प्रजापतीनां लोकत्रयसारोच्च-  
यरचितं चतुर्थमिव लोकम्, महाभारतशतैरप्यकथनीयसमृद्धि-  
संभारम्, कृतयुगसहस्रैरिव कल्पितसंनिवेशम्, स्वर्गाब्धिदैरिव  
विहितरामणीयकम्, राजलक्ष्मीकोटिभिरिव कृतपरिग्रहं  
राजद्वारमगमत् ।

अभवच्चास्य जातविस्मयस्य मनसि—‘कथमिवेदमित्यप्र-  
माणं प्राणिजातं जनयतां प्रजासृजां नासीत्परिश्रमः, महाभूतानां  
वा परित्यजः, परमाणूनां वा परिच्छेदः, कालस्य वान्तः, आयुषो

वसन्तीति तथोक्तैः । दृतमण्डलैः, उदन्तवाहकवृन्दैः । उपास्यमानम्  
आश्रीयमाणम् । सर्वेति—प्रजापतीनाम्, विधातृणाम् । सर्वासाम्,  
प्रजानाम्, निर्माणभूमिमिव, उत्पत्तिक्षेत्रमिव ( नहि अन्यत्र स्थित्वा  
प्रजापतिः सर्वान् श्रद्धुं शक्तः ) लोकेति-लोकानाम्, स्वर्गमर्त्यपाताल-  
नाम्, त्रयं, तस्य सारोच्चयः, स्थिरांशराशिः तेन रचितम् । महाभारत-  
शतैरपि, असंख्यमहाभारतसदृशमहाकाव्यैरपि, अकथनीयः, अनिर्व-  
चनीयः, समृद्धीनां, सम्पदां सम्भारः, सञ्चयः यस्य तथोक्तम् । कृत-  
युगसहस्रैरिव, बहुतरसत्ययुगैरिव, कल्पितः, रचितः, सन्निवेशः, स्थानं  
यस्य तथा भूतम् । स्वर्गाब्धिदैरिव, दशकोटिसंख्यैः स्वर्गैरिव, विहितम्,  
अर्पितम्, रामणीयकम्, रम्यत्वं यस्य तथाभूतम् । राजेति—राज-  
लक्ष्मीणाम्, राजश्रीणाम्, कोटिभिरिव, लक्षशतैरिव, कृतपरिग्रहम्,  
कृताश्रयम् । राजद्वारमगमत् ।

अस्य बाणस्य, जातविस्मयस्य, प्रादुर्भूताश्चर्यस्य । प्रजासृजां,  
प्रजाकर्तृणाम् । महाभूतानाम्, क्षित्यप्तेजोवायूनाम् । सृष्ट्युपादान-  
कारणभूतानामितिभावः । व्युपरमः, शेषः । परिसमाप्तिः, निःशेषेण-

वा व्युपरमः, आकृतीनां वा परिसमाप्तिः' इति मेखलकस्तु दृग्देव द्वारपाललोकेन प्रत्यभिज्ञायमानः "तिष्ठतु तावत्क्षणमात्र-  
मत्रैव पुण्यभागी' इति तमभिधायाप्रतिहतः पुरः प्राविशत् ।

अथ स मुहूर्तादिव प्रांशुना, कर्णिकारगौरेण, वीध्रकञ्चु-  
कच्छन्नवपुषा, समुन्मिषन्माणिक्यपदकबन्धबन्धुरशस्तबन्ध-  
कृशावलग्ननेन, हिमशैलशिलाविशालवक्षसा, हरवृषककुदकूटवि-  
कटांसतटेन, उरसा चपलहृषीकहरिणकुलसंयमनपाशमिव हारं  
व्ययः । प्रत्यभिज्ञायमानः । सोऽयमिति - अवगम्यमानः । अप्रतिहतः,  
अनिवारितः ।

अथेत्यारभ्य पुरुषेणानुगम्यमानो निर्गत्य अवोचत् इति दृग्देवा-  
न्वयः । प्रांशुना, उपक्रायेन । कर्णीति - कर्णिकारं, तदाख्यकुसुम-  
भेदः, तद्वत् गौरः, शुभ्रः तेन । वीध्रेति - वीध्रेण, विमलेन (वीध्रन्तु-  
विमलात्मकम्, इत्यमरः) कञ्चुकं, वर्मणा, च्छन्नम्, आवृतं,  
वपुः, शरीरम् यस्य तथा विधेन । समुन्मिषदिति - समुन्मिषत्,  
सम् दीप्यमानम्, माणिक्यपदकम्, माणिक्यराजाधिकारचिह्नम्,  
तस्य बन्धेन, ग्रहणेन, बन्धुरम्, रम्यम्, यत् शस्तम्, काञ्चनमय-  
कटिसूत्रम्, तस्य बन्धेन, स्थापनेन, कृशम्, क्षीणम्, अवलग्नम्,  
मध्यं यस्य तेन । (मध्यमञ्चावलग्नञ्चमध्योऽस्त्री-इत्यमरः) हिमेति -  
हिमशैलः, हिमाचलः, तस्य शिलावत्, विशालं, प्रशस्तं, वक्षः यस्य  
तेन । हरेति - हरस्य, वृषः, तस्य ककुदम्, स्कन्धप्रष्टस्थमांसपिण्ड-  
विशेषः, तस्य कूटं, शिखरम् तद्वत् विकटः, समुन्नतः, अंसतटः, स्कन्ध-  
देशः यस्य तेन । उरसा, वक्षसा । चपलेति - चपलानि, लोलानि,  
हृषीकाणि, एकादशेन्द्रियाणि, हरिणकुलानीव, मृगयूथानीव, तेषां  
संयमनाय, बन्धनाय, पाशः, रज्जुः, तमिव हारम्, विभ्रता, दधानेन ।

विभ्रता, 'कथयतं यदि सोमवंशसंभवः सूर्यवंशसंभवो वा भूपति-  
रभूदेवंविधः' इति प्रष्टुमानीताभ्यां सोमसूर्याभ्यामिव श्रवण-  
गताभ्यां मणिकुण्डलाभ्यां समुद्रासमानेन, बृहद्वदनलावण्य-  
विसरवेणिकाक्षिप्यमाणैरधिकारगौरवादीयमानमार्गैरेव दिन-  
कृतः किरणैः प्रसादलब्धया विकचपुण्डरीकमुण्डमालिकयेव  
दीर्घया दृष्ट्या दूरादेवानन्दयता, नैष्ठुर्याधिष्ठानेऽपि प्रतिष्ठितेन  
पदे पदे प्रश्रयमिवाचनघ्रेण, मौलिना पाण्डुरमुष्णीषमुद्रहता,  
वामेन स्थूलमुक्ताफलच्छुरणदन्तुरत्सरुं करकिसलयेन कलयता  
कृपाणम्, इतरेणापनीततरलतां ताडनीमिव लतां शतकौर्म्भीं

सोमवंशसम्भवः, चन्द्रवंशोत्पत्तिः । सूर्यवंशसम्भवः, रविकुलजन्मनः ।  
बृहदिति—बृहताम्, महताम्, वदनलावण्यानाम्, मुग्वप्रभाणाम्,  
विसरः, विस्तार एव वेणिका, स्रोतः, तथा क्षिप्यमाणाः, निराक्रिय-  
माणाः तैः । अधिकारेति—अधिकारस्य, गौरवान्, सम्मानान्,  
दीपमानो मार्गो, येभ्यः तथोक्तैः । दिनकृतः, सूर्यस्य किरणैः, मयूरवैः,  
प्रसादः, प्रसन्नता, तेन लब्धया तथा, विकचपुण्डरीकमुण्डमालिकयेव,  
स्फुटितकमलस्रजेव, दीर्घया, विशालया, दृष्ट्या, लोचनेन । नन्द-  
यता, संतोषयता । नैष्ठुर्याधिष्ठानेऽपि, निष्ठुरस्य भवः नैष्ठुर्यम्, तस्य  
अधिष्ठानं तस्मिन् । पदे, अधिकारे, प्रतिष्ठितेन, प्रश्रयमिव, विनय-  
मिव अवनम्रेण, विनतेन, मौलिना, शिरसा, पाण्डुरम्, धवलम्,  
उष्णीषम्, शिरोवेष्टनम्, उद्रहता, धारयता । वामेन, सव्येन,  
स्थूलेति—करकिसलयेन, हस्तपल्लवेन । स्थूलानि, यानि, मुक्ता-  
फलानि, मौक्तिकानि तेषां यच्छुरणम्, विकाशः, तेन दन्तुरः, संजा-  
तदन्तः इव त्सरुः, खड्गमुष्टिप्रदेशः, यस्य तथा भूतम्, कृपाणां कलयता,  
धारयता । इतरेण, दक्षिणेन । अपनीतेति—अपनीता, दूरीकृता,

वेत्रयष्टिमुन्मृष्टां धारयता पुरुषेणानुगम्यमानो निर्गत्यावोचत्—  
एष खलु महाप्रतीहाराणामनन्तरश्चक्षुष्यो देवस्यपारियात्रनामा  
दौवारिकः । समनुगृह्णात्वेनमनुरूपया प्रतिपत्त्या कल्याणाभि-  
निवेशी' इति । दौवारिकः समुपसृत्य कृतप्रणामो मधुरया गिरा  
सविनयमभाषत—'आगच्छत । प्रविशत दर्शनाय । कृतप्रसादो  
देवः' इति । बाणस्तु 'धन्योऽस्मि, यदेवमनुग्राह्यं मां देवो  
मन्यते' इत्युक्त्वा तेनोपदिश्यमानमार्गः प्राविशदभ्यन्तरम् ।

अथ वनायुजैः, आरट्टजैः, काम्बोजैः, भारद्वाजैः, सिन्धुदेश-  
जैः, पारसीकैश्च, शोगैश्च, श्यामैश्च, पिञ्जरैश्च, हरिद्रिश्च,  
तित्तिरिकल्माषैश्च, पञ्चभद्रैश्च, मल्लिकार्जुनैश्च, कृत्तिकापिञ्जरैश्च,

तरलता, चपलता ताम् ताडनीम्, ताड्यतेऽनयेति ताम् लताम्, वल्लीम्,  
शातकौम्भीम्, स्वर्णमयीम्, उन्मृष्टाम्, अतिशयेन विशोधिताम्,  
धारयता । पूर्वेणान्वयः । महाप्रतीहाराणाम्, प्रधानद्वारपालानाम्,  
अनन्तरः, चक्षुष्यः, प्रियदर्शनः । अनुरूपया, समुचितया, प्रतिपत्त्या,  
आदरेण । कल्याणाभिनिवेशी, कल्याणो, शुभकर्मणि, अभिनिवेशः  
अस्यास्ति सः अभाषत, अवोचत् । कृतप्रसादोदेवः, कृतः, विहितः,  
प्रसादः, प्रसन्नतायेन सः देवः, राजाधिराजः । अथेत्यारभ्य तुरङ्गैः  
आरचितां मन्दुरां विलोकयन् इति उत्तरेणान्वयः ।

वनायुजैः—वनायुदेशोत्पन्नैः । आरट्टजैः, अरबदेशोद्भवैः ।  
कम्बोजैः, तद्देशजैः । भारद्वाजैः, भरद्वाजदेशजैः । सिन्धुदेशोद्भवैः ।  
पारसिकैः, पारस्यदेशभवैः । शोगैः, रक्तवर्णैः, श्यामैः, कृष्णवर्णैः,  
श्वेतैः, शुक्लवर्णैः । पिञ्जरैः, पिङ्गलैः । हरिद्रिः, हरिद्वर्णैः । तित्तिरिक-  
ल्माषैः, तित्तिरिपक्षिविशेषवत् विचित्रवर्णैः । पञ्चभद्रैः, पञ्चसु, अङ्केषु,  
मुखसहितेषु शफेषु, ( चतुर्षु इति भाव ) भद्राः, कल्याणदाः तैः ।

आयतनिर्मासमुखैः, अनुत्कटकर्णकोशैः, सुवृत्तश्लक्ष्णसुघटित-  
घण्टिकाबन्धैः, यूपानुपूर्वीवक्रायतोदग्रग्रीवैः, उपचयश्वसत्स्क-  
न्धसंधिभिः, निर्भुग्नोरःस्थलैः, अस्थूलप्रगुणप्रसृतैर्लोहपठकठि-  
नखुरमण्डलैः, अतिजवत्रुटनभयादनिर्मितान्त्राणीवोदराणि  
वृत्तानि धारयद्भिः उद्यद्द्रोणीविभज्यमानपृथुजघनैः, जगती-  
दोलायमानबालपल्लवैः, कथमप्युभयतो निखातदृढभूरिपाश-

मल्लिकाक्षैः, मितनेत्रप्रान्तैः । कृत्तिकापिञ्जरैः, ( तारकाकदम्बक-  
कल्पानेकविन्दुकल्माषितत्वचः ) इति लक्ष्णायुक्तैः । आयतेति—  
आयतानि, दीर्घाणि, निर्मासानि, प्रायेणास्थिमयानि मुखानि येषां  
तथोक्तैः । अनुत्कटः, कर्णकोशः, श्रवणपाशः येषां तैः । सुवृत्तेति—  
सुवृत्तः, सद्बर्तुलः श्लक्ष्णः, चिक्रणः, सुघटितः सुनिर्मितः, घण्टिका,  
क्षुद्रघण्टाः तासां बन्धो बन्धनं येषां तैः । यूपेति—यूपः, यज्ञस्तम्भः,  
तस्य अनुपूर्वी-अनुरुप्यम्, तथा वक्रा, आयता, विशाला, उद्ग्रा  
उन्नता, ग्रीवा, कण्ठं येषां तैः । उपचयेति—उपचयेन श्वयन्,  
स्फीततां गच्छन्, स्कन्धसन्धिर्येषाम् तैः । निर्भु-इति—निर्भुग्नम्,  
स्थूलतया बहिर्निर्गतम्, उरःस्थलम्, वक्षः येषां तैः । अस्थूलाः,  
स्वल्पमांसा, प्रगुणा, ऋजुः प्रसृता, जङ्घा येषां तैः । लोहेति—लोह  
पठीवत् कठिनम्, खुरमण्डलं, शफगोलं येषां तैः । अतिजवेति—  
अतिजवेन, अतिवेगेन, यत् त्रुटनं छेदः, तस्मात्, अनिर्मितानि  
अन्त्राणि, नाडीविशेषाः येषु तथोक्तानीव वृत्तानि, वर्तलानि  
उदराणि धारयद्भिः । उद्यदिति—उद्यती, उदयंयाती, द्रोणी,  
वाजिनां शोभाविशेषः तथा विभज्यमानानि व्यक्तीक्रीयमाणानि,  
पृथूनि जघनानि येषां तैः । जगतीति—जगत्यां, भूमौ दोलायमानाः  
वालाः, पुच्छलोमानि पल्लवा इव येषां तैः । उभयत-इति—उभयतः



संयमननियन्त्रितैः, आयतैरपि पश्चात्पाशबन्धप्रसारितैकांघ्रि-  
भिरायततरैरिवोपलक्ष्यमाणैः बहुगुणसूत्रप्रथितग्रीवागण्डकैः,  
आमीललोचनैः, दूर्वारसश्यामलफेनलवशबलान्दशनगृहीतमु-  
क्तान्फरफरितत्वचः कण्डूजुषः प्रतीकान्प्रचालयद्भिः, सालसव-  
लितवालधिभिः, एकशफविश्रान्तिस्त्रस्तशिथिलितजघनार्धैः,  
निद्रया प्रध्यायद्भिश्च, स्वलितहुङ्कारमन्दमन्दशब्दायमानैश्च,  
ताडितसुरधरणीरणितमुखरशिखरखुरलिखितद्मातलैर्घासम-

उभयोः पार्श्वयोः, निरवानः, प्रोतः, दृढः, कठिनः, भूरिः, प्रभूतः,  
पाशः, रज्जुः, तेन संयमनं, बन्धनं तेन नियन्त्रिताः, निरुद्धाः तैः ।  
अनायतैरपि—अविस्तरितावयवैरपि, पश्चान् पाशबन्धेऽपि प्रसा-  
रितः, एकः, अङ्घ्रि-पादः येषां तैः । अतएव आयततरैरिव, दीर्घतरैरिव,  
उपलक्ष्यमाणैः, दृश्यमानैः । बहुगुणेति—बहुगुणैः, अनेकवृत्तैः, सूत्रैः,  
प्रथितः, गुम्फितः, ग्रीवासु गण्डकः, भूषणभेदः येषां तैः । आमीले,  
ईषन्मुद्रिते, लोचने येषां तैः । दृष्टेति—दूर्वारसवत्, श्यामलाः, ये  
फेनलवाः, फेनविन्दवाः, तैः शवलान्, विचित्रान्, दशनैः, दन्तैः  
गृहीताः, धृताः, मुक्ताः, त्यक्ताः, लान्, फरफरिताः, पुनः पुनः ईषन्  
कम्पिताः त्वचः येषां तान् कण्डूजपः, कण्डूशालिनः, प्रतीकान्,  
अङ्गानि (अङ्गं प्रतीकोऽवयवोऽप्रघनः, इत्यमरः) प्रचालयद्भिः, कम्पयद्भिः ।  
सालसेति—सालमं, लघुयथास्यात्तथा वलिताः, कम्पिताः, वालधयः,  
पुच्छलोमानि येषां तैः । एकेति—एकशफेन, एकसुरेण, या विश्रान्तिः,  
तथा स्त्रस्तम्, पर्यस्तं, शिथिलितं जघनार्धं येषां तैः । प्रध्यायद्भिः,  
चिन्तयद्भिः । स्वलितेति—स्वलितेन, हुङ्कारेण मन्दं मन्दं यथा  
तथा शब्दायमानैः, ननद्भिः । ताडितेति—ताडिता या सुरधरणी,  
सुराधोभूः, तस्याः, रणितेन, शब्देन, मुखरं यत् शिखरम्, अग्रम्,

भिलषद्भिश्च, प्रकीर्यमाणयवसग्रासरसमत्सरोद्भूतक्षोभैश्च,  
 प्रकुपितचण्डचण्डालहुङ्कारकातरतरलतारकैश्च, कुङ्कुमप्र-  
 मृष्टिपिञ्जराङ्गतया सततसंनिहितनीराजनानलरक्ष्यमाणैरिवोप-  
 रिविततवितानैः, पुरः पूजिताभिमतदैवतैः, भूपालवल्लभैस्तुरंगै-  
 रारचितां मन्दुरां विलोकयन्, कुतूहलक्षिप्तहृदयः किञ्चिदन्तर-  
 मतिक्रान्तो हस्तवामेनात्युच्चतया निरवकाशमिवाकाशं कुर्वा-  
 णम्, महता कदलीघनेन परिवृतपर्यन्तं सर्वतो मधुकरमयी-  
 येषां ते खुरास्तैः लिखितं, यन् क्षमातलम्, भूतलं यैः तथा विधैः ।  
 प्रकीर्यमाणेति—प्रकीर्यमाणाः, प्रक्षीप्यमाणाः, यवप्रासः, वासकव-  
 लम्, तस्यरसे, स्वादे, यो मत्सरः, द्वेषः ( अन्यकोऽपि तुरगो नैनमा-  
 स्वादयतु इति धियेतिभावः ) तेनोद्भूतः, जन्तुः, क्षोभः, येषां तैः ।  
 प्रकुपितेति—प्रकुपितः, यः चण्डचण्डालः, चण्डाश्रपालः, तस्य  
 हुङ्कारेण, कातरतराः, अतिदीनाः, तरला, चपलाः, तारकाः, कनीनिकाः  
 येषां तैः । कुङ्कुमेति—कुङ्कुमैः, प्रमृष्टिः, प्रमार्जनम्, तेन पिञ्जराणि,  
 अङ्गानि येषां तद्भावः तत्ता तथा । सततेति—सततं, सन्निहितेन,  
 समीपस्थेनेतिभावः, नीराजनानलेन ( यात्रायां वाजिनां नीराजना  
 क्रियते ) इति शास्त्रात् नीराजनाग्निना रक्ष्यमाणाः तैरिव । उपरि,  
 विततः, विस्तृतः, वितानः, उल्लोचः येषां तैः पुरइति—पुरः, अग्रे,  
 पूजिता, अभिमता, अभिष्टा, देवता येषां तैः । भूपालवल्लभैः, राज-  
 प्रियैः, तुरंगैः, आरचिताम्, शोभिताम्, मन्दुराम्, अश्रशालाम्,  
 विलोकयन्, पश्यन् । ( वाजिशाला तु मन्दुरा, इत्यमरः ) कुतू-  
 हलेति—कुतूहलेन, आक्षिप्तम्, आकृष्टं, हृदयं यस्य सः । अति-  
 क्रान्तः, गतः । हस्तवामेन, करवामभागेन । निरवकाशम्, अवकाश-  
 रहितम् । परिवृतपर्यन्तं, वेष्टितपर्यन्तम् । मधुकरमयीभिः, भ्रमर-

भिर्मदस्रुतिभिर्नदीभिरिवापतन्तीभिरापूर्यमाणम्, आशामुख-  
विसर्पिणा वकुलवनानामिव विकसतामामोदेन लिम्पन्तं  
घ्राणेन्द्रियं दूरादव्यक्तमिभधृष्यागारमपश्यत् । अपृच्छच्च—  
'अत्र देवः किं करोति' इति । असावकथयत्—'एष खलु देव-  
स्यौपवाहो बाह्यं हृदयं जात्यन्तरित आत्मा बहिश्चराः प्राणा  
विक्रमक्रीडासुहृददर्पशात् इति यथार्थनामा वारणपतिः । तस्या-  
वस्थानमण्डपोऽयं महान्दृश्यते' इति । स तमवादीत्—'भद्र,  
श्रूयते दर्पशातः । यद्येवमदोषो वा पश्यामि तावद्धारणेन्द्रमेव ।  
अतोऽर्हसि मामत्र प्रापयितुम् । अतिपरवानस्मि कुतूहलेन'  
इति । सोऽभाषत—'भवत्वेवम् । आर्गच्छतु भवान् । को दोषः ।  
पश्यतु तावद्धारणेन्द्रम्' इति ।

गत्वा च तं प्रदेशं दूरादेव गम्भीरगलगर्जितोजितैर्वियति

व्याप्ताभिः । मदस्रुतिभिः, गजदानजलप्रवाहैः, आपतन्तीभिः, आवह-  
न्तीभिः । आशामुखविसर्पिणा, दिशासमक्षेविस्तारिणा । वकुलवना-  
नामिव, इत्याख्यकाननानामिव । आमोदेन, गन्धेन । लिम्पन्तं,  
पूरयन्तम्, धिष्ययागारम्, अवस्थानमन्दिरम् ( धिष्यंस्थाने गृहे-  
भेऽग्नौ "इत्यमरः" ) उपवाह्यः, क्रीडाहस्ती । जात्यन्तरितः, अन्यां  
जातिं गतः । विक्रमेति—विक्रमः, बलम्, एव क्रीडा तस्यां सुहृत्-  
सहायः । दर्पशातः, दर्पः, अहङ्कारं ( शत्रूणामिनिभावः ) शातयति,  
नाशयति तथोक्तः । वारणपतिः, गजेन्द्रः । अवस्थानमण्डपः, वास-  
गृहम् । अदोषः, दर्शने न दोषः । प्रापयितुं, नेतुम् अतिपरवान्,  
अतिशयेन पराधीनः । गम्भीरेति—गम्भीरेण, गलगर्जितेन, कण्ठ-  
निनादेन, । अर्जितानि, एकत्रीकृतानि, तैः । वियति, आकाशे ।  
चातकानां, कदम्बानि, वृन्दानि, तैः । भुवि, भूतले, भवननीलकण्ठ-

चातककदम्बकैर्भुवि च भवननीलकण्ठकुलैः कलकेकाकलकल-  
मुखरमुखैः क्रियमाणकलकोलाहलम्, विकचकदम्बसंवादि-  
मदसुरासौरभभरितभुवनम्, कायवन्तमिवाकालमेघकालम्,  
अविरलमधुबिन्दुपिङ्गलपद्मजालकितां सरसीमिवाभ्यवगाढां  
दशां चतुर्थामुत्सृजन्तम्, अनवरतमवतंसशङ्खैरामन्द्रकर्णताल-  
दुन्दुभिध्वनिभिः पञ्चमीप्रवेशमङ्गलारम्भमिव गायन्तम्, अवि-  
रतचलनचित्रिपदीललितलास्यलयैर्दोलायमानदीर्घदेहाभोगतया  
मेदिनीविदलनभयेन भारमिव लघयन्तम्, दिग्भित्तिटटेषु काय-

कुलैः, गृहमयूरसमूहैः । कलाः, मधुराः, केकाः, मयूरवाचः, तासां  
कलकलेन, मुखराणि, शब्दायमानानि येषां तैः । क्रियमाणाः, कलः,  
मधुरः, कोलाहलः, यत्र तथोक्तम् । विकचेति—विकचानां, प्रफुल्लानां,  
कदम्बानाम्, नीपपुष्पाणाम्, संवादिना, अनुकारिणा, मदः, दान-  
जलम् स एव सुरा, मद्यम्, तस्याः, सौरभेण, गन्धेन, भरितम्,  
भवनं येन तथोक्तम् । कायवन्तमिव, शरीरवन्तमिव, अकालमेघं,  
अविरलेति-अविरलाः, घनाः, ये मधुबिन्दवः, मदजलकणाः, तैः  
पिञ्जरं, पद्मानां, पद्माकराणां (पद्मे) तन्नामपुष्पाणां, जालकं, समूहः,  
जातमस्यामिति तथोक्तम् । अनवरतं, निरन्तरं, आमन्द्राः, ईषद्रम्भीराः,  
कर्णतालस्य, नियतसंचालितश्रवणस्य, दुन्दुभेरिव, ध्वनयः, शब्दाः  
तैः अवतंसशङ्खैः, कर्णभूषणीकृतशङ्खैः । अविरतेति—अविरतेन,  
अभ्रान्तेन चलनेन चित्रा, सुदृश्या या त्रिपदी, पादबन्धनी, तस्यां  
ललितं, सुन्दरं यत् लास्यं, नृत्यं, तस्य लयाः, वाद्याद्यनेकतानताः तैः ।  
दोलायमानेति—दोलायमानः, प्रेङ्खन्, दीर्घः, महान् देहस्य आभोगः,  
विस्तारः, यस्य तद्भावः, तत्ता तया । मेदिर्न ति—मेदिन्याः, पृथिव्याः,  
विदलनं, विदारणं तस्मात् यत् भयं तेन भारमिव लघयन्तम् ।

मिव कण्डूयमानम्, आहवायोदस्तहस्ततया दिग्धारणानि-  
वाह्यमानम्, ब्रह्मस्तम्भमिव स्थूलनिशितदन्तेन करपत्रेण  
पाटयन्तम्, अमान्तं भुवनाभ्यन्तरे बहिरिव निर्गन्तुमोहमानम्,  
सर्वतः सरसकिसलयलतालासिभिर्लेशिकैश्चिरपरिचयोपचितै-  
र्घनैरिव विक्षिप्तसशैवलविसविसरशवलसलिलैः सरोभिरिव  
चाधोरणैराधीयमाननिदाघसमयसमुचितोपचारानन्दम्, अपि  
च प्रतिगजदानपवनादानदूरोत्क्षिप्तेनानेकसमरविजयगणना-

दिगिति—दिगेव, भित्तिः, तस्याः, तटाः, आभोगाः, तेषु । कायमिव,  
अङ्गमिव कण्डूयमानम् । आहवाय, संप्रामाय । उदस्तः, उत्क्षिप्तः,  
हस्तः, शुण्डः येन तस्य भावः तत्ता तथा । दिग्धारणान्, दिग्गजान्  
आह्वयमानमिव, स्पर्द्धया आकारयन्नमिव । ब्रह्मस्तम्भमिव, ब्रह्माण्ड-  
मिव, स्थूलः, निशितः, तिद्धाः, दन्तः, तेन करपत्रेण, क्रकचेन,  
पाटयन्तमिव, विदारयन्तमिव । भुवनाभ्यन्तरे, अमान्तं, पर्याप्तु-  
मलभमानम्, अतएव, बहिः भुवनाद् बाह्यदेशे निर्गन्तुं, ईहमानम्,  
चेष्टमानम् । सरसा, रसयुताः, किसलयाः, पल्लवाः, यासां तथाविधाः  
याः लताः, व्रतत्यः, ताभिः लसन्ति, राजन्ति तथोक्तैः, लेशिकैः,  
घासिकैः, चिरपरिचयेन, चिरानुगत्या, उपचितैः, समाहूतैः, घनैरिव,  
मेघैरिव । विक्षिप्तेति—विक्षिप्तानि, विकीर्णानि, सशैवलानां,  
विसानां, मृणालानां, विसरेण, विस्तरेण, शवलानि, मिश्राणि,  
सलिलानि यैः, तथाभूतैः । आधोरणैः, हस्तिपालैः, अधीयमानः,  
उत्पाद्यमानः, निदाघसमयस्य, ग्रीष्मकालस्य, समुचितेन, उपयुक्तेन,  
उपचारणेन, सेवया, आनन्दः, यस्य तम् । प्रतिगजेति — प्रतिगजानां,  
प्रतिद्वन्द्वहस्तिनां, दानपवनस्य, मदसौरभवाहिनोमस्त-इत्यर्थः ।  
आदानेन, ग्रहणेन, दूरं, उत्क्षिप्तः, उद्धृतः तेन । अनेकेति—अने-

लेखाभिरिव बलिवलयराजिभिस्तनीयर्साभिस्तरङ्गितोदरेणाति-  
स्थवीयसा हस्तार्गलदण्डेनार्गलयन्तमिव सकलं सकुलशैल-  
समुद्रद्वीपकाननं ककुभां चक्रवालम्, एकं करान्तरार्पितेनोत्प-  
लाशेन कदलीदण्डेनान्तर्गतशीकरसिच्यमानमूलम्, मुक्तपल्लव-  
मिवापरं लीलावलम्बिना मृणालजालकेन समररसोच्चरोमाञ्च-  
कण्टकितमिवदन्तकाण्डं वहन्तम्, विसर्पन्त्या च दन्तकाण्डयुग-  
लकस्य कान्त्या सरःक्रीडास्वादितानीव कुमुदवनानि बहुधा  
वमन्तम्, निजयशोराशिमिव दिशामर्पयन्तम्, कुकरिकीटपाट-

केपां, समराणां, युद्धानां, विजयाः, तेषां गणना संख्यानां तस्याः  
लेखाभिरिव, लिपिभिरिव, बलिवलयराजिभिः, बलयाकारबलिश्रे-  
णिभिः, तनीयसीभिः, अतिक्षुद्राभिः । तरङ्गितं, भङ्गिमतं, उदरं यस्य  
तथोक्तेन । अतिस्थवीयसा, अतिस्थूलेन, हस्तार्गलदण्डेन, अर्गल-  
यन्तमिव, निरुन्धन्तमिव, ककुभां, चक्रवालम्, दिङ्मण्डलम् ।  
एकं दन्तकाण्डमित्यर्थः न्वयः । करान्तरार्पितेन, करस्य शुण्डस्य  
अन्तरे, मध्ये, अर्पितेन । उत्पलाशेन, उद्गतपत्रेण, कदलीदण्डेन,  
रम्भास्तम्भेन, अन्तर्गतैः, शीकरैः, जलकणैः, सिच्यमानं मूलं यस्य  
तथोक्तम् । मुक्तापल्लवमिव, मुक्ताफलकिसलयमिव । परं, अन्यम्,  
लीलावलम्बिना, लीलयावलम्बते इति तथोक्तेन । मृणालजालकेन,  
कमलसमूहेन । समरेति—समरे, युद्धे, यो रसः, तेन उच्चाः, उद्गताः,  
रोमाञ्चा एव कण्टकाः अस्येति तथोक्तम्, दन्तकाण्डं, दशनस्तम्भम्,  
वहन्तं, दधानम् । विसर्पन्त्या, विसरन्त्या, दन्तकाण्डयुगलस्य कान्त्या,  
प्रभया । सरःक्रीडेति—सरसि या क्रीडा, विहारः, तत्र आस्वादि-  
तानि, भुक्तानि तानीव कुमुदवनानि, कैरववृन्दानि, बहुधा, अनेकधा,  
वमन्तं उद्गिरन्तम् । निजयशोराशिभिरिव, स्वकीर्त्ति समूहमिव, दिशां,

नदुर्ललितान्सिंहानिवोपहसन्तम्, कल्पद्रुमदुकूलमुखपट्टमिव  
 चान्मनः कलयन्तम्, हस्तकाण्डदण्डोद्धरणलीलासु च लक्ष्य-  
 माणेन रक्तांशुकसुकुमारतलेन तालुनाकवलितानि रक्तपद्मवना-  
 नीव वर्षन्तम्, अभिनवकिसलयराशिमिवोद्विरन्तम्, कमलकव-  
 लपीतं मधुरसमिव स्वभावपिंगलेन वमन्तं चक्षुषा, चूतचम्प-  
 कलवलीलवंगं कक्कोलवन्त्येलालतामिश्रितानि ससहकाराणि  
 कर्पूरपूरपूरितानि पारिजातकवनानीवोपभुक्तानि पुरः करटा-  
 अर्पयन्तम्, क्षिपन्तं । कुकरीति—कुत्सिताः, करिणाः, हस्तिनः, ते  
 एवकीटाः, क्षुद्रप्राणिभेदाः, तेषां पाटनेन संहननेन, दुर्ललिताः दृष्टाः  
 तान् । कल्पद्रुमेति—कल्पद्रुमस्य दुकूलं, श्वेतपट्टवसनं, तदेव मुख-  
 पटः, तमिव, आत्मनः, स्वस्य धारयन्तं, कलयन्तम् । हस्तेति—  
 हस्तः, शुण्डः एव काण्डदण्डः, स्तम्भयष्टिः, तस्य उद्धरणानि तान्येव  
 लीलाः तामुलक्ष्यमाणेन दृश्यमानेन, रक्तांशुकसुकुमारतलेन, रक्त-  
 वसनकोमलतलेन, तालुना, तालुदेशेन, रक्तपद्मवनानि, रक्तकमल-  
 वृन्दानि, कवलितानि, भक्षितानि, वर्षन्तं, वमन्तं । अभिनवकिस-  
 लयराशिमिव, नूतनपल्लवसमूहमिव, स्वभावपिङ्गलेन, सहजदीपशिखा-  
 तुल्यवर्णानि, चक्षुषा, कमलानां कवलेन, ग्रासेन पीतं मधुरसमिव,  
 मकरन्दमिव, वमन्तं, वर्षन्तं । पुरः, अग्रे, करटाभ्यां, गण्डाभ्याम्,  
 (करटः स्यात् कटोगण्डः—इत्यमरः) बहलमदाऽऽमोदव्याजेन, प्रभूत-  
 दानवारिगन्धच्छलेन, चूतेति—चूतं, रसालं, चम्पकं, चम्पकपुष्पं,  
 लवली, एतन्नामवृक्षविशेषपुष्पम्, लवंगं, लवङ्गकलिका, कक्कोलं,  
 इत्याख्य तरोःफलम्, तद्वन्ति, एलालतामिश्रितानि, सफलैलावल्ली-  
 युक्तानि, ससहकाराणि अतिसौरभाम्रसहितानि । ( आम्रः चूतो रसा-  
 लोऽसौसहकारोऽति सौरभः—इत्यमरः ) कर्पूरपूरपूरितानि, कर्पूरा-

भ्यां बहलमदामोदव्याजेन विसृजन्तम्, अहनिंशं विभ्रमकृतह-  
स्तस्थितिभिरर्धखण्डितपुण्ड्रेक्षुकाण्डकण्डूयनलिखितैरलिकुल-  
वाचालितैर्दानपट्टकैर्विलभमानमिव सर्वकाननानि करिपतीनाम्  
अविरलोदविन्दुस्यन्दिना हिमशिलाशकलमयेन विभ्रमनक्षत्रमा-  
लागुणेन शिशिरीक्रियमाणम्, सकलवारेणन्द्राधिपत्यपट्टबन्ध-  
बन्धुरमित्रोच्चैस्तरां शिरो दधानम्, मधुर्मुहुः स्थगितापावृतदि-  
ङ्मुख्याभ्यां कर्णतालवृन्ताभ्यां बीजयन्तमिव भर्तृभक्त्या दन्त-  
पर्यङ्किकास्थितां राजलक्ष्मीम्, आयतवंशक्रमागतेन गजाधिप-

ख्यवृक्षस्यसुगन्धिमयानि, पारिजातकवनानि, पारिजाताख्यपुष्पाणां  
काननानि विसृजन्तमिव । विभ्रमेति—विभ्रमेण कृता हस्ते, शुण्डे,  
स्थितिः, यैः तादृशैः । अति—अर्द्धेर्द्धखण्डितः, भुग्नः, पुण्ड्रेक्षुकाण्डः  
▼ (गन्ना) तेन यत् कण्डूयनं, खर्जनं, तेन लिखितानि तैः । अलिकुलैः, मधु-  
करसमूहैः, वाचालितानि, मुखरितानि तैः । दानपट्टकैः, दानसनन्दपत्रैः,  
करिपतीनां, गजपतीनां, सर्वकाननानि, विलभमानमिव, स्ववशी-  
क्रियमाणमिव । अविरलेति—अविरलं, निरन्तरं, उदविन्दुस्यन्दिना,  
जलकण्ठाविणा, हिमशिलाशकलमयेन, तुहिनशिलाखण्डमयेन,  
विभ्रमेति—विभ्रमाय, शोभार्थं, या नक्षत्रमाला, सप्तविंशन्ति मौक्ति-  
कमाला, तस्याः, गुणेन । शिशिरीक्रियमाणम्, शीतलीक्रियमाणम् ।  
सकलेति—सकलानां वारगेन्द्राणां, गजेन्द्राणां, अधिपत्यं, प्रभुत्वं,  
तस्य पट्टबन्धः, तेन बन्धुरं, रम्यं, उच्चैस्तरां, अत्युच्चं, शिरः, मस्तकं,  
दधानं, धारयन्तं । स्थगितेति—स्थगितं, आच्छादितं, अपावृतं,  
प्रकटितं, दिङ्मुखं याभ्यां तथाविधाभ्यां, कर्णाविव तालवृन्ते ताभ्याम्  
'दन्तेति—दन्त एव पर्यङ्किका, क्षुद्रपर्यङ्कः, राजलक्ष्मीं, नृपश्रियं  
बीजयन्तमिवेति—अन्वयः । आयतेति—आयतः, दीर्घः, वंशः पृष्ठ-



त्यचिन्हं चामरेणैव चलता बालधिना विराजमानम्, स्वच्छ-  
शिशिरशोकरच्छलेन दिग्विजयपीताः सरित इव पुनःपुनर्मुखेन  
मुञ्चन्तम्, क्षणमवधानदाननिस्पन्दीकृतसकलावयवानामन्यद्वि-  
रदडिण्डिमाकर्णनबलनानामन्ते दीर्घशीत्कारैः परिभवदुःख-  
मिवावेदयन्तम्, अलब्धयुद्धमिवात्मानमनुशोचन्तम्, आरोहा-  
धिरूढिपरिभवेन लज्जमानमिवाङ्गुलीलिखितमहीतलम् मदं  
मुञ्चन्तम्, अवशागृहीतमुक्तकवलकुपितारोहारटनानुरोधेन मद-

दण्डः, कुलञ्चतस्यक्रमेण आगतः, परस्परयाप्राप्तः, गजाधिपत्यं तस्य  
चिह्नं, लक्षणां, तेन, बालधिना, पुच्छेन, विराजमानं, शोभमानम् ।  
स्वच्छेति—स्वच्छानां, विमलानां, शिशिराणां, शीतलानां, शीक-  
राणां, अम्बुकणानां, छलं तेन, दिशां विजये, पीताः ताः सरितः, नदीः,  
मुञ्चन्तं, त्यजन्तं । अवधानेति—अवधानस्य, मनोनिवेशस्य, दानेन,  
निष्पंदीकृताः, निश्चलीकृताः, सकलाः, अवयवाः यासु तासाम् ।  
अन्येषां, द्विरदानां, गजानां, डिण्डिमाकर्णने, पट्टहनादश्रवणे या  
बलनाः, चालनाः, तासाम् । अन्ते, अवसाने, दीर्घशूत्कारैः, दीर्घकालं  
व्याप्य निर्गतैः, “शीत्” इत्याकारकाव्यक्तशब्दविशेषैः । परिभवदुःख-  
मिव पराभववेदमिव, आवेदयन्तम्, प्रकटयन्तम् । अलब्धयुद्धमिव,  
अप्राप्तरणमिव आत्मानं, स्वं, अनुशोचयन्तं, चिन्तयन्तम् ।  
आरोहेति—आरोहस्य, अधिरूढिः, अधिरोग्गं, सैवपरिभवः, तेन  
लज्जमानमिव अङ्गुलीभिः, करिकराप्रावयवैः, ( पक्षे ) करशाखाभिः  
लिखितं, खण्डितं, महीतलं, भूतलं येन तथोक्तम्, (लज्जितानां भूलेखनं  
स्वभाव इतिभावः ) मदं दानवारि, गर्वञ्च, मुञ्चन्तं, त्यजन्तं । अव-  
ज्ञेति—अवज्ञया, अवहेलया, आदौगृहीता पश्चात् मुक्ताः ये कवलाः  
नैः कुपितः, रुष्टः यः आगोहः, हस्तिपालः तस्य आरोहना अनुरोधेन ।

तन्द्रोनिमीलितनेत्रत्रिभागम्, कथं कथमपि मन्दमन्दमनादरा-  
दाददानं कवलान्, अवजग्धतमालपल्लवस्तुतश्यामलरसेन प्रभू-  
ततया मदप्रवाहमिव मुखेनाप्युन्मृजन्तम्, दलन्तमिव दर्पेण,  
श्रसन्तमिव शौर्येण, मूर्च्छन्तमिव मदेन, व्रुट्यन्तमिव तारुण्येन,  
द्रवन्तमिव दानेन, वलान्तमिव बलेन, माद्यन्तमिव मानेन,  
उद्यन्तमिवोत्साहेन, ताम्यन्तमिव तेजसा, लिम्पन्तमिव लाव-  
ण्येन, सिञ्चन्तमिव सौभाग्येन, स्निग्धं नखेषु, परुषं रोमविषये,  
गुरुं मुखे, सच्छिष्यं विनये, मृदुं शिरसि, दृढं परिचयेषु,

मदेति—मदेन या तन्द्रा, निन्द्रा तथा निमीलितः, नेत्रयोः त्रिभागः  
यस्मिन् तद् यथा तथा, कवलान्, आसान्, आददानं गृह्णन्तं । अव-  
जग्धेति—अवजग्धानां, स्वदितानां, तमालपल्लवानां स्तुताः, निर्ग-  
लिताः, श्यामलाः रसाः यस्मात् तथोक्तेन, मुखेन, वदनेन प्रभूततया,  
प्राचुर्येण, मदप्रवाहमिव, दानवारिश्रोत इव उत्मृजन्तं, मुञ्चन्तं,  
दलन्तमिव, स्वयंभिद्यमानमिव, श्रसन्तमिव, जीवन्तमिव, व्रुट्यन्त-  
मिव, स्खलन्तमिव, द्रवन्तमिव, स्रवन्तमिव । दानेन, मदेन । वलगन्त-  
मिव, विचेष्टमानमिव । माद्यन्तमिव, मत्ततां प्रकटन्तमिव । उद्यन्त-  
मिव, उदयमानमिव, ताम्यन्तमिव, क्षिप्यन्तमिव । लिम्पन्तमिव,  
संयोजयन्तमिव । सिञ्चन्तमिव, वर्षन्तमिव । नखेषु, स्निग्धं, प्रीतिवान्,  
रोमविषये, परुषं, प्रीतिशून्यः, यः, स्निग्धः, कथं, परुषः, इति विरोधः ।  
स्निग्धं, चिकणाः, परुषं, कठोरः, इति परिहारः । मुखे गुरुः, विनये  
शिष्यम्, यः, गुरुः, सकथं शिष्यः, इति विरोधः । गुरुः विस्तीर्णः, सच्छिष्यः,  
सुशीलः, इति परिहारः । शिरसि मृदुं, परिचयेषु दृढं, यः कोमलः  
कथं स कठोरः, इति विरोधः, मृदुः, नम्रः । महन्तं जनं वीक्ष्य शिरसा-  
नतो भवति, इति परिहारः । स्कन्धबन्धे, ग्रीवामूले ह्रस्वं, लघु आयुषि

ह्रस्वं स्कन्धबन्धे, दीर्घमायुषि, दरिद्रमुदरे, सततप्रवृत्तं दाने, बलभद्रं मदलीलासु, कुलकलत्रमायत्ततासु, जिनं क्षमासु, वह्नि-  
वर्षं क्रोधमोक्षेषु, गरुडं नागोद्धृतिषु, नारदं कलहकुतूहलेषु, शुष्काशनिपातमवस्कन्देषु, मकरं वाहिनीक्षोभेषु, आशीविषं  
दशनकर्मसु, वरुणं हस्तपाशाकृष्टिषु, यमवागुरामरातिसंवेष्टनेषु,  
कालं परिणतिषु, राहुं तीक्ष्णकरग्रहेषु, लोहिताङ्गं वक्रचारेषु,

दीर्घः, यो लघुः कथं सदीर्घः, इति विरोधः । दीर्घः चिरञ्जीवीतिपरिहारः ।  
उदरे दरिद्रं दाने सततप्रवृत्तं, यः दरिद्रः कथं स दानकर्त्ता, इति विरोधः ।  
दरिद्रं, कृशं दाने मदवारिणि इति परिहारः । बलभद्रं, बलरामं,  
मदलीलासु मदः, दानवारि, सुरामत्तता च तल्लीलासु । कुलकलत्रं,  
कुलाङ्गना, आयत्तासु, वाध्यतासु, बलभद्रकुलकलत्रयोः मदमत्तता-  
वाध्यतयाचविरोधः । जिनं, बुद्धदेवम्, वह्निवर्षम्, अग्निवृष्टिम्, क्रोध-  
मोक्षेषु, कोपप्रसरेषु ( अत्र शमप्रधानजिनवह्निवर्षयोः क्षमाक्रोधमोक्ष-  
योश्चविरोधः ) नागोद्धृतिषु, नागानां, प्रतिपक्षहस्तिनां, सर्पाणां, च  
उद्धृतिषु, निपातनेषु । नारदं देवर्षिं नारं जलं ददानीति तथोक्तं च  
कलहकुतूहलेषु, विवादकौतुकेषु, युद्धव्यापारेषु च शुष्काशनिपातं,  
वृष्टिं विना वज्रपतनं, अवस्कन्देषु, शत्रूणां आक्रमणेषु । मकरं,  
जलजन्तुभेदं वाहिनीक्षोभेषु, शत्रुसेनादलनेषु, नद्युद्वेलकरणेषु च ।  
आशीविषं, सर्पं दशनकर्मसु, दन्तव्यापारेषु । वरुणं, जलाधिपतिं,  
हस्त एव पाशः हस्तपाशः तेन आकृष्ट्यः, आकर्षणानि तासु । यम-  
वागुराम्, यमस्य वागुरा, प्राणबन्धनजलं, ताम् । अरातिसंवेष्टनेषु,  
शत्रुसमाक्रमणेषु । कालं, यमं कृष्णवर्णाञ्च परिणतिषु, अन्तकर्मसु,  
निर्यग्दन्तप्रहारकर्मसु, शुभाशुभकर्मविपाकेषु च । तीक्ष्णकरग्रहेषु,  
तीक्ष्णेन, तीव्रेण, करेण, शुण्डेन ग्रहणानि, आक्रमणानि, ( पक्षे )

अलातचक्रं मण्डलभ्रान्तिविज्ञानेषु, मनोरथसंपादकं चिन्तामणि-  
पर्वतकं विक्रमस्य, दन्तमुक्ताशैलस्तम्भनिवासप्रासादमभिमान-  
स्य, घण्टाचामरमण्डनमनोहरमिच्छासंचरविमानं मनस्वितायाः,  
मदधारादुर्दिनान्धकारं गन्धोदकधारागृहं क्रोधस्य, सकाञ्चन-  
प्रतिममहानिकेतनमहंकारस्य, सगण्डशैलप्रस्त्रवणं क्रीडापर्वतम-  
वलेपस्य, सदन्ततोरणं वज्रमन्दिरं दर्पस्य, उच्चकुम्भकूटाट्टाल-

तीक्ष्णकरः, सूर्यः, तस्य ग्रहणानि, प्रासाः, तेषु । लोहिताङ्गं, मङ्गल-  
ग्रहं, वक्रचारेषु, कुटिलगतिषु । अलातचक्रं, तदाख्यं काव्यबन्धविशे-  
षम्, उल्मुकमण्डलं च, मण्डलभ्रान्तिविज्ञानेषु, मण्डलाकारेण भ्रान्ति,  
भ्रमणं तस्यां विज्ञानानि, विशिष्टानि ज्ञानानि परिचयाः, इत्यर्थः, तेषु ।  
मनोरथसम्पादकम्, अभिमतसिद्धिदम् । चिन्तामणिः, चिन्तितवस्तु-  
प्रदरत्नविशेषः तस्यपर्वतम् । दन्तेति—दन्तावेव मुक्ताशैलस्तम्भौ,  
मौक्तिकपाषाणस्तम्भौ यत्र तादृशम्, निवासप्रासादम्, निवासभवनम्  
अभिमानस्य । घण्टेति—घण्टाश्च, चामराणि च तेषां मण्डनेन  
मनोहरं, मनोज्ञम् । इच्छया यत् संचरणां, गमनं तदेवविमानं यस्य-  
तम् । मनस्वितायाः, वीरतायाः । मदधाराभि, दुर्दिनं, अतएव,  
अन्धकारं, तमसि युक्तं, गन्धोदकधारागृहं, सुवासित जलधारागृहं,  
क्रोधस्य, कोपस्य । सकाञ्चनेति—काञ्चनप्रतिमायुक्तम् । महानिके-  
तनम्, विशालमन्दिरम्, अहंकारस्य । सगण्डेति—गण्डः, कपोलः  
एव शैलः तत्र प्रस्त्रवणम्, निर्भरः तेनसहवर्तमानम्, अवलेपस्य,  
गर्वस्य । सदन्तेति—दन्तावेव तोरणाः, बहिर्द्वारम् (पक्षे) दन्तरचित-  
तोरणाः तेन सहवर्तमानम् । वज्रमन्दिरम्, पाषाणगृहम् । उच्चेति—  
उच्चौ, उन्नतौ, कुम्भौ एव कूटौ यस्य तत् अट्टालकम्, हर्म्यं तद्वत्  
विकटं, भयंकरं, संचारि, जङ्गमं, गिरिदुर्गम्, पर्वतरूपम् महागृहम्,

कविकटं संचारि गिरिदुर्गं राज्यस्य, कृतानेकबाणविवरसहस्रं  
लोहप्राकारं पृथिव्याः शिलीमुखशतभां कारितं पारिजातपादपं  
भूनन्दनस्य, तथा च संगीतगृहं कर्णतालताण्डवानाम्, आपा-  
नमण्डपं मधुपमण्डलानाम्, अन्तःपुरं शृङ्गारभरणानाम्,  
मदनोत्सवं मदलीलालास्यानाम्, अक्षुण्णप्रदोषं नक्षत्रमाला-  
मण्डलानाम्, अकालप्रावृट्कालं मदमहानदीपूरस्रवानाम्,

( यत्र शत्रुः गन्तुमसमर्थः ) कृतेति—कृतानि, अनेकानि, बाणविवर-  
सहस्राणि, बाणप्रक्षेपार्थं छिद्रसहस्राणि, यत्र तत् लोहप्राकारम्,  
लोहनिर्मितप्राचीरम् । शिलीति—शिलिमुखाणां, मधुकराणां, बाणाणां  
वा शनैः, भंकारिनः, निनादितः, विद्धो वा, तम् । पारिजातपादपं,  
देवतरुविशेषः । भूनन्दनस्य, पृथ्वी एव नन्दनवनम्, तस्य, ( पक्षे )  
पृथिवीं नन्दयति पालनेन प्रीणयति इति भूनन्दनः, राजा तस्य ।  
कर्णतालताण्डवानां, श्रवणतालनर्तनानाम्, संगीतगृहम् । आपान-  
मण्डपं, पानगृहं, मधुपमण्डलानां, मधुकरवृन्दानाम्, ( पक्षे ) मद्यपा-  
यिनाम्, शृङ्गारभरणानाम्, शृङ्गाराः, सिन्दूरादिभिः, रचनाविशेषाः,  
एवाभरणानि तेषाम् ( पक्षे ) शृङ्गाररसभूषणानाम् । अन्तःपुरम् ।  
मदेति—मदयतीति, मदनः, मदकरः, तस्योत्सवं ( पक्षे ) कामोत्सवं,  
मदलीलालास्यानाम् । अक्षुण्णेति—अक्षुण्णः, पूर्णः, मेघावरणरहितः,  
प्रदोषः, निशामुखं ( पक्षे ) अक्षुण्णः, पूर्णः, प्रदोः प्रकृष्टहस्तः यस्य  
तथोक्तम् ( भुजः बाहूप्रवेष्टेदोः “इत्यमरः ) नक्षत्रमालाः, तारकराज्यः,  
मण्डलानि, गोलाकारवेष्टनानि, ( पक्षे ) नक्षत्रमालाः, सप्तविंशति-  
मौक्तिकहाराः एव मण्डलानि तेषाम् अकालप्रविष्टकालं, असमयवर्णा-  
समयम् । मदेति-मदा एव महानद्यः तासांपूराः प्रवाहाः तेषां पल्लवाः,  
गतिविशेषाः तेषाम् । अलीकशरत्समयं, मिथ्याशरत्कालं, सप्तच्छद-

अलीकशरत्समयं सप्तच्छदवनपरिमलानाम्, अपूर्वहिमागमं  
शीकरनीहाराणाम्, मिथ्याजलधरं गर्जिताडम्बराणां दर्पशात-  
मपश्यत् ।

आसीच्चास्य चेतसि—‘नूनमस्य निर्माणे गिरयो ग्राहिताः  
परमाणुताम् कुतोऽन्यथा गौरवमिदम् । आश्चर्यमेतत् । विन्ध्य-  
स्यदन्तावादिवराहस्य करः’ इतिविस्मयमानमेनं दौवारिको-  
ऽब्रवीत्—‘पश्य ।

मिथ्यैवालिखितां मनोरथशतैर्निःशेषनष्टां श्रियं

चिन्तासाधनकल्पनाकुलधियां भूयो वने विद्विषाम् ।

आयातः कथमप्ययं स्मृतिपथं शून्यीभवच्चेतसां

नागेन्द्रः सहते न मानसगतानाशागजेन्द्रानपि ॥ ४ ॥

वनस्य, सप्तपर्णवनस्य, परिमलाः, गन्धाः, मदजलानमितिभावः, तेषाम् ।  
अपूर्वहिमागमं, नूतनहेमन्तं, शीकरनिहाराणां, जलकरूपशिशिरा-  
णाम् । मिथ्याजलधरं, अलीकपयोदं, गर्जिताडम्बराणां, गर्जितान्येव  
आडम्बराः तेषाम् दर्पशातमपश्यत् ।

निर्माणे, सृष्टौ, ग्राहिताः, प्रापिताः, गौरवं, गुरुत्वं, आश्चर्यं,  
चमत्कृतिः, आदिवराहस्य, वराहरूपेणावतीर्णस्य विष्णोरित्यर्थः ।  
विस्मयमानं, चमत्कुर्वाणम् ।

मिथ्येति—निःशेषेण, नष्टा, तां । श्रियं, राजलक्ष्मीं । मनो-  
रथेति—मनोरथानां, मनोकामनानां, शतैः । मिथ्यैव, मृषैव, आलि-  
खिताम्, चित्रितां मनसिसोचितामित्यर्थः । भूयः, पुनः । चिन्तेति—  
चिन्तया, (पुनः निजश्रीप्राप्त्यर्थं कमुयायं करिष्यामः) इति सोचनेन,  
साधनानां, युद्धसामग्रीणां, कल्पनया आकुला धीर्येषां तथाविधानाम् ।  
अतएव शून्यीभवच्चेतसाम्, शून्यीभवत्, (निराशीभवदित्यर्थः) चेतो

तदेहि । पुनरप्येनं द्रक्ष्यसि । पश्य तावदेवम्' इत्यभिधीयमानश्च तेन मदजलपङ्क्तिः कपोलपट्टपतितां मत्तामिव मदपरिमलेन मुकुलितां कथमपि तस्माद्दृष्टिमाकृष्य तेनैव दौवरिकेणोपदिश्यमानवर्त्मा समतिक्रम्य भूपालसहस्रसंकुलानि त्रीणि कक्ष्यान्तराणि चतुर्थे मुक्तास्थानमण्डपस्य पुरस्तादजिरे स्थितम्, दूरादूर्ध्वस्थितेन प्रांशुना कर्णिकारगौरेण व्यायामव्यायतवपुषा

येषां तादृशानाम् । वने द्विपां, वनवासिनां, शत्रूणाम् । कथमपि, महता कष्टेन, स्मृति पथम् आयातः, (अहो तेनैवारण्यपतिना पराजिताः वयमितिभावः) स्मर्यागतः तथाविधः अयं नागेन्द्रः, गजपतिः, मानसं चित्तं, सरोवरविशेषश्चगताः तान्, आशाः, तृष्णाः, अभिलाषाः, इत्यर्थः । ता एव गजेन्द्राः, आशाः, दिशः, दिग्गजाश्च तान् न सहते न क्षमते (एतस्यस्मरणोऽरीणां पुनरुद्धारस्य आशाऽपिनोदयति इतिभावः) अत्र आशासु गजेन्द्राणामभेदारोपात् रूपकालङ्कारः, शार्दूलविक्रीडित वृत्तम् ॥ ४ ॥ मदेति—मदजलेन, पङ्क्तिः, मलिनः, कपोलपट्टः, मण्डनट, तत्र पतिताम् । मदेति—मदपरिमलेन, मदगन्धेन, मुकुलितां, मत्तामिव, क्षीवामिव, दृष्टिं, लोचनम्, आकृष्य, निर्वर्त्य । भूपालेति—भूपालसहस्राणि, नृपसहस्राणि, तैः संकुलानि, व्याप्तानि कक्षान्तराणि । चतुर्थे इत्यारभ्य चक्रवर्त्तिनं हर्षम् अद्राक्षीत्, इत्यनेनान्वयः । सत्येति—सत्यस्य, सत्यनिरूपणस्य, यत् आस्थानमण्डपं, सभागृहं, तस्य विचारालयस्येतिभावः । पुरस्तात्, अप्रतः, अजिरे, अंगने, स्थितं, तिष्ठन्तं, दूरात्, ऊर्ध्वस्थितेन, दण्डायमानेन, प्रांशुना, उन्नतकायेन, कर्णिकारः, पुष्पभेदः, तद्वन् गौरेण, शुभ्रेण । व्यायामेति—व्यायामेन, व्यायतं विभक्तावयवं, वपुः शरीरं यस्य तेन । शस्त्रिणा, शस्त्रपणिना । शरीरपरिचारकः, शरीरसेवकः, तादृशः

शस्त्रिणा मौलेन शरीरपरिचारकलोकेन पङ्क्तिस्थितेन कार्त-  
स्वरस्तम्भमण्डलेनेव परिवृतम्, आसन्नोपविष्टविशिष्टेष्टलोकम्,  
हरिचन्दनरसप्रक्षालिते तुषारशीकरशीतलतले दन्तपाण्डुरपादे  
शशिमये इव मुक्ताशैलशिलापट्टशयने समुपविष्टम्, शयनीय-  
पर्यन्तविन्यस्ते समर्पितसकलविग्रहभारं भुजे, दिङ्मुखविस-  
र्पिणि देहप्रभाविताने विततमणिमययूखे धर्मसमयसुभगे सर-  
सीव मृदुमृणालजालजटिलजले सराजकं रममाणम्, तेजसः

लोकस्तेन । कार्तेति—कार्तस्वरं, स्ववर्णं, तस्यस्तम्भमण्डलेन,  
स्तम्भनिवहेन, ( स्वर्णं सुवर्णं रुक्मं कार्तस्वरम् “इत्यमरः ) परिवृतं,  
परिच्छादितम् । आसन्नेति—आसन्ने समीपे, उपविष्टाः, स्थिताः,  
विशिष्टाः, सम्भ्रान्ताः, इष्टाः, अभिलषिताः लोकाः यस्य तम् ।  
हरिचन्दनेति—हरिचन्दनस्य, मलयजस्य, यः, रसः, द्रवः, तेन,  
प्रक्षालिते, विधौते । तुषारेति—तुषारशीकरवत् शीतलं, तलं यस्य  
तथोक्ते । दन्तेति—दन्तवत्, पाण्डुरौ, श्वेतौ, पादौ, चरणौ यस्य  
तथाविधे । शशिमये इव, चन्द्रमये इव, मुक्ताशैलस्य, मैक्तिकपर्वतस्य,  
शिलापट्ट एव शयनं, शय्या तस्मिन् । समुपविष्टम् । शयनीयेति—  
शयनीयस्य, शय्यातलस्य, पर्यस्ते, प्रान्तभागे, विन्यस्तः, निहितः,  
तस्मिन् । भुजे, करे । समर्पितेति—समर्पितः, निहितः, सकलस्य,  
विग्रहस्य, शरीरस्य, भारं येन तम् । दिङ्मुखेति—दिशां, मुखानि,  
विसर्पति, व्याप्नोति तथाविधे, देहप्रभाविताने, अङ्गकान्तिविस्तारे ।  
विततेति—वितताः, विस्तृताः, मणीनां, मयूरवाः, किरणाः, यत्र  
तस्मिन्, धर्मसमयसुभगे, ग्रीष्मकालरमणीये । मृद्विति—मृदुभिः,  
कोमलैः, मृणालजालैः, विससञ्चयैः, जटिलानि, जालानि यत्र तस्मिन् ।  
सराजकं, राजगणसहितम्, रममाणां, विहरन्तं, केवलैः, तेजसः,



परमाणुभिरिव केवलैर्निर्मितम्, अनिच्छन्तमपि बलादारोप-  
यितुमिव सिंहासनम्, सर्वावयवेषु सर्वलक्षणैर्गृहीतम्, गृही-  
तब्रह्मचर्यमालिङ्गितं राजलक्ष्या, प्रतिपन्नासिधाराधारण-  
व्रतम-विसंवादिनं राजपिम्, विषमराजमार्गविनिहितपदरख-  
लनभियेव सुलग्नं धर्मं, सकलभूपालपरित्यक्तेन भीतेनेव लब्ध-  
वाचा सर्वात्मना सत्येन सेव्यमानम्, आसन्नवारविलासिनी-  
प्रतियातनाभिश्चरणनखपातिनीभिर्दिग्भिरिव दशभिः प्रणम्य-

प्रतापस्य, प्रमाणुभिः, निर्मितं, सृष्टम् । अनिच्छन्तं, इच्छारहितम्,  
सर्वावयवेषु, हस्तपादादिषु, सर्वलक्षणैः, शुभ चिह्नैः, गृहीतं, युक्तम् ।  
गृहीतं, अवलम्बितं, ब्रह्मचर्यं येन तम् । राजलक्ष्याः, नृपश्रियाः,  
आलिङ्गितम् । प्रतिपन्नेति—प्रतिपन्नं, अवलम्बितम्, असिधारा-  
धारणव्रतं, खड्गग्रहणव्रतं, विसंवादी, विरुद्धवक्ता स न तं । विषमेति—  
विषमे, दारुणे, नतोन्नतरूपे च, राजमार्गे, राजनीतौ, राजपथे च  
विनिहितस्य, अर्पितस्य, पादस्य, स्वलनभियेव, धर्मे सुलग्नम् । सकलेति—  
सकलैः, भूपालैः, परित्यक्तः, तेन भीतेनेव लब्धः, गृहीता वाक् तेन ।  
सर्वात्मना, सर्वस्वरूपेण, सत्येन, सेवमानं, परिचर्यमाणम् । आस-  
न्नेति—आसन्नानां, निकटस्थितानां, वारविलासिनीनां, वेश्यानां,  
प्रतियातनाभिः, प्रतिच्छायाभिः, चरणनखपातिनीभिः, दशभिः,  
दिग्भिरिव, प्रणम्यमानं, अभिवन्द्यमानम्, दीर्घैः, आयतैः, दिगन्त-  
पातिभिः, दिगन्तगामिभिः, लोकपालानां, इन्द्रादीनां, कृताकृतमिव,  
कार्याकार्यमिव प्रत्यक्षवेक्षमाणम्, परिपश्यन्तम् । मणीति—मणि-  
पादपीठस्य, पृष्ठे, उपरि, प्रतिष्ठिताः पतिताः रक्षिताश्च कराः,  
किरणाः, हस्तश्च यस्य तेन, दिवसकरेण, सूर्येण, उपरीति—उपरि-  
गमने, ऊर्ध्वगमने, या अभ्यनुज्ञा, अनुमतिः, तां मृग्यमाणमिव, प्रार्थ-

- मानम्, दीर्घेर्दिगन्तपातिभिर्दृष्टिपातैर्लोकपालानां कृताकृतमिव प्रत्यवेक्षमाणम्, मणिपादपीठपृष्ठप्रतिष्ठितकरेणोपरिगमनाभ्य-  
नुज्ञां मृग्यमाणमिव दिवसकरेण, भूषणप्रभासमुत्सारणबद्धपर्य-  
न्तमण्डलेन प्रदक्षिणीक्रियमाणमिव दिवसेन, अप्रणमद्भिर्गिरि-  
भिर्गपि दूयमानं, शौर्योष्मणा फेनायमानमिव चन्दनधवलं  
लावण्यजलधिमुद्वहन्तमेकराज्योर्जितेन, निजप्रतिबिम्बान्यपि  
नृपचक्रचूडामणिधृतान्यसहमानमिव दर्पदुःखासिकया चामरा-  
निलनिभेन बहुधेव श्वसन्तीं राजलक्ष्मीं दधानम्, सकलमिव  
चतुःसमुद्रलावण्यमादायोत्थितया श्रिया समुपश्लिष्टम्, आभ-  
रणप्रभाजालजायमानानीन्द्रधनुःसहस्राणीन्द्रप्राभृतप्रहितानि

- मानमिव । भूषणेति — भूषणानाम्, अलंकाराणां, प्रभाभिः, किरणैः,  
समुत्सारणेन, सन्नाडनेन, वद्धं, धृतं, पर्यन्तेषु, मण्डलं, गोलं, येन  
तथोक्तेन । प्रदक्षिणीक्रियमाणम्, वेष्ट्यमानम् । दिवसेन, दिनेन ।  
अप्रणमद्भिः, प्रणानिमकुर्वद्भिः, गिरिभिः, पर्वतैरपि, दूयमानमिव,  
सन्तप्यमानमिव । शौर्योष्मणा, बलोष्मणा, फेनायमानमिव । एकेति—  
एकराज्येन, ऊर्जितः, तस्य, भावः, एकराज्योर्जितंतेन । लावण्यजलधि,  
सौन्दर्याब्धि, उद्वहन्तम् । नृपचक्रैः, राजमण्डलैः, चूडामणिभिः,  
शिरोरत्नैः, धृतानि, गृहीतानि, निजप्रतिबिम्बानि, असहमानमिव,  
अक्षममानमिव । दर्पदुःखासिकया, अहंकारजशोककृपाणेन, चामरा-  
निलनिभेन, चामरमरुतव्याजेन, बहुधा श्वसन्तीं, राजलक्ष्मीं, दधा-  
नम् । सकलं । चतुरिति — चतुर्णां, समुद्राणां समाहारः चतुस्समुद्रम्  
तस्यलावण्यं तत् । आदाय, गृहीत्वा, उत्थितया, आविर्भूतया, श्रियाः,  
लक्ष्याः, समुपश्लिष्टमिव, समालिङ्गितमिव । आभरणेति—आभरणानां  
प्रभाजालेन, दिप्तिसमूहेन, जायमानानि, उत्पद्यमानानि, इन्द्रधनुषां,

विलभमानमिव राज्ञां संभाषणेषु परित्यक्तमपि मधु वर्षन्तम् काव्य-  
कथास्वपीतमप्यमृतमुद्वमन्तम्, विस्त्रम्भभाषितेष्वनाकृष्टमपि  
हृदयं दर्शयन्तम्, प्रसादेषु निश्चलामपि श्रियं स्थाने स्थाने  
स्थापयन्तम्, वीरगोष्ठीषु पुलकितेन कपोलस्थलेनानुरागसं-  
शमिवोपांशु रणश्रियः शृण्वन्तम्, अतिक्रान्तसुभटकलहालापेषु  
स्नेहवृष्टिमिव दृष्टिमिष्टे कृपाणे पातयन्तम्, परिहासस्मितेषु  
गुरुप्रतापभीतस्य राजकस्य स्वच्छमाशयमिव दशनांशुभिः

इन्द्रचापानाम्, सहस्राणि, इन्द्रप्रभृतप्रहितानि, इन्द्रेणा, प्राभृतेन,  
उपोढकत्वेन, प्रहितानि, प्रेषितानि । विलभमानमिव, प्रापमाणमिव ।  
राज्ञां, सम्भाषणेषु, समालपनेषु परित्यक्तम् । मधुवर्षन्तम्, मधुरसवमन्तं  
काव्यकथासु, अपीतमपि, अनास्वादितं, अमृतं, पीयूषं, उद्वमन्तम् ।  
विस्त्रम्भभाषितेषु विश्वस्ताऽलापेषु, अनाकृष्टमपि, अगृहीतमपि, हृदयं,  
मनोऽभिप्रायं, दर्शयन्तं, प्रकटयन्तम्, प्रसादेषु, प्रसन्नतासु, निश्चला-  
मपि, स्थिरामपि, श्रियं, लक्ष्मीं, स्थाने, योग्ये, स्थापयन्तम् । वीर-  
गोष्ठीषु, वीरसमाजेषु, पुलकितेन, रोमाञ्जितेन, कपोलस्थलेन,  
गण्डदेशेन, उपांशु, रहसि रणश्रियाः, संग्रामलक्ष्म्याः अनुरागसंदेश-  
मिव शृण्वन्तम्, आकर्णयन्तम् । अतिक्रान्तेति-अतिक्रान्ताः, अतीताः,  
सुभटानां सुयोद्धृणां, कलहाः तेषां आलापाः कथा तेषु, इष्टेकृपाणे,  
स्नेहवृष्टिमिव, स्नेहवर्षणमिव, दृष्टिं, लोचनं पातयन्तम् । परिहासस-  
मितेषु, नर्महासेषु, गुरूणां, महता, प्रतापेन, तेजसां, भीतस्य, व्रस्तस्य,  
राजकस्य, राजचक्रस्य, दशनांशुभिः, दन्तकिरणैः, स्वच्छं, निर्मलं,  
आशयं अभिप्रायं कथयन्तम् । सकलेति—सकलानां; लोकानां, जनानां,  
हृदयेषु स्थितमपि न्याये, नीतिमार्गे तिष्ठन्तं, वर्तमानम्, यः सर्वलोकहृदि-  
स्थः कथं स एकत्र तिष्ठतीति विरोधः । नहि अन्याय्यमाचरतीति परिहारः ।

कथयन्तम्, सकललोकहृदयस्थितमपि न्याये तिष्ठन्तम्, अगोचरे गुणानामभूमौ सौभाग्यानामविषये वरप्रदानानामशक्ये आशिषाममार्गे मनोरथानामतिदूरे दैवस्यादिस्थुपमानानामसाध्ये धर्मस्यादृष्टपूर्वं लक्ष्म्या महत्वे स्थितम्, अरुणपादपल्लवेन सुगतमन्थरोरुणा वज्रायुधनिष्ठुरप्रकोष्ठपृष्ठेन वृषस्कन्धेन भास्वद्विम्बाधरेण प्रसन्नावलोकितेन चन्द्रमुखेन कृष्णकेशेन वपुषा सर्वदेवतावतारमिवैकत्र दर्शयन्तम्, अपि च मांसलमयू-

गुणानां, विद्यावित्यादीनां, अगोचरे, अविषये । सौभाग्यानां, अभूमौ, अस्थाने, वरप्रदानानां, अविषये, अगोचरे, आशिषां, अशक्ये, असाध्ये, मनोरथानां, अतिदूरे, उपदिश्यमानानां, सादृश्य, बोधकानाम्, असाध्ये, साधयितुमशक्ये, धर्मस्य, ( कर्त्तरिपृष्ठी ) अदृष्टपूर्वं, प्रागदृष्टे, लक्ष्म्यामहत्वे, उत्कर्षे । अरुणेति—अरुणः, रक्तः, पादपल्लवः, चरणकिसलय, यस्य तेन (पक्षे) अरुणस्य, सूर्यसारथ्यः, पादपल्लवेन । सुगतेति—सुष्ठु, गतं, गमनं, ययोः तथाभूतौ मन्थरौ, मृदुगामिनौ, उरु यस्य तेन (पक्षे) सुगतः, बुद्धः तस्य मन्थरः, मन्दगामी उरुः तेन । वज्रेति—वज्रं, कुलिशमेव आयुधं, अस्त्रविशेषः तद्वत् निष्ठुरं, कठिनं, प्रकोष्ठः, करस्यमणिबन्धभागः, पृष्ठं च यस्य तेन (पक्षे) वज्रायुधः, इन्द्रः तस्य निष्ठुरं प्रकोष्ठः, पृष्ठं तेन । वृषस्कन्धेन, बलिवर्दीसेन (पक्षे) वृषस्य, धर्मस्य स्कन्धस्तेन । भास्वदिति—भास्वान्, दिप्यमानः, बिम्बमिवाधरो यस्य (पक्षे) भास्वतः, सूर्यस्य बिम्बमिवाधरः तेन । प्रसन्नेति—प्रसन्नं, निर्मलं, अवलोकितं, दर्शनं यस्य तेन, (पक्षे) प्रसन्नः, आशुतोषः (शिवः) तस्य अवलोकितं, दर्शनमिव तेन । चन्द्रमुखेन, कृष्णकेशेन, कृष्णबालेन (पक्षे) श्रीहरेः केशेन, वपुषा, शरीरेण, सर्वदेवतावतारमिव । मांसलेति—मांस-

खमालामलिनितमहीतले महति महाहं माणिक्यमालामण्डित-  
मेखले महानीलमये पादपीठे कलिकालशिरसीव सलीलं विन्य-  
स्तवामचरणम्, आक्रान्तकालियफणाचक्रवालं बालमिव पुण्ड-  
रीकाक्षम्, क्षौमपाण्डुरेण चरणनखदीधितिप्रतानेन प्रसरता  
महीं महादेवीपट्टबन्धेनेव महिमानमारोपयन्तम्, अप्रणतलोकपा-  
लकोपेनेवातिलोहितौ सकलनृपतिमौलिमालास्वतिपीतं पद्म-

लाभिः, महतीभिः, मयूरवानां, किरणानां मालाभिः, समूहैः, मलि-  
नितम्, मलयुक्तम्, महीतलं येन तथोक्ते । महतीति—महति, महाहं,  
महामूल्ये, माणिक्येति—माणिक्यमालया, मण्डिता, अलङ्कृता,  
मेखला, नितम्बभागः, (मध्यभागः, इत्यर्थः) यस्य तादृशे । महानील-  
मये, महानीलमणिनिर्मिते, कलिकालशिरसि इव, कलिमूर्द्धनि इव,  
सलीलं, सविलासं, विन्यस्तेति—विन्यस्तः, निहितः, वामचरणः,  
येन तथोक्तम् । आक्रान्तेति—आक्रान्तं, व्याप्तं, कालियस्य, नाग-  
विशेषस्य, फणाचक्रवालं, फणमण्डलं येन तथोक्तम्, बालं, शिशुं-  
पुण्डरीकाक्षम्, श्रीकृष्णमिव, (पद्मे) पुण्डरीके, श्वेतपद्मे इव अक्षिणी  
यस्य तथोक्तम् । क्षौमपाण्डुरेण, क्षौमं, श्वेतपट्टम्, तद्वत् पाण्डुरः,  
धवलः तेन । चरणेति—चरणनखानां, दीधितिप्रतानेन, मयूरव-  
विस्तारेण, महीं, पृथ्वीं, प्रसरता, व्याप्नुवता । महादेवीति—महा-  
देवी, तस्याः पट्टबन्धः, क्षौमाच्छादनविशेषः, तेनेव महिमानं, महत्वं,  
आरोपयन्तम् । अप्रणतेति—नप्रणताः, अप्रणताः ते च ते लोक-  
पालाश्चेति अप्रणतलोकपालाः तेषु कोपः, क्रोधस्तेनेव, अतिलोहितौ,  
अतिरक्तौ अतएव । सकलेति—सकलानां, समप्राणां, नृपतीनां,  
राज्ञां मौलिमालासु, मुकुटराजिषु, अतिपीतम्, अतिशयेन, गृहीतं,  
पद्मरागरत्नानां, तदाख्यमणीनां, आतपमिव, वमन्तौ, उद्गिरन्तौ ।

\* रागरत्नातपमिव वमन्तौ सर्वतेजस्विमण्डलास्तमयसंभ्यामिव धारयन्तावशेषराजककुसुमशेखरमधुरसस्रोतांसीव स्रवन्तौ समस्तमामन्तसीमन्तोत्तंसस्रक्सौरभभ्रान्तैर्ध्रमरमण्डलैरमित्रोत्त-  
माङ्गैरिव मुहूर्तमप्यविरहितौ संवाहनतत्परायाः श्रियो विकचर-  
कपङ्कजवनवासभवनानीव कल्पयन्तौ जलजशङ्खमीनमकरसना-  
थतलतया कथितचतुरम्भोधिभोगचिह्नाविव चरणौ दधानम्,

सर्वेति—सर्वेषां तेजस्विमण्डलानां, वीरसमूहानां, ( सूर्यादीनामिति-  
भावः ) अस्तमयसन्ध्यामिव, नाशप्राप्तिरूपसायंकालमिव, अस्तगमन  
सन्ध्याकालमिव च धारयन्तौ दधानौ । अशेषेति—अशेषाणां,

समस्तानां, राज्ञां कुसमानि पुष्परचितानि इति भावः, यानि शेख-  
राणि, शिराभूषणानि, तेषां मधुरसाः, मकरन्दरसाः तेषां श्रोतांसीव

• प्रवाहानिव, स्रवन्तौ, वर्षन्तौ । समस्तेति—समस्तानां, सामन्तानां,  
अधिश्रराणाम् (सामन्तः स्यादधीश्वरः—इत्यमरः) सीमन्ताः, संयताः,  
केशाः तेषां, उक्तासाः, मण्डनानि याः स्रजः, मालाः, तासां सौरभेण,  
सुगन्धेन, भ्रान्तानि, घूर्णमानानि तैः । ध्रमरमण्डलैः, मधुकरवृन्दैः,  
अमित्रोत्तमांगैः, शत्रुशिरोभिः, अविरहितौ, युक्तौ । संवाहनेति—  
संवाहनं, शरीरमर्दनरूपासेवा तस्मिन् तत्परा, रता, तस्याः श्रियः,  
लक्ष्म्याः । विकचेति—विकचानि, प्रफुल्लानि, रक्तपङ्कजवनानि,  
रक्तकमलकाननानि, एव वासभवनानि तानीव कल्पयन्तौ, रचयन्तौ ।  
जलजेति—जलजं, कमलं, शङ्खः, कम्बुः, मीनः, मत्स्यः, मकरः,  
जलजीवभेदः, तैः, सनाथं, युक्तम्, तलं ययोः तयोर्भावः तत्ता  
तया । कथितेति—कथितं, प्रकटितं, चतुर्णाम्, अम्भोधीनां, साग-  
• राणां, भोगचिन्हं, भोगलक्षणं याभ्यां तथाभूतामिव चरणौ, पादौ,  
दधानं, धारयन्तम् । दिङ्नागेति—दिङ्नागस्य, दिग्गजस्य, दन्तौ,

दिङ्नागदन्तमुसलाभ्यामिव विकटमकरमुखप्रतिबन्धबन्धुरा-  
भ्यामुद्वेललावण्यपयोनिधिप्रवाहाभ्यामिव फेनाहितशोभाभ्यां  
कल्पचन्दनद्रुमाभ्यामिव भोगिमण्डलशिरोरत्नरश्मिरज्यमानमू-  
लाभ्यां हृदयारोपितभूभारधारणमणिक्यस्तम्भाभ्यामूरुदण्डाभ्यां  
विराजमानम् , अमृतफेनपिण्डपाण्डुना, मेखलामणिमयूखख-  
चित्तेन, नितम्बबिम्बव्यासङ्गिना, विमलपयोधौतेन, नेत्रसूत्रनिवे-

मुसलौ, ताभ्यामिव । विकटेति—विकटः, उत्कटः, यो मकरस्य,  
जलजीवभेदस्य, मुखमिव प्रतिबन्धः, तेन बन्धुरौ, उन्नतानतौ ताभ्यां  
( बन्धुरस्नून्नतानतम्—इत्यमरः ) ( पक्षे ) विकटः, यो मकरमुखः,  
मकरमुखाकृति भूषणविशेषः, स एव प्रतिबन्धः तेन बन्धुरौ, रम्यौ  
ताभ्याम् । उद्वेलेति—उद्वेलः, उच्छलन्, वेलातिक्रान्तश्च यः लावण्य-  
पयोधिः, लावण्यसागरः, तस्य प्रवाहाविव स्रोतसीव, ताभ्याम् ।  
फेनेति—फैनैः, आहिता, जनिता, यथाः, ताभ्याम् । भोगीति—  
भोगीनां, नृपाणाम्, सर्पाणां च ( भोगी भुजङ्गमेऽपि स्यात् ग्रामपात्रे-  
नृपेषुमान्—इत्यमरः ) मण्डलस्य, वृन्दस्य, शिरोरत्नानि, तेषां  
रश्मिभिः, मयूरवैः, रज्यमाने, अलङ्कृत्यमाणे, मूले, पादमूले,  
वृक्षमूले च यथाः ताभ्याम् । हृदयेति—हृदयं, चित्तं, तत्र, आरोपितः,  
यो भूभारः, तस्य धारणे, मणिक्यस्तम्भौ ताभ्याम् । उरुदण्डाभ्यां  
विराजमानम् । अमृतेति—अमृतस्य, फेनपिण्डः, फेनराशिः तद्वत्  
( पक्षे ) फेनपिण्डैः, पाण्डुः, धवलः, तेन । मेखलेति—मेखला, काञ्ची,  
तत्र ये मणयः, रत्नानि ( पक्षे ) मेखलासु, नितम्बेषु । मन्दरस्येति—  
मन्दरस्य ये मणयः, तेषां मयूरवैः, किरणैः, खचितं, तेन नितम्ब-  
बिम्बसङ्गिना, नितम्बमण्डलसंसक्ततेन, ( पक्षे ) कटितटव्यापिना ।  
विमलेति—विमलैः, स्वच्छैः, पयोभिः, जलैः, ( पक्षे ) दुग्धैः, धौतेन,

- शशोभिनाधरवाससा वासुकिनिर्मोकेणैव मन्दरं द्योतमानम्, अघनेन, सतारागणैर्नोपरिकृतेन द्वितीयाम्बरेण भुवनाभोगमिव भासमानम्, इभपतिदशनमुसलसहस्रोल्लेखकठिनमसृणेनापर्या-  
साम्बरप्रथिम्ना विविधवाहिनीसंज्ञोभकलकलसंमर्दसहिष्णुना कैलासमिव महता स्फटिककतटेनोरुणोरः कपाटेन राजमानम्,

क्षालितेन । नेत्रेति—नेत्रस्य, वस्त्रविशेषस्य ( नेत्रं मथिगणो वस्त्रभेदे मूले द्रुमस्य च इति मेदिनी ) सूत्राणां, तन्तूनां, निवेशेन, रचनया, ( पक्षे ) नेत्रं, मन्थनरज्जुः, तस्य सूत्राणां, निवेशेन, आधानेन, शोभते इति तथोक्तेन । अधरवाससा, परिधानवस्त्रेण । वासुकिनिर्मोकेणैव, वासुकेः, नागराजस्य, निर्मोकेणैव, कञ्चुकेनेव । मन्दरं, तदाख्यं पर्वतं, द्योतमानं, राजमानं, अघनेन, सूक्ष्मेण, घनः, मेघः, तद्रहितेन च । सतारागणैर्न, ताराः, सूत्रबिन्दवः, नक्षत्राणि च तेषां गणाः, समूहः तत्सहितेन । उपरिकृतेन, उपरिधृतेन, ( पक्षे ) ऊर्ध्ववर्तिना । द्वितीयेति—द्वितीयेन, अम्बरेण, वसनेन, गगनेन च । भुवनाऽऽभोगमिव, भुवनाऽऽयामामिव, भासमानं, विराजमानम् । इभपतीति—इभपतेः, गजपतेः, दशना एव मुसलानि, तेषां सहस्राणां, उल्लेखेन, निरवननेन, कठिनं दृढं मसृणां, कोमलं च ( पक्षे ) चिक्कणं तेन । अपर्याप्तेति—अपर्याप्तं, यत् अम्बरं, आकाशं, तस्यैव प्रथिमा तेन ( पक्षे ) अपर्याप्ते अम्बरे प्रथिमा, विस्तारो यस्य तेन । विविधेति—विविधानां, बहुविधानां, वाहिनीनां, चमूनां, संज्ञोभे, समवाये, यः कलकलः, कोलाहलः, तेन संमर्दः, संक्लेशः ( पक्षे ) वाहिनीनां, नदीनां, संज्ञोभे, यः कलकलः, तेन सम्मर्दः, तं सहितुं शीलमस्येति तथोक्तेन । उरुणा, महता, उरः कपाटेन, वक्षस्थलरूप कपाटेन । महता, स्फटिककतटेन कैलासमिव, एतदाख्यपर्वतमिव विराजमानम् ।



श्रीसरस्वत्योरुदोवदनोपभोगविभागसूत्रेणैव पातितेन शेषेणैव च तद्भुजस्तम्भविन्यस्तसमस्तभूभारलब्धविश्रान्तिसुखप्रसुप्तेन हारदण्डेन परिवेष्टितकंधरम्, जावितावधिगृहीतसर्वस्वमहादानदीक्षाचारेणैव हारमुक्ताफलानां किरणनिकरेण प्रावृतवक्षःस्थलम्, अजजिगीषया बालैर्भुजैरिवापरैः प्ररोहद्भिर्बाहूपधानशायिन्याः श्रियाः कर्णोत्पलमधुरसधारासंतानैरिव गलद्भिर्भुज-

श्रीसरस्वत्योरिति- श्रीसरस्वत्योः, लक्ष्मीवाग्देव्योः, उरोवदनयोः, यथा क्रमेण लक्ष्म्या उरसः वाग्देव्या वदनस्येतिभावः, उपभोगः, सम्भोगः तस्य विभागसूत्रं, सीमाबन्धनसूत्रम्, तेनेव पातितेन, पराजयेनेतिभावः । तद्भुजेति—तस्य, हर्षस्य भुजः, एवस्तम्भः, तस्मिन् विन्यस्तः, यः समस्तः, भूभारः, पृथ्वीभारः, तेन लब्धा, प्राप्ता, या विश्रान्तिः, विश्रामः, तथा सुखं यथा तथा प्रसुप्तः, निद्रितः तेन शेषेण, अनन्तनागेनेव । हारदण्डेन, हारयष्टिना, परिवेष्टिता, आलिङ्गिता, कन्द्रा, ग्रीवा यस्य तं । जीवितेति—जीवितं, जीवनं, अवधिः, शेषो येषां तानि, गृहीतानि, यानि, सर्वाणि स्वानि, धनानि, तेषां महादानं, तस्मिन् या दीक्षा, व्रतधारणनियमविशेषः, तस्याः चीरं, कौपीनम्, तेनेव । हारेति—हारस्य, जालमालायाः, मुक्तानां, मौक्तिकानां, किरणाः, मयूरवाः तेषां निकरेण, समूहेन । प्रावृतेति—प्रावृत्तं, आच्छादितं, वक्षःस्थलं, येन यस्य वा तम् । अजेति—न जायते इति अजः, विष्णुः, जिगीषा, जयेच्छा तथा (अजाविष्णु हरच्छायाः इत्यमरः) बालैः, नवैः, प्ररोहद्भिः, जायमानैः, भुजैरिव । बाहूपधानेति—बाहूरिव, उपधानं, उपवर्हः तत्र शायिन्याः, श्रियाः, लक्ष्म्याः । कर्णोत्पलेति—कर्णोत्पलस्य, अवतंसभूतकमलस्य, मधुरसधाराणां, मकरन्दप्रवाहाणां, सन्तानैरिव, समूहैरिव, गलद्भिः, क्षरद्भिः, भुजजन्मनः,

- \* जन्मनः प्रतापस्य निर्गमनमार्गैरिवाविर्भवद्विरुद्धैः केयूररत्न-  
किरणदण्डैरुभयतः प्रसारितमणिमयपद्मवितानमिव माणिक्य-  
महीधरम्, सकललोका लोकमार्गार्गलेन चतुर्दधिदरिद्रेषखा-  
तशिलाप्राकारेण सर्वराजहंसबन्धवज्रपञ्चरेण भुवनलक्ष्मीप्रवेश-  
यङ्गलमहामणितोरणेनातिदीर्घदोर्दण्डयुगलेन दिशां दिक्पालानां  
च युगपदायतिमपहरन्तम्, सौदर्यलक्ष्मीचुम्बनलोभेन कौस्तु-  
भमणेरिव मुखावयवतां गतस्याधरस्य गलता रागेण पारिजात-

- बाहुजनितस्य, प्रतापस्य, तेजसः, निर्गमनमार्गैरिव । आविर्भवद्विः,  
प्रकटयद्विः, अरुणैः, रक्तैः । केयूरेति—केयूररत्नानां, अङ्गदस्थमणीनां,  
किरणा एव दण्डा स्तैः । प्रसारितेति—प्रसारितौ, मणिमयौ,  
पद्मवितानौ, विस्तृतपद्मौ, यस्य तथोक्तम् । माणिक्यमहीधरं, माणि-  
\* क्यरत्ननिर्मितपर्वतम् । सकलेति—सकलानां, लोकानां, आलोकः,  
उद्योतः, तस्य मार्गः, पन्था, तस्य अर्गलः तेन । चतुरिति—चतुर्णां,  
उदधीनां, समुद्राणां, सम्बन्धी, परिच्छेपः, परिवेष्टनमेव, खानानि,  
परिरवाः, तेषां शिलाप्राकारः पाषाणनिर्मितं ( प्राचीरमित्यर्थः ) तेन ।  
सर्वेति—सर्वेषां, राजहंसानां, नृपश्रेष्ठानां, बन्धे, बन्धने, वज्रपिञ्जरं,  
(पाषाणनिर्मितपिञ्जरमित्यर्थः) तेन । भुवनेति—भुवनानां, लक्ष्म्याः,  
प्रवेशस्य मंगलं, महामणितोरणं, अनर्घ्यमणिनिर्मितवहिर्द्वारं तेन ।  
अतिदीर्घेति—अतिदीर्घं, अत्यायतं, दोर्दण्डयुगलं, भुजदण्डद्वयं तेन  
युगपत्, समकालं, आयतिं, वैर्घ्यं, प्रभावञ्च अपहरन्तं, नाशयन्तम् ।  
सौदर्येति—सौंदर्या, सहोदरा, या लक्ष्मीः, श्रीः तस्याः चुम्बनाय,  
लोभः तेन । कौस्तुभमणेरिव, (क्षीरसागरोत्पन्नतया सहोदरस्येवेत्यर्थः)  
\* मुखावयवतां, वदनाङ्गतां, गतस्य, प्राप्तस्य, अधरस्य, गलता, स्वता,  
रागेण, लौहित्येन, पारिजातपल्लवरसेनेव, पारिजातदेवतरुकिसल्य

पल्लवरसेनेष सिञ्चन्तं दिङ्मुखानि, अन्तरान्तरा सुहृत्परिहास-  
स्मितैः प्रकीर्यमाणविमलदशनशिखाप्रतानैः प्रकृतिमूढाया राज-  
श्रियाः प्रज्ञालोकमिव दर्शयन्तम्, मुखजनितेन्दुसंदोहागतानि  
कुमुदिनीवनानीव प्रेषयन्तम्, स्फुटधवलदशनपङ्क्तिः कुमु-  
दवनशङ्काप्रविष्टां शरज्ज्योत्स्नामिव विसर्जयन्तम्, मदिरामृत-  
पारिजातगन्धगर्भेण भरितसकलककुभा मुखामोदेनामृतमथन  
दिवसमिव सृजन्तम्, विकचमुखकमलकर्णिकाकोशेनानवरत-  
मापीयमानश्वाससौरभमिवाधोमुखेन नासावंशेन, चक्षुषः क्षीर

द्रवेणोव, दिङ्मुखानि, सिञ्चन्तं, चालयन्तम् । अन्तरान्तरा, मध्येमध्ये ।  
सुहृदिति—सुहृद्भिः, सह ये परिहासाः, तेषु स्मितानि, मन्दहासाः  
तैः । प्रकीर्यमाणेति—प्रकीर्यमाणाः, विक्षिप्यमाणाः, विमलाः,  
दशनकिरणानां, दन्तमयूरवानां, शिखाप्रतानाः, अञ्चिनिचयाः, येषु  
तथोक्तैः । प्रकृतिमूढायाः, स्वभावमुग्धायाः, राजश्रियाः, नृपलक्ष्याः ।  
प्रज्ञाप्रलोकमिव, ज्ञानद्युतिमिव दर्शयन्तम् । मुखेति—मुखं, जनितः  
यः इन्दुसन्देहः तेन आगतानि, कुमुदिनीवनानीव, प्रेषयन्तं, इन्दुरयं  
नेति कृत्वा विसर्जयन्तम् । स्फुटेति—स्फुटधवला, या दशनपङ्क्तिः,  
तया कृता, जनिता, या कुमुदवनशङ्का, तया प्रविष्टां, ( मुखाम्भ्यन्तर-  
मितिभावः ) शरज्ज्योत्स्नां, शरत्कालिककौमुदीमिव, विसर्जयन्तं,  
( नैतानि कुमुदवनानीति कृत्वा त्यजन्तम् ) मदिरेति—मदिरामृत-  
वत् यः पारिजातगन्धः, सगर्भं यस्य तेन । भरितसकलककुभाः, सर्व-  
दिक्प्रसारिणेति यावत्, मुखामोदेन, वदनसौरभेण, अमृतमथनदिवस-  
मिव, पियूषमन्थनदिनमिव, सृजन्तं, जनयन्तम् । विकचेति—विकचं,  
प्रफुल्लं, मुखं, कमलमिव तस्य कर्णिकाकोशः, बीजकोशस्तेन  
( कर्णिका करिहस्ताग्रे ऽङ्गवरोटे कर्णभूषणे इति मेदिनी ) अधोमुखेन,

स्निग्धस्य धवलस्र्मा दिङ्मुखान्यपूर्ववदनचन्द्रोदयोद्वेलक्षीरो-  
 दहावितानीव कुर्वाणम्, विमलकपोलफलकप्रतिबिम्बतां  
 चामरग्राहिणीं विप्रहिणीमिव मुखनिवासिनीं सरस्वतीं दधानम्,  
 अरुणेन चूणामणिशोचिषा सरस्वतीर्ष्याकुपितलक्ष्मीप्रसादनल-  
 भेन चरणालक्तकेनैव लोहितायितललाटतटम्, आपाटलांशुत-  
 न्त्रीसंतानवलयिनीं कुण्डलमणिकुटिलकोटिबालवीणामनवरत-  
 चलितचरणानां वादयतामुपवीणयतामिव स्वरव्याकरणविवेक-  
 नताननेन, नासिकारूपवेणुना, अनवरतं निरंतरम्, आपीयमानम्,  
 आघ्रायमाणं आसस्य, मौरभं, येन तथोक्तम् । क्षीरेति—क्षीरवत्  
 स्निग्धं तस्य चक्षुषः धवलस्र्मा, श्वैत्येन, दिङ्मुखानि, अपूर्वः, वदन-  
 मेव चन्द्रः तस्य उदयेन उद्वेलः, वेलायामुच्छलितः, यः क्षीरोदः, तेन  
 लावितानीव । विमलोति—विमले, कपोलफलके, गण्डनटे, प्रति-  
 बिम्बिता, प्रतिफलिता ताम् । विप्रहृणीमिव, मूर्तिमतीमिव । सरस्वतीं,  
 वाग्देवीं, दधानम् धारयन्तम् । अरुणेन, रक्तेन । चूडेति चूडामणोः,  
 शिरोरत्नस्य, शोचिषा, अर्चिषा । सरस्वतीति—सरस्वत्यां, ईर्ष्या,  
 द्वेषः, तथा कुपिता या लक्ष्मीः, तस्याः प्रसादनं, चरणप्रणिपातेन  
 सान्त्वनं, तेन लग्नं, संसक्तं, तेन चरणालक्तकेन । लोहितेति—लोहि-  
 तायितः, अरुणितः, ललाटः, यस्य तथोक्तम् । आपाटलेति—आपा-  
 टलाः, ईषद्रक्ताः, अंशवः, मयूरवाः एव तन्त्रीसन्तानाः, तन्त्रीसङ्घाः,  
 तेषां वलयः, मण्डलं विद्यतेऽस्याः ताम् । कुण्डलेति—कुण्डलयोः,  
 कर्णभूषणयोः, ये मणयः तेषां कुटिलाः, भङ्गीमती, कोटिः, शिखा,  
 सा एव बालवीणा, सप्ततन्त्री ताम् । अनवरतेति—अनवरतं, निर-  
 न्तरं, चलिताः, चरणाः, येषां तथोक्तानां । उपवीणयतां, वीणया  
 उपगायतां तेषामिव । स्वरेति—स्वराः, निषादादयः, व्याक्रियन्ते,

विशारदम्, श्रवणावतंसमधुकरकुलानां कलकणितमाकर्ण-  
यन्तम्, प्रफुल्लमालतीमयेन राजलक्ष्म्याः कचग्रहलीलालग्नेन  
नखज्योत्स्नावलयेनेव मुखशशिपरिवेशमण्डलेन मुण्डमालागुणेन  
परिकलितकेशान्तम्, शिखण्डाभरणभुवा मुक्ताफलालोकेन  
मरकतमणिकिरणकलापेन चान्योन्यसंवलनवृजिनेन प्रयाग-  
प्रवाहवेणिकावारिणेवागत्य स्वयमभिषिच्यमानम्, श्रम-  
जलविलीनबहलकृष्णागुरुपङ्क्तिलकलङ्ककल्पितेन कालिम्बा

प्रकाशयन्ते अनेनेति स्वरव्याकरणाः स चासौ विवेकः, स्वरव्याकरणा-  
ज्ञानं तेन विशारदं चतुरं, यथा तथा । श्रवणेति— श्रवणयोः, कर्णयोः,  
यौ श्रवतंसौ तयोः मधुकरकुलानि, भृङ्गसमूहाः, तेषां कलकणितं,  
मधुररणितम्, आकर्णयतम् । उतफुल्लेति—उतफुल्लमालतीमयेन,  
विकसितमालतीगुम्फितेन, राजलक्ष्म्याः, नृपश्रियः, कचग्रहः, केशा-  
कर्षणं तस्य या लीला, विलासः तथा आलम्बनं, संसक्तं तेन । नखेति—  
नखानां, ज्योत्स्नाः, प्रभाः, नासां वलयं, मण्डलं तेनेव । मुखेति—  
मुखं, शशीव, चन्द्र इव तस्य परिवेशमण्डलं, परिधिमण्डलं तेन ।  
मुण्डमालागुणेन, शिरोमालया, परिकल्पितः, परिणद्धः, केशान्तः  
यस्य तथोक्तम् । शिखण्डेति—शिखण्डाभरणं, चूडालंकारः तस्माद्  
भवतीति तथोक्तेन । मुक्तेति—मुक्ताफलानां, आलोकं, प्रभया ।  
मरकतमणीनां, किरणकलापेन, प्रभाजालेन । अन्योन्यस्य,  
संवलनं, मिश्रणं तेन वृजिनं, कलुषम्, तेन । प्रयागेति—  
प्रयागे, गङ्गायमुतासरस्वतीसंगमे, या प्रवाहवेणिका, तिसृणां,  
नदीनां, स्रोतोरुपावेणी तस्याः वारि तेनेव । अभिसिञ्च-  
मानं, क्रियमाणमिपेकमित्यर्थः । श्रमेति—श्रम जल इत्यारभ्य  
वारविलासिनीभिः, विलुप्यमानं सौभाग्यमिव सर्वतः इत्यनेनान्वयः ।

प्रार्थनाचाटुचतुरचरणपतनशतश्यामिकाकिणोनेव नीलायमान-  
ललाटलेखाभिः क्षुभितमानसोद्गतैरुत्कलिकाकलापैरिव हारै-  
रुल्लसद्भिरवष्टभ्यमानाभिर्विलासवल्गनचटुलैर्भूलताकल्पैरीर्ष्यया  
श्रियमिव तर्जयन्तीभिरायामिभिः श्रसितैरविरलपरिमलैर्मलय-  
मारुतमयैः पाशैरिवाकर्षयन्तीभिर्विकटवकुलावलीवराटकवेष्टित-  
मुखैर्वृहद्भिः स्तनकलशैः, स्वदारसंतोपरसमिवाशेषमुद्धरन्तीभिः,

श्रमजलेन, धर्मणा, विलीनं लुप्तं, वहलं, घनं, यत् कृष्णागुरुपङ्कनिलकं,  
कालागुरुद्रवरचितं तिलकं तस्य कलङ्कं, चिह्नम् तेन कल्पितः रचितः,  
तेन । कालिम्ना, श्यामलत्वेन । प्रार्थनेति—प्रार्थनायां, चाटुचतुरं,  
सविलासं यानि चरणपतनानि, तेषां शतेन, या श्यामिका, कालिमा,  
तस्याः किणः चिह्नविशेषः तेन । नीलेति—नीलायमाना, नीले-  
वाचरन्तीः, ललाटलेखाः, भाललेखाः, यासां ताभिः । क्षुभितेति—  
क्षुभितानि, इष्टलाभविरहान् क्षोभंगतानि यानि मानसानि, चेतोसि,  
तेभ्यः उद्गताः, उत्थिताः तैः, क्षुभितं, वातावशात् चललं यत् मानसं,  
तदाख्यं सरः, तस्मात् उद्गतैः—इति च । उत्कलिकाकलापैरिव, रणारणि-  
कासमूहैरिव वीचिसमूहैरिव च, उल्लसद्भिः राजमानैः हारैः, अवष्टभ्य-  
मानाभिः, स्तब्धीक्रियमाणाभिः, । विलासेति—विलासेन, विभ्रमेण, यद्  
वल्गनं, चलनं तत्र चटुलाः, पटवः तैः । भूलताकल्पैः, लतासदृशीभिः  
(भ्रमिरित्यर्थः) श्रियमिव राजलक्ष्मीमिव । तर्जयन्तीभिः । आयामिभिः,  
दीर्घैः, श्रसितैः, निश्वासैः अविरलः, सान्द्रः, परिमलः, सुगन्धः  
येषां तैः, मलयमारुतमयैः, दक्षिणानिलनिर्मितैः, पाशैरिव, रज्जुभिरिव,  
आकर्षयन्तीभिः, वशीकुर्वतीभिः विकटेति—विकटा स्थूला या वकुला-  
वली, वकुलमाला सैव वराटकः, रज्जुः ( वराटकः पद्मबीजकोषे  
रज्जौकपर्दके इति मेदिनी ) तेन वेष्टितं, मुखं येषां तैः । वृहद्भिः,

कुचोत्कम्पिकाविचारप्रेङ्खितानां हारतरलमणीनां रश्मिभिराकृष्य  
हृदयमिव हठात्प्रवेशयन्तीभिः, प्रभामुचामाभरणमणीनां मयूखैः  
प्रसारितैर्बहुभिरिव बाहुभिरालिङ्गन्तीभिर्जम्भानुबन्धबन्धुरवद-  
नारविन्दाघरणीकृतैरुत्तानैः करकिसलयैः सरभसप्रधावितानि  
मानसानीव निरुन्धतीभिर्मदान्धमधुकरकुलकीर्यमाणकर्णकुसुमर-  
जःकणकूणितकोणानि कुसुमशरशरनिकरप्रहारमूर्च्छामुकुलित-

महद्भिः, स्तनकलसैः, पयोधरकुम्भैः । स्वदारेति—स्वस्य दाराः,  
पत्नयः, ताषु सन्तोषः, एव रसः, रागः तमिव । अशेषं, समग्रं, उद्ध-  
रन्तीभिः, उत्तोलयन्तीभिः, रक्तीकुर्वन्तीभिरिनिभावः । कुचेति—  
कुचानां, स्तनानां, उत्कम्पिका, (कम्पविशेषः) एव विकारः, अन्यथा-  
भावः, तेन प्रेङ्खितानां, चालितानाम् । हारतरलमणीनां, हारेषु तरलाः,  
भास्वराः, ये मणयः, रत्नानि तेषां, रश्मिभिः, किरणैः । प्रभामुचां,  
कान्तिवर्षिणां, आभरणमणीनां, भूषणरत्नानाम्, मयूरवैः, किरणैः ।  
आलिङ्गन्तीभिः, आश्लिष्यन्तीभिः । जृम्भेति—जृम्भाणां, कामजनि-  
तानुभावविशेषाणां, अनुबन्धेन, सातत्येन, बन्धुराणि, रम्याणि,  
वदनानि, मुखानि, अरविन्दानीव, पद्मानिव, तेषां आवरणीकृताः,  
आवर्णत्वेनोद्धृताः तैः । उत्तानैः, उद्धवीकृतैः, करकिसलयैः, सरभ-  
सप्रधावितानि, सवेगप्रचलितानि, निरुन्धन्तीभिः, अवरोधं कुर्वन्तीभिः ।  
मदेति—मदेन, अन्धानि यानि, मधुकरकुलानि तैः क्रियमाणानि,  
क्षिप्यमाणानि, यानि, कर्णकुसुमानां, रजांसि, परागाः, तेषां कणैः,  
लेशैः, कूणिताः, संकोचिताः, कोणाः, एकदेशाः येषां तानि । अत-  
एव-कुसुमेति—कुसुमशरस्य, कामस्य, शरनिकराणां, बाणसमू-  
हानां, प्रहारैः या मूर्च्छा, मोहः तथा, मुकुलितानि इव, लोचनानि,  
नयनानि, चतुरं । संचारयन्तीभिः, प्रसारयन्तीभिः, अन्योऽन्य-

नीव लोचनानि चतुरं संचारयन्तीभिरन्योन्यमत्सरादाविर्भवद्भङ्गुरभ्रुकुटिविभ्रमक्षिप्तैः कटाक्षैः कर्णेन्दीवराणीव ताडयन्तीभिरनिमेषदर्शनसुखरसराशिं मन्थरितपद्मणा चक्षुषा पीतमिव कोमलकपोलपालीप्रतिविम्बितं वहन्तीभिरभिलाषलीलानिर्निमित्तस्मितैश्चन्द्रोदयानिव मदनसाहायकाय संपादयन्तीभिरङ्गभङ्गवलनान्योन्यघटितोत्तानकरवेणिकाभिः स्फुटनमुखराङ्गुलीकाण्डकुण्डलीक्रियमाणनखदीधितिनिभेनार्किचित्करकार्मुकाणोव

मत्सरादिव, परस्परैर्प्यादिव । आविर्भवदिति—आविर्भवन्तः, उत्पद्यमानाः, भङ्गुराः, कुटिलाः, ये भ्रुकुटिविभ्रमाः तैः क्षिप्ताः तैः । कर्णेन्दीवराणीव, श्रवणीनीलोत्पलानीव, ताडयन्तीभिः । अनिमेषेति—अनिमेषं, निर्निमेषं, दर्शनं, अवलोकनं, तेन सुखरसानां, सुखस्वादानां, रसः, जलं तस्य राशिः यस्मिन् तं । मन्थरेति—मन्थरितानि, निश्चलानि, पद्माणि, लोमानि यस्य तेन चक्षुषा, नेत्रेण, पीतमिव । कोमलेति—कोमलायां, कपोलपाल्यां, कपोलतले, प्रतिविम्बितं, प्रतिफलितं, वहन्तीभिः, धारयन्तीभिः । अभिलाषेति—अभिलाषस्य, कामनृष्णायाः, लीलया, विलासेन, निर्निमित्तानि, हेतुरहितानि, स्मितानि, मृदुहसितानि तैः । मदनसहायकाय, कामसहायकाय, संपादयन्तीभिः, कुर्वन्तीभिः । अङ्गेति—अङ्गानां, भङ्गवलनेन, जृम्भादिजनितभङ्गिविशेषेण, अन्योऽन्येन, परस्परेण, घटिताः, कृताः, उत्तानाः या करवेणिकाः, परस्परानुबन्धेन स्थितयोः, करयोः अङ्गुलिविन्यासविशेषाः, ताभिः । स्फुटनेन, व्रुटनेन, मुखराः, सशब्दाः, ये, अङ्गुलयः, एव काण्डाः, शाखाविशेषाः, तैः कुण्डलीक्रियमाणानां, नखानां, दीधितिनिवशाः, मयूरवनिचयाः तेषां, निभः, तेन । अकिञ्चित्कराणि, कामस्य, मदनस्य, कार्मुकाणि, धनुषि तानीव,



रुपा भञ्जतोभिर्वारविलासिनीभिर्बिलुप्यमानसौभाग्यमिव सर्व-  
तः स्पर्शस्विन्नवेपमानकरकिसलयगलितचरणारविन्दां चरणग्रा-  
हिणीं विहस्य कोणेन लीलालसं शिरसि ताडयन्तम्, अनवर-  
तकरकलितकोणतया चात्मनः प्रियां वीणामिव श्रियमपि शिञ्ज-  
यन्तम्, निःस्नेह इति धनैरनाश्रयणीय इति दोषैर्निग्रहसुचिरि-  
तोन्द्रियैदुरूपसर्प इति कलिना नीसर इति व्यसनैर्भीरुरित्यय-  
शसा दुर्ग्रहचित्तवृत्तिरिति चित्तभुवा स्त्रीपर इति सरस्वत्या,  
पण्ड इति परकलत्रैः काष्ठामुनिरित यतिभिर्धूर्त इति वेश्याभि-

रुपा, कोपेन, भञ्जतीभिः, खण्डयन्तीभिः । बिलुप्यमानेति—बिलु-  
प्यमानं, ह्रियमाणां, सौभाग्यं, बाल्मभ्यं, यस्य तथोक्तमिव । स्पर्शेति—  
स्पर्शेन, स्विन्न, घर्माक्तः, वेपमानः, कम्पमानश्च, यः करकिसलयः,  
तस्मात् गलितं, च्युतं, चरणारविन्दं, पादपद्मं, यस्याः, तथोक्ताम् ।  
चरणग्राहिणीं, चरणसेविनीम्, कोणेन, वीणावादनदण्डेन । लीला-  
लसं, विलासमन्थरम् । ताडयन्तं, प्रहरन्तम् । अनवरतेति—अन-  
वरतं, निरन्तरं, करकलितः, हस्तगृहीतः, कोणो येन तथाविधः तस्य-  
भावः तत्ता तया, प्रियां, शिञ्जयन्तं, अभ्यस्यन्तं, निःस्नेहः, स्नेह-  
शून्यः । अनाश्रयणीयः, असेवनीयः, निग्रहे, वशीकरणे, रुचिः,  
अभिलाषो यस्य सः । दुरूपसर्पः, दुर्द्धर्षः । कलिना, चतुर्थयुगेन ।  
नीसरसः, निरनुरागः । व्यसनैः, मृगयादिभिः, भीरुः भयशीलः,  
अपयशसा, अपकीर्त्याः । दुर्ग्रहेति—दुर्ग्रहा, दुराकर्षा, चित्तवृ-  
त्तिर्यस्य तथोक्तः । चित्तभुवा, कामेन स्त्रीपरः, स्त्रैणः । शठः, धूर्तः,  
(वञ्चक इत्यर्थः) काष्ठामुनिः, उत्कर्षवान् तपसः, ( काष्ठोत्कर्षे स्थितौ  
दिशि इत्यमरः ) नेयः, परवशः, कर्मकरः, भृत्यः । सुसहायः, सुष्ठु-  
सहायसम्पन्नः, शत्रुयोधैः, शत्रुवीरैः, अनेकधा, बहुधा, गृह्यमाणां,

- १ नैय इति सुहृद्भिः कर्मकर इति विप्रैः सुसहाय इति शत्रुयोधैरेक-  
मप्यनेकधा गृह्यमाणम्, शन्तनोर्महाबाहिनीपतिम्, भीष्माजि-  
तकाशिनम्, द्रोणाच्चापलालसम्, गुरुपुत्रादमोघमार्गणम्,  
कर्णान्मित्रप्रियम्, युधिष्ठिराद्वहुक्षमम्, भीमादनेकनागायुतबलम्,  
धनञ्जयान्महाभारतरणयोभ्यम्, कारणमिव कृतयुगस्य, बीजमिव

ज्ञायमानम् । शन्तनोः, तदाख्यात् कुरुवंशीयराजात् । महेति—  
महत्त्यः, बाहिन्यः, चम्बः, तासां, पतिः, तम्, (पक्षे) शन्तनुस्तु महती  
एकैव बाहिनी, गङ्गा, तस्याः पतिरिति व्यतिरेकः । भीष्मात्, भीष्म-  
मपेक्ष्यजितकाशी, जितेन, जयेन, काशते, राजते, इति तथोक्तं तं  
भीष्मेनाऽपि काशिराजदुहितृस्वयंवरे काशीजिता । द्रोणात्, धनुर्वे-  
दाचार्यात्, चापे, धनुषि लालसा, यस्य तम् । वा च इति समुच्चये,  
अपगता लालसा यस्य तम् । वा चापले, चपल कर्मणि, अलसः,  
मन्दव्यापारः तं, द्रोणास्तु द्रव्यलोभताया द्रुपदेन सह विरोधं कृतवान्  
पुनरयं न इति व्यतिरेकः । गुरुपुत्रात्, द्रोणाचार्यतनयात्, (अश्वत्था-  
मात्) अमोघाः, अव्यर्थाः, मार्गणाः, शराः यस्य तथोक्तम् । कर्णात्,  
राधेयात्, मित्रप्रियं, मित्रस्य, सूर्यस्य, सुहृदाश्च, प्रियः, तम् । युधिष्ठि-  
रात्, धर्मराजात्, बहुक्षमं, क्षमागुणबहुलं (पक्षे) बह्वी, क्षमा,  
पृथ्वी यस्य तथोक्तम् । भीमात् । अनेकेति—अनेकनागायुतवत्,  
नास्ति एकः श्रेष्ठः येभ्यः ते च ते नागाः, हस्तिनः तेषां मायुतवत्  
महाबल हस्तिसमूहवत् बलं सामर्थ्यम् । (पक्षे) अनेकानि, बहूनि  
नागानां, हस्तिनां आयुतानि, दशसहस्राणि, बलानि सैन्यानि यस्य  
तथोक्तम् । धनञ्जयात्, अर्जुनात् । महाभारते यो रणः, संग्रामः (पक्षे)

- १ महान् भारः (पृथिव्या इति भावः) तस्य तरणं वहनम् । बीजम्,  
अंकुरोत्पादकक्षुद्रवस्तुविशेषः । विबुधसर्गस्य, देवसृष्टेः । उत्पत्ति-

विविधसर्गस्य, उत्पत्तिद्वीपमिव दर्पस्य, एकागारमिव करुणायाः, प्रातिवेशिकमिव पुरुषोत्तमस्य, खनिपर्वतमिव पराक्रमस्य, सर्वविद्यासंगीतगृहमिव सरस्वत्याः, द्वितीयामृतमथनदिवसमिव लक्ष्मीसमुत्थानस्य बलदर्शनमिव वैदग्ध्यस्य, एकस्थानमिव स्थितीनाम्, सर्वस्वकथनमिव कान्तेः, अपवर्गमिव रूपपरमाणुसर्गस्य, सकलदुश्चरितप्रायश्चित्तमिव राज्यस्य, सर्वबलसंदोहावस्कन्दमिव कन्दर्पस्य, उपायमिव पुरन्दरदर्शनस्य, आवर्तनमिव धर्मस्य, कन्यान्तःपुरमिव कलानाम्, परमप्राणमिव सौभाग्यस्य, राजसर्गसमाप्त्यवभृथस्नानदिवसमिव सर्वप्रजापतीनाम्, गम्भीरं च, प्रसन्नं च, त्रासजननं च, रमणीयं च, कौतुकजननं च, पुण्यं च, चक्रवर्तिनं हर्षमद्राक्षीत् ।

द्वीपमिव, प्रभवस्थानमिव । एकागारमिव, अद्वितीयं गृहमिव । प्रातिवेशिकमिव, प्रतिविम्बमिव, पुरुषोत्तमस्य, विष्णोः । खनिपर्वतमिव, आकरगिरिमिव, सर्वविद्यासंगीतगृहमिव, सर्वशास्त्रसंगीतालयमिव; द्वितीयामृतमथनदिवसमिव, अपरपीयूषोत्तलनवासरमिव । बलदर्शमिव, शक्त्युत्कर्षप्रदर्शनमिव, एकस्थानमिव, अद्वितीयगृहमिव, सर्वस्वकथनमिव, निधिभूतत्वविज्ञापनमिव, साफल्यमिव सर्वेति—सर्वेषां, बलानां, सैन्यानां सामर्थ्यानां वा, सन्दोहः, सङ्घः तस्य, अवस्कन्दः, समावेशः, तमिव । पुरन्दर दर्शनस्य, इन्द्रसत्तात्कारस्य, आवर्तनमिव, आवर्त्तमिव, कलानां, नृत्यगीतानां चतुःषष्टि विधानां कामविद्यानां, परमप्राणमिव, परमं बलमिव । राजसर्गेति—राज्ञां सर्गः-सृष्टिः, तस्य समाप्तिः, अवसानं सैव अवभृथस्नानं, दिक्षान्तस्नानं, तस्य दिवसः, तमिव । सर्वप्रजापतीनां, गम्भीरेति—गम्भीरञ्च प्रसन्नं, च त्रासजननञ्च रमणीयं, कौतुक-

१ दृष्ट्वा चानुगृहीत इव निगृहीत इव साभिलाष इव, तृप्त इव, रोमाञ्चमुचा मुखेन मुञ्चन्नानन्दबाष्पवारिबिन्दून्दूरादेव विस्मयस्मेरः समचिन्तयत् 'सोऽयं सुजन्मा, सुगृहीतनामा, तेजसां राशिः, चतुरुदधिकेदारकुटुम्बी, भोक्ता ब्रह्मस्तम्भफलस्य, सकलादिराजचरितजयज्येष्ठमल्लो देवः परमेश्वरो हर्षः । एतेन च खलु राजन्वती पृथ्वी । नास्य हरेरिव वृषविरोधीनि, बालचरितानि, न पशुपतेरिव दक्षोद्वेगकाराण्यैश्वर्यविलासितानि,

जननं, आश्रयोत्पादकञ्च चक्रवर्तिनं, सार्वभौमम् ।

अनुगृहीत इव, अनुकम्पित इव, निगृहीत इव, अभिभूत इव, ( तेजसेतिभावः ) साभिलाष इव, समुत्सुक इव, तृप्त इव, चरितार्थ इव, द्रष्टव्यवस्तुदर्शनेन इति हृदयम्, अथ च यः अनुगृहीत, स एव निगृहीतः यः साभिलाषः सः कथं तृप्तः-इति विरोधोऽपि अत्र प्रगटः । रोमाञ्चमुचा, पुलकितेन, मुञ्चन्, त्यजन्, विस्मयस्मेरः विस्मयेन, चमत्कारेण, स्मेरः (विकसितचित्त इत्यर्थः) चतुरुदधाति—चतुर्णां, उदधीनां, सागराणां, यत्केदारं, क्षेत्रम्, तदेव कुटुम्बं, पोष्यवर्गः, अस्येति तथोक्तः, भोक्ता, अधिकारी, ब्रह्मस्तम्भफलस्य, ब्रह्माण्डवर्तिसर्वरत्नजातस्य । सकलोति—सकलाः, समस्ताः, आदिराजानः, मन्वादयः, तेषां, चरितानि, तेषां जये, पराभवविषये, जेष्ठमल्लः, प्रधानवीरः । परमेश्वरः, सम्राट् । राजन्वती, प्रशस्तराजशालिनी । अस्य, हर्षस्य, हरेरिव, कृष्णस्येव, वृषविरोधीनि, वृषः, धर्मः, (पक्षे) वृषरूपोऽष्टासुरः, तस्य विरोधीनि । बालचरितानि, शैशवक्रीडितानि । पशुपतेरिव, हरस्येव । दक्षेति—दक्षाणां, कुशलानां, जनानामितिभावः । ( पक्षे ) दक्षस्य प्रजापतेः, ( स्वश्वशुरस्येतिभावः ) उद्वेगकारीणि, भीषणानि, ऐश्वर्यविलासितानि, अधिपत्यचेष्टितानि, (पक्षे) ईश्वरधर्माः (अणिमा-

न शतक्रतोरिव गोत्रविनाशपिशुनाः प्रवादाः, न यमस्येवातिबल्लभानि दण्डग्रहणानि, न वरुणस्येव निस्त्रिंशग्राहसहस्ररक्षिता रत्नालयाः, न धनदस्येव निष्फलाः सन्निधिलाभाः, न जिनस्येवार्थवादशून्यानि दर्शनानि, न चन्द्रमस इव बहुलदोषोपहताः श्रियः । चित्तमिदमत्यमरं राजत्वम् । अपि चास्य त्यागस्यार्थिनः,

दय इत्यर्थः) तेषां विलासितानि, विजृम्भितानि । शतक्रतोरिव, इन्द्रस्येव, गोत्रविनाशपिशुना । गोत्राणां, वंशानां ( पक्षे ) पर्वतानां, विनाशपिशुनाः, विध्वंससूचकाः । प्रवादाः, जनश्रुतयः । यमस्येव, अतिवल्लभानि, अतिप्रियाणि, दण्डग्रहणानि, करग्रहणानि, ( पक्षे ) शासनयन्त्रेः ग्रहणानि । वरुणस्येव, निस्त्रिंशेति—निस्त्रिंशग्रहाणां, खड्गधारिणां सहस्रैः ( पक्षे ) निस्त्रिंशाः, निष्ठुराः, प्राहाः, जलजीवभेदाः तेषां सहस्रैः रक्षिताः, पालिताः, रत्नालयाः, रत्नभाण्डागाराणि ( पक्षे ) समुद्राः-इत्यर्थः । धनदस्येव, कुबेरस्येव । न निष्फलाः, न अर्थादिफलप्राप्तिविरहिताः ( पक्षे ) दानादिव्ययाभावान्, निष्प्रयोजनाः । सन्निधिलाभाः, समीपप्राप्तयः ( पक्षे ) सन्तः, उत्कृष्टाः, निधयः, पद्मशङ्खादयः, तेषां लाभाः । जिनस्येव, बुद्धदेवस्येव । अर्थवादेति—अर्थानां, धनानां, वादः, मयेदं ( लब्धमिति ) तेन शून्यानि, रहितानि दर्शनानि, अवलोकनानि, ( पक्षे ) अर्थवादः, श्रुतिवादः, तेन शून्यानि दर्शनानि, महायानादीनि ( तदीयशास्त्राणीतिभावः ) चन्द्रमसः-इव, चन्द्रस्येव । बहुल्वेति—बहुलाः, अनेके, दोषाः ( रागादय इत्यर्थः ) तैरुपहताः, मलिनीकृता ( पक्षे ) बहुलस्य, कृष्णपक्षस्य, दोषाभिः, रजनीभिः, उपहताः, नाशिताः, श्रियः, समृद्धयः ( पक्षे ) शोभाः । अत्यमरं, अतीवविनश्चरम् । त्यागस्य, दानस्य, प्राप्तो विषयः, ( प्रचुरं-स्थानमित्यर्थः ) अर्थिनः, याचकाः न इति-अन्वयः । प्रज्ञायाः, प्रकृष्ट-

प्रज्ञायाः शास्त्राणि, कवित्वस्य वाचः, सत्त्वस्य साहसस्थानानि, उत्साहस्य व्यापाराः, कीर्तंदिङ्मुखानि, अनुरागस्य लोकहृदयानि, गुणगणस्य संख्या, कौशलस्य कलाः, न पर्याप्तो विषयः । अस्मिंश्च राजनि यतीनां योगपट्टकाः, पुस्तकर्मणां पार्थिवविग्रहाः, षट्पदानां दानग्रहणकलहाः, वृत्तानां पादच्छेदाः, अष्टापदानां चतुरङ्गकल्पना, पन्नगानां द्विजगुरुद्वेषाः, वाक्यविदामधिकरणविचाराः, इति समुपसृत्य चोपवीती स्वस्तिशब्दमकरोत् ।

अथोत्तरेण नातिदूरे राजधिष्ण्यस्य गजपरिचारको मधुरमपरवक्रमुच्चैरगायत्—

पुद्धेः, कवित्वस्य, काव्यरचयितृत्वस्य, सत्त्वस्य, बलस्य, उत्साहस्य, बलप्रकटनस्य, कीर्तेः, यशसः, अनुरागस्य, प्रीतेः, एवं सर्वैः सह प्राप्तोयं विषयः-इति अन्वयः । यतीनां, परमहंसानां, ( चतुर्थाश्रमिणामितिभावः ) योगपट्टकाः । पुस्तकर्मणां, लेप्यकर्मणां । पार्थिवविग्रहाः, मृण्मयशरीराणि नतु राजविरोधाः । षट्पदानां, मधुकराणां, दानं तस्य ग्रहणं कलहाः नतु दत्तधनस्य । वृत्तानां, छन्दसां, पादभेदाः, चरणविरामाः । न पापविशेषे । अष्टापदानां, चतुरङ्गफलकानां, चतुरङ्गकल्पनाः, चत्वारि, अङ्गानि तेषां कल्पनाः, पन्नगानां, सर्पाणां, द्विजगुरुद्वेषाः, द्विजानां, पक्षिणां, गुरुः, गरुडः, तस्मिन् द्वेषाः न ब्राह्मणेषु, गुरुषु च । वाक्यविदां, वाक्यज्ञानां, अधिकरणविचाराः, अधिकारं, प्रजानां परस्परविरोधे धर्मनिर्णयस्थानं, तत्र विचारो न न प्रजाः ( सततं कलहायन्तेस्मेतिभावः ) अत्र परिसंख्याऽलंकारः । समुपसृत्य, उपगम्य, उपवीती, ( उद्धृतदक्षिणकर इत्यर्थः ) उत्तरेणा, उत्तरस्यां दिशि, राजधिष्ण्यस्य, राजमण्डलस्य, गजपरिचारकः,

‘करिकलभ ! विमुञ्च लोलतां चर विनयव्रतमानताननः ।’

मृगपतिनखकोटिमङ्गुरो गुरुरुपरि क्षमते न तेऽङ्कुशः ॥५॥

राजा तु तच्छ्रुत्वा दृष्ट्वा च तं गिरिगुहागतसिंहवृंहितगम्भी-  
रेण स्वरेण पूरयन्निव नभोभागमपृच्छत्—‘एष स बाणः’ इति ।  
‘यथाज्ञापयति देवः । सोऽयम्’ इति विज्ञापितो दौवारिकेण ।  
‘न तावदेनमकृतप्रसादः पश्यामि’ इति तिर्यङ्नीलधवलांशुक-  
शारां तिरस्कारिणीमिव भ्रमयन्नपाङ्गनीयमानतरलतारकस्याया-  
मिनीं चक्षुषः प्रभां परिवृत्य प्रेष्ठस्य पृष्ठतो निषण्णस्य मालवरा-

हस्तिपालकः, अपरवक्रं, तदाख्यं वृत्तं । करिकलमेति—  
करिकलभ !, हस्तिशावक !, लोलतां, चंचलतां, विमुञ्च, त्यज ।  
आनतं, नम्रम्, आननं, मुखं, यस्य तथाविधः सन् । विनयव्रतं, शिष्टा-  
चारं, चर, कुरु । मृगपतेः, सिंहस्य, नखकोटिः, नखाग्रः, तद्वत् भंगुरः  
कुटिलः, गुरुः, महान्, अङ्कुशः, करिताडनदण्डः, ते उपरि न क्षमते,  
तव दोषं न सहते ( अनेन अशिष्टानां दण्डयिता राजा इति व्यज्यते )  
अत्र हि करिकलभमप्रस्तुत विषयमादाय अशिष्टान् जनान् दण्डयिता  
राजा इति प्रस्तुतविषयः प्रतीयते अतः अप्रस्तुतप्रशंसाऽलंकारः ।

गिरिति—गिरिगुहां, पर्वतकन्दरां गतः सिंहः, तस्य वृहत्तं,  
गर्जितं तद्वत् गम्भीरः तेन । नभोभागां, गगनम् । अकृतप्रसादः,  
नकृतः, प्रसादः, प्रसन्नता येन सः ( अप्रसन्न इत्यर्थः ) नीलेति—  
नीलाः, धवलाः, अंशव एव अंशुकाः (स्वार्थेकम्) (पक्षे) तथा विशानि,  
वल्गाणि, तैः शारा, शवला, ताम् । तिरस्कारिणीमिव, ज्वनिकामिव ।  
अपाङ्गेति—आपाङ्गं, नेत्रपान्तं, नीयमाना, प्रचाल्यमाना, तरला,  
चपला, तारका, कनीनिका, यस्य तथाविधस्य, चक्षुषः, आयामिनीं,  
प्रसारिणीं, प्रभां, कान्तिं भ्रमयन्, परिवृत्य प्राङ्मुखीभूय । प्रेष्ठस्य,

जसूनोरकथयत्—‘महानयं भुजङ्गः’ इति । तूष्णीभावेन त्वग-  
मितनरेन्द्रवचसि तस्मिन्मूके च राजलोके, मुहूर्तमिव तूष्णीं  
स्थित्वा बाणो व्यज्ञापयत्—‘देव, अविज्ञाततत्त्व इव, अश्रद्-  
धान इव, नेय इव, अविदितलोकवृत्तान्त इव, च कस्मादेवमा-  
ज्ञापयसि । स्वैरिणो विचित्राश्च लोकस्य स्वभावाः प्रवादाश्च ।  
महद्भिन्तु यथार्थदर्शिभिर्भवितव्यम् । नार्हसि मामन्यथा संभा-  
वयितुमविशिष्टमिव । ब्राह्मणोऽस्मि जातः सोमपायिनां वंशे  
वात्स्यायनानाम् । यथाकालमुपनयनादयः कृताः संस्काराः ।  
सम्यक्पठितः साङ्गो वेदः । श्रुतानि यथाशक्ति शास्त्राणि । दार-  
परिग्रहादभ्यागारिकोऽस्मि । का मे भुजङ्गता । लोकद्वयाविरो-

अतिप्रियस्य, पृष्ठतः, निषण्णस्य, उपविष्टस्य, मालवराजसूनोः,  
मालवराजपुत्रस्य, भुजङ्ग, विटः, धूर्तः लम्पटो वा ( भुजङ्गो विट-  
सर्पयोः “इत्यमरः) तूष्णीभावेन, मौनभावेन । अगमितेति—अगमि-  
तम्, अबुद्धम्, नरेन्द्रस्य वचः तस्मिन् अविज्ञाततत्त्व इव, अनवग-  
मितयथार्थ इव, अश्रद्धान इव, अविश्वसन्नमिव, अविदितलोकवृत्तान्त-  
इव, अज्ञानितजनचरित इव । स्वैरिणः—स्वेच्छाचारिणः, लोकस्य,  
स्वभावाः, मनोवृत्तयः, प्रवादाश्च, विचित्राः, विषमाः । यथार्थदर्शिभिः,  
तत्त्वज्ञैः, महद्भिः, गुरुभिः, भवितव्यम् । अविशिष्टं, साधारणं, सोम-  
पायिनां, सोमरसपानकर्तृणाम्, वात्स्यायनानाम्, वत्समुनिमन्तती  
नाम् । यथाकालं, समयानुसारं”, उपनयनादयः, उपनयनं, यज्ञोपवीत  
आदि, मुख्यं येषां ते संस्काराः । अंगेनसहितः सांगः, व्याकरणा-  
दीनि वेदस्य षडङ्गानि तैः सहितः वेदः । अभ्यागारिकः, गृहस्थी ।  
का मे भुजङ्गता, भुजंगता, लम्पटता, विसता वा मे स्म का । केचित्तु  
का मे, मदने भुजंगता, शृङ्गारित्वं, अपरे, मे मम, का (वात्सा) भुजं, बाहुं



धि भिस्तु चापलैः शैशवमशून्यमासीत् । अत्रानपलापोऽस्मि ।  
 अनेनैव च गृहीतविप्रतीसारमिव मे हृदयम् । इदानीं तु सुगत  
 इव शान्तमनसि, मनाविव कर्तरि वर्णाश्रमव्यवस्थानां समवर्ति-  
 नीव च साक्षादण्डभृति देवे शासति सप्ताम्बुराशिरशनामशेष-  
 द्वीपमालिनीं महीं क इवाविशङ्कः सर्वव्यसनबन्धोरविनयस्य  
 मनसाप्यभिनयं कल्पयिष्यति । आसतां तावन्मानुष्यकोपेताः ।  
 त्वत्प्रभावादलयोऽपि भीता इव मधु पिबन्ति । रथाङ्गनामानो-  
 ऽपि लज्जन्त इवाभ्युनुवृत्तव्यसनैः प्रियाणाम् । कपयोऽपि  
 चकिता इव चपलायन्ते । शरारवोऽपि सानुक्रोशा इव श्वाप-

गता प्राप्तेति ( विकोक्तिः ) लोकेति-लोकयोः, स्वर्गमर्त्ययोः, तस्य  
 अविरोधिनी, अविरोधकराणि तैः । चापलैः, चपलकर्मभिः, शैशवं, बाल्यं,  
 अशून्यं, अरहितम् । अनपलापः, निरपह्नवः । गृहीतेति—गृहीतः,  
 विप्रतीसारः, अनुतापो येन तथा भूतमिव । सुगत इव बुद्धदेव इव ।  
 मनाविव, वैवश्वते इव । वर्णंति—वर्णानां, ब्राह्मणक्षत्रीयवैश्यशूद्रा-  
 णाम्, आश्रमाणाम्, ब्रह्मचर्यगृहस्थवानप्रस्थसंन्यासाणाम् । व्यव-  
 स्थानां कर्तरि । समेति—समं वर्तते इति समवर्ती, यमः, तस्मिन्निव ।  
 दण्डभृति, दण्डधरे । सप्ताम्बुराशीनां, सप्त अम्बुराशयः, सागराः  
 रशना, मेखला यस्याः ताम् । अशेषेति—अशेषाणां, समस्तानां,  
 द्विपानां, मालिनीं, महीं, पृथ्वीं, शासयति, पालयति, अविशङ्कः,  
 निर्भीकः । सर्वंति—सर्वेषां व्यसनानां, दुश्चरितानां, बन्धोः, मित्रस्य,  
 अविनयस्य, अभिनयं, कल्पयिष्यन्ति, करिष्यति । मानुष्यकोपेताः,  
 मनुष्यस्यभावः, मानुष्यकस्तेनोपेताः । अलयः, भ्रमराः, अभ्यनुवृत्ति-  
 व्यसनैः, अतिशया शक्तिभिः, प्रियाणां, चक्रवाकीणाम् । कपयः,  
 वानराः, चकिता इव, शङ्किता इव, चापलायन्ते, चपलाश्वाचरन्ति ।

- १ दग्णाः पिशितानि भुञ्जते । सर्वथा कालेन मां ज्ञास्यति स्वामी स्वयमेव । अनपाचीनचित्तवृत्तिग्राहियो हि भवन्ति प्रज्ञावतां प्रकृतयः' इत्यभिधाय तूष्णीमभूत् ।

- भूपतिरपि 'एवमस्मामिः श्रुतम्' इत्यभिधाय तूष्णीमेवाभवत् । संभाषणासनदानादिना तु प्रसादेन नैनमन्वग्रहीत् । केवलममृतवृष्टिभिः स्नपयन्निव स्नेहगर्भेण दृष्टिपातमात्रेणान्तर्गतां प्रीतिमकथयत् । अस्ताभिलाषिणि च लम्बमाने सवितरि विसर्जितराजलोकोऽभ्यन्तरं प्राविशत् । बाणोऽपि निर्गत्य धौतारकूटकोमलातपत्विषि निर्वाति वासरे, अस्ताचलकूटकिरीटे निचुलमञ्जरीभांसि तेजांसि मुञ्चति विद्यन्मुचि मरीचिमाशराखः, हिन्त्राः, श्वापदग्णाः, व्याघ्रसमूहाः, सद्याः, पिशितानि, मांसानि । सानुकोशाः । अनपाचनेति—अनपाचिनां, अविपरीताम्, चित्तवृत्तिं, गृह्णन्ति इति तथाभूता । सम्भाषणेति—संभाषणां, संलापः, आसनदानञ्च आदिर्यस्य तयोक्तेन, प्रसादेन, अनुग्रहेण, अन्वग्रहीत्, अनुचकम्पे, स्नपयन्निव, अभिषिञ्चन्निव । अस्ताभिलाषिणि, अस्ताचल गमनोद्यते, लम्बमाने, पश्चिमां दिशमवतरति, विसर्जितराजलोकः, स्वस्थानगमनाय, त्यक्तनृपमण्डलः । बाणोऽपि निवासस्थानमगादिति दूरेणान्वयः । धौतेति—धौतं, निर्मलं, यत् आरकूटं, पित्तलं तद्वत् कोमलाः, आतपस्य, त्विषः, प्रभाः, यस्य तादृशे । निर्वाति—अवसानं प्राप्ते दिवसे, दिने । अस्ताचलेति—अस्ताचलस्य, अस्तभिरेः, कूटं, शृङ्गं ( कूटोऽस्त्री शिखरं शृङ्गं 'इत्यमरः ) तस्यकिरीटं, मुकुटं तस्मिन् । निचुलेति—निचुलस्य, स्थलवेतस्य, इज्जलवृत्तस्य ( निचलोऽम्बुजइज्जलः 'इत्यमरः ) मञ्जरी, नूतनवल्लरी तस्याः भास इव भासः, कान्त्यः येषां तथाविधानि तेजांसि, किरणान्, मुञ्चति, विक-

लिनि रोमन्थमन्थरकुरङ्गकुटम्बाध्यास्यमानम्रदिष्टगौष्टीन  
पृष्ठास्वरण्यस्थलीषु, शोकाकुलकोककामिनीकूजितकरुणासु,  
तरंगिणीतटीषु, वासविटपोपविष्टवाचाटचटकचक्रवालेष्वाल-  
वालावर्जितसेकजलकुटेषु निष्कुटेषु, दिवसविहृतिप्रत्यागतं  
प्रस्तुतस्तनं स्तनं धये धयति धेनुवर्गमुद्रतक्षीरं क्षुधिततर्णकवाते,  
क्रमणे चास्तधराधरधातुधुनीपूरसावित इव लोहितायमानम-

रति । वियन्मुञ्जति, गगनपरित्यागिनि । मरीचिमालिनि सूर्ये ।  
रोमन्थेति रोमन्थेन, उद्गीर्यचर्वणेन मन्थराः, अलसाः, कुरङ्गाणां,  
हरिणानां, कुटुम्बाः, वर्गाः, तैः अध्यास्यमानम्, अधिष्ठीयमानम्,  
अतएव म्रदिष्टम्, अतिमृदुकोमलं वा, गौष्टीनं, कृतगोष्ठं, तस्य पृष्ठं,  
उपरिभागम्, यासां तासु, अरण्यस्थलीषु, वनभूमिषु । शोकेति—  
शोकाकुलानां, कोककामिनीनां, चक्रवाकीणां कूजितैः, करुणाः  
कारुण्यजनन्यः, तासु तरङ्गिणीतटीषु, नदीतीरेषु । वासेति—वास  
विटपेषु, आश्रयवृक्षशाखासु, उपविष्टं वाचाटानां, रक्तां चटकानां,  
पक्षिणाम्, चक्रवालं, मण्डलं येषु तादृशेषु । आलेति—  
आलवालानि, तरुतलेषु, मण्डलाकारेण रचिता जलाधारविशेषाः  
तेषु, आर्वजितानि, रचितानि, सेकजलकुटानि, सेचनार्थं जलघटाः  
येषु तथा भूतेषु, निष्कुटेषु गृहारामेषु । दिवसेति—दिवसे विहृतिः,  
विहारः तस्याप्रत्यागतं, प्रतिनिवृत्तं, प्रस्तुतस्तनं, प्रस्तुताः, क्षरिताः,  
स्तनाः यस्य तथोक्तम् । धेनुवर्गं, गोयूथं स्तनंधये, स्तनपायिनि ।  
उद्गतेति—उद्गतेन, उच्छलितेन, क्षीरेण, दुग्धेन, क्षुभितं, व्यस्तं,  
तर्णकानां, वत्सानां (सद्योजातस्तुतर्णकं” इति ‘अमरः’)   
व्रातं, समूहः, तस्मिन् । धयति, पिबति । अस्तेति—अस्तधराधरः,  
अस्ताचलः, तत्र ये धातवः, गैरिक मनः शिलादयः तेषु या धुन्यः,

हसि मज्जति संध्यासिन्धुपानपात्रे पातंगे मण्डले, कमण्डलुज-  
लशुचिशयचरणेषु चैत्यप्रणतिपरेषु, पाराशरिषु, यज्ञपात्रपवित्र  
पाणौप्रकीर्णवर्हिष्युत्तेजसि जातवेदसि, हवींषि वषट्कुर्वति याय-  
जूकजने, निद्राविद्राणद्रोणकुलकलिलकुलायेषु, कापेयविकलक-  
पिकुलेष्वारामतरुषु, निजिगमिपति जरत्तरकोटरकुटीकुटुम्बिनि

तत्संसृष्टा निर्भरिण्यः तासां पूरैः प्रवाहैः सावितं सिक्ते इव । लोहितेति ---  
लोहितायमानानि, रक्तायमानानि, महांसि, तेज्जामि यस्य तथोक्ते ।  
मज्जति, निरोभवति । सन्ध्येति—सन्ध्या एव सिन्धुः, नदी तस्याः  
पानपात्रं, जलपात्रं, तस्मिन् । पातंगे, पतंगः सूर्यः तस्य इदं तस्मिन् ।  
कमण्डल्विति—कमण्डलुः, यतीनां जलपात्रं, तस्य जलेन शुचयः,  
पवित्राः, शयाः, कराः, चरणाश्च येषां तेषु । चैत्येति—चैत्यं, आय-  
तनविशेषः, तस्य प्रणतिः, अभिवन्दनं तत्र पराः तेषु । पाराशरिषु,  
भिक्षुषु पराशरमतानुवर्त्तिषु द्विजेषु वा । यज्ञेति—यज्ञपात्रैः, सूक्-  
स्त्रुवादिभिः, पवित्राः, पाणयो यस्य तथोक्ते, प्रकीर्णवर्हिषि, प्रकीर्णाः,  
विकीर्णाः वर्हिषः, कुशाः येन तस्मिन् । ओजसि, ज्वलनीत्यर्थः,  
जातवेदसि अग्नौ हवींषि हवनीय द्रव्याणि, वषट् कुर्वति । यायजूकजने  
अत्यर्थं यजनशीललोके । निद्रेति—निद्रया, स्वप्नेन, विद्राणानि,  
आकुलानि, द्रोणकुलानि, काकवृन्दानि तैः कलिलाः, व्याप्ताः,  
कुलायाः, नीडाः, येषां तेषु । कापेयेति—कपीनामिदं कापेयं तेन  
विकलानि, कपिकुलानि, वानरवृन्दानि येषु तादृशेषु । आरामतरुषु,  
उपवनवृक्षेषु निजिगमिपति, गन्तुमिच्छति । जरदिति—जरन्तः,  
जीर्णाः, ये तरवः, वृक्षाः तेषां कोटराणि एव गह्वराणि तान्येव कुत्र्यः  
लुद्रग्रहाणि, तत्र कुटुम्बी, परिवारवान् तस्मिन् । कौशिककुले,  
उलूकवर्गे । मुनि-इति—मुनीनां, करसहस्रैः, प्रकीर्णाः, प्रक्षिप्ताः,

कौशिककुले, मुनिकरसहस्रप्रकीर्णसंध्यावन्दनोदधिन्दुनिकरे इव  
दन्तुरयति तारापथस्थलीं स्थवीयसि तारकानिकुरम्बे, अम्ब-  
राश्रयिणि शर्वरीशवरीशिखण्डे, खण्डपरशुकण्ठकाले कवलयति  
बाले ज्योतिःशेषं सांध्यमन्धकारावतारे, तिमिरतर्जननिर्गतासु,  
दहनप्रविष्टदिनकरकरशाखास्विव स्फुरन्तीषु दीपलेखासु, अर-  
रसंपुटसंकीडनकथितावृत्तिष्विव गोपुरेषु, शयनोपजोषजुषि  
जरतीकथितकथे शिशयिषमाणे शिशुजने, जरन्महिषमसीमली-

सन्ध्यावन्दनस्य ये उदविन्दवः, जलविन्दवः, तेषां निकरेइव दन्तुरयति,  
दन्तुरां कुर्वति । तारापथस्थलीं, तारापथं, अन्तरीक्षमेव स्थली तां,  
स्थवीयसि, स्थूलतरे । तारकानिकुरम्बे, तारागणे । अम्बराश्रयिणि,  
आकाशसंचारिणि । शर्वरीति—शर्वरी, रात्रिः एव शवरी, शवर-  
नारी, तस्याः शिखण्डः चूडा तस्मिन् । खण्डेति—खण्डपरशुः,  
शिवः, तस्य कण्ठ इव कालः, श्यामः तस्मिन् कवलयति, प्रसति ।  
बाले, अभिनवे, ज्योतिः शेषं, कान्तिमात्रावशिष्टम्, सान्ध्यं, सन्ध्या-  
कालीनम्, अन्धकारावतारे, निमिरोद्गमे । तिमिरेति—तिमिराणां  
तमसां तर्जनाय, अपसारणाय, निर्गताः, प्रसृताः तासु । दहनेति—  
दहनम्, वह्निं, प्रविष्टाः, गताः, दिनकरस्य, सूर्यस्य, करशाखाः, कराः,  
किरणाः एव शाखा करांगुल्यः तासु इव । स्फुरन्तीषु, ज्वलन्तीषु,  
दीपलेखासु, दीपराजिषु । अररेति—अरराः, कवाटाः, ( कवाटमरं  
तुल्ये इत्यमरः ) तेषां सम्पुटस्य, युगलस्य, संकीडनेन, शब्देन,  
कथिता सूचिता आवृत्तिः, अवरोधनं येषां तथा भूतेषु गोपुरेषु, पुर-  
द्वारेषु (पुरद्वारं तु गोपुरम् इत्यमरः) शयनेति—शयने यः, उपजोषः,  
मौनभावः, तज्जुषि, तच्छालिनी । जरतीति—जरतीभिः, वृद्धाभिः,  
कथिता, उक्ता, कथा, यस्य यस्मै वा तादृशे शिशयिषमणि, शयितु-

- ४ मसतमसि जनितपुण्यजनप्रजागरे विजृम्भमाणे भीषणतमे तमी-  
मुखे, मुखरितविततज्यधनुषि वर्षति शरनिकरमनवरतमशेषसं-  
सारशेमुषीमुषि मकरध्वजे, रताकल्पारम्भशोभिनि शम्भलीभाषि-  
तभाजि भजति भूषां भुजिष्याजने, सैरिन्ध्रीबध्यमानरशनाजालज-  
ल्पाकजघनासु जनीषु, वशिकविशिखाविहारिणीष्वनन्यजानु-

मिच्छतीत्यर्थः । जरदिति—जरन्तः, महिषा एव मस्यः, लेखनसाध-  
नानि द्रवद्रव्याणि तद्वत् मलीमसानि, मलिनानि, तमांसि, निमिराणि  
यस्मिन् तथोक्ते । जनितेति—जनिताः, प्रसूताः, पुण्यजनानां,  
यक्षाणां ( पुण्यजनो यत्ने राक्षसे सज्जनेऽपिच इत्यमरः ) प्रजागरः,  
प्रकर्षेण जागरणं, यस्मिन् तथोक्ते । विजृम्भमाणे, आविर्भूते, तमी-  
मुखे, रजनीमुखे ( रजनीयामिनीतमी “इत्यमरः ) मुखरितेति—

- ५ मुखरिता, शब्दिता, विलता, विस्तृता, ज्यायस्य तादृशं धनुः यस्य  
तथा भूते । वर्षति, मुञ्चति । शरनिकरं, शरवृन्दम् । अशेषेति—  
अशेषाणां, समस्तानां, संसाराणाम्, शेमुषी, बुद्धिः ( धीः प्रज्ञा  
शेमुषीमतिः इत्यमरः ) तां मुष्णाति, अपहरति तस्मिन् मकरध्वजे,  
कामे । रतेति—रतस्य, निधुवनस्य, आकल्पाः, वेशरचनाः, तेषां,  
आरम्भेण, समुद्योगेन, शोभते इति तथोक्ते । शम्भलीति—  
शम्भल्याः, कुहिन्याः ( कुहिनी शम्भली समे इत्यमरः ) भाषितं, वचनं,  
भजते तथा भूते । भुजिष्याजने, दासीजने । सैरिन्ध्रीति—सैरि-  
न्ध्रीभिः, प्रसाधनोपचाराभिः, नारीभिः । बध्यमानानां, परिधीयमा-  
नानां, रशनानां, काञ्चीनां जालैः, संघैः, जल्पाकं, मुखरं जघनं,  
कटिपुरोभागो यासां तथा विधासु, जनीषु, वधुषु, ( जनीसीमन्तनी-  
६ वध्वोः—इति मेदिनी ) वशिकेति—वशिकाजनशून्या ( शन्यन्तु  
वशिकं—इत्यमरः ) या विशिखा, रथ्या, तासु विहरन्तीति तथोक्तासु ।

मवासु प्रचलितास्वभिसारिकासु, विरलीभवति वरटानां वेश-  
न्तशायिनीनां मञ्जुनि मञ्जीरशिञ्जितजडे जल्पिते, निद्राविद्रा-  
णद्राघीयसि द्रावयतीव च विरहिहृदयानि सारसरसिते, भावि  
वासरबीजाङ्कुरनिकर इव च विकीर्यमाणे जगति प्रदीपप्रकरे  
निवासस्थानमगात् । अकरोच्च चेतसि—‘अतिदक्षिणः खलु देवो  
हर्षः, यदेवमनेकबाललरितचापलोचितकौलीनकोपितोऽपि मनसा  
स्निह्यत्येव मयि । यद्यहमक्षिगतः स्याम्, न मे दर्शनेन प्रसादं  
कुर्यात् । इच्छति तु मां गुणवन्तम् । उपदिशन्ति हि विनयमनु-

अनन्यजेति—अनन्यजः, मनसिजः, अनुस्रवः, अनुचरः यासां तथा  
विधासु । प्रचलितासु, प्रस्थितासु, अभिसारिकासु, ( कान्तार्थिनीतु  
या पति संकेतं साऽभिसारिका ) तासु नारीषु, ( विरलीभवतीत्यर्थः )  
वरटानां, हंसीनां ( हंसस्य योषित् वरटा इत्यमरः ) वेशन्तशायिनां,  
पल्लव शायिनाम्, ( वेशन्तः पल्लवश्चाल्पसरः—इत्यमरः ) मञ्जुनि,  
मनोज्ञे । मञ्जीरेति—मञ्जीरस्य, नूपुरस्य, शिञ्जितं, रणितं तद्वन्  
जडं, गम्भीरं मन्थरं वा तस्मिन् जल्पितं, रवे । निद्रेति—निद्रया,  
स्वपनेन, विद्राणम्, अलसं, द्राघीयः, अतिदीर्घं च तस्मिन् । द्राव-  
यति, द्रवीकुर्वति इव । सारसरसिते—सारसानां, पक्षिविशेषाणाम्,  
रसितं, रूतं तस्मिन् । भावीति—भाविनः, भविष्यतः, वासरस्य,  
दिवसस्य बीजाङ्कुराणां निकर-इव सञ्चय इव । विकीर्यमाणे, प्रसार्य-  
माणे । अतिदक्षिणः, अत्युदारः । अनेकेति—अनेकेषां, बहूनां,  
बालचरितानां, चापलं, तस्य उचितं यत् कौलीनम्, अपवादः,  
( स्यात्कौलीनं लोकवाद—इत्यमरः ) तेन कोपितोऽपि अक्षिगतः,  
द्वेष्यः ( द्वेष्येत्वाक्षिगतः—इत्यमरः ) उपदिशन्ति, शिक्षयन्ति, विनयं,  
शिष्टाचारं । अनुरूपेति—अनुरूपा, योग्या, प्रतिपत्तिः, सम्भावना

रूपप्रतिपत्त्युपपादनेन वाचं विनापि भर्तव्यानां स्वामिनः ।  
अपि च धिङ्मां स्वदोषान्धमानसमनादरपीडितमेवमतिगुण-  
वति राजन्यथा चान्यथा च चिन्तयन्तम् । सर्वथा करोमि  
तथा, यथा यथावस्थितं जानाति मामयं कालेन' इत्येवमवधार्य  
चापरेद्युर्निष्क्रम्य कटकात्सुहृदां बान्धवानां च भवनेषु तावद-  
तिष्ठत्, यावदस्य स्वयमेव गृहीतस्वभावः पृथिवीपतिः प्रसा-  
दवानभूत् । अविशच्च पुनरपि नरपतिभवनम् । स्वल्पैरेव चाहो-  
भिः परमप्रीतेन प्रसादजन्मनो मानस्य प्रेम्णो विश्रम्भस्य, द्रवि-  
णस्य, नर्मणः प्रभावस्य च परां कोटिमानीयत नरेन्द्रेणेति ।

इति श्रीबाणभट्टकृते हर्षचरिते राजदर्शनं नाम द्वितीय उच्छ्वासः ।

तस्या उपपादनं, योजनं तेन वाचं विनाऽपि भर्तव्यानां, प्रतिपाल्यानां,  
स्वामिनः, प्रभवः । स्वदोषेति—स्वदोषेण, अन्धं मानसं यस्य  
तथोक्तम् । अनादरपीडितम् । अनादरेण, अवज्ञया, पीडितं, अभि-  
भूतं राजनि, नृपे । निर्गत्य, निष्क्रम्य, कटकात्, शिविरात् । गृहीत-  
स्वभावः, विदितचरितः, अहोभिः, दिवसैः, प्रसादजन्मनः, प्रसाद-  
जनस्य, विश्रम्भस्य, विश्वासस्य, द्रविणस्य, धनस्य, प्रभावस्य, प्रता-  
पस्य, परां कोटिं, परमोत्कर्षम् ।

इति श्रीबाणभट्टकृत हर्षचरिते व्याख्यायां

“आशुतोषिण्यां” द्वितीय उच्छ्वासः ।





❖ श्रीहर्षचरितम् ❖

तृतीय उच्छ्वासः

निजवर्षाहितस्नेहा बहुभक्तजनान्विताः ।

सुकाला इव जायन्ते प्रजापुण्येन भूभुजः ॥ १ ॥

साधूनामुपकर्तुं लक्ष्मीं द्रष्टुं विहायसा गन्तुम् ।

न कुतूहलि कस्य मनश्चरितं च महात्मनां श्रोतुम् ॥ २ ॥

निजेति—निजम्, स्वकीयम्, वर्षम्, जम्बुद्वीपदेशः, तस्मिन्  
आहितः, स्थापितः, स्नेहः, प्रेम, यैः ते । जम्बुद्वीपः, सर्ववस्तुसिद्धिदः,  
( अतःनृपास्तत्र स्नेहं प्रकुर्वन्ति-इति भावः ) ( पक्षे ) वर्षम्, वृष्टिः तेन  
आहितः, उत्पादितः, स्नेहः, आर्द्रता, यैस्तथा विधाः (सुकालाः हि वर्षया  
स्नेहं जनयन्ति ) बह्वीति—बहवः ये भक्तजना आमात्यप्रभृतयः, तैः,  
अन्विताः, युक्ताः, ( पक्षे ) बहूनि, अनन्तानि, भक्तानि शालीगोधूमा-  
दीनि अन्नानि तेषाम्, जननेन, उत्पादनेन, अन्विता इति भूभुजः,  
महीपालाः, सुकाला इव सुसमया इव प्रजेति—प्रजाः, प्रकृतयः, तासां  
पुण्येन शुभकार्यकरणेन ( प्रजायाः पुण्येनैव सौराज्यं सुकालश्च भव-  
तीतिभावः ) जायन्ते, प्रादुर्भवन्ति “जनिप्रादुर्भावे धातोः, लटि, भि,  
“ज्ञाजनोर्जा” इत्यनेन जादेशः ।” अत्र हि श्लिष्टार्थत्वात् श्लेषः,  
सुकालैः, सह नृपां साधुभ्यामुपमालंकारश्च ॥१॥

साधूनामिति—कस्य, मनुष्यस्य इति शेषः । मनः, चित्तम्,  
साधवः, सज्जनास्तेषामुपकर्तुमनुकूलम् विधातुम्, लक्ष्मीं, श्रियम्,  
द्रष्टुम्, साक्षात् कर्तुम्, ( लब्धुमिति भावः ) विहायसा गगनमार्गेण  
गन्तुं चलितुम् महात्मनां महांश्चासौ आत्मा येषाम्, तेषाम् । महा-  
शयानां चरितं, चरित्रम्, श्रोतुम् । कुतूहलि कुतूहलं कौतुकं तदस्ति  
यस्यतत् न उत्कण्ठितम् ( अर्थात् सर्वेषां जनानां मनः महाशयानां-

अथ कदाचिद्विरलितबलाहके, चातकातङ्ककारिणि, कणत्का-  
दम्बे, दर्दुरद्विषि, मयूरमदमुषि, हंसपथिकसार्थसर्वातिथौ, धौता-  
सिनिभनभसि, भास्वरभास्वति, शुचिशशिनि, तरुणतारागणे,  
गलत्सुनासीरशरासने, सीदत्सौदामनीदाम्नि, दामोदरनिद्रा-  
द्रुहि, द्रुतवैदूर्यवर्णार्णसि, घूर्णमानमिहिकालघुमेघमोघमघ्रवति,

चरितम्, श्रोतुम् भवतीति शेषः ) अत्र एकस्य मनसः, उपकृतुम्  
गन्तुं श्रोतुम् आदिभिः, क्रियाभिः, सह सम्बन्धत्वात् कारकदीपकालं-  
कारः ॥२॥ अथेतिक-दाचित् बाणो बन्धून् द्रष्टुम् पुनरपि ब्राह्मणाधि-  
वासमगादिति दूरेणान्वयः । किदृशेशरत्समयारम्भे विरलिताः, अनि-  
विडाः, बलाहकाः, जलदाः, यस्मिन्, तथा विधे । चातकेति—  
चातकाः, पक्षिविशेषाः तेषाम् आतङ्कः तापः तं करोति, तस्मिन् ।  
कणदिति—कणन्तः, नदन्तः, कादम्बाः हंसविशेषाः, यस्मिन्  
तस्मिन् । दुर्दुरेति—दुर्दुराः, मण्डूकाः, तान् द्वेष्टीति तस्मिन् ।  
मयूरेति—मयूराः, बर्हिणस्तेषाम् मदम्, गर्वं, मुष्णाति अपनयति  
तस्मिन् । हंसेति—हंसाः पक्षिविशेषा त एव पथिकाः, पान्थाः, तेषां  
सार्थाः, समूहाः, त एव सर्वे अतिथयः यस्य तथा विधे । धौतेति—  
धौतः, निर्मलीकृतः, यः असिः, खड्गः तन्निभं तत् सदृशं, नभः,  
आकाशं, यस्मिन् तथोक्ते । भास्वरेति—भास्वरः, प्रोज्ज्वलः,  
भास्वान्, सूर्यः यस्मिन् । शुचीति—शुचिः, विमलः शशी, चन्द्रः,  
यस्मिन् । तरुणेति—तरुणः, वृद्धिगतः तारागणः, उडुसमूहः, यस्मिन् ।  
गलदिति—गलत्, क्षयंगतं, सुनासीरस्य, धनुः, चापं यस्मिन् ।  
सीददिति—सीदन्ती, नश्यन्ती सौदामनी, विद्युदेव, दाम स्रक्  
यस्मिन् । दामोदरेति—दामोदरः, विष्णुः, तस्य निद्रा, शयनं, तां  
द्रुहति हरति यः तस्मिन् । द्रुतेति—द्रुतं, गलितं यद् वैदूर्यं, रत्नं

निमीलन्नोपे, निष्कुसुमकुटजे, निर्मुकुलकन्दले, कोमलकमले,  
मधुस्यन्दीन्दीवरे, कल्लाराह्लादिनि, शेफालिकाशीतलीकृतनिशे,  
यूथिकामोदिनि, मोदमानकुमुदावदातदशदिशि, सप्तच्छदधूलि-  
धूसरितसमीरे, स्तबकितबन्धुरबन्धूकबध्यमानाकाण्डसंध्ये,

तस्य वर्ण इव वर्णो यस्य तथाविधः, अर्णः, जलं यस्मिन् तथाविधे ।  
धूर्णमानेति—धूर्णमानाः, सर्वतो वर्णिताः, याः मिहिकाः, अवश्यायाः,  
तद्वल्लवः, जलाभावात्, अल्पीभूताः, ये मेघाः, पयोमुचः, तैः, मोघाः,  
निष्फलः, मघवा, इन्द्रः, यस्मिन् । निमीलदिति—निमीलन्तः,  
विकसनाभावात्, संकुचन्तः, ये, नीपाः, बालवकुलाः, यस्मिन् ।  
निष्कुसुमेति—निष्कुसुमाः, पुष्परहिताः, कुटजाः, वृक्षविशेषाः,  
यस्मिन् । निर्मुकुलेति—निर्मुकुलाः, कुमुमरहिताः, कन्दलाः, तरु-  
विशेषाः, यस्मिन् । कोमलेति—कोमलानि, मृदूनि, कमलानि,  
पद्मानि, यस्मिन् । मध्विति—मधुस्यन्दीति, मकरन्दवर्षाणि, इन्दी-  
वराणि, नीलोत्पलानि, यस्मिन् । कल्लाराह्लादिनि, सौगन्धिकाप-  
राख्यश्वेतोत्पलविकासिनी । शेफालिकेति—शेफालिकाभिः,  
तदाख्य पुष्पविशेषैः, शीतलीकृता, शीरारीकृता, निशारात्रि, यस्मिन् ।  
यूथिकामोदिनी, यूथिकापुष्पोद्भेदेन, आनन्दकारिणी । मोदमानेति—  
मोदमानैः, विकसद्भिः, कुमुदैः, कैरवैः, अवदाताः, सिताः, दशदिशः,  
यस्मिन् । सप्तच्छेदति—सप्तच्छदाः, तरुविशेषाः, तेषां धूलयः  
परागाः, तैः धूसरिताः, पाण्डुराः, समीराः, अनिलाः, यस्मिन् ।  
स्तबकेति—स्तवकिताः, पुञ्जभूताः, ये बन्धुराः, मनोहराः, बन्धूकाः,  
तरुविशेषाः, तैः, बध्यमानाः, क्रियमाणाः, अकाण्डे, अनवसरे,  
सन्ध्याः, निशामुखाः, यस्मिन् । नीराजितेति—नीराजिताः, स्मर-  
यात्रायै सम्पादितनीराजननाम्रीशान्तिः, यैः, तथाविधाः, वाजिनः,

१ नीराजितवाजिनि, उदामदन्तिनि, दर्पक्षीबौद्धके, क्षीयमाणपङ्क-  
चक्रवाले, वालपुलिनपल्लवितसिन्धुरोधसि, परिणामाश्यानश्या  
माके, जनितप्रियङ्गुमञ्जरीरजसि, कठोरित्रपुष्पत्वचि, कुसुमस्मेर  
शरे, शरत्समयारम्भे राज्ञः समीपाद्वाणो बन्धून्द्रष्टुं पुनरपि तं  
ब्राह्मणाधिवासमगात् ।

समुपलब्धभूपालसंमानातिशयपरितुष्टास्तस्य ज्ञातयः श्ला-  
घमाना निर्ययुः । क्रमेण च कांश्चिदभिवादयमानः, कैश्चिदभिवा-

तुरगाः, यस्मिन् । उदामेति—उत्, उत्कटं, दाम, मदं येषां, ते  
( क्षीवा इत्यर्थः ) दन्तिनः, करिणः, यस्मिन् । दर्पेति—दर्पः, अहं-  
कारः, तेन, क्षीवाणि, उन्मत्तानि, औक्षकाणि, उक्षाः, वलिवर्दाः,  
तेषां समूहाः औक्षकाणि, ( वृषभवृन्दानीतिभावः ) यस्मिन् । क्षीय-  
माणेति—पङ्काः, कर्दमाः, तेषां, चक्रवालं, समूहः, तत्, क्षीयमाणं,  
नश्यमानं, यस्मिन् । वालेति—वालपुलिनं, नूतनसैकतं, तत्र पल्लवि-  
तानि, प्रवाहरूपेण प्रसृतानि, यानि, सिन्धूनां, सरितां, रोधांसि,  
तटानि, यस्मिन् । जनितेति—जनितानि, उत्पन्नानि, प्रियङ्गूनां, तृण-  
भेदानां, मंजर्यं, तासां, रजांसि, परागाः, यस्मिन् । कठोरेति—  
कठोरिताः, कठिनाः, त्रपूषां, कर्कटीनां, त्वचः, बलकलानि यस्मिन् ।  
कुसुमेति—कुसुमानि, पुष्पाणि, तैः, स्मेराः, विकासंगताः, शराः,  
यस्मिन् । शरत्समयारम्भे, शरत्काले, इति पूर्वैणान्वयः । समुप-  
लब्धेति—सम्, सम्यक्, उपलब्धः, प्राप्तः, भूपालात्, महीपालात्,  
सम्मानातिशयः, आदरविशेषः, तेन परितुष्टाः, प्रसन्नाः । तस्य श्रीहर्ष-  
राज्ञः, ज्ञातयः, बान्धवाः, श्लाघमानाः, श्लाघनीयाः, निर्ययुः, निर्ज-  
ग्मुः । क्रमेण च कांचित् अभिवादयमानः प्रणामं कुर्वन् । कैश्चि-  
दिति—कैश्चित्, पूजनीयैः, पिताप्रपितामह प्रभृतिभिः, शिरसि,

द्यमानः, कैश्चिच्छिरसि चुम्ब्यमानः, कांश्चिन्मूर्ध्नि समाजिघ्रन् ,  
 कैश्चिदालिङ्ग्यमानः, कांश्चिदालिङ्गन्, अन्यैराशिषानुगृह्यमाणः,  
 परानुगृह्णन्, बहुबन्धुमध्यवर्ती परं मुमुदे । सम्भ्रान्तपरिजनोप-  
 नीतं चासनमासीनेषु भेजे । भजमानश्चार्चादिसत्कारं नितरां  
 ननन्द । प्रीयमाणेन च मनसा सर्वास्तान्पर्यपृच्छत्—‘कश्चि-  
 देतावतो दिवसान्सुखिनो यूयम् । अप्रत्यूहा वा सम्यकरणपरि-  
 तोषितद्विजचक्रा क्रातवी क्रियते क्रिया । यथावदविकलमन्त्र-

मस्तके, चुम्ब्यमानः, कृतचुम्बनः, कांश्चिन्, बान्धवपुत्रादीन्, समा-  
 जिघ्रन्, शिरसि चुम्बयन्, कैश्चिन् पूजनीयैः, आलिङ्ग्यमानः,  
 स्पर्शानागतः, कांश्चिन्, लघुबान्धवान्, आलिङ्गयन्, स्पर्शयन्, अन्यैः,  
 आशिषा, आशीर्वादेन, अनुगृह्यमाणः, अनुगृहीतः । परान्, लघून्,  
 अनुगृहीतान्, कुर्वन् । बह्वीति—वहवः, अनेकाः, बान्धवः, ज्ञातयः,  
 तेषां मध्यवर्ती, मध्येस्थितः, परमत्यन्तं, मुमुदे, पिप्रिये । सम्भ्रा-  
 न्तेति—सम्भ्रान्तः, त्वरायुक्तः, परिजनः, परिवारः, तेन, उपनीतं,  
 समीपे आनितं, यत्, आसनम्, विष्टरं, समासीनेषु, आसनान्युप-  
 स्थितेषु, गुरुषु, पुज्येषु, भेजे, सिपेवे, उपविष्टवान् । भजमानेति—  
 अर्चादयः, पूजाप्रभृतयः, तैः, यत् सत्कारं आदरम् तद् भजमानः,  
 सेवमानः, नितरां अत्यर्थं, ननन्द । प्रीयमाणेन, प्रसन्नभूतेन, मनसा,  
 तान्, ज्ञातिवर्गान्, सर्वान्, समस्तान्, पर्यपृच्छत् । कश्चिदिति—  
 इष्टप्रश्ने, एतावतोऽद्यावधीन्, दिवसान्, दिनान्, यूयं, सुखिनः,  
 सुखोपेताः । अप्रत्यूहाः, निर्विघ्नाः । सम्यगिति—सम्यकरणेन,  
 शास्त्रविहितेन, परितोषितानि, परितुष्टानि द्विजचक्राणि, ब्राह्मण-  
 समूहाः, यस्यां, सा, क्रातवी, यागसम्बन्धिनी क्रिया, क्रियते । यथा-  
 वदिति—अविकलानि, वैकल्यरहितानि, मन्त्राणि, भजन्ते, येषु,

भाञ्जि भुञ्जते हवींषि हुतभुजः । यथाकालमधीयते वा वटवः ।  
प्रतिदिनमविच्छिन्नो वा वेदाभ्यासः । कश्चित्स एव चिरंतनो-  
यज्ञविद्याकर्मण्यभियोगः, तान्येव व्याकरणे परस्परस्पर्धानुबन्धा-  
वन्ध्यदिवसदर्शितानि व्याख्यानमण्डलानि, सैव वा पुरा-  
तनी परित्यक्तान्यकर्तव्या प्रमाणगोष्ठी, स एव वा मन्दीकृतेतर-  
शास्त्ररसो मीमांसायामतिरसः । कश्चित्ते एव वाभिनवसुभाषि-  
तसुधावर्षिणः काव्यालापाः' इति ।

तादृशानि, हवींषि, हव्यानि, हुतभुजः, अग्नयः, भुञ्जते । यथेति—  
वटवः, विद्यार्थिनः, यथाकालं, निश्चितसमयं, अधीयते, अध्ययनं.  
कुर्वते । प्रतिदिनं, नित्यं, वेदाभ्यासः, श्रुतेरध्ययनम्, अविच्छिन्नाः,  
विच्छित्तिरहितः । (भवतीतिशेषः) कश्चित्, स एव, चिरन्तनः, पूर्व-  
कालिनः, अभियोगः, यत्रविशेषः । तानि एव व्याकरणे, शब्दशास्त्रे ।  
परस्परेति—परस्परं, मिथः, तस्य, स्पर्धा, जिगीषा, तस्याः, अनु-  
बन्धेन, निबन्धेन, अबन्ध्याः, फलदातारः, (सर्वदा शास्त्रपठनेन ज्ञान-  
वर्धनः-इति भावः) दिवसाः, दिनाः, तेषु, दर्शितानि, प्रकटिकृतानि,  
व्याख्यानानां, मण्डलानि, समूहाः, स एव, पूर्वसिद्ध एव, पुरातनी,  
पराचीनानि, परित्यक्तानि, विमुंचितानि, (उपेक्षितानीत्यर्थः) अकर्त-  
व्यानि, यस्यां तथाविधा, प्रमाणगोष्ठी, प्रमाणसभा, ( इतिभावः )  
स एव, पूर्वसिद्ध एव । मन्दीकृतेति—मन्दीकृतः, इतरेषु, शास्त्रेषु,  
रसो, रागो येन, मिमांसायाम्, अतिरसः, अनन्तरागः । कश्चिदिति—  
प्रश्ने त एव वा । अभिनवेति—अभिनवानि, नूतनानि, यानि सुभा-  
षितानि, तेषां सुधा, अमृतं तद्, वर्षिणः, निष्यन्दिनः, काव्यकलापाः,  
' सन्ति न वा ( इति शेषः ) ।

अथेति—अथ उक्तप्रश्न करणानन्तरम्, ते ज्ञातयः तं बाणम्,

अथ ते तमूचुः—‘तात, संतोषजुषां सततसंनिहितविद्या-  
विनोदानां वैतानवह्निमात्रसहायानां क्रियन्मात्रं नः कृत्यं सुखि-  
तया सकलभुवनभुजि भुजङ्गराजदेहदीर्घे रक्षति क्षितिं क्षितिभुजो  
भुजे । सर्वथा सुखिन एव वयम्, विशेषेण तु त्वयि विमुक्तकौ  
सीद्ये परमेश्वरपार्श्ववर्तिनि वेत्रासनमधितिष्ठति । सर्वे च  
यथाशक्ति यथाविभवं यथाकालं च संपाद्यन्ते विप्रजनोचिताः  
क्रियाकलापाः’ इत्येवमादिभिरालापैः स्कन्धावारवार्ताभिश्च  
शैशवातिक्रान्तक्रीडानुस्मरणैः पूर्वजकथाभिश्च विनोदितमनास्तैः

ऊचुः । तात, (इति आदरसूचकम्) सततेति सततं, निरन्तरम्,  
सन्निहिता, कण्ठस्थिता, या, विद्या, तया, विनोदः, येषां ते । वैता-  
नेति—वितानः, यागः, तस्यायं वैतानः, यज्ञसम्बन्धी, स चासौवह्निः,  
अग्निः । तन्मात्रमेव, सहायः, सहायकः, येषां तेषाम्, सन्तोषजुषाम्,  
सन्तोषधनानाम्, नः, अस्माकम्, क्रियन्, मात्रम्, अतिलघुः, कृत्यं,  
कर्तव्यम् अस्तीतिशेषः । सुखितया सुखेन । सकलेति—सकलानि,  
समप्राणि, भुवनानि, लोकाः । भुजते, यः, तस्मिन् । भुजंगेति—  
भुजङ्गाः, सर्पाः, तेषां, राजा, नृपः, तस्य, देहवन्, कायावन्, दीर्घे,  
गुरौ, क्षितिः, पृथ्वी, तां, भुनक्ति, इति तस्य, राज्ञः, श्रीहर्षस्य, भुजे,  
करे, क्षितिं, भूमिं, रक्षति, अवतिसति । विशेषेण, प्रायेण । विमु-  
क्तेति—विमुक्तं, कौसीद्यम्, आलस्यं, येन तस्मिन् । परमेश्वरः, सार्व-  
भौमः, तस्य पार्श्ववर्तिनि, समीपवर्तिनि, वेत्रासनम्, वेत्रविष्टरम्,  
अधितिष्ठति, त्वयि, सति, वयम्, सुखिन, एव । सर्वे, सकलाः, यथा-  
शक्तिः, यथा सामर्थ्यम्, यथाविभवं, यथाधनं, यथाकालं, यथा समयम्  
च विप्रजनोचिताः, ब्राह्मणोचिताः क्रियाकलापाः, सम्पाद्यन्ते इत्येव  
मादिभिः, आलापैः, स्कन्धावारवार्ताभिः । शैशवाति क्रान्तेति—

सह सुचिरमतिष्ठत् । उत्थाय च मध्यंदिने यथाक्रियमाणाः स्थितिरकरोत् । भुक्तवन्तं च तं सर्वं ज्ञातयः पर्यवारयन् ।

अत्रान्तरे दुकूलपट्टप्रभवे सिखण्डयपाङ्गपाण्डुनी पौण्ड्रे वाससी वसानः स्नानावसानसमये बन्धितया तीर्थमृदा गोरोचनया च रचिततिलकः, तैलामलकमसृणितमौलिः, अनुच्चचूडा-चुम्बिना निविडेन कुसुमापीडकेन समुद्रासमानः, असकृदुप-युक्ताम्बूलविमलाधरकान्तिः, एकशलाकाञ्जनजनितलोचनरुचिः,

शैशवं, बालभावः, तेनानिक्रान्तः, अतिक्रमिता या क्रीडा, केली, तामनु स्मरणैः । पूर्वैति—पूर्वजनानां, वृद्धानां कथाभिः, च, विनो-दितं मतः, यस्य, सः, तैः, ज्ञातिभिः, सह सुचिरं, बहुकालम्, अतिष्ठत् । उत्थाय च यथा क्रियमाणां, यथा सम्पाद्यमानं, स्थितिं, वासं, अकरोत्, भुक्तवन्तं, खाद्यन्तं, तं, सर्वं, सकलाः, ज्ञातयः, पर्यवारयन्, न्यवारयन्, अत्रान्तरेति—इत्यादौ पुस्तकवाचकः, सुदृष्टिः, आज्ञागाम इत्यनेना न्वयः । दुकूलपट्टः क्षोभतन्तुः तस्मात् प्रभवे, जाते शिखण्डी, मयूरः, तस्य अपाङ्गः, नयनप्रान्तः, तद्वत्, पाण्डुनी, श्वेते, पौण्ड्रे, पुण्ड्रदेशो-द्भवे, वाससी, वस्त्रे वसानः परिधारयन् । स्नानं, मज्जनं तदवसान-समये, अन्तर्कालं, तीर्थमृदा, पुण्यक्षेत्रमृत्तिकया, गोरोचना, तन्नाम द्रव्यम्, तथा रचितम्, तिलकं येन । तेन, आमलकेन, तच्चूर्णेनेन, मसृणितः, चिकणीकृतः मौलिः येन सः अनुच्चेति—अनुच्चा, निम्ना, या चूडा, शिखा, तांचुम्बती, निविडेन, सघनेन, कुसुमानाम् । आपीड-केन समूहेन समुद्रासमानः, प्रदीप्यमानः, असकृदिति—असकृत्, बारंबारं, उपयुक्तम्, चर्वितं, यत्ताम्बूलं, तेन, विमला, अधरस्य, कान्तिः, यस्य सः । एकेति—एकं यत् शलाकाञ्जनं तेन जनिता, लोचनयोः, रुचिः यस्य, सः, अचिरभुक्तः, सद्यः भोजनकृतः । नाति



अचिरभुक्तः, विनीतामार्यं च वेषं दधानः, पुस्तकवाचकः सुह-  
 ष्टिराजगाम । नातिदूरवर्तिन्यां चासन्द्यां निषसाद । स्थित्वा च  
 मुहूर्तमिव तत्कालापनीतसूत्रवेष्टनमपि नखकिरणैर्मृदुमृणाल-  
 सूत्रैरिव वेष्टितं पुस्तकं पुरोनिहितशरशलाकायन्त्रके निधाय,  
 पृष्ठतः सनीडसंनिविष्टाभ्यां मधुकरपारावताभ्यां दत्ते स्थानके  
 प्राभातिकप्रपाठकच्छेदचिह्नकृतमन्तरपत्रमुत्तिप्य, गृहीत्वा च  
 कतिपयपत्रलघ्वीं कपाटिकाम्, क्षालयन्निव मसीमलिनान्यक्ष-  
 राणि दन्तकान्तिभिः, अर्चयन्निव सितकुसुममुक्तिभिर्ग्रन्थम्,  
 मुखसंनिहितसरस्वतीनूपुरगवैरिव गमकैर्मधुरैराक्षिपन्मनांसि

दूरवर्तिन्यां, आसन्द्यां, वेत्रनिर्मितासने । ततेति—'तत्काले अध्य-  
 यनकाले, अपनीतं, दूरीकृतं, सूत्रवेष्टनमपि, नख किरणैः, कराग्रभा-  
 गमयूखैः मृदुमृणालसूत्रैरिव, कोमलकमलतन्तुभिरिव । पुर-इति—  
 पुरः, अग्रं, निहितं, स्थापितं यत् शरशलाकायन्त्रकम् ( पुस्तकारोप-  
 गाय शङ्खविशेषाणां निर्मितयन्त्रकम् ) तस्मिन्, पुस्तकं, निधाय, स्थाप्य  
 सनीडसन्, समीपं, निविष्टाभ्याम्, उपविष्टाभ्याम्, मधुकरपारावता-  
 भ्याम्, भ्रमरकपोताभ्याम् । प्रभातिकेति—प्रभातः, प्रभातकालः,  
 तस्यायं प्राभातिकः, यः प्रपाठः, तस्यच्छेदः, विरामः, तस्य, चिह्नकृतं,  
 दत्तचिह्नम् । ( इयन्मात्रं पठितं नान्यदिति सूचकं पत्रम् ) अन्तर-  
 पत्रम्, उत्तिप्य । कतिपयेति—कतिपयैः, पत्रैः, लघ्वी, स्वल्पतरा  
 तां कपाटिकां, पुस्तकावरणपट्टकम् । क्षालयन्निव, मसीमलिनानि,  
 लेखनद्रव्यरसः, मसी, तथा मलिनानि, अक्षराणि, दन्तकान्तिभिः,  
 दशनज्योत्स्नाभिः, अर्चयन्निव । सितेति—सितानां, धवलानां,  
 कुसुमानां, मुक्तिभिः, वृष्टिभिः । मुखेति—मुखे, संनिहिता, स्थिता  
 या सरस्वती तस्याः नूपुरागारगवैरिव शब्दैरिव । गमकैः, अर्थबोधकैः,

श्रोतॄणां गीत्या पवमानप्रोक्तं पुराणं पपाठ ।

तस्मिंश्च तथा श्रुतिसुभगगीतिगर्भं पठति सुदृष्टौ नातिदूर-  
वर्ती बन्दीसूचीबाणस्तारमधुरेण गीतिध्वनिमनुवर्तमानः स्वरे-  
णेदमार्यायुगलमपठत्—

‘तदपि मुनिगीतमतिपृथु तदापे जगद्व्यापि पावनं तदपि ।

हर्षचरितादभिन्नं प्रतिभाति हि मे पुराणमिदम् ॥ ३ ॥

वंशानुगमविवादि स्फुटकरणं भरतमार्गभजनगुरु ।

श्रीकण्ठविनिर्यातं गीतमिदं हर्षराज्यमिव ॥ ४ ॥

मधुरैः, मधुरसस्यन्दिभिः, श्रोतॄणां मनांसि, चित्तानि, आक्षिपन्,  
आकर्षयन् । श्रुतिः, वेदः, तथा सुभगा या, गीतिः, सा गर्भे यस्य तं  
पठति सति । नातिदूरवर्ती, समीपस्थायी यः, बन्दी, चारणाः सूचि-  
बाणाः, तदारूढ्यः चारणाः । गीर्तानि—गीत्याः, गीतिकायाः, ध्वनि  
शब्दमनुवर्तमानः, सन, स्वरेण उच्चैः, इदमार्यायुगलमपठत् ।  
तदपीति—तन्मुनिना, द्वैपायनेन, गीतं, कीर्तितमपि, तत् अतिपृथुः,  
अतिविस्तृतमपि ( पृथुः—आदिराजोवेनपुत्रश्च तमतिक्रान्तं तदति-  
शायीत्यर्थः ) तत् जगद्व्यापि, जगत्प्रसिद्धम्, पावनं, पवित्रमपि,  
इदं पुराणं, वाक्यमितिशेषः, हि, निश्चितम्, हर्षचरितात् अभिन्नं,  
भेदहीनम् मे मनः, प्रतिभाति । अत्र तादृशात्, पुराणात् हर्षचरि-  
तस्य भेदेऽपि अभेदकथनं भेदेऽप्यभेद प्रतिपत्तिरूपा अतिशयोक्तिः,  
आर्यावृत्तम् ॥ ३ ॥

वंशानुगमेति—वंशं, वेणुवाद्यं तदनुगच्छतीति तं ( पक्षे ) वंशं,  
कुलं तदनुगच्छतीति तम् । अविवादीति—न भवतः विवादिनौ,  
विरुद्धवक्तारौ स्वरौ यस्मिन् ( पक्षे ) न सन्ति विवादिनः, द्वेषारः यस्य  
तत् । स्फुटेति—स्फुटं, स्पष्टं, करणं, लयं ( स्वराणामारोहावरोहणम् )

तच्छ्रुत्वा वाणस्य चत्वारः पितामहमुखपद्मा इव वेदाभ्यासप-  
वित्रितमूर्तयः, उपाया इव सामप्रयोगललितमुखाः, गणपतिः,  
अधिपतिः, तारापतिः, श्यामल इति पितृव्यपुत्रा भ्रातरः, प्रस-  
न्नवृत्तयः, गृहीतवाक्याः, कृतगुरुपदन्यासाः, न्यायवादिनः,

यस्मिन् तन् ( पक्षे ) स्फुटानि, प्रकटीकृतानि, कारणानि, धर्मविद्या-  
दीनि, प्रजासुखार्थमुपायाः, यस्मिन् तन् । भरतेति— भरतः, संगीत-  
शास्त्रकारः, मुनिः, तस्य मार्गः, पन्था, तदनुशरणेन, गुरुः, महत्,  
( पक्षे ) भरतः, पूर्वभूतनृपः तस्य मार्गः, नीतिः, तद्भजनेन, अनु-  
चलनेन गुरुः । श्रीनीलकण्ठेति—श्रीनीलकण्ठः, महादेवः, तस्माद्  
विनिर्यातं, विशेषेण निःसृतम् ( पक्षे ) श्रीनीलकण्ठः, देशविशेषः,  
तस्मान्, निःसृतम् । हर्षेति—हर्षस्य, प्रमोदस्य, राज्यमिव ( पक्षे )  
एतन्नम्रः, श्रीहर्षस्य राज्यम् । अत्र हि हर्षगीतयोरर्थश्रिष्टत्वात्, श्रेयः,  
तद्वाच्यत्वाद्-उपमा ॥ ४ ॥

तन् आर्यायुगलं श्रुत्वा वाणस्य, तन्नामकवेः, चत्वारः, पितामहमुख-  
पद्मा इव परस्परस्य, मुखानि, व्यलोक्यन् इति दूरेणान्वयः । पितामहः,  
ब्रह्मा, तस्य मुखानि पद्म इव, पितामहमुखपद्माः, ते इव । वेदेति—  
वेदानाम्, अभ्यासेन, पुनः, पुनः, अनुशीलनेन, पवित्रिता, पूता,  
मूर्तिः, येषां, ते, उपाया इव, सामादयः, इव । सामेति—साम्नां, साम-  
वेदानां, प्रयोगेण, ललितानि, सुन्दराणि, मुखानि, आरम्भाश्च येषां  
ते । प्रसन्नेति—प्रसन्नाः, विशुद्धाः, सुबोधाः, च, वृत्तयः, जीविकाः,  
सुत्रविवरणाश्च, येषां ते । गृहीतेति—गृहीतानि, वाक्यानि, येषां ते  
( पक्षे ) गृहीतं, ज्ञातं वाक्यविवरणं ये ते । कृतेति—कृतः, गृहीतः,  
पूर्वजानां, पित्रादीनां, पदे न्यासः, यैः, ( अर्थात् महाशयानां पद्धति  
मनुसरन्तः ) ( पक्षे ) कृताः, सम्पादिताः, गुरवः, बहवः, पदानां,

सुकृतसंग्रहाभ्यासगुरवो लब्धसाधुशब्दाः, लोक इव व्याकरणेऽपि, सकलपुराणराजर्षिचरिताभिज्ञाः, महाभारतभावितात्मानः, विदितसकलेतिहासाः, महाविद्वांसः, महाकवयः, महापुरुषवृत्तान्तकुतूहलिनः, सुभाषितश्रवणरसरसायनाः, वितृष्णाः, वयसि वचसि यशसि तपसि सदसि महसि वपुषि यजुषि च प्रथमाः, पूर्वमेव कृतसंगराः, विवक्षवः, स्मितसुधाधवलितकपोलोदराः, परस्परस्य मुखानि व्यलोकयन् ।

सुप्रिङ्गानाम् न्यासः यैः । न्यायेति—न्यायम्, उपपत्तिमद्वचनं, न्यायशास्त्रं वा तद्वादिनः । सुकृतेति—सुकृतानां, पुण्यानां, संग्रहः, समूहः, तदभ्यासेन ( पक्षे ) सुष्ठुकृतः, यः, संग्रहः, व्याकरणमन्दर्भः तस्याभ्यासेन गुरवः, महान्तः, उपाध्यायाः, च । लब्धेति—व्याकरणे लब्धः, स्वीकृतः साधुशब्दानां, आलोकः यैः ते । सकलेति—सकलाः, समग्राः, पुराणराजर्षयः, पूर्वकालिकमन्वादयः, तेषां चरितानि, आचरणानि तत्र अभिज्ञाः, ज्ञातारः । महाभारतेति—महाभारते भावितः, अनुशीलितः, आत्म यैः, तथोक्ताः । विदिनेति—विदिताः, विज्ञाताः, सकलाः, समस्ताः, इतिहासाः, यैः तथोक्ताः । महाविद्वांसः, प्रख्यातमतयः । महेति—महापुरुषाणां, गुरुजनानां, वृत्तान्तानि, उदन्तानि, तत्र कुतूहलिनः । सुभाषितेति—सुभाषितानां, काव्यानां, आलापानां च श्रवणे आकर्षणे, यो, रसः, तस्य रसायनाः, निकषाः । वितृष्णा, विगतयानाभिलाषः । वयसि, अवस्थायाम् । कृतसङ्गराः (श्रीहर्षचरितं कथयितुं बाणमनुरूढ्य इति अन्योऽन्यं कृताङ्गीकाराः । विवक्षवः, वक्तुमिच्छवः । स्मितेति—स्मितं, ईषद् हसनं, तदेवसुधा अमृतं, तया, धवलितं, यत्, कपोलं, गण्डस्थलम्, तस्य उदरं, मध्यभागः, येषां ते । कमलेति—कमलदलवत्, पद्मपत्रवत्, दीर्घ-

अथ तेषां कनीयान्कमलदलदीर्घलोचनः श्यामलो नाम  
 बाणस्य प्रेयान्प्राणानामपि वशयिता दत्तसंज्ञस्तैः सप्रणयं दशन-  
 ज्योत्स्नास्नापितककुभामुखेन्दुना बभाषे—‘तात !, बाण !, द्विजानां  
 राजा गुरुदारग्रहणमकार्षीत् । पुरुरवा ब्राह्मणधनतृष्णया दयि-  
 तेनायुषा व्ययुज्यत । नहुषः परकलत्राभिलाषी महाभुजङ्ग  
 आसीत् । ययातिराहितब्राह्मणीपाणिग्रहणः पपात । सुयुम्नः  
 स्त्रीमय एवाभवत् । सोमकस्य प्रख्याता जन्तुवधनिवृणता ।  
 मांधाता मार्गणव्यसनेन सपुत्रपौत्रो रसातलमगात् । पुरुकुत्सः  
 कुत्सितं कर्म तपस्यन्नपि मेकलकन्यकायामकरोत् । कुवलयाश्वो

लोचनः, आयतनेत्रः । प्रेयान् अधिकप्रियः, वशयिता, वशीकर्तुं  
 ममर्थः, दत्तसंज्ञः, कृतसंकेतः । दशनेति—दशनानां, दन्तानां, या  
 ज्योत्स्ना, कान्तिः, तथा, स्नापिताः, प्रक्षालिताः, ककुभाः, दिशाः येन  
 तत् मुखेन्दुना, बभाषे । द्विजानां राजा, चन्द्रः, गुरोः, बृहस्पतेः,  
 दारग्रहणं, स्त्रीहरणम् । पुरुरवा, एतन्नाम राजा, ब्राह्मणस्य, धनानि,  
 द्रव्याणि, तेषु, तृष्णा, ग्रहणेच्छा, दयितेन, प्रियेण, आयुषा, जीवि-  
 तेन, तन्नामपुत्रेण च । नहुषः, आयुषो तनयः, परस्य, अन्यस्य, कल-  
 त्राभिलाषी, नारीच्छुकः, महाभुजङ्गः, महासर्पः, । ययातिः, एतन्नाम-  
 राजा, अहितेति—अहितः, कृतः, ब्राह्मण्याः, ब्राह्मणकन्यायाः,  
 पाणिग्रहणः, येन तथोक्तः । सुयुम्नः, सुष्ठु, युम्नं धनं बलं च यस्य सः,  
 स्त्रीमयः, स्त्रीरूपः, सोमकस्य, तन्नानृपस्य प्रख्याता, प्रसिद्धा, जन्तुः,  
 जन्तुनाम तत्पुत्रः, प्राणिः च तस्य वधेन, हत्यया, निवृणता, निवृ-  
 रता । मांधाता, नृपः, मार्गणेति—मार्गणेषु, शरेषु, व्यसनं, समासक्तिः,  
 यांचा सातत्यं च तेन रसातलं, पातालं, अगात्, गतवान्, पुरुकुत्सः,  
 तन्नामराजा तपस्यन्, तपस्याकुर्वन्, मेकलकन्यकायां, नर्मदायां

- भुजङ्गलोकपरिग्रहादश्वतरकन्यामपि न परिजहार । पृथुः प्रथम-  
पुरुषकः परिभूतवान्पृथिवीम् । नृगस्य कृकलासभावे वर्णसंकरः  
समदृश्यत । सौदासेन नरक्षिता पर्याकुलीकृता क्षितिः । नलम-  
वशात्तद्दृश्यं कलिरभिभूतवान् । संवरणो मित्रदुहितरि विक्ल-  
वतामगात् । दशरथ इष्टरामोन्मादेन मृत्युमवाप । कार्तवीर्यो  
गोब्राह्मणातिपीडनेन निधनमयासीत् । मरुत्त इष्टबहुसुवर्णको-  
ऽपि देवद्विजबहुमतो न बभूव । शंतनुरपिव्यसनादेकाकी

( रेवा तु नर्मदा सोमोद्भवा मेकल कन्या “इत्यमरः ) कुत्सितं कर्म  
अकरोत् । कुवल्याश्वः, राजा, भुजङ्गलोक परिग्रहात्, नागलोकगमनात्,  
अश्वतरकन्या, अश्वतरः, कश्चिन्नागः, तस्यकन्यां न परिजहारः,  
न तत्याजः । पृथुः आदिराजः, वेणु तनयः, प्रथमेति—प्रथमः आद्यः  
मुख्यश्च, पुरुष एव पुरुषकः कदर्यपुरुषश्च, पृथ्वी, परिभूतवान् ।  
नृगस्य, एतदाख्यस्य नृपस्य, कृकलासभावे कृकलासः (सरटः क्षुद्रप्रा-  
णिभेदः) तद्भावे तत्स्वरूपे वर्णोति—वर्णानां शुक्तादीनां संकरः संमिश्रणम्,  
समदृश्यत, सौदानेन, एतन्नाम्नाराज्ञा, नरक्षिता, नपालिता, पर्याकुलीकृता,  
समन्तात्, आकुलतां, प्राप्ता, क्षितिः, पृथ्वी । अवशात्तद्दृश्यं, नवशं,  
अनायतम्, अन्नाणि, इन्द्रियाणि, हृदयं, मनश्च, अक्षहृदयं, अक्ष-  
ज्ञानश्च यस्य तथा भूतम् नलम् । संवरणः, नामनृपः, मित्रस्य, सुहृदः,  
दुहितरि, कन्यायां, विक्लवतां, विह्वलतां, अगात्, कार्तवीर्यः, नाम-  
राजा । गोब्राह्मणेति—गवे, गोनिमित्तम् ब्राह्मणस्य, जमदग्नेः,  
गवां ब्राह्मणानां च अतिपीडनेन, वधेन, निधनं, नाशं, अयासीत्,  
अगात्, मरुतः, इष्टेति—इष्टः, अनुष्ठितः, बहूनि, सुवर्णानि यस्मिन्  
तथाभूतः, इष्टः, अभिमतः, बहु, अतिशयेन, सु-शोभनं, वर्णः, गौर-  
स्वरूपः यस्य तथाभूतः, देवद्विजः, बृहस्पतिः, देवाः, द्विजाः, विप्राश्च

वियुक्तो वाहिन्या विपिने विललाप । पाण्डुर्वनमध्यगतो मत्स्य  
इव मदन रसाविष्टः प्राणान्मुमोच । युधिष्ठिरो गुरुभयविषण्ण-  
हृदयः समरशिरसि सत्यमुत्सृष्टवान् । इत्थं नास्ति राजत्वमप-  
कलङ्कमृते देवदेवादमुतः सर्वद्वीपभुजो हर्षात् । अस्य हि बहू-  
न्याश्चर्याणि श्रूयन्ते । तथा हि—अत्र बलजिता निश्चलीकृता-  
श्चलन्तः कृतपक्षाः क्षितिभृतः । अत्र प्रजापतिना शेषभोगिमण्ड-  
लस्योपरि क्षमा कृता । अत्र पुरुषोत्तमेन सिन्धुराजं प्रमथ्य

तेषां बहुमतः, बह्वादृतः । अतिव्यसनान्, अत्यासंगान्, वाहिन्या,  
नद्या, गङ्गादेव्या, सेनया च, वियुक्तः, एकाकी, विपिने, वने विललाप ।  
पाण्डुः, नामराजा, वनमध्यगतः, अरण्यगतः, जलमध्यगश्च, मदनः,  
कामः, फलभेदश्च तस्य रसाविष्टः मत्स्य इव, मीन इव, प्राणान्  
मुमोच । युधिष्ठिरः, पाण्डोः ज्येष्ठतनयः । गुर्वान्ति—गुरोः, महतः,  
आचार्यान् च भयः तेन विषण्णं, विन्नं हृदयं यस्य तथोक्तः, समर-  
शिरसि सत्यं ऋतं, उत्सृष्टवान्, अत्यजन् । इत्थं, एवम्प्रकारं, अप-  
कलङ्कं, निर्दोषं, देवदेवान्, राजाधिराजान् । सर्वद्वीपभुजः, सर्वान्,  
समग्रान्, द्वीपान् भुनक्ति इति तस्मात् हर्षात्, एतन्नाम नृपान् ।  
अत्र, जगति, बलं, शत्रुसैन्यं, बलाख्यं अमुरं च, जितवान् तेन  
(हर्षेणेतिशेषः) चलन्तः, विरोधितया व्यवहरन्तः, ( पक्षे ) शालितया  
उड्डीयमानाश्च, कृताः, पक्षाः, सहायाः यैः ( पक्षे ) धृताः, पक्षाः, पत्राणि,  
यैः, तथोक्ताः । क्षितिभृतः, राजानः, पर्वताश्च निश्चलीकृताः, निजि-  
तत्वान्, वशीकृताः, पक्षेदेदनात् स्थावरतां नीताश्च । प्रजापतिना,  
राज्ञा, ब्रह्मणा च । शेषेति—शेषस्य, निहतावशिष्टस्य, भोगिनां,  
नानाभोगरतां (राज्ञामितिभावः) मण्डलस्य, चक्रस्य (पक्षे) शेषस्य,  
भोगिनः, नागस्य मण्डलस्य फणस्य च उपरि क्षमा, शान्तिः, पृथ्वी,

लक्ष्मीरात्मीकृता । अत्र बलिना मोचितभूभृद्वेष्टनो मुक्तो महा-  
नागः । अत्र देवेनाभिषिक्तः कुमारः । अत्र स्वामिनैकप्रहारपाति-  
तारातिना प्रख्यापिता शक्तिः । अत्र नरसिंहेन स्वहस्तविशसि-  
तारातिना प्रकटीकृतो विक्रमः । अत्र परमेश्वरेण तुषारशैलभुवो  
दुर्गाया गृहीतः करः । अत्र लोकनाथेन दिशां मुखेषु परिकल्पिता

च कृता, विहिता, निहिता, च । पुरुषेति—पुरुषेषु, उत्तमः, श्रेष्ठः तेन  
राज्ञा नारायणेन च सिन्धुराजं, सिन्धुदेशाधिपतिं क्षीरसागरश्च  
प्रमथ्य, निर्जित्य, विलोड्य च लक्ष्मीः, राजश्रीः, कमला च, आत्मी-  
कृता, स्वीकृता । बलिना, बलवता, अमुरराजेन, च महानागः, महान्  
रणहस्ती, वासुकिश्च । मोचितेति—मोचितम्, दूरीकृतम् भूभृद्भिः,  
अरिभूतैः, वेष्टनम्, अवरोधनम्, यस्य सः ( पक्षे ) भूभूतः, मन्दिरस्य  
वेष्टनं, यस्य, सः, मुक्तः, परित्रातः, सागरमन्थनात् त्यक्तश्च । देवेन,  
राज्ञा, देवराजेन, च कुमारः, निजजनयः, गुडश्च, अभिषिक्तः, प्रतिष्ठा-  
पितः, यौवराज्ये, सेनापत्ये च, (इति शेषः) स्वामिना, प्रभुणा सेना-  
पतिना गुह्येन च । एकेति—एकेन प्रहारेण, शरावातेन, प्रकर्षेण च  
पातिता अरातयः, शत्रवः राजानः तारकादयोऽसुराश्च येन तथा  
भूतेन । शक्तिः, सामर्थ्यं, तदाख्यमस्त्रं च, नरसिंहेन, राज्ञा नृहरिणा  
च । स्वहस्तेति—स्वहस्तेन न तु सैन्यसहायेन, चक्रादिनिजास्त्रेण  
च, विशसिताः, निहताः, विदारिताश्च अरातयः, शत्रवः, हिरण्य-  
कशिपुप्रभृतयश्च । येन तथोक्तेन । परमेश्वरेण, सार्वभौमेन, हरेण च,  
तुषारशैलभुवः, हिमालयप्रदेशभूमेः, हिमगिरिजातायाश्च, दुर्गायाः,  
दुर्गमायाः, गौर्याश्च, गृहीतः करः, बलिः, पाणिश्च । लोकनाथेन,  
नरपतिना, विधात्रा, च, दिशां मुखेषु, दिशि दिशि इति यावत् ( पक्षे )  
दिशां मुखेषु निःसरणमार्गेषु च ( सीमान्तदेशेषु इति यावत् ) परि-



लोकपालाः सकलभुवनकोशश्चाद्यजन्मनां विभक्तः, इत्येवमा-  
दयः प्रथमकृतयुगस्येव दृश्यन्ते महासमारम्भाः । अतोऽस्य सुगृ-  
हीतनाम्नः पुण्यराशेः पूर्वपुरुषवंशानुक्रमेणादितः प्रभृति चरि-  
तमिच्छामः श्रोतुम् । सुमहान्कालो नः शुश्रूषमाणानाम् । अय-  
स्स्कान्तमणय इव लोहानि नीरसनिष्ठुराणि जुल्लकानामप्याक-  
र्षन्ति मनांसि महतां गुणाः, किमुत स्वभावसरसमृदूनीतरेषाम् ।  
कस्य न द्वितीयमहाभारते भवेदस्य चरिते कुतूहलम् । आचष्टां  
भवान् । भवपु भार्गवोऽयं वंशः शुचिनानेन राजर्षिचरितश्रवणेन  
सुतरां शुचितरः' इत्येवमभिधाय तूष्णीमभूत् ।

बाणस्तु विहस्याब्रवीत्—‘आर्य, न युक्त्यनुरूपमभिहितम् ।  
अघटमानमनोरथमिव भवतां कुतूहलमवकल्पयामि । शक्याश-

कल्पिताः, नियोजिताः, लोकपालाः, प्रजापालाः, इन्द्रादयश्च । सकल-  
भुवनकोशः, सर्वजगतां धनं, सकलभुवनमेवकोशः, धनभण्डारश्च  
अग्रजन्मनां, ब्राह्मणानां, आदिनृपाणां, भ्रमणानाञ्च विभक्तः, विभ-  
ज्यदत्तः । प्रथमयुगस्येव, सत्ययुगस्येव, महारम्भाः, महान्ति कार्याणि  
अचलपक्षच्छेदनादय व्यापारा इति यावत्, तेषामारम्भाः । शुश्रूषमा-  
णानां, श्रोतुमिच्छताम् । आयस्स्कान्तमणयः, लोहस्कान्तमणयः ।  
नीरसनिष्ठुराणि, नीरसात्, रसशून्यत्वात्, निष्ठुराणि, कठोराणि,  
जुल्लकानां, खलानां, ( जुल्लकस्त्रिषु नीचेऽल्पे इति मेदिनी ) द्वितीय-  
महाभारते, द्वितीयमहाभारत सदृशे, आचष्टां, कथयतु । भार्गवः, भृगु-  
गोत्रजातः । सुतराम्, अतिशयेन, शुचितरः, पूतरः ।

युक्त्यनुरूपं, युक्त्यनुकूलं, अभिहितम्, कथितम् । अघटमा-  
नेति—अघटमानः, असम्पन्नतां गच्छन्, मनोरथः, यस्य तथाभूतम्,  
अवकल्पयामि, अवधारयामि । शक्येति—शक्यं, साध्यं, अशक्यं,

क्यपरिसंख्यानशून्याः प्रायेण स्वार्थतृषः । परगुणानुरागिणी  
प्रियजनकथाश्रवणरसरभसमोहिता च मन्ये महतामपि मतिर-  
पहरति प्रविवेकम् । पश्यत्वार्यः क परमाणुपरिमाणं वदुहृदयम्,  
क समस्तब्रह्मस्तम्भव्यापि देवस्य चरितम् । क परिमितवर्ण-  
वृत्तयः कतिपये शब्दाः, क संख्यातिगास्तद्गुणाः । सर्वज्ञस्याप्य-  
यमविषयः, वाचस्पतेरप्यगोचरः, सरस्वत्या अप्यतिभारः, किमु-  
तास्मद्विधस्य । कः खलु पुरुषायुषशतेनापि शक्नुयादविकल-  
मस्य चरितं वर्णयितुम् । एकदेशे तु यदि कुतूहलं वः, सज्जा  
वयम् । इयमधिगतकतिपयाक्षरलवलघीयसी जिह्वा कोपयोगं

असाध्यम्, तयोः, परिसंख्यानं, परिगणनं, तेन शून्याः, रहिताः ।  
स्वार्थतृषः, स्वार्थकार्यतृषिनाः । प्रियेति—प्रियजनस्य कथाश्रवणे यो  
रसः, रागः तस्य रभसेन, अनिशयेन, मोहिता । प्रविवेकम्, प्रकृष्ट-  
ज्ञानम् । परमाणुपरिमाणम्, अतिक्षुद्रम् । वदुहृदयम्, द्विजशिशु-  
मानसम् । समस्तेति—समस्तः, सकलः, ब्रह्मस्तम्भः, ब्रह्मखण्डं  
तद्व्यापि, देवस्य, हर्षस्य । परिमिनेति—परिमितानां, परिगणितानां,  
वर्णानां, अक्षराणां, वृत्तयः, रचनानि यत्र तथा भूताः । संख्यातिगाः,  
संख्याः, एकादिपरार्द्धपर्यन्ताः, ताः, अतिगच्छन्ति, अतिशेते इति  
तथोक्ताः, तद्गुणाः देवस्य, हर्षस्य, गुणाः । अयं, हर्षचरितरूपः,  
सर्वज्ञस्य, परमेश्वरस्य, अविषयः, वृहस्पतेः, देवगुरोः, अपि, अगोचरः,  
सरस्वत्या, भारत्या, वाण्या अपि अतिभारः । पुरुषेति—पुरुषस्य,  
आयुः, जीवितकालः, तस्य शतं, (शतवर्षाणीत्यर्थः) तेषां शतेन । अवि-  
कलं, सम्यक् । वर्णयितुं, कथयितुं । सज्जाः, प्रस्तुताः । अधिगतेति—  
अधिगतः, ज्ञातः, कतिपयानां, अक्षराणां, लवः, लेशः, तेन, लघी-  
यसी, ( यत्किञ्चित् वर्णयितुं क्षमा-इति भावः ) जिह्वा, रसना, कं,

गमिष्यति । भवन्तः श्रोतारः, वर्ण्यते हर्षचरितम्, किमन्यत् ।  
अद्य तु परिणतप्रायो दिवसः । पश्चाल्लम्बमानकपिलकिरणजटा-  
भार भास्वरो भगवान्भार्गवो राम इव समन्तपञ्चकरुधिरमहा-  
हृदो निमज्जति संध्यारागपटले पूषा । श्रो निवेदयितास्मि' इति ।  
सर्वे च ते 'तथा' इति प्रत्यपद्यन्त । नातिचिरादुत्थाय संध्यामु-  
पासितुं शोणमयासीत् ।

अथ मधुमदपल्लवितमालवीकपोलकोमलातपे मुकुलितेऽहि,  
कमलिनीमलनादिव लोहिततमे तमोलिहि रवौ लम्बमाने, रवि-  
रथतुरगमार्गानुसारेण यममहिष इव धावति नभसि तमसि,

उपयोगं, उपकारितां गमिष्यति । न कुत्रापि इति भावः । परिणत-  
प्रायः, प्रायेण परिणतः, अवसितः । पश्चादिति—पश्चान्, पश्चि-  
मायां दिशि, पृष्ठदेशे च । लम्बमानेति—लम्बमानः, पतन्, कपिलः,  
पिङ्गलः, किरणः, मयूरवः, एव जटाभारः, इव, केशसमूह इव, तेन  
भास्वरः, दीप्यमानः, राम इव, परशुराम इव । समन्तेति—समन्त-  
पञ्चकं, कुरुक्षेत्रं, तत्र यन् रुधिरं ( कौरवादीनां रक्तम् ) तेन यः महान्  
हृदः तस्मिन् । सन्ध्येति—सन्ध्यायाः, रागाः, लौहित्यानि, तेषां  
पटलं, समूहः तस्मिन्, पूषा, सूर्यः ( विकर्त्तनार्कमार्तण्डमिहिरारुण-  
पूषणः “इत्यमरः ) प्रत्यपद्यन्तः, स्वीकृतवन्तः । अथेत्यारम्भ गोष्ठ्या  
तस्थौ इत्यनेनान्वयः । मध्विति—मधुमदेन, मद्यपानजनितेन,  
उल्लासेन, पल्लवितः, प्रकुल्लः, मालव्याः, मालवदेशीयनार्याः, कपोलः,  
गण्डः, तद्वत् कोमलः, आतपः, प्रभा यस्य तथाभूते । मुकुलिते, अवि-  
कसिते, कमलिनी, मलनादिव, पद्मनीमालिन्यदर्शनादिव, लोहिततमे,  
अतिरक्ते, तमोलिहि, तिमिरध्वंसिनि, रवौ, सूर्ये लम्बमाने । रवीति—  
रविरथः, सूर्यरथः, तस्य, गुरुणाः तेषां मार्गानुसारेण, यममहिष इव

क्रमेण च गृहतापसकुटीरकपटलावलम्बिषु रक्तातपच्छेदैः सह  
संहतेषु वल्कलेषु, कलिकल्मषमुषि पुष्पाति गगनमग्निहोत्रधाम-  
धूमे, सनियमे यजमानजने मौनव्रतिनि, विहारवेलाविलोले  
पर्यटति पत्नीजने, विकीर्यमाणहरितश्यामाकशालिपूलिकासु  
दुग्धासु होमकपिलासु, हूयमाने वैतानतनूनपाति, पूतविष्टरोप-  
विष्टे कृष्णाजिनजटिले जटिनि जपति षट्जने, ब्रह्मासनाध्या-  
सिनि ध्यायति योगिगणे, तालध्वनिधावमानानन्तान्तेवासिनि

नभसि, आकाशे, तमसि, अन्धकारे, धावति, सति । गृह-इति—गृह-  
तापसानां, गृहस्थतपस्विनां, कुटीरकाणां, क्षुद्रगृहाणां, पटलानि,  
छदीषि, ( अथ पटलं छदिः “इत्यमरः ) आलम्बन्ते इति तथोक्तेषु ।  
रक्तातपच्छेदैः, रक्तवर्णसूर्यमयूरवखण्डैः, सह संहतेषु, आकृष्यनीतेषु,  
वल्कलेषु, तरुत्वक्षु । कलिकल्मषमुषि, कलिकालजनिनपापहारिणि,  
पुष्पाति, व्याप्नुवति, अग्निहोत्रधामधूमे, होमगृहधूमे, सनियमे, सुसं-  
यते, यजमानजने, याज्ञिकवर्गे, मौनव्रतिनि, तुष्णिगव्रतधारिणि ।  
विहारेति—विहारस्य, वेला तेन विलोले, चंचले । विकीर्यमाणेति—  
विकीर्यमाणाः, प्रक्षिप्यमाणाः, हरिताः, श्यामलाः श्यामाकशालीनां,  
श्यामाख्यव्रीहिभेदानां, पूलिकाः, गुच्छाः, याभ्यः, तासु, दोहनकाले,  
होमकपिलासु, यज्ञधेनुषु, दुग्धासु, कृतदोहासु, हूयमाने, हविषा-  
सन्तर्प्यमाणे, वैतानतनूनपाति, यज्ञीयाम्नौ, ( जातवेदास्तनूनपात् “इत्य-  
मरः ) पूतेति—पूते, पवित्रे, विष्टरे, आसने, उपविष्टः तस्मिन् ।  
कृष्णाजिनजटिले, कृष्णामृगचर्मवृते, जटिनि, जटाधारिणि, जपति,  
षट्जने, द्विजजने । ब्रह्मेति—ब्रह्मासनं, आसनविशेषः, तत् अध्यासते  
इति तथोक्ते । ध्यायति, चिन्तयति । तालेति—तालध्वनिः, संकेतार्थ-  
मंगुलिशब्दविशेषः, तेन धावमानाः, सत्वरमापतन्तः, अनन्ताः,

अलसवृद्धश्रोत्रियानुमतेन गलद्ग्रन्थदण्डकोद्धारिणि संध्यां  
समवधारयति वठरविटवटुसमाजे, समुन्मज्जति च ज्योतिषि  
तारकाख्ये खे, प्राप्ते प्रदोषारम्भे भवनमागत्योपविष्टः स्निग्धैर्ब-  
न्धुभिश्च सार्धं तयैव गोष्ठ्या तस्थौ । नीतप्रथमयामश्च गणपते-  
र्भवने परिकल्पितं शयनीयमसेवत । इतरेषां तु सर्वेषां निमीलि-  
तदशामप्यनुपजातनिद्राणां कमलवनानामिव सूर्योदयं प्रतिपा-  
लयतां कुतूहलेन कथमपि सा क्षपा क्षयमगच्छत ।

अथ यामिन्यास्तुर्ये यामे प्रतिबुद्धः स एव वन्दो श्लोकद्वय-  
मगायत्—

‘पश्चादङ्घ्रिं प्रसार्य त्रिकनतिविततं द्राघयित्वाङ्गमुच्चै-

अशेषाः, सर्वे, अन्तेवासिनः, छात्राः, यस्य तथाभूते । अलसंति—  
अलसः, मन्थरः, वृद्धः, स्थविरः, श्रोत्रियः, छान्दसः, वेदोपाध्यायः,  
इत्यर्थः, तस्यानुमतं तेन । गलदिति—गलतः, स्वलतः, ग्रन्थदण्ड-  
कान्, ऋग्विशेषान्, उद्गिरति, उच्चारयति, इति तथोक्ते, सन्ध्यां,  
सन्ध्याकालिकोपासनाविशेषं, समवधारयति, समालोचयति, वठरेति-  
वठराः, अबोधाः, विटाः, दुर्गृह्यताः ये वटवः, द्विजशिशवः, तेषां समाजः,  
सङ्घः तस्मिन् । समुन्मज्जति, समुन्मीलति, तारकाख्ये, नक्षत्रनाम्नि,  
खे, आकाशे, प्राप्ते, उपस्थिते, प्रदोषारम्भे, गोष्ठ्या, समाजेन, तस्थौ ।  
नीतप्रथमयामः, अवतीतपूर्वप्रहरः, परिकल्पितं, रचितम् । निमीलि-  
तेति—निमीलिता, दृक्, लोचनं यैः, तेषाम् । अनुपजाता,  
नप्रादुर्भूता, निद्रा, येषां, तेषाम्, प्रतिपालयतां, प्रतीक्षांकुर्वताम्, क्षपा,  
रात्रिः, क्षयं, नाशम् । तुर्ये, चतुर्थे, यामे, प्रहरे, प्रबुद्धः, त्यक्तनिद्रः ।  
पश्चादिति—शयनादुत्थितः, प्रबुद्धः, तुरङ्गः, अश्वः, पश्चादङ्घ्रिं,  
पृष्ठभागस्थितपदद्वयम्, त्रिकस्य, पृष्ठवंशधरस्य, ( पृष्ठवंशधरेत्रिकम्,

रासज्याभुग्नकण्ठो मुखमुरसि सटा धूलिधून्ना विधूय ।  
 घ्रासघ्रासाभिलापादनघरतचलत्प्रोथतुण्डस्तुरंगो  
 मन्दं शब्दायमानो विलिखति शयनादुत्थितः क्षमां खुरेण ॥ ५ ॥  
 कुर्वन्नाभुग्नपृष्ठो मुखनिकटकटिः कंधरामातिरश्रीं  
 लोलेनाहन्यमानं तुहिनकणमुचा चञ्चता केसरेण ।  
 निद्राकण्डूकपायं कपति निविडितश्रोत्रशुक्तिस्तुरङ्गः  
 त्वङ्गत्पद्माग्रलघ्नप्रतनुवुसकणं कोणमक्षयः खुरेण ॥ ६ ॥

इत्यमरः) नत्या वित्तं, विस्तृतं, यथा तथा प्रसार्य, विस्तार्य, अंगं,  
 अवयवम्, उच्चैः, द्राघयित्वा, दीर्घीकृत्य, आभुग्नकण्ठः, नमिनगलः,  
 सन्, मुखं, उरसि, वक्षसि, आसज्य, स्पर्श्य, धूलिभिः, रजोभिः,  
 धून्नाः, धूसराः, सटाः, जटाः, विधूय, प्रकम्प्य, घासानां, शप्पाणां,  
 घ्रासे, कवलने, अभिलापः, तस्मान्, अनवरतं, निरन्तरं, चलत्,  
 स्फुरत्, प्रोथं नासिका यस्य तादृशम् (प्रोथोऽस्त्री हयघोणायां “इति-  
 मेदिनी” घोणानासा च नासिका “इत्यमरः) तुण्डं, वदनं यस्य तथोक्तः  
 ( तुण्डमाननंलपनंमुखम् “इत्यमरः) मन्दं, शब्दायमानः, शब्दं कुर्वन्  
 खुरेण क्षमां, भुवं, विलिखति, कुट्टयति, अत्र प्रातरुत्थितस्याश्वस्य-  
 स्वभावकथनात् स्वभावोक्तिः, स्त्रगधरा वृत्तं ॥ ५ ॥

कुर्वन्निति—तुरङ्गः, अश्वः, निविडिते, कुञ्चिते, श्रोत्रे, कर्णौ,  
 शुक्ती इव मुक्तास्फोटाविव येन यस्य वा तथोक्तः, तथा, आभुग्नं,  
 आकुञ्चितं पृष्ठं येन तथोक्तः, मुखस्य निकटे, सन्निधौ, कटिः, मध्य-  
 भागः, यस्य तथाभूतः, कन्धरां, ग्रीवां, आतिरश्रीम्, आभंगुरां,  
 कुर्वन्, लोलेन, चपलेन, तुहिनकणमुचा, शिशिरविन्दुवर्षिणा, चञ्च-  
 लता, स्फुरता, केसरेण, जटाजालेन, आहिन्यमानं, सन्ताड्यमानं,  
 निद्राकण्डूः, निद्राऽऽवेशावशेषः, तया, कपायः, आविलः, तम्, अक्षयः,

बाणस्तु तच्छृत्वा समुत्सृज्य निद्रामुत्थाय प्रक्षाल्य वदनमुपा-  
स्य भगवतीं संध्यामुदिते भगवति सवितरि गृहीतताम्बूलस्तत्रै-  
वातिष्ठत् । अत्रान्तरे सर्वेऽस्य ज्ञातयः समाजग्मुः, परिवार्य  
चासांचक्रुः । असावपि पूर्वोद्धातेन विदिताभिप्रायस्तेषां पुरो  
हर्षचरितं कथयितुमारंभे—

श्रूयताम्—अस्ति पुण्यकृतामधिवासो वासवावास इव  
वसुधामवतीर्णः सततमसंकीर्णवर्णव्यवहारस्थितिः, कृतयुग-  
व्यवस्थाः, स्थलकमलबहलतया पोत्रोन्मूल्यमानमृणालैरुद्गीत-

नेत्रस्य, कोणां, प्रान्तं त्वङ्गत्सु, पद्माग्रेषु, लोमाग्रेषु, लम्बाः, संसक्ताः,  
प्रतनवः, स्वल्पाः, वुसकणाः, कडङ्गरांशाः, (सारहीनक्षुण्णधान्यानीत्यर्थः)  
यत्र तत् यथा तथा खुरेण कषति, घर्षयति (अलङ्कारवृत्ते पूर्वे) ॥६॥  
समुत्सृज्य, त्यक्त्वा, प्रक्षाल्य, निर्मलीकृत्य । गृहीतेति—गृहीतं, नीतं,  
ताम्बूलं येन सः । विदितेति—विदितः, विज्ञातः, अभिप्रायः, आशयः,  
येन सः । पूण्येत्यारभ्य श्रीकण्ठोनाम जनपदः, इत्यनेनान्वयः । पुण्यकृतां,  
सुकृतचरतां, देवानां, च, अधिवासः, गृहम्, वासवावास, इव, इन्द्रालय  
इव, वसुधां, भूमिं, अवतीर्णः, अवतरितः । सततं, निरन्तरं । असं-  
कीर्णंति—असंकीर्णाः, सङ्करदोषरहिताः, वर्णानां, ब्राह्मणक्षत्रियवैश्य-  
शुद्राणां, व्यवहाराः, आचाराः, स्थितयः, मर्यादाश्च यत्र तथोक्तः ।  
कृतेति—कृतयुगस्येव, सत्ययुगस्येव, व्यवस्था, नियमः, यत्र तथोक्तः ।  
स्थलकमलबहलतया, स्थलपद्मप्राचुर्येण । पोत्रेति—पोत्रेण, मुखा-  
ग्रेण (पोत्रं वज्रं मुखाग्रे च शूकरस्य हयस्य च “इति मेदिनी) उन्मूल्य-  
मानानि, विकाशमानानि, मृणालानि, कमलानि, यैः तथोक्तैः ।  
उद्गीतेति—उद्गीताः, उच्चैः, कीर्तिताः, मेदिन्याः, साराः, उक्तृष्टाः  
गुणाः यैः तथाभूतैः । कृतेति—कृताः, मधुकराणां, कोलाहलाः, यैः,

मेदिनीसारगुणैरिव कृतमधुकरकोलाहलैर्हलैरुल्लिख्यमानक्षेत्रः,  
क्षीरोदपयः पायिपयोदसिक्ताभिरिव पुण्ड्रेक्षुवाटसंततिभिर्निर-  
न्तरः, प्रतिदिशमपूर्वपर्वतकैरिव खलधानधामभिर्विभज्यमानैः  
सस्यकूटैः संकटसीमान्तः, समन्तादुद्धातघटीसिच्यमानैर्जीरक-  
जूटैर्जटिलितभूमिः, उर्वरावरीयोभिः शालीयैरलंकृतः, पाकवि-  
शरारुराजमाषनिकरकिर्मीरितैश्च स्फुटितमुद्रफलकोशीकपिशि-  
तैर्गोधूमधामभिः स्थलीपृष्ठैरधिष्ठितः, महिषपृष्ठप्रतिष्ठितगायद्रो-

तादृशैः । हलैः, लाङ्गलैः, उल्लिख्यमानानि, उत्खन्यमानानि, क्षेत्राणि  
यस्य तथोक्तः । क्षीरोदेति क्षीरोदस्य, क्षीरसागरस्य, पयांसि,  
जलानि, पिवन्तीति तथाविधाः, पयोदाः, मेघाः, तैः, सिक्ताः,  
अभिसिञ्चिताः, ताभिरिव । पुण्ड्रेति—पुण्ड्रेक्षुणां, इक्षुविशेषाणां,  
वाटसन्ततयः, वृत्तिनिचयाः, (वेष्टनसमूहा “इत्यर्थः) ताभिः ( वाटोमार्गे  
वृत्तिस्थाने स्यात् कुटीवास्तुनोः स्त्रियाम् “इत्यमरः ) निरन्तरः, अवि-  
च्छिन्नः । अपूर्वपर्वतकैरिव, अभिनवलघुगिरिभिरिव । खलेति—  
खलेषु, सस्यसमाहरणभूमिषु, धानस्थापनाय, धाम, स्थानं येषां  
तैः । विभज्यमानैः विभागेन स्थाप्यमानैः, शस्यकूटैः, धान्यादितृणा-  
राशिभिः, संकटसीमान्तः, व्याप्राप्तीमाभागः । उद्धातेति—उद्धात  
घटिभिः, यन्त्रकलशैः, सीच्यमानानि, आर्द्रीक्रियमाणानि तैः, जीरक-  
जूटैः, जटिलिता, समाकीर्णा, भूमिः, यत्र तथोक्तः । उर्वरेति—उर्वरा,  
सर्वसस्याख्या भूः तथा वरीयांसि श्रेष्ठानि तैः, शालीयैः, धान्यविशेष-  
संघैः शालिक्षेत्रैः, अलंकृतः, परिशोभितः । पाकेति—पाकेन, विशरा-  
रुणां, स्फुरतां, राजमाषाणां, निकरैः, संघैः, किर्मीरितानि, शबलि-  
तानि तैः । स्फुटितेति—स्फुटितानां, पक्वानां, मुद्रफलानां, तदाख्य-  
कलायमेदानां, कोशीभिः, शिम्बिकाभिः, कपिशितानि, पिङ्गलानि



पालपालितैश्च कीटपटललम्पटचटकानुसृतैरवदुघटितघण्टाघटी-  
रटितरमणीयैरटद्भिरटवीं हरवृषभपीतमामयशङ्कया बहुविभक्तं  
क्षीरोदमिव क्षीरं क्षरद्भिर्वाष्पच्छेद्यतृणतृणैर्गोधनैर्धवलितविपिनः,  
विविधमखहोमधूमान्धशतमन्युमुक्तैर्लोचनैरिव सहस्रसंख्यैः  
कृष्णशारैः शारीकृतोद्देशः, धवलधूलीमुचां केतकीवनानां रजोभिः

तैः । गोधूमधामाभिः, गोधूमशालिभिः, स्थलीपृष्ठैः, अकृत्रिमभूतलैः,  
अधिष्ठितः, स्थितः । महिषेति—महिषाणां, पृष्ठेषु, प्रतिष्ठिताः,  
आरूढाः, गायन्तः, गोपालाः, तैः, पालितानि, रक्षितानि तैः ।  
कीटेति—कीटानां, क्षुद्रप्राणिभेदानां, पटलेषु, वृन्देषु, गोधनानां,  
अङ्गलघ्रेषु इति भावः, लम्पटाः, लुब्धाः, ये चटकाः, क्षुद्र पक्षिभेदाः,  
तैः, अनुसृतानि, अनुगतानि तैः । अवद्विवति—अवदुः, घाटा (अवदु-  
घाटा कृकाटिका इत्यमरः) तत्र घटिता, संयोजिता, या घण्टाघटी,  
घण्टारूपः, क्षुद्रघण्टः, तस्याः रटितेन, निनादेन रमणीयानि, मनो-  
जानि तैः, अरद्भिः, चरद्भिः, अरवीं, वनम् । हरेति—हरस्य, शिवस्य,  
वृषभेण, पीतम्, आमयशङ्कया, अजीर्णरोगसम्भावनया, क्षीरोदमिव,  
क्षीरसागरमिव, बहुविभक्तम्, बहुधा विभज्यस्थापितम् । वाष्पेति—  
वाष्पेण, उष्मणा, छेद्यानि, नाश्यानि, यानि तृणानि, तैः तृणानि,  
मन्तुष्टानि तैः । गोधनैः, गाव एव धनानि येषां तैः । धवलितेति—  
धवलितानि, श्वेतानि, विपिनानि यस्य तथोक्तः । विविधेति—विवि-  
धानां, नानाप्रकाराणां, मखानां, यागानां, होमधूमैः, अन्धानि, अत-  
एव शतमन्युना, इन्द्रेण, मुक्तानि, परित्यक्तानि तैः लोचनैः, नयनैरिव,  
सहस्रसंख्यैः, ( पक्षे ) सहस्रसंख्यैः, प्रभूतैः, कृष्णशारैः, शवलवर्णावि-  
चित्रैः, शारीकृतोद्देशः, विचित्रितप्रदेशः । धवलधूलिमुचां, श्वेतरजो-  
मुचां, केतकीवनानां रजोभिः, परागैः, पाण्डुरीकृतैः, पाण्डुरतांतीतैः,

पाण्डुरीकृतैः प्रथमोद्धूलनधूसरैः शिवपुरस्येव प्रवेशैः प्रदेशैरुपशो-  
भितः, शाककन्दलश्यामलितग्रामोपकण्ठकाश्यपी पृष्ठः, पदे पदे कर-  
भपालीभिः पीलुपल्लवप्रस्फोटितैः करपुटपीडितमातुलुङ्गीदलरसो-  
पलिप्तैः स्वेच्छ्याविचितकुङ्कुमकेसरकृतपुष्पप्रकरैः प्रत्यग्रफल-  
रसपानसुखसुप्तपथिकैर्वनदेवतादीयमानामृतरसप्रपागृहैरिव  
द्राक्षामण्डपैः स्फुरत्फलानां च बीजलग्नशुकचञ्चुरागाणामिव  
समारूढकपिकुलकपोलसंदिह्यमानकुसुमानां दाडिमीनां वनैर्वि-

अतएव प्रमथानां, शिवपारिषदां, भूतवर्गाणाम्, उद्धूलनेन, लुण्ठनेन,  
धूसराः, ईषत्पाण्डुवर्णाः तैः शिवपुरस्येव, शिवालयस्येव, प्रवेशाः,  
मार्गाः तैः । शाकेति—शाकानां, कन्दलेन, अभिनवेन, अंकुरेण  
श्यामलिता, ग्रामाणां, उपकण्ठा, प्रान्तभागाः यस्य तथोक्तम्,  
काश्यपीपृष्ठं, भूतलं यस्य तथाभूतः । करभपालिभिः, उपशिशुवृन्दैः,  
पीलुपल्लवेन, पीलूभिः, ( अखरोट ) तेषां पल्लवेन, किसलयेन, तैः  
स्फोटितैः, सुशोभितैः । करपुटेति—करपुटैः, पीडितानां, मर्दितानां,  
मातुलुङ्गीदलानां, एतदाख्यस्य वृक्षस्य पत्राणां रसैः, द्रवैः, उपलि-  
प्तानि तैः । स्वेच्छेति—स्वेच्छ्या, विचिताः, उच्चिताः, कुङ्कुमानां  
केसराः, किञ्चलकाः, तैः कृतः, रचितः, पुष्पाणां, प्रकरः, माल्यं येषां  
तैः । प्रत्यग्रेति—प्रत्यग्राणि, अभिनवानि, यानि, फलानि, तेषां रस-  
पानेन, सुखसुप्ताः, पथिकाः, अध्वगाः, येषु तथोक्तैः । वनेति—वन-  
देवताभिः, दीयमानानि, अमृतरसानां, प्रपागृहाणि, पानीयशालाः,  
तैरिव । द्राक्षामण्डपैः, द्राक्षालतानिकुञ्जैः । स्फुरन्ति, विकसन्ति,  
फलानि यासां तासाम् । वीजेति—वीजेषु, लग्नाः, संसक्ताः, शुकानां,  
( तोता ) पक्षिणां, चञ्चुरागाः, चञ्चुलौहित्यानि येषां तथा भूताना-  
मिव । समारूढेति—समारूढानां, कपिकुलानां, वानरवृन्दानां,

लोभनीयोपनिर्गमः, वनपालपीयमाननारिकेलरसासवैश्च पथि-  
कलोकलुप्यमानपिण्डखर्जूरैर्गोलांगूललिह्यमानमधुरामोदपिण्डी-  
रसैश्चकोरचञ्चुजर्जरितारुकैरुपवनैरभिरामः, तुङ्गार्जुनपालीप-  
रिवृतैश्च गोकुलावतारकलुषितकूलकीलालैरध्वगशतशरणैर-  
रण्यधराबन्धैरवन्ध्यवनरन्ध्रः, करभीयकुमारकपाल्यमानैरौष्ट्रकै-

कपोलैः, गण्डस्थलैः, सन्दिह्यमानानि, संशयमानानि, कुसुमानि यासां  
तथोक्तानाम् । विलोभनीयोपनिर्गमः, विलोभनीयाः, विशेषेण दर्शनीयाः,  
उपनिर्गमाः, निर्गमन मार्गाः यस्य तथाभूतः । वनेति—वनपालैः, वन-  
रक्षिभिः, पीयमानाः, अस्वाद्यमानाः, नारिकेलानां रसाः, जलान्येव,  
आसवाः, मद्यानि, येषु तथोक्तैः । पथिकेति—पथिकलौकैः, पान्थ-  
समूहैः, लुप्यमानानि, भक्षणेन, अदृश्यतांगतानि, पिण्डखर्जूरणि  
येभ्यः तथोक्तैः । गोलांगूलेति—गोलांगूलैः, कृष्णमुखकपिभिः  
( लंगूर ) लिह्यमानः, आस्वाद्यमानः, मधुरः, स्वादुः, आमोदपिण्डी-  
रसः, सुरभिपिण्डीखर्जूररसः येषु तैः । चकोरेति—चकोराणां, पक्षि-  
भेदानां, चञ्चुभिः, जर्जरितानि, आरुकाणि, आरुकनामवृक्षफलानि,  
येषु तथोक्तैः, उपवनैः, उद्यानैः, अभिरामः, मनोहरः । तुङ्गेति—  
तुङ्गाभिः, उन्नताभिः, अर्जुनपालिभिः, कुकुभारव्य वृक्षत्रेणिभिः, परि-  
वृताः, परिवेष्टिताः तैः । गोकुलेति—गोकुलानां, गोसमूहानां, अव-  
तारेण, अवतरणेन, कलुषितानि, अविलीकृतानि, कूलकीलालानि,  
तीरस्थितजलानि, येषां तैः । ( सलिलं कमलं जलं । पयः कोलालम्  
“इत्यमरः) अध्वगशतशरण्यैः, पथिकशतपरित्रायिभिः, अरण्यधराबन्धैः,  
वनजलाशयैः । अवन्ध्यानि, फलवन्ति, वनरन्ध्राणि, वनाभ्यन्तर-  
भागाः यस्य तथाभूतः । करभीयेति—करमेभ्यः, उष्ट्रशावकेभ्यः  
हिताः, करभीयाः, ये कुमाराः, पशुपालशिशवः तैः पाल्यमानाः, रक्ष-

१ रौरभ्रैश्च कृतसंबाधः, दिशि दिशि रविरथतुरगविलोभनायैव विलोडनमृदितकुङ्कुमस्थलीरससमालब्धानामुत्प्रोथपुटैरुन्मुखैरुदरशायिकिशोरकजवजननाय प्रभञ्जनमिव चापिबन्तीनां वातहरिणीनामिव स्वच्छन्दचारिणीनां वडवानां वृन्दैर्विचरद्भिराचितः, अनवरतक्रतुधूमान्धकारप्रवृत्तैर्हंसयूथैरिव बाणैर्धवलितभुवनः, संगीगतमुरजरचमत्तैर्मयूरैरिव विभवैर्मुखरितजीवलोकः,

माणाः, तैः । औष्ट्रकैः, उष्ट्रणां समूहैः । औरभ्रैः, मेघनिचयैः, कृतसम्बाधः, समाकीर्णः । रवीति—रवेः, सूर्यस्य, रथे ये तुरगाः, अश्वाः, तेषां विलोभनम्, अनुरागप्रकटनेन, लोभप्रदर्शनम् तस्मै इव । विलोडनेति—विलोडनेन, विलोठनेन, दलनेन, मृदिता, मर्दननीता, या कुङ्कुमस्थली, कुङ्कुमोत्पत्तिभूमिः, तस्याः, रसेन, द्रवेण, समालब्धाः, अनुलिप्ताः, तासाम् । उत्प्रोथपुटैः, उत्, उद्गतानि, प्रोथपुटानि, नासापुटानि, येषां तादृशानि तैः, उन्मुखैः, ऊर्ध्वमुखैः । उदरशायीति—उदरशायिनां, गर्भस्थितानां, किशोरकाणां, शावकानां, जवजननाय, वेगवर्द्धनाय, प्रभञ्जनमिव, वायुमिव, आपिबन्तीनां, भक्षयन्तीनां, (संपीतवतीनामिति यावत्) वातहरिणीनामिव, वातमृगीणामिव, समीराभिमुखधाविनीनां, स्वच्छन्दचारिणीनां, स्वेच्छयाचरन्तीनां, वडवानां, अश्वानां, आचितः, आकीर्णः । अनवरतेति—अनवरताः, अविरताः, क्रतूनां, यज्ञानां, धूमा एव अन्धकाराः, तेषु प्रवृत्ताः, जाताः, तैः, (पक्षे) धूमेन अन्धकारः, तस्मात्, प्रवृत्तैः, पलायितैः, बाणैः, शरैः । धवलितेति—धवलितानि, श्वेतीकृतानि, भुवनानि, अवयवाः । संगीतेति—सङ्गीतेषु, निषादादि सप्तस्वरालपनेषु, गतानां, स्थितानां, मुरजानां, वाद्यानां, रवेण, नादेन, मत्ताः, मादकजनकाः, उल्लासिताश्च तैः । विभवैः, सम्पद्भिः, मुखरितः, शब्दितः, जीवलोकः यस्य । शशि-

शशिकरावदातवृत्तैर्मुक्ताफलैरिव गुणिभिः प्रसाधितः, पथिकशत-  
विलुप्यमानस्फीतफलैर्महातरुभिरिव सर्वातिथिभिरभिगमनीयः,  
मृगमदपरिमलवाहिमृगरोमाच्छादितैर्हिमवत्पादैरिव महत्तरैः  
स्थिरीकृतः, प्रोद्दण्डसहस्रपत्रोपविष्टद्विजोत्तमैर्नारायणनाभिम-  
ण्डलैरिव तोयाशयैर्मण्डितः, मथितपयः प्रवाहप्रक्षालितक्षितिभिः

करेति—शशिनः, चन्द्रस्य, कराः, किरणाः, तदवत्, अवदातानि,  
विशदानि, वृत्तानि, चरितानि, येषाम्, (पक्षे) शशिकरवत् अवदातानि,  
स्वच्छानि, वृत्तानि, वर्तुलानि, तैः, गुणिभिः, विद्याविनयशालिभिः,  
सूत्रवद्भिश्च, प्रसाधितः, अलंकृतः । पथिकेति—पथिकशतैः, पान्थैः,  
विलुप्कमानानि, चौर्व्यमाणानि, स्फीतानि फलानि, धनानि येषां,  
( पक्षे ) पथिकानां, अध्वगानां, शतेः, विलुप्यमानानि, गृह्यमाणानि,  
भक्षणेन, स्फीतानि, प्रभूतानि, फलानि येषां तैः, अभिगमनीयः,  
आश्रयणीयः । मृगेति—मृगमदस्य, कस्तूरिकायाः, परिमल-  
वाहिभिः, सौरभशालिभिः, मृगरोमभिः, राङ्गवेतिसंज्ञान्तरैः,  
( राङ्गवं मृगरोमजम् ) आच्छादितैः, कृतगात्रावरणैः, ( पक्षे )  
तथाविधमृगरोमावृतैः, हिमपादपैरिव, हिमाद्रेः प्रत्यन्तपर्वतैरिव, मह-  
त्तरैः, अतिमहद्भिः, लोकैः, वृद्धैर्वा ( पक्षे ) प्रकाण्डैः, स्थिरीकृतः,  
आवासितः । प्रोद्दण्डेति—प्रकर्षेण, उद्गताः, दण्डाः, नालाः, येषां  
तानि सहस्रपत्राणि कमलानि तेषु उपविष्टा द्विजोत्तमाः, उत्कृष्टा,  
पक्षिणः, ब्राह्मणश्च, येषु, तथाभूतैः, तोयाशयैः, जलाशयैः, ( पक्षे )  
तोयमेव, आशयः, आधारः (स्थानमित्यर्थः) येषां तैः नारायणमण्डलै-  
रिव, मण्डितः, सुशोभितः । मथितेति—मथितानां, निर्जलतक्राणां,  
पयसां, दुग्धानां च, प्रवाहेन, निवहेन, ( पक्षे ) मथितेन, विलोडितेन,  
पयसां दुग्धानां, प्रवाहेण, स्रोतसा, प्रक्षालिता, धौता, क्षितिः, भूभागो,

क्षीरोदमथनारम्भैरिव महाघोषैः पूरिताशः श्रीकण्ठो नाम  
जनपदः ।

यत्र त्रेताग्निधूमाश्रुपातजलक्षालिता इवाक्षीयन्त कुट्टप्रयः ।  
पच्यमानचयनेष्टकादहनदग्धानीव नादृश्यन्त दुरितानि । क्षिद्य-  
मानयूपदारुपरशुपाटित इव व्यदीर्यताधर्मः । मखशिखिधूमजल-  
धरधाराधौत इव ननाश वर्णसंकरः । दीयमानानेकगोसहस्र-  
शृङ्गखण्डयमान इवापलायत कलिः । सुरालयशिलाघट्टनटङ्कनिक-  
रनिकृत्ता इव व्यदीर्यन्त विपदः । महादानविधानकलकलाभि-

यैः, तथोक्तैः । महाघोषैः, महद्भिः, घोषैः, गोपपल्लीभिः, (घोषः अभीर-  
पल्लीस्यात् “इत्यमरः) (पक्षे) महाघोषैः, महारावैश्च पूरिताः, व्याप्ताः,  
आशाः, आकांक्षाः, दिशश्च यत्र तथोक्तः । त्रेता, अग्नित्रयम्, प्रच-  
ण्डाग्निबोधाय त्रेताशब्दः प्रयुक्तः तस्य, धूमेन योऽश्रुपातः तस्य,  
जलेन, क्षालिता इव, धौता इव, कुट्टप्रयः, अक्षीयन्तः, क्षयमगच्छन् ।  
पच्यमानेति—पच्यमानं, दह्यमानं, चमनं, चित्या यासां तथा  
भूतानां, इष्टकानां, दहनेन, सन्तापेन, दग्धानीव भस्मीकृतानीव,  
दुरितानि पापानि, न अदृश्यन्तः । क्षिद्यमानेति—क्षिद्यमानानि,  
कृत्यमानानि, यूपायदारुणि, यैः तथाभूतैः, परशुभिः, कुठारैः, पाटित  
इव, कर्त्तित इव, अधर्मैः, पापं, व्यदीर्यत, विदीर्णः, अभूत् । मखेति—  
मखानां, यागानां, शिखिनः, अग्नयः, तेषां धूमाः, तैः ये जलधराः, मेघाः,  
तेषां धाराभिः, वर्षाभिः, धौत इव, क्षालित इव, वर्णसंकरः (प्रातिलोभ्येन  
संतानोत्पादनम्) ननाश । दीयमानेति—दीयमानानां, अनेकेषां,  
गोसहस्राणां, शृङ्गैः, खण्डयमान इव कलिः । सुरेति—सुरालयेषु,  
देवमन्दिरेषु, याः, शिलाः, तासां घटने, योजने ये टङ्कनिकराः, शिला-  
विदारणास्त्रसमूहाः, तैः निकृत्ता इव व्यदीर्यन्त, व्यचूर्णयन्त । महा-

द्रुता इव प्राद्रवन्नुपद्रवाः । दीप्यमानसत्रमहानससहस्रसंतापिता  
इव व्यलीयन्त व्याधयः । वृषविवाहप्रहतपुरणपटहपटुरघत्रा-  
सिता इव नोपासर्पन्नपमृत्यवः । सततब्रह्मघोषवधिरीकृता इवा-  
पजग्मुरीतयः । धर्माधिकारपरिभूतमिव न प्राभवदुर्देवम् ।

तत्र चैवंविधे नानारामाभिरामकुसुमगन्धपरिमलाभोगसुभगो  
यौवनारम्भ इव भुवनस्य, कुङ्कुममलनपिञ्जरितबहुमहिषीसह-  
स्रशोभितोऽन्तःपुरनिवेश इव धर्मस्य, मरुदुद्भूयमानचमरीबालव्य-

दानेति—महादानानां, विधाने, यः कलकलः, तेन अभिद्रुता इव,  
ताडिता इव, उपद्रवाः, अनिष्टपाताः, प्रादुवन्, पलायन्तः । दीप्य-  
मानेति—दीप्यमानानां, राजमानानां, सत्राणां, महानसानां, रन्धन-  
शालानां, सहस्रैः, सन्तापिता इव, अभिभूता इव, व्याधयः, रोगाः ।  
वृषेति—वृषस्य विवाहः तत्र प्रहतस्य, वादितस्य, पुरणपटहस्य, पटुना,  
तारंग, रवेण, नादेन, त्रासिता इव, भीषिता इव, अपमृत्यवः, न उपा-  
सर्पन्, नापतन् । सततेति—सततेन, अविरतेन, ब्रह्मघोषेण, वेद-  
ध्वनिना, वधिरीकृता इव, श्रवणशक्तिरहिता इव, ईतयः, सस्योपघातकराः  
जन्तवः, अपजग्मुः । धर्मेति—धर्माधिकारः, धर्मविचारालयः, तेन  
परिभूतम् इव निराकृतम् इव दुर्देवं न प्राभवत् ।

तत्र इत्यादौ स्थाण्वीश्वराख्यो जननिवेशः—इत्युत्तरेणान्वयः ।  
नानेनि-नाना, आरामाणां, बहूनां उद्यानानां, अभिरामाणि, मनोह-  
राणि, कुसुमानि, ( पक्षे ) नाना रामाः, महिलाः, अभिरामकुसुमानि,  
इव, तेषां गन्धस्य, सौरभस्य, परिमलः, सम्मर्दनामोदः, तस्य आभोगः,  
अनुभवः, तेन सुभगः रम्यः । कुङ्कुमेति—कुङ्कुमानां, मलनेन,  
कर्दमेन, पिञ्जरीता, रञ्जिता, वहवः, महिष्यः कृताभिषेकाः, राजभार्याः,  
उत्तमाः, महिलाश्च तासां सहस्रेण शोभितः । मरुदिति—मरुतः, वायवः,

जनधवलितप्रान्तः, एकदेश इव सुरराज्यस्य, ज्वलन्मुखशिखिसह-  
स्रदीप्यमानदशदिगन्तः शिविरसंनिवेश इव कृतयुगस्य, पद्मा  
सनस्थितब्रह्मर्षिध्यानाधीयमानसकलाकुशलप्रशमः प्रथमोऽव-  
तार इव ब्रह्मलोकस्य, कलकलमुखरमहावाहिनीशतसंकुलो  
विपक्ष इवोत्तरकुरूणाम्, ईश्वरमार्गणसंतापानभिन्नसकलजनो  
विजिगीषुरिव त्रिपुरस्य, सुधारससिक्धवलगृहपंक्तिपाण्डुरः  
प्रतिनिधिरिव चन्द्रलोकस्य, मधुरमत्तमत्तकाशिनीभूषणरवभरि-

देवाश्च तैः उद्धूयमानाः, संचाल्यमानाः, चमरीणां वालाः, पुच्छलो-  
मानि, तै धवलिताः, प्रान्ताः यस्य तथोक्तः । ज्वलदिति—ज्वलतां,  
मुखशिखिनां, यज्ञाग्नीनां सहस्रैः, दीप्यमानाः, दशानां दिशामन्ताः,  
यस्य तथा भूतः । शिविर सन्निवेश इव कटक बन्ध इव कृतयुग-  
स्य, सत्ययुगस्य । पद्मेति—पद्मासनेषु स्थिताः ये ब्रह्मर्षयः, तैः, ध्यानेन,  
आधीयमानः, सकलानां, समप्राणां, अकुशलानां, अमङ्गलानां, प्रशमः,  
शान्तिः यस्मिन् तथा भूतः । कलकलेति—कलकलैः मुखराः,  
नदन्त्यः, महत्यः, वाहिन्यः नद्यः, सेनाश्च तासां शतेन संकलः, आकीर्णः,  
उत्तरकुरूणां, उत्तराः कुरवः मेरुसमीप देशवाग्मिनः तेषां, विक्षेपः, इव ।  
ईश्वरेति—ईश्वरस्य, हरस्य, राज्ञश्च मार्गणैः, शरैः, बहुधाद्धलेनार्थ-  
प्रार्थनैश्च यः सन्तापः, क्लेशः तस्य, अनभिज्ञाः, सकलाः, जनाः,  
यस्मिन् तथा भूतः । त्रिपुरस्य तिसृणां पुरां समाहारः त्रिपुरं, मयदा-  
नवनिर्मितम् तस्य । सुधेति—सुधारसैः, लेपनद्रवैः, अमृतैश्च, सिक्तानां,  
लिप्तानां, धवलगृहाणां, पङ्क्तिभिः, राजिभिः पाण्डुरः, धवलः । प्रति-  
निधिरिव, प्रतिकृतिरिव, चन्द्रलोकस्य । मध्विति—मधुमदेन, मद्य-  
पानजनितेनोल्लासेन, मत्ताः, याः, मत्तकाशिन्यः, उत्तमाङ्गनाः, यक्षि-  
ण्यश्च, तासां भूषणरवैः, भरितं, आपूरितम्, भुवनं यत्र तथा भूतः ।



तभुवनो नामाभिहार इव कुवेरनगरस्य, स्थाण्वीश्वराख्यो जननिवेशः ।

यस्तपोवनमिति मुनिभिः, कामायतनमिति वेश्याभिः, संगीतशालेति लासकैः, यमनगरमिति शत्रुभिः, चिन्तामणिभूमि रित्यर्थिभिः, वीरक्षेत्रमिति शस्त्रोपजीविभिः, गुरुकुलमिति विद्यार्थिभिः, गन्धर्वनगरमिति गायनैः, विश्वकर्ममन्दिरमिति विज्ञानिभिः, लाभभूमिरिति वैदेहकैः, द्यूतस्थानमिति भागार्थिभिः, साधुसमागम इति सद्भिः, वज्रपञ्जरमिति शरणागतैः, विटगोष्ठीति विदग्धैः, सुकृतपरिणाम इति पथिकैः, असुरविवरमिति वातिकैः, शाक्याश्रम इति शमिभिः, अश्वरः पुरमिति कामिभिः,

स्थाण्वीश्वराख्यः (थानेसर) जननिवेशः । देशः, मुनिभिः, तपोवनं, तपः कर्तुं, गृहं, वेश्याभिः, वारविलासिनीभिः, कामस्य, आयतनं गृहम् । लासकैः, नर्तकैः, संगीतशाला, शत्रुभिः, अरिभिः, यमनगरम्, प्राणहन्तृपुरम् । अर्थिभिः, याचकैः, चिन्तामणिः, विचारितवस्तुदरत्रविशेषः, तस्याः, भूमिः, क्षेत्रम् । शस्त्रोपजीविभिः, वीरसैनिकैः, वीरक्षेत्रम्, वीरोत्पत्ति-भूमिः । विद्यार्थिभिः, अन्तेवासिभिः, गुरुकुलम् । गायनैः, गायनाचार्यैः, गन्धर्वनगरम् । विज्ञानिभिः, शिल्पादिकलाज्ञातृभिः, विश्वकर्मा मन्दिरम्, शिल्पविद्यानिधिगृहम् । वैदेहिकैः, बणिग्भिः, लाभभूमिः, धनोप-पार्जनस्थानैः, भागार्थिभिः, भागः, सौभाग्यम्, तदर्थिभिः, तदभिला-षिभिः, द्यूतस्थानम्, द्यूतं, देवनं, क्रीडेति यावत्, तत्स्थानम् । शरणा-गतैः, शरणप्राप्तैः, वज्रपञ्जरम्, वज्रनिर्मितपञ्जरं विदग्धैः, विलासिभिः, विटगोष्ठी, विलाससमाजः । पथिकैः, अध्वगैः, सुकृतानां, पुण्यानां, परिणामः, परिणतिः । वातिकैः, वायुरोगिभिः, असुरविवरं, पाना-लम् । शमिभिः, बौद्धैः, शाक्याश्रमः, बुद्धसन्यासिमठः । कामिभिः,

महोत्सवसमाज इति चारणैः, वासुधारेति विप्रैरगृह्यत ।

यत्र च मातंगगामिन्यः शीलवत्यश्च, गौर्यो विभवरताश्च, श्यामाः पद्मरागिण्यश्च, धवलद्विजशुचिवदनाः मदिरामोदिश्वसनाश्च, चन्द्रकान्तवपुषः शिरीषकोमलाङ्गथश्च, अभुजंगगम्याः कञ्चुकिन्यश्च, पृथुकलत्रश्रियो दरिद्रमध्यकलिताश्च, लावण्य-

विलासिभिः, अप्सरःपुरम् । चारणैः, स्तुतिगायकैः, महोत्सवस्य, समाजः, गोप्त्री । विप्रैः, ब्राह्मणैः, वसुधारा, धनप्रवाहः, मानङ्गगामिन्यः, श्रवच-गामिन्यः, शीलवत्यः, सुशीलाः, याः चण्डालान् गच्छन्ति कथं सा शीलवती इति विरोधः गजवत्, गामिन्य इति परिहारः । गौर्याः, पार्वत्याः, विभवरताः, विगतः, भवे, हरे, रतः यासां ताः, इति विरोधः, गौर्यः, गौराङ्गथः, विभवे, धने रताः, इति परिहारः । श्यामाः, रात्रयः, पद्मरागिन्यः, पद्मेषु, कमलेषु रागवत्यः, इति विरोधः । पद्मानां निर्मलनान् श्यामाः, श्यामलाङ्गथः, पद्मरागिण्यः, पद्मरागरत्नालंकृताः । धवलेति—धवलानि, विशदानि, द्विजस्येव शुचीनि, पवित्राणि, वदनानि यासां ताः । मदिरंति—मदिरया, सुरया, आमोदिनः, शौरभ-वन्तः, श्रमनाः, श्वासवायवः, यासां ताः, याः पवित्र ब्राह्मणवत् पवित्र-वदनाः तासां मद्यपानेन कथं मुखपवित्रता, इति विरोधः । धवलैः स्वच्छैः, द्विजैः, दन्तैः, शुचिनि, उज्वलानि वदनानि, यासां ताः । चन्द्रकान्तेति—चन्द्रकान्तः, मणिविशेषः, तद्वत् वपुः यासां ताः, अथ च शिरीषकोमलाङ्गथ, शिरीषपुष्पवत्, कोमलं, सुकुमारं अङ्गं यासां ताः । याः चन्द्रकान्तप्रस्तरविशेषवत् कठिनाङ्गथः कथं ताः कोमलाङ्गथः—इति विरोधः । चन्द्रकान्तमणिवत् रमणीयं वपुः यासां ताः—इति परिहारः । अभुजंगेति—भुजङ्गैः, सर्पैः, नगम्या अभुङ्ग-गम्याः, कञ्चुकिन्यः, भुजङ्गः, इति विरोधः, भुजङ्गैः, विटैः, न गम्याः

वत्यो मधुरभाषिण्यश्च, अप्रमत्ताः प्रसन्नोज्ज्वलरागाश्च, अकौतुकाः प्रौढाश्च प्रमदाः ।

यत्र च प्रमदानां चक्षुरेव सहजं मुण्डमालामण्डनं, भारः कुवलयदलदामानि । अलकप्रतिबिम्बान्येव कपोलतलगतान्यक्लिष्टाः श्रवणावतंसाः, पुनरुक्तानि तमालकिसलयानि । प्रियजनकथा

कंचुकं स्त्रीणां स्तनावरणा चोलकं तद्वत्यः । पृथ्विति—पृथुः, आदि-राजः, वेणुपुत्रः, तस्य कलत्राणां, श्रियः, इव, सम्पदः, यासां ताः, अथ च, दरिद्रमध्यकलिताः, दरिद्राणां, मध्ये, कलिताः, संख्याताः, याः खलुराजमहिष्य इव संपच्छालिन्यः कथं ताः दरिद्राः इति विरोधः पृथ्वी महती कलत्रस्य, श्रेणोः ( जघनस्येत्यर्थः ) श्रीः शोभा यासां ताः दरिद्रं, क्षीणं मध्यः, कटिदेशः तेन कलिताः, इति परिहारः । लावण्यवत्यः, लावण्यरसशालिन्यः, अथ च, मधुरभाषिण्यः मधुरा उक्ति यासां ताः याः लावण्यरसवहालाः कथं ताः मधुरोक्तिवत्यः—इति विरोधः, लावण्यवत्यः, सौन्दर्यवत्यः, मधुरभाषिण्यः, प्रियवादिन्यः इति परिहारः । प्रसन्ना, सुराभेदः तथा उज्ज्वलः रागः अनुरागः यासां ताः, अथ च, अप्रमत्ताः अक्षीवाः याः मद्यपायिन्यः कथं सा अप्रमत्ताः, प्रसन्नः, सौम्यः उज्ज्वलः, विशदः, रागः वर्णः, यासां ताः, इति परि-परिहारः । अकौतुकाः, विवाह कालिकहस्तसूत्रं तद्रहिताः अथ च प्रौढाः, पूर्णयौवनाः, याहि पूर्णयौवना कथं अविवाहिताः, इति विरोधः कौतुकं, औत्सुक्यं तद्रहिताः, इति परिहारः । सहजं, अकृत्रिमम् । मुण्डमालामण्डनं, मुण्डमाला, नीलोत्पलमाला एव मण्डनं भूषणं । कुवलयदलदामानिनीलोत्पलपत्रमालिकाः भारः ( बाह्यवस्तुमात्रम्, इत्यर्थः ) अलकेति—अलकानां, चूर्णकुन्तलानां, प्रतिबिम्बानि, छाया एव, अक्लिष्टाः, श्रवणावतंसाः, श्रोत्रभूषणानि । तमालकिस-

एक सुभगाः कर्णालंकाराः, आडम्बरः कुण्डलादिः । कपोला एव सततमालोककारकाः, विभवो निशासु मणिप्रदीपाः । निश्वासा-  
कृष्टमधुकरकुलान्येष रमणीयं मुखावरणं, कुलस्त्रीजनाचारो जालिका । वाग्येव मधुरा वीणा, बाह्यविज्ञानं तन्त्रीताडनम् । हासा एवातिशयसुरभयः पटवासाः, निरर्थकाः कर्पूरपांशवः । अधरकान्तिविसर एवोज्ज्वलतरोऽङ्ग रागो निर्गुणो लावण्यक-  
लङ्कः कुङ्कुमपङ्कः । बाहव एव कोमलतमाः परिहासप्रहारवेत्र-  
लताः, निष्प्रयोजनानि मृणालानि । यौवनोष्मस्वेदविन्दव एव विदग्धाः कुचालंकृतयो हारास्तु भाराः । श्रोण्य एव वि-

लयानि, तन्नामवृत्तपत्राणि पुनरुक्तानि ( निरर्थकानि इति भावः )  
प्रियजनकथा, कान्तासम्बन्धालापाः, सुभगाः, रमणीयाः, आडम्बरः,  
संरम्भः, आलोककारकाः, कान्तिकर्तारः, विभवाः, ऐश्वर्यम् । निश्वा-  
सेति—निश्वासेन, आकृष्टानां, मधुकराणां, भ्रमराणां, कुलानि,  
सङ्घाः । मुखावरणम्, मुखाच्छादनम् । जालिका, अवगुण्ठनपटम्,  
तन्त्रीताडनम्, वीणागुणाघातम् । बाह्यविज्ञानम्, बाह्यं, बहिर्गतं,  
विज्ञानं, विशेषेण वादित्रवादनबोधः । पटवासाः, मुगन्धचूर्णविशेषाः,  
निरर्थकाः, निष्प्रयोजनाः, कर्पूरपांशवः, कर्पूररजांसि, अधरस्य,  
ओष्ठस्य, कान्तिविस्तारः, लावण्यविस्तारः, निर्गुणाः, निष्फलः,  
लावण्यकलङ्कः, लावण्यस्य मालिन्यापादकः, कुङ्कुमपङ्कः, कुङ्कुमद्रवः ।  
कोमलतमाः, अतिकोमलाः । परिहासेति—परिहासे, क्रीडाकाले,  
यः प्रहारः ताडनं, तदर्थं वेत्रलताः, वेत्राणि । निष्प्रयोजनानि, प्रयो-  
जनरहितानि, मृणालानि, कमलानि । यौवनेति—यौवनेन, तारुण्येन,  
यैः, उष्मा, उष्मता, तेन ये स्वेदविन्दवः, घर्मजलकणाः, विदग्धाः,  
मनोज्ञाः । श्रोण्यः, नितम्बाः । विशालेति—विशालं, बृहत्, यत्

शालस्फटिकशिलातलचतुरस्रा रागिणां विश्रामकारणमनिमित्तं  
भवनमणिवेदिकाः । कमललोभनिलीनान्यलिकुलान्येव मुखराणि  
पदाभरणकानि, निष्फलानांन्द्रनीलनूपुराणि । नूपुररवाहता  
भवनकलहंसा एव समुचिताः संचरणसहायाः, ऐश्वर्यप्रपञ्चाः  
परिजनाः ।

तत्र च साक्षात्सहस्राक्ष इव सर्ववर्णधरं धनुर्दधानः, मेरु-  
मय इव कल्याणप्रकृतित्वे, मन्दरमय इव लक्ष्मीसमाकर्षणे, जल-  
निधिमय इव मर्यादायाम्, आकाशमय इव शब्दप्रादुर्भावे,  
स्फटिकशिलातलं, स्फटिकमणिमयशिलापट्टम्, तद्वत् चतुरस्राः,  
चतुष्कोणाः, रागिणां, विलासिनां, विश्रामकारणं, विश्रान्तिस्थानम्,  
अनिमित्तं, अकारणम् । कमलेति - कमललोभेन, निलीनानि, संत-  
ग्रानि । मुखराणि, निस्वनन्ति, इन्द्रनीलनूपुराणि, नीलकान्तमणि-  
निर्मितानि, मञ्जीराणि । सञ्चरणसहायाः, विचरणसङ्गिन्यः, ऐश्वर्य-  
प्रपञ्चाः, विभवविस्तराः । तत्र इत्यादावारभ्यः, पृष्पभूतिरितिनाम्नावभूव  
इत्येननान्वयः । सर्वेति - सर्वे, वर्णाः, ब्राह्मणादयः, शुक्लाद्यश्च तान्  
धरतीति, धारयति, पालयति, वा तथोक्तम्, धनुः कामुर्कं, दधानः,  
धारयन् । कल्याणप्रकृतित्वे, कल्याणं, मङ्गलं, स्वर्गाश्च प्रकृतिः यस्य  
तथात्वे । मन्दरमयः, तदाख्यपर्वतकः, क्षीरोदमन्थने, मन्दराचलस्य,  
मन्थनदण्डरूपतया, तेनैव तत्र स्थितायाः, लक्ष्म्याः, समुद्धरणम् ।  
मर्यादायां, स्थितौ, सदाचाररक्षणो, सीमायां च जलनिधिः, असीमा,  
तथा ऽयमपि अविचलितसदाचारः, शब्दप्रादुर्भावे, शब्दानां, यशो-  
विनयादिरूपाणां, घटपटादिरूपाणां च, प्रादुर्भावः, प्रकाशनं, यस्मिन्  
आकाशमय इव । कलासंग्रहे, कलाः, चतुष्टयप्रकाराः विद्या षोडश-  
भागाश्च, तासां, संग्रहः, तस्मिन्, शशिमय इव । अकृत्रिमालापत्वे,

शशिमय इव कलासंप्रहे, वेदमय इवाकृत्रिमालापत्वे, धरणिमय इव लोकधृतिकरणे, पवनमय इव सर्वपार्थिवरजोविकारहरणे, गुरुर्वचसि, पृथुहरसि, विशालो मनसि, जनकस्तपसि, सुयात्रस्तंजसि, सुमन्त्रो रहसि, बुधः सदसि, अर्जुनो यशसि, भीष्मो धनुषि, निषधो वपुषि, शत्रुघ्नः समरे, शूरः शूरसेनाऽऽक्रमणे, दक्षः प्रजाकर्मणि, सर्वादिगजतेजः पुञ्जनिमित्त इव राजा पुष्पभूतिरिति नाम्ना बभूव ।

पृथुना गौरियं कृतेति यः स्पर्धमान इव महीं महिषीं चकार ।

अकृत्रिमः, अकपटः, सत्यमित्यर्थः, अपौरुषेयश्च आलापः वचनं यस्य तथात्वे वेदमय इव । लोकधृतिकरणे, लोकानां, जनानां, जगतांश्च धृतिः, धारणां, धैर्यश्च तस्याः करणं, सम्पादने धरणिमय इव । सर्वेति—सर्वेषां, पार्थिवानां, राज्ञां, रजोविकारस्य, रजोगुणविकृतेः ( पक्षे ) पार्थिवानां, पृथिवीसम्बन्धिनां रजसां, धूलीनां विकारस्य हरणं, अपनयने । वचसि गुरुः, महान्, उरसि, वज्रसि, पृथुः, विशालः, मनसि, हृदये, विशालः, विस्तीर्णः, तपसि, तपस्यायां, जनकः, उत्पादकः, तेजसि, सुयात्रः, सुशोभना यात्रा यस्यसः रहसि एकान्ते, सुमन्त्रः, सुशोभनः मन्त्रः यस्य तथोक्तः, सदसि, सभायां, बुधः, परिङ्गतः । धनुषि, कार्मुके, भीष्मः, कठिनः, वपुषि, निषधः, कठिनः । समरे, युद्धे, शत्रुघ्नः, शत्रून् हन्तीति सः । शूरः, वीरः । शूरेति—शूराणां, शौर्यशालिनीनां, सेनानां, शूरसेनस्य, देशविशेषस्य आक्रमणं तस्मिन् । प्रजाकर्मणि, प्रजापालने, दक्षः, चतुरः । सर्वेति—सर्वेषां आदिराजानां तेजसः, पुञ्जेन निर्मितः, रचित इव राजा, नृपतिः, पुष्पभूतिः नाम्नावभूव । पृथुनेत्यादि इयं, मही, गौः । कृतेति—स्पर्धमान इव, इष्यमाणा इव महीं, महिषीं, कृताभिपेकां,

निसर्गस्वैरिणी स्वरुच्यनुरोधिनी च भवति हि महतां मतिः ।  
 यतस्तस्य केनचिदनुपदिष्टा सहजैव शैशवादारभ्यान्यदेवतावि-  
 मुखी भगवति, भक्तिमुलभे, भुवनभृति, भूतभावने, भवच्छिदि,  
 भवे भूयसी भक्तिर्भूत् । अकृतवृषभध्वजपूजाविधिर्न स्वप्नेऽप्या  
 हारमकरोत् । अजम्, अजरम्, अमरगुरुम्, असुरपुरिषुम्,  
 अपरिमितगणपतिम्, अचलदुहितृपतिम्, अखिलभुवनकृतचर-  
 णनतिम्, पशुपतिं प्रपन्नोऽन्यदेवताशून्यममन्यत त्रैलोक्यम् ।  
 भर्तृचित्तानुवर्तिन्यश्चानुजीविनां प्रकृतयः । तथा हि । गृहे गृहे  
 भगवानपूज्यत खण्डपरशुः । वधुरस्य होमानलज्वालाविलीयमान-  
 बहलगुग्गुलगन्धगर्भाः स्नपनक्षीरशीकरक्षोदक्षारिणी विल्वप-

प्रधानपत्रि चकार । निसर्गस्वैरिणी, स्वभावतः स्वेच्छाचारिणी,  
 स्वरुच्यानुरोधिनी, स्वाभिमतानुवर्तिनी, अनुपदिष्टा, अशिक्षिता ।  
 भुवनेति—भुवनानि, जगन्नि, विभ्रति, धारयति तस्मिन् । भूनेति—  
 भूतान्, प्राणिनः भावयति मनः, स्थितत्वेन, विषयेषु, प्रवर्तयति यः  
 तस्मिन् । भवच्छिदि, संसारध्वंसिनि । भवे, हरे । अजं, जन्मरहितं,  
 अजरं, जराशून्यम्, अमरगुरुम्, देवदेवम्, असुर पुरिषुम्, त्रिपु-  
 रागिम्, अपरिमितगणपतिम्, अपरिमितानां, असंख्यकानां, गणानां,  
 प्रमथानां, पतिः, तम् । अचलेति—अचलस्य, नगस्य, हिमवतः,  
 दुहितुः, कन्यायाः, पतिः, तम् । अखिलेति—अखिलैः, समग्रैः,  
 भुवनैः, कृता, चरणयोः, नतिः, प्रणामः, यस्य तम् । प्रपन्नः, आश्रितः ।  
 खण्डपरशुः, शिवः, (शंकरश्चन्द्रशेखरः, भूतेशः खण्डपरशुः “इत्यमरः)  
 ववुः, वहन्तिस्म । होमेति—होमानलज्वालायां, होमकुण्डाग्निशिखा-  
 याम्, विलीयमानानां, द्रवतां, वहलानां, वहूनां, गुग्गुलानां, गन्धो-  
 गर्भं, मध्ये येषां ते । स्नपनेति—स्नपनं, स्नानोपकरणम्, यत् क्षीरं,

लवदामदलोद्वाहिनः पुरालयेषु वायवः । शिवसपर्यासमुचितै-  
रुपायनैः प्राभृतैश्च पौराः, पादोपजीविनः सन्निवाः, भुजबलनिर्जि-  
ताश्च करदीकृता महासान्तास्तं सिपेविरे । तथा हि । कैलास-  
कूटधवलैः कनकपत्रलतालंकृतविपाणकोटिभिर्महाप्रमाणैः सं-  
ध्यावलिवृषैः सौवर्णैश्च स्नपनकलशैरर्घ्यभाजनैश्च, धूपपात्रैश्च,  
पुष्पपट्टैश्च, मणियष्टिप्रदीपैश्च, ब्रह्मसूत्रैश्च, महार्हमाणिक्यखण्ड-  
खचितैश्च मुखकोषैः परितोषमस्य मनसि चक्रुः । अन्तःपुरा-  
ण्यपि स्वयमारब्धबालेयतण्डुलकण्डनानि, देवगृहोपलेपनलोहि-

दुग्धम्, तस्य शीकराः, विन्दवः एव क्षोदाः, चूर्णमद्रशाः, तान्  
क्षरन्तीति तथोक्ताः । विल्वेति—विल्वपल्लवानां, दामानि, माल्यानि,  
तेषां दलानि, निचयानि, उद्धहन्तीति तथाविधाः, पुरालयेषु, पुण्य-  
स्थानेषु । शिवेति—शिवस्य, सपर्या, पूजा, तत्समुचितानि, तैः,  
उपायनैः, उपढौकनैः, प्राभृतकैः, सुहृत्प्रेषितैः, करदीकृताः, दण्डजाः  
कृताः, महासामन्ताः, श्रेष्ठनृपतयः । कैलासस्य, रत्नतगिरिः, कूटानि,  
शिखराणि तद्वन् धवलाः तैः । कनकेति—कनकपत्रलताभिः, स्वर्ण-  
रचितपत्रभंगैः, अलंकृताः, विपाणकोटयः, शृङ्गाप्राणि, येषां तैः ।  
महाप्रमाणैः, बृहदाकारैः, सन्ध्यावलिवृषैः, सन्ध्याकालिकपूजार्थवृषभैः,  
सौवर्णैः, काञ्चनमयैः, स्नपनकलसैः, स्नानकुम्भैः, अर्घ्यभाजनैः,  
अर्घ्यपात्रैः, पुष्पपट्टैः, कुसुमवसनैः । मणियष्टिप्रदीपाः, ज्वलन्मणि-  
शिखा तैः, ब्रह्मसूत्रैः, यज्ञोपवीतैः । महार्हंति—महार्हेणा, महामूल्येन,  
माणिक्यखण्डेन, रत्नशकलेन, खचितैः, निवद्धैः, मुखकोषैः, मुख-  
युक्ताः कोषाः तैः, शिवलिङ्गाच्छादनैः, अस्य पुष्पभूतैः । अन्तः  
पुराणि अवरोधवर्गाः । आरब्धेति—आरब्धानि, बालेयानां, तण्डु-  
लानां, कण्डनानि, यैः तथा भूतानि । देवेति—देवगृहस्य, शिव-



तत्करकिसलयानि, कुसुमप्रथनव्यग्रसमस्तपरिजनानि तस्या-  
भिलषितमन्ववर्तन्त । तथा च । परममाहेश्वरः स भूपालो  
लोकतः शुश्राव, भुवि भगवन्तमपरमिव साक्षादक्षमस्वमथनं  
दाक्षिणात्यं बहुविधविद्याप्रभावप्रख्यातैर्गुणैः शिष्यैरिवानेकसह-  
स्रसंख्यैर्व्याप्तमन्यलोकं भैरवाचार्यनामानं महाशैवम् । उपनयन्ति  
हि हृदयमदृष्टमपि जनं शीलसंवादाः । यतः स राजा श्रवणसम-  
कालमेव तस्मिन्भैरवाचार्यं भगवति द्वितीय इव कपर्दिनि  
दूरगतेऽपि गरीयसीं बबन्ध भक्तिम् । आचक्राङ्ग च मनोरथै-  
रयस्य सर्वथा दर्शनम् ।

अथ कदाचित्पर्यस्तेऽस्ताचलचुम्बिनि वासरेऽन्तः पुण्यतिनं  
राजानमुपसृत्य प्रतीहारीं विज्ञापितवती -- 'देव, द्वावि परिव्रा-  
डास्ते कथयति च भैरवाचार्यवचनाद्देवमनुप्राप्तोऽस्मि' इति ।

मन्दिरस्य, उपनेपनेन, गोमयादिनां संशोधनेन लोहिततराः, अति-  
लोहिताः, करकिसलयाः, येषां तथोक्तानि । कुसुमेति - कुसुमानां,  
प्रथने, गुम्फने, व्यग्राः, लग्नाः, परिवाराः, येषां तानि, अन्ववर्तन्तः,  
अन्वसरन् । परममाहेश्वरः, महेश्वरस्य परमभक्तः, भुवि वसुधायाम् ।  
दक्षमग्यमथनम्, दक्षप्रजापतेः ( यज्ञध्वंसनमित्यर्थः ) दाक्षिणात्यम्,  
दक्षिणादेशप्रभवम् । बह्विति - बहुविधा, या विद्या, तस्याः, प्रभावेन,  
प्रख्यातैः, प्रसिद्धैः, उपनयन्ति, उपस्थापयन्ति, शीलसंवादाः, चारित्र-  
सादृश्यानि । कपर्दिनि, शिवि, गरीयसीं, गुरुतराम्, आचक्राङ्ग,  
इच्छयामास ।

पर्यस्ते, अवसिते, वासरे, दिवसे, परिव्राट्, सन्न्यासी, अनुप्राप्तः,  
समागतः । अथ न चिरात् इत्यादौ मस्करिणमद्वाक्षीत् इत्यनेनान्वयः ।  
प्रांशु, उन्नतकायं, आजानु, उरुपर्यन्तं, लम्बौ, भुजौ यस्य तम् ।

राजा तु तच्छ्रुत्वा सादरम्—‘क्वासौ आनयात्रैव । प्रवेशयैनम्’  
इति चाब्रवीत् । तथा चाकरोत्प्रतीहारी । नचिराद्य प्रविशन्तं  
प्रांशुम्, आजानुलम्बभुजम्, भैक्षक्षाममपि स्थूलास्थिभिरवयवैः  
पीवरमिवोपलक्ष्यमाणम्, पृथुत्तमाङ्गम्, उत्तुङ्गबलिभङ्गस्थपुट-  
ललाटम्, निर्मांसगण्डकूपम्, मधुविन्दुपिङ्गलपरिमण्डलाक्षम्,  
ईषदावक्रधोणम्, अतिप्रलम्बैककर्णपाशम्, अलावुबीजविकटो-  
न्नतदन्तपङ्क्तिम्, तुरगानूकश्लथाधरलेखम्, लम्बचिवुकायत-  
तरललपनम्, अंसावलम्बिना कापायेण योगपट्टकेन विरचित-  
वैकल्यकम्, हृदयमध्वनिबद्धग्रन्थिना च रागेणैव खण्डशः कृतेन

भैक्षेति—भिक्षा, एव भैक्षं तेन क्षामं, क्षीणम् । स्थूलेति—स्थूलाः,  
याः, अस्थयः, येषां, तैः, अवयवैः, पीवरम्, स्थूलं । पृथुत्तमाङ्गम्,  
बृहन्मस्त्रकम् । उत्तुङ्गेति—उत्तुङ्गा, दीर्घा, बलिभङ्गा यत्र तादृशं,  
स्थपुटं, निम्नोन्नतं, ललाटं, भालं, यस्य तथोक्तम् । निर्मांसेति—  
निर्मांसौ, मांसशून्यौ गण्डौ, कपोलौ, कृपाविव, यस्य तथोक्तम् ।  
मध्विति—मधुविन्दुवत्, पिङ्गलं, परिमण्डलं, गोलकं, ययोः तथा  
भूते, अक्षिणीयस्य तथा भूतम् । ईषदिति—ईषत्, आवका, घोणा  
नासिकायस्यतम् ( घोणानासा च नासिका इत्यमरः ) अर्ताति—  
अति, अतिशयेन, प्रलम्बः, लम्बमानः, एकः कर्णपाशः यस्य तथो-  
क्तम् । अलाव्विति—अलावुबीजवत्, तुम्बीबीज इव विकटा,  
कराला, उन्नता च दन्तपङ्क्तिः, दशनावलीयस्य तम् । तुरगेति—  
तुरगस्य, अनूकः, अधोगतः, ओष्ठः, तद्वत् श्लथा, शिथिला, अधर-  
लेखा यस्य तम् । लम्बेति—लम्बेन, चिवुकेन, अधराधोभागेन,  
आयततरम्, अतिदीर्घं, लपनं, मुखं यस्य तथोक्तम् । अंसावलम्बिना,  
स्कन्धावलम्बिना, कापायेण, कापायरञ्जितेन, योगपट्टकेन, योग-

धातुरसारणेन कर्पटेन कृतोत्तरासङ्गम् । पुनरुक्तबालप्रग्रहवेष्ट  
ननिश्चलमूलेन वद्धमृत्परिशोधनवंशत्वक्षिततउना कौपीनसनाथ-  
शिखरेण खर्जूरपुटसमुद्रकगर्भीकृतभिन्नाकपालकेन दारुफलक-  
त्रयत्रिकोणत्रियष्टिनिविष्टकमण्डलुना बहिरुपपादितपादुकाव-  
स्थानेन स्थूलदशासूत्रनियन्त्रितपुस्तिकापूलिकेन वामकरधृतेन  
योगभारकेणाध्यासितस्कन्धम् , इतरकरगृहीतवेत्रासनं मस्करि-

साधनेन पट्टवसनखण्डेन विरचितं, वैकृत्तकम् । हृदयेति—हृदयस्य,  
वक्षसः, मध्ये, निबद्धः, रचितः, ग्रन्थिः, यस्य तथोक्तेन, रागेगोव,  
धातुरसारणेन, गैरिकरक्तेन, कर्पटेन, नक्तकेन, कृतोत्तरासंगकृतः,  
उत्तरासंगः, उत्तरीयं येन तथोक्तम् । पुनरुक्तेति—पुनरुक्तेन, बालेन,  
नूतनेन, प्रग्रहेण, रज्ज्वा, यद्वेष्टनं, तेन निश्चलं, स्थिरं मूलं यस्य तेन ।  
वद्धेति—वद्धः, मृदां, मृत्कानां, परिशोयनाय, परिमार्जनाय, वंश-  
त्वचा, वेणुवल्कलेन, निततः चालनी यत्र तेन ( चालनीनिततः  
पुमान्-इत्यमरः ) कौपीनेति कौपीनेन, चीरवस्त्रेण, सनाथं,  
युक्तम्, शिखरं, अग्रभागं, यस्य तेन । खर्जूरेति—खर्जूरस्य, वृक्ष-  
भेदस्य, पुटैः, श्लिष्टैः, समुद्रकः, सम्पुटकः तस्य गर्भीकृतं  
गर्भस्थापितं, भिन्नाकपालकं, ( भिन्नापात्रमित्यर्थः ) यस्य तथोक्तेन ।  
दारवेति—दारुवं, काष्ठसम्बन्धी यत् फलकत्रयम्, पट्टकत्रयम्,  
तस्मिन्, ये, त्रयः कोणाः तेषु याः, निम्नो, यष्टयः, दण्डाः,  
नासु, निविष्टः, कमण्डलुः यस्य तथाविधेन । बहिरिति—बहिः, बाह्यदेशे,  
उपपादितं, सम्पादितं, पादुरयोः, उपानहोः, अवस्थानं, स्थापनं यस्य  
तथाविधे । स्थूलेति—स्थूलैः वृद्धैः, पीवरैः, वा, दशसूत्रैः, वसना-  
ञ्चल तन्तुभिः, नियन्त्रितं, निबद्धं, पुस्तिका पूलकं क्षुद्रपुस्तकसमूहः,  
यत्र तेन । वामकरधृतेन, वामहस्तगृहीतेन योगभारकेण, योगसाधन

णमद्राक्षीत् । क्षितिपतिरप्युपगतमुचितेन चैनमादरेणान्वग्रहीत्  
आसीनं च पप्रच्छ—‘क भैरवाचार्यः’ इति । सादृशरूपतिवच-  
नमुदितमनास्तु परिघाट् तमुपनगरं सरस्वतीतटवनावलम्बिनि  
शून्यायतने स्थितमाचचक्षे । भूयश्चावभाषे—‘अर्चयति हि महा-  
भागं भगवानाशीर्वचसा’ इत्युक्त्वा चोपनिन्ये योगभारकादा-  
कृष्य भैरवाचार्यप्रहितानि रत्नवन्ति बहलालोकलिप्तान्तःपुराणि  
पञ्च राजतानि पुण्डरीकाणि ।

नरपतिस्तु प्रियजनप्रणयभङ्गकातरो दाक्षिण्यमनुरुध्यमानो  
ग्रहणलाघवं च लङ्घयितुमसमर्थो दोलायमानेन मनसा स्थित्वा  
चिरं कथं कथमप्यतिसौजन्यनिष्पन्नस्तानि जग्राह । जगाद च—

द्रव्यसञ्चयस्थाल्या, अध्यामिनः, संनिवेशितः स्कन्धः यस्य तम् ।  
इतरेति— इतरेणा, दक्षिणेन, करेणा, हस्तेन, गृहीतं, वेत्रामतम् ।  
मस्करिणां सन्यासिनम्, अद्राक्षीत् । क्षितिपतिः, राजा, उपगतम्,  
उपस्थितम् । उचितेन, अनुकूलेन । उपनगरम्, नगरसमीपम् ।  
मुदितमनाः, प्रसन्नचित्तः । सरस्वतीति—सरस्वत्या, तन्नामनद्याः  
तेटे, तीरे यद्वनं तद्वलम्बते इति तथोक्ते. सरस्वतीतीरस्थवनान्तं,  
शून्यायतने, शून्यमन्दिरे । स्थितिं, वासं, आचचक्षे, आवभाष ।  
भूयः, पुनः, अर्चयति, पूजयति, महाभागं, भाग्यवन्तम्, उपनिन्ये,  
समर्पितवान् । बहलेति—बहलेन, प्रभूतेन, आलोकेन, कान्त्याः,  
लिप्तम्, अन्तपुरं, यैः तानि, रत्नवन्ति, मणिरवचिनानि, राजतानि,  
रौप्यमयानि, पुण्डरीकाणि, कमलानि । प्रियेति—प्रियजनस्य,  
प्रीतिपात्रस्य, प्रणयभङ्गः तेन कातरः, दाक्षिण्यं, चातुर्यं, अनुरुध्य-  
मानः, अनुसरन्, ग्रहणलाघवम्, ग्रहणं, लाघवम्, दोलायमानेन,  
( किं कर्त्तव्यमिदमूढतया गृह्णामि नवेति संशयितेनेत्यर्थः ) अतिसज्जन्य-

‘सर्वफलप्रसवहेतुः शिवभक्तिरियं नः, यथा मनोरथदुर्लभानि फल-  
न्ति फलानि । येनैवमस्मासु प्रीयते भगवान्भुवनगुरुर्भैरवाचार्यः ।  
श्रो द्रष्टास्मि भगवन्तम्’ इत्युक्त्वा च मस्कृणिं व्यसर्जयत् ।  
अनया च वार्तया परां मुदमवाप ।

अपर्युथ प्रातरेवोत्थाय वाजिनमधिरुह्य समुच्छिन्नश्वेतात-  
पत्रः समुद्भूयमानधवलचामरयुगलः कतिपयैरेव राजपुत्रैः परि-  
वृतो भैरवाचार्यं सवितागमिव शशी द्रष्टुं प्रतस्थे । गत्वा च  
किञ्चिदन्तरं तदीयमेवाभिमुखमापतन्तमन्यतमं शिष्यमद्राक्षीत् ।  
अप्राक्षाच्च—‘क भगवानास्ते’ इति । सोऽकथयत्—‘अस्य जीर्ण-

नित्र, अतिसौजन्यवंशवद् । सर्वेति सर्वेषां, समप्राणां, फलानां  
प्रसवहेतुः, उत्पत्तिकारणम्, नः, अस्माकम् । मनोरथाति—मनोरथ-  
नाऽपि, दुर्लभानि, दुष्प्राप्याणि । भुवनगुरुः, जगदाचार्यः, श्रः, पर-  
दिने, मस्कृणिं, परिव्राजम्, वार्तया, वृत्तान्तेन, वाजिनम्, अश्वम् ।  
समुच्छिन्नेति—समुच्छिन्नं, समुदधृतम्, श्वेतं, धवलं, आतपत्रं, ह्यत्र  
येन सः । समुद्भूयमानेति—समुद्भूयमानं, संजीव्यमानं, धवलं,  
श्वेतं, चामरयुगलं, येन सः । सवितागमिव, सूर्यमिव, शशी, चन्द्रः,  
द्रष्टुम्, अवलोकयितुम्, अभिमुखम्, सम्मुखम्, आपतन्तं, आगच्छ-  
न्तम्, अन्यतमम्, अपरम्, शिष्यम्, अन्तेवासिनं, अद्राक्षीत्, ददर्श ।  
जीर्णामातृगृहस्य, पुगानन्देवीमन्दिरस्य, उत्तरेणा, उत्तरस्यां दिशि,  
विल्ववाटिकां, विल्ववृक्षशोभितोद्यानम् । अथेत्यादौ भैरवाचार्यं  
ददर्श इत्युत्तरंगान्वयः । कापटिकवृन्दस्य, कपटं, चीरबन्धम्, परि-  
धारयन्ति इति कापटिकाः, कौमीनधारिणाः, तेषां, वृन्दस्य, समूहस्य ।  
दत्तेति—दत्ताः, इष्टदेवायेतिभावः, अष्टौ पुष्पिकाः, पञ्चादयः येन तम् ।  
अनुष्ठितामि कार्यं, सम्पादितहवनविधिम् । कृतेति—कृतः, भस्मचय-

‘मातृगृहस्योत्तरेण बिल्ववाटिकामध्यास्ते’ इति । गत्वा च तं प्रदेशमवततार तुरङ्गमात् । प्रविवेश च बिल्ववाटिकाम् ।

अथ महतः कार्पटिकवृन्दस्य मध्ये प्रातरंघ स्नातम्, दत्ताष्ट-  
पुष्पिकम्, अनुष्ठिताग्निकार्यम्, कृतभस्मचयपरिहारपरिकरे  
हरितगोमयोपलिप्तक्षितितलवितने व्याघ्रचर्मगुपविष्टम्, कृष्ण-  
कम्बलप्रावरणनिभेनासुरविवरप्रवेशाशङ्कया पातालान्धकारा-  
वासमिवाभ्यस्यन्तम्, उन्मिषता विद्युत्कपिलेनात्मनेजसा महा-  
मांसविक्रयक्रीतेन मनः शिलापङ्केनेव शिष्यलोकं लिम्पन्तम्,  
जटीकृतैकदेशलम्बमानरुद्राक्षशङ्खगुटिकेनोर्ध्ववद्धेन शिखापा-  
शेन बध्नन्तमिव विद्यावलेपदुर्विदभ्यानुपरिसंचरतः सिद्धान्ध-

परिहारम्य, भूतिममूहमस्मार्जतम्य, परिकरः, प्रक्रिया यस्य तस्मिन् ।  
हरितेति हरितं, श्यामजेन, गोमयेन, उपलिप्तं, शोभितं, क्षिति-  
तलं, भूतलं तस्मिन् वितनं, विमृत्तं, तस्मिन् । कृष्णकम्बलेति—  
कृष्णावर्णकम्बलम्, एव प्रावरणम्, गात्राञ्छादनम्, तस्य निभः, छलं,  
तेन । असुरेति असुरविवरम्, पातालं, तत्र प्रवेशः तस्य आशंका,  
वितर्का, तथा । पातालेति—पाताले यः अन्धकारः, तत्र आवास-  
मिव, स्थितिमिव, अभ्यस्यन्तं, शिष्यमार्गम् । उन्मिषता, स्फुरता,  
विद्युत् कपिलेन, तडित्पिङ्गलेन, आत्मतेजसा, निजतेजसा । महा-  
मांसेति—महामांसं, नरमांसं, तस्य, विक्रयः, तेन क्रीतः, तेन ।  
मन-इति—मनः शिला, ( मैतशिल ) धातुविशेषः तस्य पङ्कः, द्रवः,  
तेन, शिष्यलोकम्, अन्तर्वासिजनम् । जटीति—अजटा जटामम्पाव-  
मानः, जटीकृतः, एकदेशः, एकांशः, तस्मिन्लम्बमानाः, रुद्राक्षाः,  
जपमालाः, शंखगुटिकाः, ( शंखनिर्मितजपमाधना इत्यर्थः ) यस्मिन्  
तथोक्तेन, ऊर्ध्ववद्धेन, उन्नम्य नियमितेन, शिखापाशेन बध्नन्तमिव ।

चलकतिपयशिरोरुहेण वयसा पञ्चपञ्चाशतं वर्षाण्यतिक्रामन्तम् ,  
 खालित्यर्क्षायमाणशङ्खलोमलेखम् , लोमशकर्णशङ्कुलीप्रदेशम् ,  
 पृकुललाटतटम् , तिरश्च्या भस्मललाटिकया बहुशः शिरोर्ध्व-  
 तदग्धगुग्गुलुसन्तापस्फुटितकपालास्थिपाण्डुरराजिशङ्कामिव ज-  
 नयन्तम् , सहजललाटवलिभङ्गसंकोचितकूर्चभागं बभ्रूभासं  
 भ्रूसंगत्या निरन्तरामायामिनीमेकामिव भ्रूलेखां बिभ्राणम् ,  
 ईषत्काचरकर्नानिकेन रक्तापाङ्गेनिर्गतांशुप्रतानेन मध्यधवल-

विद्येति—विद्ययायोऽवलेपः, अहंकारः तेन दुर्विद्वाः, दुर्विनीताः  
 नान् । उपरि, आकाशे, संचरतः, परिभ्रमतः, सिद्धान् देवयोनिविशे-  
 पान् । धवलंति धवलाः, श्वेताः, शिरोरुदाः, केशाः यस्मिन्,  
 तथोक्तेन, शिरसा, उत्तमांगेन । खालित्येति खलतिः, खल्वाटः  
 तस्य भावः खालित्यम् तेन लीयमाणा, शङ्खस्य, लोमलेखा, केश-  
 निचयो यस्य तथोक्तम् । लोमशेति लोमशः, लोमाकीर्णा, कर्ण-  
 शङ्कुली, कर्णाकुहरं तस्या प्रदेशः, यस्य तम् । पृथुललाटतटम्,  
 विशालभालम् । तिरश्च्या, निर्यग्वर्तिन्या ललाटिकया, मस्तकभूपगणेन ।  
 शिर इति— शिरसः, ऊर्ध्वं, शिरोर्ध्वं, तस्मिन् धृतानां दग्धानां,  
 गुग्गुलानां, गन्धद्रव्यभेदानां, सन्तापेन, उत्तापेन, स्फुटितानि यानि  
 कपालास्थीनि, मस्तकास्थीनि तेषां पाण्डुरा, धवला राजिः, पङ्क्तिः,  
 तस्याः, शङ्का, तामिव, जनयन्तम्, उत्पादयन्तम् । सहजेति—  
 सहजेन, स्वाभाविकेन, ललाटे यो वलिभङ्गः, तेन संकोचितः, लघुतां  
 प्रापितः, कूर्चभागः, भ्रूमध्यभागः, यस्य तथोक्तम्, ( कूर्चमस्त्री भ्रुवोः,  
 मध्यम् “इत्यमरः” ) बभ्रूभासं, पिङ्गलकान्तिम् । भ्रूसंगत्येति  
 भ्रवोः, संगतिः, सम्मेलनं तथा, निरन्तरां, अविरलाम्, आयामिनीम्,  
 आयतां । भ्रूलेखाम् । ईषदिति—ईषत्, काचरा, पीतवर्णा, कनी-

भासेन्द्रायुधेनेघातिदीर्घेण लोचनयुगलेन परितो महामण्डलमि-  
वानेकवर्णरागमालिखन्तम्, सितपीतलोहितपताकावलीशबलम्,  
शिवबलिमिव दिक्षु विक्षिपन्तम्, तार्क्ष्यतुण्डकोटिकुञ्जाग्रघोणम्,  
दूरविदीर्णसृक्कसंक्षिप्तकपोलम्, किञ्चिदन्तुरतया सदाहृदयसं-  
न्निहितहरमौलिचन्द्रातपेनेव निर्गच्छता दन्तालेकेन धवलयन्तं  
दिशां चक्रवालं, जिह्वाग्रस्थितसर्वशैवसंहितातिभारेणेव मनावप्र-  
निका, मध्यतारा यस्य तेन । रक्तापांगेन, नेत्रप्रान्तदेशेन । निर्गतेति—  
निर्गता, अंशूनां, किरणानां प्रानाताः, प्रमराः यस्मात्तेन, रक्तात्,  
रक्तवर्णात्, अपाङ्गात्, नेत्रप्रान्तदेशात्, निर्गताः, अंशुप्रानाताः यस्य  
तेन । मध्येति—मध्ये, धवला, भासा, प्रभा, यस्य तेन इन्द्रायुधेन,  
शक्रधनुष इव, अनिदीर्घेण, आकर्णाविस्तृतेन, परितः, महामण्डलं,  
( सर्वतो भद्रादिरूपं यन्त्रमित्यर्थः ) अनेकेति—अनेकैः, विविधैः,  
वर्णैः, रागैः, रञ्जनं यत्रतं । सितेति—सिताः, श्वेताः, पीताः, पीतवर्णाः,  
लोहिताः, रक्ताः, च याः पताकाः, वैजयन्त्यः तासां आवृत्य, श्रेण्यः,  
ताभिः शवलं, विविधवर्णारञ्जितम् शिववलिं, शिवपूजाविधिम् ।  
तार्क्ष्येति—तार्क्ष्यः, गरुडः ( गुरुत्मान् गरुडस्तार्क्ष्यः “इत्यमरः )  
तस्य तुण्डकोटिः, चञ्च्वाग्रम् तद्वत् कुञ्जम्, अग्रघोणम्, अग्रनासि-  
कम् यस्य तथोक्तम् । दूरेति—दूरं, अत्यन्तं, विदीर्णाभ्याम्, विस्तृ-  
ताभ्याम्, सृक्काभ्यां, ओष्टाभ्याम् । संक्षिप्तौ, संकोचितौ, कपोलौ,  
गण्डौ यस्य तम् । किञ्चिदन्तुरतया, ईषदीर्घदन्तत्वेन, सदा, हृदये,  
चित्ते, सन्निहितस्य, अवस्थितस्य, हरस्य मौलौ, शिरसि यः चन्द्रः  
तस्य आतपः आलोकः तेन इव, निर्गच्छता, वहिर्गच्छता, दन्तालोकेन,  
दशनप्रभया, दिशां चक्रवालं, मण्डलम्, धवलयन्त्रम् । जिह्वेति—  
जिह्वायाः, रसनायाः, अग्रेस्थिताः । याः, सर्वाः, शैवसंहिताः, शिव-  
संहिताः, शिवचरितगाथाः, तासां, अतिभारेणेव, मनाक्, ईषत्,



लम्बितोष्ठम्, प्रलम्बश्रवणपालांप्रेङ्गिताभ्यां स्फटिककुण्डलाभ्यां  
शुकवृहस्पतिभ्यामिव सुरासुरविजयविद्यासिद्धिश्रद्धयानुबध्य-  
मानम्, वद्ध विविधौषधिमन्त्रसूत्रपङ्क्तिना सलोहवलयेनैकप्रको-  
ष्ठेन शङ्खखण्डं पूष्णो दन्तमिव भगवता भवेन भग्नं भक्त्या  
भूषणीकृतं कलयन्तम्, अखिलरसकूपोदञ्चनघटीयन्त्रमालामिव  
रुद्राक्षमालां दक्षिणेन पाणिना भ्रमयन्तम्, उरसि दोलायमाने-  
नापिङ्गलाग्रेण कूर्चकलापेन संमार्जयन्तमिवान्तर्गतं निजरजो-

प्रलम्बितः, ओष्ठः, यस्य तथोक्तम् । प्रलम्बेति प्रलम्बयोः, प्रकर्षण  
लम्बमस्योः, श्रवणपालयोः, कर्णरेखयोः, प्रेङ्गिते, आन्दोलिते,  
ताभ्याम् । स्फटिककुण्डलाभ्यां, स्वच्छकर्णभूषणाभ्याम्, शुकवृह-  
स्पतिभ्यामिव । सुरेति—सुरासुराणां, देवदैत्यानां, या विजयविद्या,  
तस्याः, सिद्धिः, तस्याः श्रद्धया, अनुबध्यमानम्, अनुगम्यमानम्,  
वद्धेति वद्धा विविधानां, औषधीनां, मन्त्राणांच सूत्रपङ्क्तिः, यस्मिन्  
तथोक्तेन सलोहवलेन, लोहवलयालङ्कृतं, एकप्रकोष्ठेन, एकेन,  
कर्पूरमणिबन्धयोः अन्तरप्रदेशेन ( प्रकोष्ठो मणिवन्धस्य कर्पूरस्यान्तरं  
उपि च इति मेदिनी ) शङ्खखण्डम्, कम्बुशकलम् । पूष्णः, सूर्यस्य, दन्त-  
मिव, भवेन, हरणं, भग्नं, पाटितं, भक्त्या, भूषणीकृतम्, कलयन्तं,  
धारयन्तम् । अखिलेति—अखिलस्य, समग्रस्य, रसस्य, जलस्य,  
अनुरागस्य च कूपान्, जलाधारान्, ( संसारकूपाच्च हरंप्रति—इति  
भावः ) उदञ्चनाय, उद्धरणाय, घटियंत्रमालामिव, घटियंत्रराजिमिव  
( अरहाट ) रुद्राक्षमालां, जपमालां दक्षिणेनपाणिना करेण भ्रम-  
यन्तम् । उरसि, वक्षसि, अपिङ्गलाग्रेण, ईपन् कपिशग्रेण, कूर्चकला-  
पेन, श्मश्रुनिचयेन, सम्मार्जयन्तं, संशोधयन्तम्, अन्तर्गतं, ( हृदिस्थ-  
मित्यर्थः ) निजरजोनिकरम्, स्वं रजोगुणविकारम् । अतीति—

निकरम्, अतिनिबिडनीललोममण्डलविचितं च ध्यानलब्धेन  
ज्योतिषा दग्धमिव हृदयदेशं दधानम्, ईषत्प्रशिथिलवलिवलय-  
बध्यमानतुन्दम्, उपचीयमानस्फिङ्मांसपिण्डकम्, पाण्डुरपवि-  
त्रक्षौमावृतकौपीनम्, सावष्टम्भपर्यङ्कबन्धमण्डलितेनामृतफेनश्वे-  
तरुचा योगपट्टकेन वासुकिनेवाप्रतिहतानेकमन्त्रप्रभावाविर्भूतेन-  
प्रदक्षिणीक्रियमाणम्, अरुणतामरससुकुमारतलस्य पादयुगलस्य  
निर्मलैर्नखमयूखजालकैर्जर्जरयन्तमिव महानिधानोद्धरणरसेन

अतिनिबिडं, अतिवतेन, नीलेन, कृष्णेन, लोममण्डलेन, रोमसमू-  
हेन, निचितं व्याप्तम्, ज्योतिषा, प्रभया, ( ज्ञानरूपोन्निभावः ) ।  
ईषदिति—ईषत् प्रशिथिलेन, वलिवलयेन, वलित्रयेण, बध्यमानं,  
वेष्टमानं, तुन्दं, उदरं, यस्य तथोक्तम् ( पिचिण्डकुक्षिजटरोदरं तुन्दम्  
“इत्यमरः ) उपचीयमानेति उपचीयमानम्, आप्यायमानं, स्फि-  
चयोः, नितम्बयोः ( स्त्रियां स्फिचौ कटिप्रोस्थौ इत्यमरः ) मांसपिण्ड-  
कम् यस्य तम् । पाण्डुरेति—पाण्डुरेण, धवलेन, पवित्रेण, शुद्धेन,  
क्षौमेण, पट्टवसनेन, आवृतम्, आच्छादितं, कौपीनं, अन्तर्वस्त्रं यस्य  
तथा भूतम् । सावष्टम्भेति—सावष्टम्भं, सर्गं यः पर्यङ्कबन्धः, आसन-  
विशेषः, तेन मण्डलितं, वलयीकृतं, तेन । अमृतेति—अमृतफेनवत्,  
श्वेता, धवला, रुक्, कान्ति यस्य तेन योगपट्टकेन । अप्रतिहतेति—  
अप्रतिहतानां, प्रतिरोद्धुमशक्तानां, अनेकेषां, मन्त्राणां, प्रभावेण,  
सामर्थ्येन, आविर्भूतः तेन, प्रदक्षिणीक्रियमाणम्, समन्तात् वेष्टमान-  
मित्यर्थः । अरुणेति—अरुणं, रक्तम्, यत् तामरसम्, पद्मं, तद्वत्  
सुकुमारम्, सुकोमलं तलं यस्य तथाभूतस्य । नखेति—नखानां,  
मयूरवाः, किरणाः, तेषां, जालकैः, जर्जरयन्तमिव, विदारयन्तमिव ।  
महानिधानेति—महानिधानस्य, महतो निधेः, उद्धरणम्, उत्तोलनम्

रसातलम्, तोयक्षालितशुचिना धौतपादुकायुगलेन हंसमिथु-  
नेनेव भार्गारथीतार्थयात्रापरिचयागतेनामुच्यमानचरणान्तिकम्,  
शिखरनिखातकुब्जकालायसकण्टकेन वैणवेन विशाखिकादण्डेन  
सर्वविद्यासिद्धिविघ्नविनायकापनयनाङ्कुशेनेव सततपार्श्ववर्ति-  
नाविराजमानम्, अवहुभाषिणं मन्दहासिनं सर्वोपकारिणं कुमा-  
रब्रह्मचारिणम्, अतितपस्विनम्, महामनस्विनं कृशक्रोधम्,  
अकृशानुरोधम्, महानगरमिवादीनप्रकृतिशोभितम्, मेरुमिव

तस्मिन् या रसः, रागः तेन रसातलं, पानालम् । तोयेति — तोयेत्,  
जलेन, क्षालितं, धौतं अतएव शुचिः पवित्रं, तेन, ( पक्षे ) तोये,  
क्षालितं, ( सर्वज्ञजलेऽऽवसन्तान् धौतमित्यर्थः ) अतएव शुचिः, शुभ्रम्  
तेन । भार्गारथीति — भार्गारथी, गंगा एव तीर्थं, पुण्यक्षेत्रम्, तस्मिन्  
यात्रा, गमनं, तत्र यः परिचयः, संगतिः, तेन, आगतं तेन । आमुच्य-  
मानेति — आमुच्यमानं, चरणान्तिकं यस्य तथोक्तम् । शिखरेति —  
शिखरे, शृङ्गे, निम्बान्, प्रोत्थितः, कुब्जः, ( कुञ्जित इत्यर्थः ) कालायम-  
कण्टकः, कृष्णलोहितकण्टकः, यस्य तेन । वैणवेन, वेणुः, वंशदण्डः,  
तस्यायं वैणावः तेन, विशिखादण्डेन, खनित्रलगुडेन । सर्व्वेति — सर्वांसां,  
विद्यानां, सिद्धौ विघ्नः, अन्तरायः यो विनायकः, गणपतिः, तस्य,  
अपनयनाय, अपसारणाय, अङ्कुशः, अस्त्रविशेषः, तेन इव । सर्वोप-  
कारिणं, समस्तोपकारपरायणम् । कुमारब्रह्मचारिणम्, नैष्ठिकब्रह्म-  
चारिणम् । महामनस्विनं, प्रशस्तचित्तम् । कृशक्रोधम्, अल्पक्रोधम्,  
अकृशानुरोधम्, अकृशः, अनल्पः, अनुरोधः, आप्रहः यस्य तथोक्तम्  
( पक्षे ) अकृशानां, स्थूलानां, अनुरोधः, अनुसरणं, यत्र, तथोक्तम् ।  
अदीनेति — अदीना, दैन्यरहिता, या प्रकृतिः, स्वभावः तथा शोभितः  
तम् ( पक्षे ) अदीनाभिः, दारिद्र्यविहीनाभिः प्रकृतिभिः, प्रजाभिः,

कल्पतरुपत्तनवराशिसुकुमारच्छायम्, कैलासमि वपशुपतिचरण-  
रजःपवित्रितशिरसम्, शिवलोकमिव माहेश्वरगणानुयातम्,  
जलनिधिमिवानेकनदनदीसहस्रप्रक्षालितशरीरम्, जाह्नवीप्रवा-  
हमिव बहुपुण्यतीर्थस्थानशुचिम्, धाम धर्मस्य, तीर्थं तथ्यस्य,  
कोशं कुशलस्य, पत्तनं पूततायाः, शाला शीलस्य, क्षेत्रं क्षमायाः,  
शाल्यं शालानतायाः, स्थानं स्थितेः, आधारं धृतेः, आकरं  
करुणायाः, निकेतनं कौतुकस्य, आगमं गमणायिकस्य, प्रसादं

प्रधानपुरुषैः, वा शोभितम् । कल्पेति कल्पतरुणां, कल्पवृक्षाणाम्,  
पत्तनवराशयः, किमलयनिचयाः, नदनं तैश्च मुकुमारा, कोसला, विशद-  
च द्राया । कान्तिः, अनानपञ्च यस्य तथोक्तम् (द्रायासूर्यप्रिया कान्तिः  
इत्यमरः) पशुपतीति पशुपतेः, हरस्य, चरणरजोभिः, पवित्रितम्,  
पावितम्, शिरः, सस्तकम् (पक्षे) पवित्रितानि, शिरांसि, शृङ्गाणि  
यस्य तथोक्तः, तम् । माहेश्वरेति महेश्वरो देवता येषां ते माहेश्वराः,  
(शैवाः-इत्यर्थः) तेषां गणाः, समूहाः (पक्षे) महेश्वरस्य इमे, माहेश्वराः,  
ये गणाः, प्रथमवर्गाः (गणाः प्रथमं सङ्घोपे-इति मेदिनी) तैः, अनु-  
यातः, अनुगतः, तम् । अनेकेति अनेकेषु, नदनदीनांसहस्रेषु,  
प्रक्षालितं, स्नानं शरीरं यस्य (पक्षे) अनेकैः, नदनदीसहस्रैः, प्रक्षालितं,  
शरीरं यत्र तथोक्तः, तम् । वहिति बहुषु, पुण्येषु, तीर्थेषु,  
(हरिद्वारादिपवित्रक्षेत्रेषु-इत्यर्थः) स्थानेन, स्थित्या, शुचिः, पवित्रः  
तम्, उभयं, तुल्यम् । धाम, आश्रयम्, तीर्थं, क्षेत्रम् । तथ्यस्य,  
सत्यस्य । कोशं भाण्डागारम्, कुशलस्य, मंगलस्य पत्तनं, नगरम्,  
पूततायाः, पवित्रतायाः । शाला, गृहम्, शीलस्य, सुचरितस्य, क्षेत्रं,  
भूमिम, क्षमायाः, शान्तेः, शाल्यं, शाला एव शाल्यं, गृहं, स्थानं,  
स्थितेः, वासस्य, धृतेः, धैर्यस्य, आधारं, आश्रयः, करुणायाः, दयायाः,

प्रसादस्य, आगारं गौरवस्य, समाजं सौजन्यस्य, संभवं सद्भावस्य, कालं कलेः, भगवन्तं साक्षादिव विरूपाक्षं भैरवाचार्यं ददर्श ।

भैरवाचार्यस्तु दूरादेव राजानं दृष्ट्वा शशिनमिव जलनिधि-  
श्चचाल । प्रथमतरोत्थितशिष्यलोकश्चोत्थाय प्रत्युज्जगाम सम-  
र्पितश्रीफलोपायनश्च जह्नुकर्णसमुद्गीर्यमाणगङ्गाप्रवाहह्लादग-  
म्भीरया गिरा स्वस्तिशब्दमकरोत् ।

नरपतिरपि प्रीतिविस्तार्यमाणधवलिस्र्मा चक्षुषा प्रत्यर्पय-  
न्निवबहुतराणि पुण्डरीकवनानि ललाटपट्टपर्यस्तेन चोदंशुनां

आकारम्, मूर्तिः, कौतुकस्य, आश्चर्यस्य, निवेदनं, गृहम्, रामणीय-  
कस्य, सुन्दरतायाः, आरामम्, उपवनम् । प्रसादस्य, प्रसन्नतायाः,  
प्रासादं, हर्म्यं, गौरवस्य, आगारम्, गृहम्, सौजन्यस्य, सुजनतायाः,  
समाजं, गोष्ठीम्, सद्भावस्य, सदाचारस्य, सम्भवम्, उत्पत्तिम् ।  
कलेः, चतुर्थयुगस्य, कालं, अन्तसमयम्, विरूपाक्षं, त्रिलोचनं  
भैरवाचार्यं ददर्श ।

शशिनमिव, चन्द्रमिव, जलनिधिः, समुद्रः । प्रथमतरेति—  
प्रथमतरः, पूर्वतरः, उत्थितः, उद्गतः, शिष्यलोकः, छात्रसमूहः यस्य  
तथाविधः । समर्पितेति—समर्पितानि, प्रदत्तानि, श्रीफलान्येव,  
वित्त्वफलान्येव, उपायनानि, उपहाराः यस्य तथोक्तः । जहन्विति—  
जह्नुः, नाम ऋषिः, तस्य कर्णान् समुद्गीर्यमाणः, उद्धमनक्रियमाणः,  
यः, गङ्गाप्रवाहः, गङ्गास्रोतः, तस्य ह्लादः, अस्फुटनादः तद्वत् गम्भीरया  
गिरा वाण्या, स्वस्तिशब्दं अकरोत् । नरपतिः, राजा । प्रीतीति—  
प्रीत्या, विस्तार्यमाणः, प्रसार्यमाणः, धवलिमा, यस्य तथा भूतेन,  
चक्षुषा, लोचनेन, प्रत्यर्पयन्निव प्रतिदददिव, पुण्डरीकवनानि, श्वेत-  
कमलकाननानि । ललाटेति—ललाटपट्टे, मस्तकदेशे, पर्यस्तः,

शिखामणिना महेश्वरप्रसादमिव तृतीयनयनोद्गमेन प्रकाश-  
यन्नावर्जितकर्णपल्लवपलायमानमधुकरः शिवसेवासमुन्मूलिता-  
शेषपापलवमुच्यमान इव दूरावनतः प्रणाममभिनवं चकार ।  
आचार्योऽपि—‘आगच्छ अत्रोपविश’ इति शार्दूलचर्मार्मायमद-  
र्शयत् । उपदर्शितप्रश्रयस्तु राजा मत्तहंसकलगद्गदस्वरसुभगां  
मधुरसमर्थो महानदीमिव प्रवर्तयन्वाचं व्याजहार—‘भगवन्,  
नार्हसि मामन्यनृपस्खलितैः खलीकर्तुम् । अशेषराजकोपेक्षि-  
ताया हतलक्ष्म्याः खल्वयं शीलापराधो द्रविणदौरात्म्यं वा  
यदेवमाचरति मयि गुरुः । अभूमिरयमुपचाराणाम् । अलमति

पतितः, तेन । उद्गुन्ता, उन्नतकिरणेन, शिखामणिना, मौलिरत्नेन,  
महेश्वरप्रसादमिव, शंकरानुग्रहमिव, तृतीयनयनस्य, उद्गमेन, उद्घट-  
नेन, प्रकाशयन् । आवर्जितेति—आवर्जितेन, आन्दोलितेन, कर्ण-  
पल्लवेन, श्रोत्रपत्रेण, पालयमानः, मधुकरः, भृङ्गाः, यस्मात् सः ।  
शिवेति—शिवस्य, सेवया, समुन्मूलितानां, समुत्पाटितानां, अशेषाणां  
समस्तानां, पापानां, लवैः, कणैः, मुच्यमान इव, हीयमान इव, दूरा-  
वनतः, अभिनवं, नूतनं । शार्दूलचर्म, सिंहचर्म । उपेति—उपदर्शित-  
प्रश्रयः, प्रकटितविनयः । मत्तेति—मत्तस्य, हंसस्य, कलः, मधुरा-  
स्फुटः, गद्गदस्वरः, तेन सुभगां, मनोज्ञां, मधुरसमयीम्, इक्षुरसात्मी-  
काम्, ( अतिमधुरामित्यर्थः ) महानदीमिव, वाचं, वार्त्तां, व्याजहार,  
उवाच । नृपेति अन्येषां, अपरेषां, नृपाणां, राज्ञां, स्खलितानि,  
दोषाः, तैः, खलीकर्तुम्, सदोषं सम्भावयितुम् । अशेषेति—अशेषाणां,  
समप्राणां राज्ञां कोपेन ईक्षितायाः, हतलक्ष्म्याः, त्यक्तसम्पदः,  
शीलापराधः, चरित्रदोषः, द्रविणदौरात्म्यं, धनदुर्वृत्तता, गुरुः, भवान्  
मयि विषये, एवं, इत्थम् आचरति, अभूमिः, अस्थानम् ( अपात्र

यन्त्रणया । दूग्स्थितोऽपि मनोरथशिष्योऽयं जनो भवताम् ।  
माननीयं च गुणवन्नोल्लङ्घनमर्हति गुणोपासनम् । आसतां च  
भवन्त एवात्र' इति व्याहृत्य परिजनोपनीते वाससि निष-  
साद् । भैरवाचार्योऽपि प्रीत्यानतिक्रमणीयं नृपवचनमनुवर्तमानः  
पूर्ववत्तदेव व्याघ्राजिनमभजत ।

आसीने च सगाजके परिजने शिष्यजने च समुचितमध्या-  
दिकं चक्रे । क्रमेण च नृपमाधुर्यहृतान्तःकरणाः शशिकरनिकर-  
विमला दशनदाधितीः स्फुरन्तीः शिवभक्तारिव साक्षाद्दर्शयन्नु-  
वाच- 'तात, अतिनम्रतैव ते कथयति गुणानां गौरवम् । सक-  
लसंपत्पात्रमसि । विभवानुरूपास्तु प्रतिपत्तयः । जन्मनः प्रभृ-  
त्यदत्तदृष्टिरस्मि स्वापनेयेषु । यतः सकलदोषकलापानलेन्धनैः-

मित्यर्थः ) उपचाराणां, सेवानाम्, अतियन्त्रणया, अनिवर्तनेन,  
मनोरथशिष्यः ( मनोरथेन शिष्यतां गत इत्यर्थः ) माननीयम्, सम्मानार्हम् ।  
उल्लङ्घनं, पादेनाक्रमणं, मर्यादानतिक्रमणम् वा आसतां,  
निष्ठन्तु । अनुवर्तमानः, अनुसोदमानः, व्याघ्राजिनम्, व्याघ्रमय-  
मिहस्य, अजितं, चर्म यस्य तथोक्तं, तम् महादेवम् ।

समुचितम्, युक्तम्, अध्यादिकम्, पूजाविधानम्, चक्रे, कृतवान् ।  
नुपेति—नृपस्य माधुर्येण, रमणीयतायाः, गुणेन, हतम्, आकृष्टम्,  
अन्तःकरणं मनः, यस्य तथा भूतः । शशीति—शशिनः, चन्द्रस्य,  
कराणां, मयूखानां, निकरवत्, समूहवत्, विमला, विशदा दशन-  
दाधितीः, दन्तमयूरवान् । स्फुरन्तीः, गुणानां, विशाकिनयादीनां  
रज्जुनां च । गौरवम्, उत्कर्षम्, भारवत्त्वञ्च । सकलेति—सकलानां,  
सम्पदां, ऐश्वर्याणां, पात्रं, भाजनम्, असि, भवसि, प्रतिपत्तयः,  
ज्ञानानि, विभवानां, सम्पदां, अनुरूपास्तु, शास्त्रस्य एव यथात्वं

धनैरविक्रीतं कचिच्छरीरकमस्ति । भैक्षरक्षिताः सन्ति प्राणाः ।  
दुर्गृहीतानि कतिचिद्विद्यन्ते विद्याक्षराणि । भगवच्छिवभट्टारक-  
पादसेवया समुपाजिता कियत्पि संनिहिता पुण्यकणिका ।  
स्वीक्रियतां यदत्रोपयोगार्हम् । प्रतनुगुणप्राद्याणि कुसुमानीव  
हि भवन्ति सतां मनांसि । अपि च । विद्वत्संमताः श्रूयमाणा  
अपि साधवः शब्दा इव सुधारेऽपि हि मनसि यशांसि कुर्वन्ति ।  
विवरं विशतः कुतूहलस्य फेनधवलैः स्रोतोभिरिवापह्रियमाणो  
गुणगणैर्गानीतोऽस्मि कल्याणिना' इति ।

राजा तु तं प्रत्यवादीत् — 'भगवन्, अनुरक्तं प्वपि शरीरा-  
दिषु साधूनां स्वामिन एव प्रणयिनः । गुणमहर्शनादुपाजितमेव

मर्धनम्पूर्णाः । स्वापतेयेषु, धनेषु, अदत्तदृष्टिरस्मि । सकलेति —  
सकलाः, समप्राः, दोषकलापाः, दोषनिवहाः, एव, अन्तलाः, अप्रयः,  
इन्धनानि, काष्ठानि, तैः, शरीरकं, तुच्छदेहं कचिन्, अविक्रितम्,  
विक्रितं नास्ति । भैक्षेति-भिक्षयालव्यम्, भैक्षं तेन रक्षिताः, पालिताः ।  
दुर्गृहीतानि, दुःखेनगृहीतानि । भगवदिति — भगवतः शिवभट्टारकस्य,  
शिवस्वामिनः, पादसेवया, चरणशुश्रूषया पुण्य कणिका, पुण्यविन्दुः  
प्रतन्विति — प्रतनुता, स्वल्पेन, गुणैः, उपकारादिना तन्तुना च  
प्राद्याणि, गृहीतुं शक्यानि । विद्वदिति विद्वद्भिः, सम्मताः, अभि-  
मताः, स्वीकृताश्च साधवः, सन्ताः, विशुद्धाश्च, शब्दा इव यशांसि  
कुर्वन्ति ( प्रतिपत्ति विस्तारयन्तीत्यर्थः ) विवरं गहरम् । विशतः,  
गच्छतः । फेनधवलैः फेनवत् श्वेतैः स्रोतोभिरिव प्रवाहैरिव, अपह्रियमाणः  
आकृष्यमाणः । कल्याणिना, कल्याणभाजनेन, (भवता इति शेषः) ।

अनुरक्तंषु, अनुरागभाजनेषु, स्वामिनः, प्रभवः, प्रणयिनः, प्रणयन्तः  
उपाजितम्, एकत्रीकृतम्, अपरिमितम्, प्रमाणादहितम्, कुशलज्ञानम्,



चापरिमितं कुशलजातम् । अनेनैवागमनेन स्पृहणीयं पदमारो-  
पितोऽस्मि गुरुणा ।' इति विविधाभिश्च कथाभिश्चिरं स्थित्वा  
गृहमगात् ।

अन्यस्मिन्दिवसे भैरवाचार्योऽपि राजानं द्रष्टुं ययौ । तस्मै  
च राजा सान्तःपुरं सपरिजनं सकोपमात्मानं निवेदितवान् ।  
स च विहस्योवाच—‘तात, क्व विभवः, क्व च वयं वनवर्धिताः ।  
धनोष्मणा म्लायत्यलं लतेव मनस्विता । खद्योतानामिवास्माक-  
मियमपरोपतापिनी राजते तेजस्विता । भवादृशा एव भाजनं  
भूतेः, इति स्थित्वा च कंचित्कालं जगाम ।

परिव्राट् तेनैव क्रमेण पञ्च पञ्च राजतानि पुण्डरीकाण्युपा-  
यनीचकार । एकदा तु श्वेतकर्पटावृतं किमप्यादाय प्राविशत् ।  
उपविश्य च पूर्ववत्स्थित्वा मुहूर्तमब्रवीत्—‘महाभाग ! भवन्तमाह  
भगवान्यथास्मच्छिष्यः पातालस्यामिनामा ब्राह्मणः । तेन ब्रह्म-  
राक्षसहस्तादपहृतो सहासिरदृहासनामा । सोऽयं भवद्भजयोभ्यो

मंगलसमूहः, स्पृहणीयम्, अभिलषणीयम्, पदं, स्थानं, सान्तःपुरं,  
स्त्रीजनानावासनं सहितं, सपरिजनं, परिवारसहितम्, सकोपम्, सधन-  
भण्डारम्, निवेदितवान्, समर्पयामास । विभवः, धनानि । वनवर्धिताः,  
वने, अरण्ये, वर्धिताः, वृद्धिगताः, धनोष्मणा, द्रव्यदर्पणा, म्लायति,  
म्लानिं प्राप्नोति, अलमत्यर्थम्, मनस्विता, प्रशस्तमनस्कृता । खद्यो-  
तानामिव, कीटमणिविशेषाणामिव, ( जुगलं ) अपरोपतापिनी, न  
धरान् उपनामयतीति तथोक्ता । भूतेः, सम्पदः । परिव्राट्, भिक्षुः ।  
उपायनीचकार, उपहारीकृतवान् । श्वेतकर्पटावृत्तम्, धवलकसनाच्छा-  
दितम् । अपहृतेति—अपहृता, दूरीकृता, महाऽसि, खड्गः, ( तलवार )  
येन सः अदृहासनामा । अपहृतम्, दूरीकृतम्, कर्पटच्छादनं, वस्त्राव-

गृह्यताम्' इत्यभिधायापहतकर्पटावच्छादनात्परिवारादाचकर्ष-  
शरद्गगनमिव पिण्डतां नीतम्, कालिन्दीप्रवाहमिव स्तम्भित-  
जलम्, नन्दकजिगीषया कृष्णकोपितं कालियमिव कृपाणतां  
गतम्, लोकविनाशाय प्रकाशितधारासारम्, प्रलयकालमेघ-  
खण्डमिव नभस्तलात्पतितम्, दृश्यमानविकटदन्तमण्डलं हासमिव  
हिंसायाः, हविबाहुदण्डमिव कृतदृढमुष्टिग्रहम्, सकलभुवनजी-  
वितापहरण क्षमेण कालकृटेनेव निर्मितम्, कृतान्तकोपानलत-  
प्तेनेवायसा घटितम्, अतिनीक्षणतया पवनस्पर्शनापि रूपेव

रणां येन, तथोक्तात्, शरद्गगनमिव, शरत्कालिकाकाशमिव, पिण्डतां  
नीतम्, घनत्वं प्रापितम् । कालिन्दीप्रवाहमिव, यमुनाश्रोतमिव,  
स्तम्भितजलम्, स्थिरीकृतनायम् । नन्दकेति—नन्दकस्य, विष्णोः,  
खड्गस्य, जिगीषया, जेतुमिच्छया, कृष्णकोपितम्, कृष्णान कोपितम्  
(दमनादिनिभावः) कालीयम्, नदाख्यं यमुनावामिनं, नागविशेषम् ।  
लोकविनाशनाय, जगन्नाशाय, प्रकाशितः, प्रकटितः, धारासारः, धारा-  
सम्पातः, धारायां, निशिनाप्रस्य, सारः, तत्त्वं यस्य तथोक्तश्च प्रलय-  
कालमेघखण्डमिव, लयकालिकजलदांशमिव । दृश्यमानेति—दृश्य-  
मानानि, विकटानि, करालानि, दन्तमण्डलानि, दशनराज्यः, यस्मिन्,  
तथा भूतम् । हिंसाया हासमिव । कृतेति कृतः, रचितः दृढः,  
कठिनः, मुष्टिग्रहः, मुष्टिवन्धः, यस्मिन्, तम् ( पक्षे ) कृतः, दृढं यथा  
तथा पुष्टेः मुष्टिकनामासुरस्य ग्रहः ग्रहणं येन तथा भूतम् । कृता-  
न्तेति—कृतान्तस्य, यमस्य कोपानलः, क्रोधाग्निः, तेन तप्तं गलितं  
तेन, अयसालोहेन । अतिनिक्षणतया, अतिनिशितत्वेन, तैक्षण्यं च  
तनुत्वाज्जायते तनु, अन्योऽन्यसङ्घर्षेण कणति इति दृढ्यं, रूपेव,  
कोपेनेव, कणान्तं, रणान्तम् । मणीति—मणिसमकुट्टिमेषु, मणिमय-

कणन्तम्, मणिसभाकुट्टिमपतत्प्रतिबिम्बच्छब्दानात्मानमपि द्वि-  
धेव पाटयन्तम्, अग्निशिरश्लेदलम्नैः कचैरिव किरणैः करालित-  
धारम्, मुमुर्मुहुस्तडिदुन्मेषतरलैः प्रभाच्चकच्छुरितैर्जगितातपम्,  
खण्डशश्छिन्दन्तमिव दिवसम्, कटानमिव कालरात्रेः, कर्णोत्प-  
लमिव कालस्य, ओंकारमिव क्रौर्यस्य, अलंकारमहंकारस्य,  
कुलमित्रं कोपस्य, देहदर्पस्य, सुसहायं साहसस्य, अपत्यं मृत्योः,  
आगमनमार्गं लक्ष्म्याः, निर्गमनमार्गं कान्तैः, कृपाणम् ।

अवनिपतिस्तु तं गृह्णात्वा करेणायुधप्रार्थ्या प्रतिमानिभेना-  
लिङ्गमिव मुचिरं ददर्श । संदिदेश च—'वक्तव्यो भगवान्पण्ड-  
व्यग्रहणावज्ञादुविदग्धमपि हि मे मनो युष्मद्विषये न शक्नोति

नभातलेषु, पतन्, यन् प्रतिबिम्बम्, तस्य ब्रह्म, छलं तेन । पाटयन्तं,  
खण्डयन्तम्, ( अनेतैरेष्य दिनि भावाः ) अग्निः अग्निः, शत्रूणां,  
शिरोभिः, तेषां श्लेधेन, लम्नाः तैः, कचैरिव, केशैरिव कृष्णावर्णस्य  
तस्य किरणैः, मयूरैः, करालितधारं, करालिताः, व्याघ्राः धाराः,  
यस्य तथोक्तम् । तडिदिति—तडिनां, विद्युतां, उत्तमपाः, विक्रामाः  
तद्वन् तरलानि, चंचलानि तैः, प्रभाच्चक्राणाम्, किरणमण्डलानाम्,  
क्षुरितैः, स्वचित्तैः, जर्जरितः, खण्डखण्डीकृतः, आतपः, सूर्यकान्तिः,  
येन तथोक्तम्, छिन्दन्तमिव, पाटयन्तमिव । ओंकारं, प्रणावं, कार्यस्य,  
निष्ठुरतायाः, कुलमित्रम्, कुलेन, वंशपरम्परया, मित्रम्, मुहृदम् ।  
मृत्योः, अपत्यम्, सन्तानम्, लक्ष्म्याः, सम्बद्धः, राजशोभायाः वा  
आगमनमार्गम्, कृपाणम्, अस्मि ।

आयुधप्रार्थ्या, आयुधे, अस्त्रे, या प्रीतिः प्रेमनया प्रतिमानिभेन  
प्रतिबिम्बछलेन (स्वस्म्येति शेषः) मुचिरं, बहुकालम् ।

संदिदेश, वाचिकं, कथयामास । परेति—परेषां, शत्रूणां,

‘वचनव्यतिक्रमव्यभिचारमाचरितुम्’ इति । परिवाट् तु गृहीते तस्मिन्परितुष्टः ‘स्वस्ति भवते । साधयामः’ इत्युक्त्वा निर्यासीत् । नृपश्च प्रकृत्या वीर्यसानुसारी तेन कृपाणेनामन्यत कर्तलवर्तिनीं मेदिनीम् ।

अथ ब्रजसु दिवसेष्वेकदा भैरवाचार्यो राजानमुपह्वरे सोपग्रहमवादीत् ‘तात, स्वार्थालम्बाः परोपकारदत्ताश्च प्रकृतयो भवन्ति भव्यानाम् । भवादृशां चार्थिदर्शनं महोत्सवः प्रणयन-माराधनमर्थग्रहणमुपकारः । भूमिरसि सर्वलामनोरथानाम् । येनाभिधीयसे । श्रूयताम् । भगवतो महाकालहृदयनाम्नो महा-मन्त्रस्य कृष्णस्त्रगम्बरानुलेपनाकलेन कल्पकथितेन महाश्म-

द्रव्याणि तेषां ग्रहणं वा अग्रजः, पुत्राः नया दुर्विषयम्, दुर्विनीतम् । वचनेति — वचनस्य, व्याज्ञावाक्यस्य, व्यतिक्रमः, उद्ध्वानभिव, व्यभिचारः, दोषः, तम्, परितुष्टः, प्रसन्नः, साधयामः, गच्छामः, निर्यासीत्, ययौ, प्रकृत्या, स्वभावेन, वीर्यस्य, अनुसारी, प्रेमी, कर्तलवर्तिनीं, वशीभूतां, मेदिनीम्, पृथ्वीम् ।

उपह्वरे, रहसि (रहोऽन्तिकमुपह्वरे “इत्यमरः) सोपग्रहम्, साम्यर्थ-नम् । स्वार्थालम्बाः, स्वकार्यपरङ्मुखाः, परोपकारदत्ताः, अन्यस्य कार्यकरणे चतुराः, भव्यानां, सज्जनानां प्रकृतयः, स्वभावाः, भवन्ति । अर्थिदर्शनम्, भिक्षुकदर्शनम्, महोत्सवः, आनन्दजननम्, प्रयाचनं, याज्ञा आराधनं, पूजनम् । सर्वेति — सर्वेषां, समप्राणां लोकानां मनोरथाः, मनोवृत्तिवृत्तिः, तेषां, भूमिः, पात्रमणि । महाकालेति — महाकालस्य, हरस्य, हृदयं, हृदयनिहितं, वस्तिवति, महाकालहृदयं तन्नाम यस्य तथाकस्य । कृष्णेति — कृष्णानि, कृष्णवर्णानि, मृजः, मालयानि, अम्बराणि, वज्राणि, अनुलेपाः, विनेपनद्रव्याणि यस्मिन्

शाने जपकोट्या कृतपूर्वसेवोऽस्मि । तस्य वेतालसाधनावसाना  
सिद्धिः । असहायैश्च सा दुरवापा । त्वं चालमस्मै कर्मणे ।  
त्वयि च गृहीतभरे भविष्यन्त्यपरे सहायास्त्रयः । एकः स एवा-  
स्माकं टोटिभनामा बालमित्रं मस्करी यो भवन्तमुपतिष्ठते ।  
द्वितीयः स पातालस्वामी । अपरो मच्छ्रेष्ठ्य एव कर्णतालनामा  
द्राविडः । यदि साधु मन्यसे ततो नीयतामयं दिङ्नागहस्त-  
दीर्घो गृहीताट्टहासो निशामेकामेकदिङ्मुखार्गलता बाहुः ।  
इति कृतवचसि च तस्मिन्नन्धकारं प्रविष्ट इव दृष्टप्रकाशः प्राप्तोप-  
कारावकाशः प्रमुदितेनान्तरात्मना नरेन्द्रः समभाषत—‘भगवन्,  
परमनुगृहीतोऽस्म्यनेन शिष्यजनसामान्येन निदेशेन कृतपरि-  
ग्रहमिवात्मानमवैमि’ इति । ननन्द च तेन नरेन्द्रव्याहृतं

नथा भूतेन, आकल्पेन, परिच्छेदेन (वशेनेत्यर्थः) (आकल्पवेशो नैपथ्यं,  
इत्यमरः) कल्पकथितेन, कल्पः, शास्त्रम्, तत्कथितेन । कृतेति —  
कृतपूर्वं सेवायेन तथा भूतः । वेतालेति —वेतालस्य, शिवानुचरस्य-  
साधनं, वशीकरणम्, अवसानं, अन्नं यस्याः, तथा विद्या सिद्धिः ।  
असहायैः, सहायशून्यैः, दुरापा, दुर्लभा । गृहीतभरे, भारं गृह्णाति  
सति । बालमित्रं, शैशवमुदन्, मस्करी, परित्राट् । द्राविडः, विड-  
देशीयः । दिङ्नागेति—दिङ्नागः, ऐरावतः, तद्वन् दीर्घः, आयतः ।  
पेकेति—एका दिक्, तस्याः, मुखस्य, अर्गलतां, अवरोधकदण्ड-  
ताम् । दृष्टेति—दृष्टः, अवलोकितः, दीपस्य, प्रकाशः, आलोकः,  
येन सः । प्राप्तेति—प्राप्तः, लब्धः, उपकाराय, अवकाशः, समयः,  
येन सः । मुदितेन, प्रसन्नेन, अन्तरात्मना, मनसा । शिष्येति—शिष्य-  
जनाः, विद्यार्थिसङ्घाः तैः सह सामान्यं, समानस्य भावं सामान्यं  
तुल्यम् । निदेशेन आज्ञया । कृतेति—कृतः, परिग्रहः प्रहणम् यस्य

भैरवाचार्यः । चकार च संकेतम् — ‘अस्यामेवागामिन्यामसित-  
पक्षचतुर्दशाक्षपायामिन्यां वेलायाममुष्मिन्महाश्मशानसमी-  
पभाजि शून्यायतने शस्त्रद्विर्तायेनायुष्मता द्रष्टव्या वयम्’ इति ।

अथातिक्रान्तेष्वहःसु प्राप्तायां च तस्यामेव कृष्णचतुर्दश्यां  
शैवेन विधिना दीक्षितः क्षितिपो नियमवानभूत् । कृताधिवासं  
च संपादितगन्धधूपमाल्यादिपूजं खड्गमट्टहासमकरोत् । ततः  
परिणते दिवसे केनापि कर्मसाधनाय कृतरुधिरबलिविधाना-  
स्थिव लोहितायमानासु दिक्षु, रुधिरबलिलम्पटासु च वेताल-  
जिह्वास्थिव लम्बमानासु च रविदीधितिषु, नरेन्द्रानुरागेण गृही-

तथोक्तम् । नरेन्द्रव्याहृतं, राजवचनेन । संकेतं, इङ्गितम् । असितेति -  
असितः, कृष्णः, यः, पक्षः तस्य चतुर्दशी, क्षपायां, रात्रौ, इत्यत्रां,  
पक्षावत्परिमिते, वेलयां, समये, महाश्मशानस्य, समीपं,  
भजतं इति तथोक्तं, ( श्मशाननिकटवर्तिनि-इत्यर्थः ) शून्यायतनं,  
विजयमन्दिरं ।

अतिक्रान्तेषु, अवतीतेषु, अहःसु, दिवसेषु, शैवेन विधिना, शिव-  
पूजनप्रकारेण । दीक्षितः, संयतः, क्षितिपः, राजा, नियमवान्, व्रत-  
निष्ठः, कृतः, अधिवासः, व्रतदिनात् पूर्वदिने गन्धादिना संस्कारः,  
यस्य तथोक्तम् । संपादितेति — संपादिता, कारिता गन्धधूपमाल्या-  
दिभिः, पूजा यस्य तथोक्तम् । परिणते अवसानं गतं, दिवसे, दिने ।  
कृतेति — कृतम्, अनुष्ठितम्, रुधिरं, रक्तेन, बलिविधानं, पूजा-  
प्रकारः, यासां तथोक्तासु, लोहितायमानासु, सन्ध्यारागरञ्जितासु,  
रुधिरबलिषु, रक्तोपहारेषु, लम्पटाः, लुब्धाः, तासु वेतालजिह्वासु इव  
भूतरसनासु इव, रविदीधितिषु, सूर्यकिरणेषु, नरेन्द्रानुरागेण, राजानु-  
रक्त्या । गृहीतेति — गृहीता, अपरा, पश्चिमा दिक्, येन तथोक्तं,

नापरांदांश्च स्वयामेव दिक्पालतां चिकीर्षांते सावेतांश्च, यातुधा-  
नीष्विव वर्धमानासु तरुच्छायासु, पातालवासिषु विप्राय  
दानवेष्विवोत्तिष्ठत्सु तमोमण्डलेषु, नभसि पुञ्जीभवति, रौद्रं कर्म  
दिदृक्षमाणे इव नक्षत्रगणे, विगाढायां शर्वर्याम्, सुप्तजननिः-  
शब्दे स्तिमिते निशीथे, राजा सान्तःपुरं परिजनं वञ्चयित्वा  
वामकरस्फुरत्समृद्धक्षिणकरेणोत्त्रातं खङ्गमादृहासमादाय विस-  
र्पता च खङ्गप्रभापटलेन नीलांशुकपटेनेव दर्शनभयादवगुण्ठित-  
निखिलगात्रयष्टिरनादिष्टयाप्यनुगम्यमानो राजलक्ष्म्याः पृष्ठतः

सवितरि, सूर्ये, यातुधानीषु, निशाचरीषु इव ( राक्षसः कौपणं क्रव्यान्  
यातुधानः, पुण्यजनः "इत्यमरः ) वर्धमानासु, वृद्धिं गच्छन्तीषु ।  
पातालतलवासिषु, रसानलाम्ब्यन्तरस्थितेषु, विप्राय, कार्यव्याधानाय,  
तमोमण्डलेषु, अन्यकारसमूहेषु । नभसि, आकाशे, पुञ्जीभवति,  
एकत्रीभवति, रौद्रं, दाहणं, दिदृक्षमाणो इव, द्रुपदुमिच्छन्नीव । विगा-  
ढायां, घनीभूतायां, शर्वर्यां, रजःश्याम । सुप्तेति सुप्ताः, निद्रिताः,  
जनाः, यस्मिन् तथोक्तः । अतएव निःशब्दः तस्मिन् स्तिमिते, निशीथे,  
अर्द्धरात्रौ ( अर्द्धरात्रनिशीथौद्रौ इत्यमरः ) वामेति - वामे, मध्ये  
करे हस्ते स्फुरन्, दीप्यमानः, त्मरुः, खङ्गमुष्टिः, यस्य तथा भूतः ।  
उत्त्रातम्, निष्कापितम् । विसर्पता, प्रसरता, खङ्गप्रभापटलेन, असि-  
कान्तिसमूहेन, नीलांशुकपटेन इव, नीलांशुकं, नीलवस्त्रं, एव, पटः,  
तिरस्करीणी, तेन इव । अवगुण्ठितेति अवगुण्ठिता, आच्छादिता,  
निखिला, सकला, गात्रयष्टिः, शरीरं, येन यस्य वा तथा भूतः ।  
अनादिष्टयाऽपि, अनुकयाऽपि । राजलक्ष्म्या, राजश्रिया, अनुगम्य-  
मानः, अनुश्रियभागाः, ( सूचितः-लक्ष्मीलाभः ) परिमलेति — परि-  
मलेन, सुगन्धिना, लघ्नानां, सक्तानां, मधुकराणां, द्विरङ्गानां, वेणिः,

परिमललग्नमधुकरवेणिव्याजेन केशेष्विव कर्मसिद्धिमाकर्षन्ने-  
काकी नगरान्निरगात् । अगाच्च तमुद्देशम् ।

अथ प्रत्युज्जमुस्ते त्रयोऽपि द्रौणिकपकृतवर्माण इव सौप्तिके  
संनद्धाः स्नाताः अग्निरागो गृहीतविकटवेशाः, कुसुमशेखर-  
संचारिभिः क्रियमागमन्त्रशिखाबन्धा इव गुञ्जहिः पट्चरणै-  
रुष्णीपपट्टकान्नललाटमध्यघटितविकटस्वस्तिकाग्रन्थान्महामुद्रा-  
बन्धानिव धारयन्त मूर्धभिः, एकश्रवणविवरविततविमल-  
दन्तपत्रप्रभालेपयवलितकपोलैर्मुग्धैर्गापिवन्त इव निशा-

गजि, तस्याः, सेव वा व्याजः, ब्रह्मं, तेन । कर्मसिद्धिः, कार्यसिद्धिः ।  
एकाकी, अमदायः । देशं, स्थातं । अयेति - प्रत्युज्जमुः, गतवन्तः,  
त्रयः ( टिटिभकर्णतालपालालम्बाभितः ) द्रौणीति द्रौणिः, अश्व-  
त्थामा, कृपाः, कृपाचार्यः, कृतवर्मा, यादवः, ते इव । सौप्तिकेति—  
मुपनेपुभवं, सौप्तिकं तस्मिन्, ( महाभरतीयसौप्तिकं पर्वणि भद्रोरो  
दुर्योधने समरपतिते अश्वत्थामाद्यम्बराः, प्रभोः प्रीत्यै योधिष्टिरंशि-  
विरे धृष्टकुम्भाधिष्ठिते मुपनेपु सर्वेषु अवशिष्टेषु सैनिकेषु कथमपि प्रवि-  
श्यहताः सर्वसैनिकाः, ) संनद्धाः, सज्जाः, स्नाताः, कृतस्नानाः,  
अग्निरागः, मालाधारिणः । कुसुमेति—कुसुमशेखरेषु, शिरोभूषण-  
भूतपुष्पमालासु, सञ्चरन्तीनि तैः । पट्चरणैः, भ्रमरैः, क्रियमाणाः,  
मन्त्रेण शिखाबन्धाः, चूडाः, येषां ते इव । उष्णीपेति—उष्णीपपट्ट-  
कान्, शीर्षावरणकर्पटान् । ललाटस्य, मस्तकस्य, मध्ये घटितः,  
रचितः, विकटः, दृढः, स्वस्तिकाग्रन्थिः, बन्धविशेषः, येषु तान् ।  
महामुद्राबन्धानिव, महान्तः, मुद्राबन्धाः, वीराचारानुष्ठेयबन्धानाः,  
ज्ञान इव । मूर्धभिः, शिरोभिः । एकेति—एकस्मिन्, श्रवणविवरे,  
श्रोत्ररन्ध्रे, वितता, विस्तृता, विमलस्य, स्वच्छस्य, दन्तपत्रस्य, गज-



चरापचयचिकीर्षया शार्चरमन्धकारम्, इतरकर्णावल-  
म्बिनां रत्नकुण्डलानामच्छाच्छ्रया रुचा गोरोचनयेवमन्त्रपरि-  
जप्तया समालब्धाः, स्वप्रतिबिम्बगर्भान्कर्मसिद्धये दत्तपुरुषोप-  
हारानिवोल्लासयन्तो निशितानिस्त्रिशान्, निशित निस्त्रिशंशुसं-  
तानसीमन्तिततिमिरामात्मीयदिग्भागसंरक्षणाय त्रिधेव त्रि-  
यामां पाटयन्तः, सार्धचन्द्रैः कलधौतबुद्बुदावलितरलतारागणै-

दन्तनिर्मितपत्राकारम्य, ( कर्णभूषणम्य ) या प्रभा, कान्तिः, तस्याः,  
लेपः, लेपनं, तैः, यद्वा, सा एव लेपः, लेपतसुधा, ताभिः, धवलिताः,  
शुभ्रीकृताः, कपोलाः, गण्डदेशाः, येषां तैः, आपिबन्त इव, पानंकृत-  
वन्त इव । निशाचरेति— निशाचराणां, पिशाचानां, अपचयचिकीर्षा,  
अपकारेच्छा, तथा । शार्चरं, शर्वरी, रात्रिः, तत्र भवः शार्चरः तम्,  
निशाचराः, निशासु, अन्धकारे एव प्रभवन्ति, ( नर्गतेतमसि तेषां  
प्रभावाभावेन तदपकारस्य सौकर्यादित्यर्थः ) इतरकर्णावलम्बिनां,  
अपरकर्णालम्बमानानां, अच्छाच्छ्रया, अतिनिर्मलया, रुचा, प्रभया,  
गोरोचनयेव, गोरोचना, मांगलिकद्रव्यम्, तथा ( पीतप्रभयेति यावत् )  
मन्त्रपरिजप्तया, मन्त्रेणपरिजप्ता, विशोधिता, तथा । समालब्धाः,  
लिप्ताः । स्वप्रतिबिम्बगर्भान्, स्वस्यप्रतिबिम्बं, छाया, गर्भं, मध्ये  
येषां तान् । दत्तेति—दत्तः, अनुष्ठितः, पुरुषोपहारः, नरबलिः, येभ्यः,  
तानिव । उल्लासयन्तः, सञ्चालयन्तः, निशितान्, तीक्ष्णान्, निस्त्रि-  
शान्, खड्गान् । निशितेति—निशितनिस्त्रिशानां, शोणितखड्गा-  
नाम्, अंशुसन्तानैः, प्रभापटलैः, सीमन्तितानि, विभक्तानि, तिमि-  
राणि, अन्धकाराणि, यस्याः, ताम् । आत्मीयेति—आत्मीयः,  
स्वीयः, दिशांभागः, ( रक्षणीयादिगितिभावः ) तस्य संरक्षणां, तस्मै ।  
त्रियामां, रात्रि, पाटयन्तः, खण्डयन्तः । सार्धचन्द्रैः, अर्धचन्द्रालंकृतैः,

\* निशाया इव परुषाभिधारा निकृत्तैः खगडैर्गृहीतैश्चर्मफलकैरका-  
गडशर्वरीमपरां घटयन्तः, काञ्चनशृङ्खलाकलापनियमितनिविड-  
निप्रवाण्यः वद्धासिधेनवः, टांदिभकर्णतालपातालस्वामिनो  
निवेदितवन्तश्चात्मानम् ।

अवनिपतिस्तु—“कोऽत्र क”, इति त्रीनपृच्छत् । आचच-  
क्षिरे च स्वं स्वं नाम त्रयोऽपि ते । तैरेव चानुगम्यमानो जगाम  
तां बलिदीपालोकजर्जरितगुग्गुलुधूपधूमगृह्यमाणदिग्भागनया  
वित्तिप्यमाणरत्नासर्पपार्श्वधात्वाधकारपलायमाननिशामिव समु-

रात्रौ खड्गेषु च अर्धचन्द्रस्य संभाव्यमानत्वादुक्तमेवं, नतु वास्तव-  
त्वेन) कृष्णचतुर्दशी रात्रौ चन्द्रः सम्भवतीति । कलधौतेति कलधौतं,  
गोप्यं, तस्य बुद्बुदावलिः, बुद्बुदाः, जलस्फोटाः, तदाकारविन्दवाः,  
तेपामावलिः, संघः, तट्टन् तरलः, तारागणाः, येषु तैः । परुषेति  
परुषाभिः, निशिताभिः, अमिधाराभिः, निकृत्ताः, छिन्नाः, तैः । चर्म-  
फलकैः ( ढाल ) अकाण्डशर्वरी, अकालरजनी, अपरां, द्वितीयां,  
घटयन्तः, जनयन्तः । काञ्चनेति काञ्चनशृङ्खलाकलापेन, स्वर्गा-  
मेखलाहारैणां, नियमितं निवद्धं, निविडं, घनं, निप्रवाणि, नवंस्त्रं,  
यैः, ते (अनाहतं निप्रवाणि तन्त्रकं च नवास्त्रं “इत्यमरः”) वद्धेति  
वद्धाः, गृहीताः, असिधेनवः, छुरिकाः, यैः, तथा भूताः । निवेदितवन्तः,  
( भैरवाचार्याद्वया भवन्तंप्रतीक्षासः—इति उचुः ) बलिदीपेति बलि-  
दीपस्य, पूजाप्रदीपस्य, आलोकितं, प्रभया, जज्जरेतानां, नष्टप्रायाणां,  
(सन्दर्भभागामित्यर्थः) गुग्गुलुधूपानां, ( गुग्गुलुधूपदानार्थरक्षिताना-  
मित्यर्थः ) धूमैः, गृह्यमाणाः, ज्ञायमानाः, दिग्भागा यस्याः, तथा ।  
वित्तिप्यमाणेति—वित्तिप्यमाणैः, प्रसार्यमाणैः, ( विव्रदूरीकरणाय-  
त्यर्थः ) रत्नासर्पैः, रत्नार्थं, विघ्नेभ्यः, पूजायानुष्ठानरक्षणार्थं, सर्पपाः

पकल्पितसर्वोपकरणां निःशब्दां च गम्भाणां च भीषणां च साधनभूमिम् ।

तस्यां च कुमुदधूलिधवलं भस्मना लिखितस्य महतो मण्डलस्य मध्ये स्थितं दीप्ततरतेजःप्रसरम्, पृथुपरिवेशपरिक्षिप्तमिव शरत्सवितारम् मथ्यमानक्षीरोदावर्तमध्यवर्तिनमिव मन्दरम्, रक्तचन्दनानुलेपिनो रक्तस्त्रगम्बराभरणस्योत्तानशयस्य शवस्यो-  
रस्युपविश्यजातजातवेदसि मुखकुहरे प्रारब्धाग्निकार्यम्, कृष्णो-

गौरमिद्वार्थाः । ( मन्त्रपूता इति यावत् ) तैः, अर्द्धदग्धं, अन्धकारं, यस्या तथोक्ता, अतएव पलायमाना निशा यस्याः यस्यां वा तथा भूताम् । समुपकल्पितेति समुपकल्पितानि, आयोजितानि, सर्वाणि, उपकरणानि, साधनद्रव्याणि यस्यां नाम् । साधनभूमिः, मन्त्रसाधनस्थानम् । तस्याञ्च इत्यतः “भैरवाचार्यमपश्यत् इत्यनेनान्वयः । कुमुदेति—कुमुदानां, श्वेतोपलानां, धूलिः, परागाः, तद्वन्धवलः तेन । लिखितस्य, रचितस्य, मण्डलस्य, मण्डलाकारं गद्यायाः । दीप्तेति—दीप्तरः, दीप्यमानः, तेजसां प्रसरः, विस्तारः, यस्य तादृशम् । पृथिविति—पृथुता, विशालेन, परिवेशेन, परिधिना, ( मण्डलविशेषेणेतिभावः ) परिक्षिप्तः, वेष्टितः, तं, शरत्सवितारं, मृगं इव (स्थितमितिशेषः) मथ्यमानेति—मथ्यमानस्य, विलोड्यमानस्य, क्षीरोदस्य, क्षीरसागरस्य, आवर्ते, जलध्रमे, वर्तते इति तादृशं, मंदरं, मंदराचलम् । रक्तेति—रक्तचन्दनं एव अनुलेपः, लेपनं, तस्य । रक्तं, रक्तवर्णं, स्वर्गवरं, माल्यवसनम्, आभरणां, यस्य, तथोक्तस्य । उत्तानशयस्य, उत्तानशायिनः, ( ऊर्द्धमुखशयनशीलस्येत्यर्थः ) शवस्य, मृतशरीरस्य । जातेति—जातः, प्रादुर्भूतः, ( मन्त्रवर्तनेत्यर्थः ) जात-  
वेदाः, अग्निः, यस्मान् तथोक्ते । मुखकुहरे, वदनगह्वरे । प्रारब्धेति—

ष्णापम्, कृष्णाङ्गरागम्, कृष्णप्रतिसरम्, कृष्णवाससम्,  
कृष्णतिलाहुतिनिभेन विद्याधरत्वतृष्णया मानुपनिर्माणकारण  
कालुष्यपरमाशुनिव क्षयमुपनयन्तम्, आहुतिदानपर्यस्ताभिः,  
प्रेतमुखस्पर्शदूषितम्, प्रक्षालयन्तमिवाशुशुक्लणि करनखदीधि-  
तिभिः, धूमालोहितेन चक्षुषा क्षतजाहुतिमिव हुतभुजि पात-  
यन्तम्, ईषद्विवृताधरपुटप्रकटितसितदशनशिखरेण दृश्यमान-

प्रारब्धं, अग्निकार्यं, होमः, येन, तथा भूतं । कृष्णेति कृष्णां, कृष्णा-  
वर्णा, उष्णीषं, शिरावेष्टनवसनं यस्य, नथाक्तम् । कृष्णाङ्गरां, कृष्णा-  
वर्गाविलेपनम् । कृष्णप्रतिसरं, कृष्णावर्गाहस्तमृत्रम्, कृष्णावाससं,  
कृष्णावसनपरिधायिनम् । कृष्णेति कृष्णतिलानां, आहुतिनिभेन,  
आहुतिच्छलेन, विद्याधरत्वतृष्णया, स्पृहया, (आत्मनोविद्याधरत्वला-  
भेच्छयेतिभावः) मानुपेति मानुषस्य, निर्माणां, मृज्जनं, तस्य  
कारणानि, उपादानसामग्र्यः, कालुष्यपरमाणावः, मालिन्यपरमाणावः,  
तानिच, ( तिलानांकृष्णात्वात् परमाणुनामपिकालुष्योत्प्रेक्षा ) क्षयं,  
नाशं, उपनयन्तं, प्रापयन्तम् । आहुतीति—आहुतिदाने, हवनीय-  
द्रव्यनिक्षेपसमये, पर्यस्ताः, पतिताः, नाभिः, करनखदीधितिभिः, हस्त-  
नखकिरणैः । प्रेतेति प्रेतस्य, मृतस्य, मुखस्पर्शेन, इषितं, अपवि-  
त्रितं, आशुशुक्लणिम्, अग्निम् ( अग्निर्वैश्वानरोवह्निः, शिखावानाशु-  
शुक्लणिः, इत्यमरः ) प्रक्षालयन्तं, शोधयन्तं इव । धूमेति—धूमेन,  
आलोहितं, रक्तं, तेन, चक्षुषा, नेत्रेण, हुतभुजि, अग्नौ, क्षतजाहुतिं, रक्ताहुतिं,  
इव, पातयन्तं, क्षिपन्तम् । ईषदिति—ईषद्विवृतेन, जपानुरोधादल्पव्यात्तनं,  
अधरपुटेन, प्रकटितानि, प्रकाशितानि, सितानां, शुभ्राणां, दशनानां,  
दन्तानां, शिखराणि, अग्राणि, यस्य तथा भूतेन । दृश्यमानेति—  
मूर्ता, मूर्तिमती, मन्त्राणां, प्रणावादीनां, अक्षरपंक्तिः, वर्णावलिः,

मूर्तमन्त्राक्षरपङ्क्तिनेव मुखेन किमपि जपन्तम्, होमश्रमस्वेद-  
सलिलप्रतिविम्बताभिगसन्नदीपिकाभिर्दहन्तमिव सिद्धये सर्वा-  
वयवान्, अंसावलम्बिना बहुगुणेन विद्याधरराज्येनेव ब्रह्मसूत्रेण  
परिगृहीतं महाभैरवं भैरवाचार्यमपश्यत् । उपसृत्य चाकरोन्नम-  
स्कारम् । अभिनन्दितश्च तेन स्वव्यापारमन्वतिष्ठत् ।

अत्रान्तरे पातालस्वामी शातक्रतवीमाशामङ्गाचकार । कर्ण-  
तालः कौवेरीम् । परित्राट् प्राचेतसीम् । राजा तु त्रैशङ्कवेन  
ज्योतिषाङ्कितां ककुभमलंकृतवान् ।

एवं चावस्थितेषु प्रतिदिशं दिक्पालेषु दिक्पालभुजपञ्चप्रविष्टे  
विस्त्रब्धं कर्म साधयति भैरवं भैरवाचार्येऽतिचिरं कृतकोलाहलेषु

यत्र तथोक्तेन । होमेति—होमेन, याः श्रमः, श्रान्तिः, तेन, स्वेदमलि-  
तानि, घर्षोदकानि, तेषु प्रतिविम्बिताः, प्रतिफलिताः, ताभिः, आमन्न-  
दीपिकाभिः, पार्श्वप्रदीपैः, सिद्धये, विद्याधरत्वलाभाय, अंसावलम्बिना,  
स्कन्धलम्बिना, बहुगुणेन, बहुतन्तुना, उत्कर्षानिशयेन च । विद्याधर-  
राज्येन, इव, ब्रह्मसूत्रेण, यज्ञोपवीतेन । अभिनन्दितः, अनुमनः ।  
स्वव्यापारं, ( भैरवाचार्योक्तमिनियावत् ) अन्वतिष्ठत्, अन्वपालयत् ।  
शातक्रतवीं, ऐंशीं, ( पूर्व ) आशां, दिशं, अंगीचकार, स्वीचकार ।  
कौवेरीं, उदीचीं, प्राचेतसीं, प्रतीचीं । त्रैशङ्कवेन, त्रिशंकुर्नामराजा,  
तस्य इदं, त्रैशङ्कवं, तेन, ज्योतिषा, तेजसा, अङ्किता, चिह्निता, तां  
( दक्षिणां ) ककुभं, दिशम्, ( पुराणोवाध्याचैषावानीत्रिशंकोः )  
एवमिति—प्रतिदिशं, सर्वां, दिक्षु, दिक्पालेषु, दिशारक्षकेषु,  
( पातालस्वामिप्रभृतिध्वीतिभावः ) । दिक्पालेति—दिक्पालानां ( एषां )  
भुजाः, बाहवः, एव, पञ्चरं, तस्मिन्, प्रविष्टः, तस्मिन्, ( अकुतोभये  
इत्यर्थः ) विस्त्रब्धं, निःशङ्कं, यथा तथा, साधयति, अनुतिष्ठति ।

निष्फलप्रयत्नेषु प्रत्यूहकारिषु शान्तेषु कौणपेषु, गलन्त्यर्धरात्र-  
समये मण्डलस्य नातिदवीयस्युत्तरेणाकस्मात्प्रलयमहावराह-  
दंष्ट्राविवरमिव दर्शयन्ती क्षितिर्दीर्यत । सहस्रैव च तस्माद्विव-  
रादाशाचारगोत्तिप्र इवालानलोहस्तम्भः, महावराहर्षावरस्क-  
न्धर्षाढो नरकासुर इव भुवो गर्भादुद्भूतः, बलिदानव इव भित्तो-  
न्धितः पातालम्, इन्द्रनीलप्रासाद इवोपरि ज्वलितरत्नप्रदीपः,  
स्निग्धनीलघननिविडकुटिलकुन्तलकान्तमौलिरुन्मालन्मालता-

अतिचिरं, समयं, प्रत्यूहकारिषु, विघ्नकारिषु, शान्तेषु, शान्तिगतेषु,  
कौणपेषु, गलन्तेषु, (राक्षसः कौणपः क्रव्यादित्यमरः) गलति, अति-  
क्रानति । मण्डलस्य (प्रागुक्तस्य) नातिदवीयसी, नातिदूरवर्तिनी,  
उत्तरेणा, उत्तरस्यां, दिशि । प्रलयेति—प्रलये, प्रलयसमये, महा-  
वराहः, शुकरावतारः, जलमग्रायाः, पृथिव्याः, उद्धारकः (नारायणाव-  
तार इति यावत्) तस्य दंष्ट्रा, दशनः, तस्याः, विवरं, दर्शयन्ती, प्रकट-  
यन्ती । अदीर्यत, (स्वयमेव हि धामवदितिभावः) विवरात्, रन्ध्रात्,  
पुरुषः, उज्जगाम इत्यनेनान्वयः । आशावरणः, दिग्गजः, (पातालस्थ  
इतिभावः) तेन उत्तिप्र इव, उपरिचिप्र इव, आलानलोहस्तम्भः,  
आलानं, राजवन्धनं, तदर्थं लोहस्तम्भः, कीलः । महावराहेति—  
महावराहस्य इव पीवरं, स्थूलं, स्कन्धपीठं, असपीठं, नरकासुर इव,  
गर्भान्, उदरात्, (अभ्यन्तरादितिभावः) इन्द्रनील प्रासाद इव, मणि  
हर्म्यम् इव । उपरीति—उपरि, ऊर्ध्वभागे, ज्वलितौ, प्रदीप्तौ,  
रत्नप्रदीपौ, मणिमयदीपौ, (नेत्रे इति भावः) यस्य तथा भूतः ।  
स्निग्धेति—स्निग्धैः, चिकणैः, नीलैः, कृष्णवर्णैः, वनैः, अविरलैः,  
निविडैः, संकीर्णैः, कुटिलैः, भङ्गिमद्भिः, कुन्तलैः, केशैः, कान्तैः,  
मनोज्ञैः, मौलिः, किरीटं, यस्य तादृशः । उन्मालदिति—उन्मीलन्ती,

मुण्डमालः, गद्गदतया स्वरस्य स्वभावपाटलतया च चक्षुषः,  
 लीव इव यौवनमदेन वल्गद्वलदामकः करसंपुटसृदितया सृदा  
 दिङ्नागकुम्भाभावंस्कृतौ पुनः पुनः पङ्कयन्सान्द्रचन्दनकर्दमदत्तै  
 रव्यवस्थास्थासकैरतिसितजलधरशकलशारित इव शारदाका-  
 शैकदेशः, केतकीगर्भपत्रपाण्डुरस्य चण्डातकस्योपरि क्षामनरी-  
 कृतकुक्षिः कक्ष्यावन्धं विधाय विलासविक्षिप्तेन धवलव्याया-

स्फुरन्ती. मालतीमुण्डमाला. मालती, पुष्पहारः, यस्य तथाभूतः ।  
 गद्गदतया, अर्द्धस्फुटतया, स्वभावपाटलतया, सञ्जरक्ततया, लीव  
 इव, मत्त इव । वल्गदिति—वल्गात्, चलत्, गले, कण्ठे, दाम-  
 माल्यं, यस्य, तादृशस्य । करेति करयोः, हस्तयोः, सम्पुटेन, योगेन,  
 ( सम्मेलनेनेत्यर्थः ) सृदिता, दलिता, तथा, सृदा, सृत्तिकया ।  
 दिङ्नागेति—दिङ्नागकुम्भभौ, एरावतकुम्भनिभौ, अंस्कृतौ, स्फुट्य-  
 शृङ्गे, पङ्कयन्, कर्दमयन्, ( मलिनयन्निविभावः ) सान्द्रेति—सान्द्रेण,  
 घनेन, चन्दनपङ्केन, ( घृष्टचन्दनेनेत्यर्थः ) दत्तानि रचितानि, नैः,  
 अव्यवस्थास्थाम्भ्यासकैः, अथवाव्यवस्थया इतियावत्, स्थासकाः, चन्द्रका-  
 ( बुद्बुदाकागविन्दवः—इतिभावः ) अथवा, स्थासकैः, चार्चिक्यैः,  
 ( अचातुर्यानुलिप्त चन्दनादिभिरितियावत् ) स्थासकः पुंसि चार्चिक्ये  
 जलादेरपि बुद्बुदे इति मेदिनी । अर्त्तानि—अनिमित्तं, विमलेन,  
 जलधारागां, मेघानां, शकलेन, खण्डेन, शारित इव, चित्रित इव ।  
 शारदा काशैकदेशः, शरत्कालिक गगनैकभागः । केतकीनि—केतक्याः,  
 गर्भपत्रं, अभ्यन्तरच्छदः, तद्वत् पाण्डुरं, श्वेतं, तस्य, चण्डातकस्य,  
 परिधानवस्त्रस्य । क्षामनरीकृतकुक्षिः, अतितरेण लीलाङ्गनां नीतोदरः ।  
 कक्ष्यावन्धं, कटिवन्धं । विलासविक्षिप्तेन, लीलानिविक्षिप्तेन ।  
 धवलैति धवलः, श्वेतः, व्यायामः, ( विशेषेण आयत-

मफालीपटान्तेन धरणितलगतेन धार्यमाण इव पृष्ठतः शेषेण  
स्थिरस्थूलोरुदण्डः, भूमिभङ्गभयेनैव मन्थराणि स्थापयन्पदानि  
निर्भरगर्वगुरु कथमपि शैलमिव गात्रमुद्धहन्दर्पेण मुहुर्मुहुर्गरसि  
द्विगुणिते दोष्णि वामे तिर्यगुत्तिष्ठते च दक्षिणे जङ्घाकाण्डे  
कुण्डलिते चण्डस्फोटनटांकारैः कर्मविघ्ननिर्घातानिव पातयन्ने-  
केन्द्रियविकलमिव जोवलोकं कुर्वन्कुवलयश्यामलः पुरुष उज्ज-  
गाम । जगाद् च विहस्य नरसिहनादनिर्घोषधोरया भारन्या-

इति भावः ) दीर्घावा, फालीपटान्तः, कटिवन्धवस्त्रान्तः, तेन ।  
धरणिनलगतैन, भूतललुण्ठितैन । धार्यमाणाः, गृह्यमाणा इव  
शेषेणा, अनन्त, नागेन ( शेषस्य धारण्यान व्यायनत्वाच्चोत्प्रेक्षितम् )  
स्थिरेति - स्थिरा, दृढा, स्थूला, उरुदण्डौ, यस्य, तादृशः ।  
भूर्माति भूमेः, पृथिव्याः, भङ्गभयेन, नाशभयेन, रग्मानलगमना-  
शङ्कया इति यावत् ) मन्थराणि, मन्दस्वचाग्राणीतिभावः । स्थापयन्,  
अर्पयन् । निर्भरति निर्भरणा, निरतिशयेन, गर्वेणा, अहङ्कारेणा,  
गुरुः, ( भारवदित्यर्थः ) दर्पेणा, अभिमानेन, द्विगुणिते, द्विगवृत्ते, वामे,  
सव्ये, दोष्णि, भुजे । तिर्यक्, वक्रं, यथा, तथा, उत्तिष्ठते, ऊर्ध्वं  
स्थापिते । जङ्घाकाण्डे, जङ्घारूपेस्तम्भे । कुण्डलिते, कुञ्चिते ।  
चण्डेति चण्डम्, उत्कटे यत् । आस्फोटनं, आघातः ( बाह्वोरिति  
भावः ) येन, ये टाङ्काराः, शब्दविशेषाः तैः । कर्मेति - कर्मणि,  
भैरवाचार्यमिद्विकार्यं, विघ्नाय, ( अन्तर्गतार्थमित्यर्थः ) निर्घाताः, वायु-  
जनिताः, शब्दाः, तानिव । एकेन्द्रियविकलमिव, एकेन, इन्द्रियेणा  
( अवर्णनतियावत् ) विकलः, शक्तिहीनः, नमिव, ( वधिमिवेत्यर्थः )  
कुवलयदलश्यामलः, ( नीलपद्म ) तद्वच्छ्यामलः, उज्जगाम, उदतिष्ठत ।  
नरेति - नरसिंहः, नृसिंहावतारः, तस्य नादः, शब्दः, निर्घोषः, हुङ्कारः,



‘भो विद्याधरीश्रद्धाकामुक !, किमयं विद्यावलेपः सहायमदी वा  
यदस्मै जनायाविधाय बलिं बालिश इव सिद्धिमभिलषसि । का  
ते दुर्बुद्धिरियम् । एतावता कालेन ज्ञेयाधिपतिरस्य मन्त्रास्मैव  
लब्धव्यपदेशस्य देशस्य नामतस्ते श्रोत्रोपकण्ठं श्रीकण्ठनामा  
नागोऽहम् । अनिच्छन्ति मयि का शक्तिर्ग्रहणस्यापि गन्तुं  
ममने । भूनाथोऽप्ययमनाथस्तपस्वी यस्त्वादृशैः शैवापसदैरुप-  
करणीक्रियते । सहस्वेदानीं सहामुना दुर्नरेन्द्रेण दुर्नयस्यफलम्  
इत्यभिधाय च निष्ठुरैः प्रकोष्ठप्रहारैर्न्वानपि टोटिभ्रमभूतानभि-  
मुखं प्रधावितान्सशरीरावगणकृपाणानघातयत् ।

तद्वत्, योगः, गम्भीरं तथा, भारत्या, वाचा । ज्ञातः, उवाच ।  
विद्याधरीति- विद्याधर्या, देवक्रियां, श्रद्धया, गगणा, कामुकः,  
इच्छुकः । विद्याऽलेपः, विद्याजनितः, अहङ्कारः, सहायमदः, सहकारि  
सद्भाव जनितौद्धत्यम् । अस्मै ( मह्यमितिभावः ) बलिं पूजाम्, अवि-  
धाय, अदत्त्वा बालिश इव, मूर्ख इव । मन्त्रास्मैव, मदीयेतनास्मैव,  
लब्धव्यपदेशस्य, प्राप्ताभिधानस्य, ( सङ्केतितस्येतियावत् ) अस्य,  
देशस्य, ( श्रीकण्ठग्रन्थस्य ) ज्ञेयाधिपतिः, ज्ञेयस्वामी । श्रोत्रोपकण्ठं,  
श्रोत्रयोः, उपगतः, कण्ठं, उपकण्ठं, ( अवगासमीपमितियावत् )  
श्रीकण्ठनामानागः, एतदेशस्वामी, ( त्वयापनाक्ताऽपि समयेन न  
श्रुतः ? ) ग्रहणस्यापि, ग्रहाः, ख्यादयः, तेषां गणाः, तस्य, ( नको-  
प्यत्र उत्पतितुंशक्तः-इतिभावः ) भूनाथः, भूपतिः, ( अयंपुष्पभूतिः )  
अनाथः, अस्वामिकः, ( भविता ) तपस्वी, वराकः, त्वादृशैः, त्वत्स-  
दृशैः । शैवापसदैः, शैवजीचैः, उपकरणीक्रियते, प्रलोभ्यसहायीक्रियते ।  
दुर्नरेन्द्रेण, कुराज्ञा, दुर्नयस्य, दुश्चिष्टितस्य, निष्ठुरैः, निर्दयैः, प्रको-  
ष्ठप्रहारैः, प्रकोष्ठस्य, हस्तावयवस्य, प्रहारैः, मुष्टिकाघातैः । अभिमुखं,

अथापूर्वाधिज्ञेपश्रवणादशस्त्रवर्गैरप्यमर्षस्वेदच्छलेनानेकसम-  
रपीतमसिधाराजलमिव वमद्भिर्बयवैरपि रोमाञ्चनिभेन मुक्त-  
शशतशल्यनिकरभरलघुभिवात्मानं रणाय कुर्वद्भिर्दृहासेनापि  
प्रतिविम्बिततागगणेन स्पष्टदृष्टधवलदन्तमालमवज्ञया हसतेव-  
कथ्यमानसत्त्वावटम्भः, परिकरबन्धविभ्रमिभ्रमितकरनखकिरण-  
चक्रवालेन व्यपगमनाशङ्कया नागदमनमन्त्रमण्डलबन्धेनेव रुन्ध-

सम्मुखं, प्रवावितान्, प्रचलितान् । सशर्गरेति — शरीरावर्गाः, कर्म,  
कृपाणाः, खड्गः, ताम्बाः, मदः, वर्तमानान् । अयेति — अथ इत्यतः  
“नरनाथः, सावज्ञमवादीत” इत्यनेन, न्वयः । अपूर्वति अपूर्वः,  
नवः, यः, अधिज्ञेपः, निर्भर्त्सनं, तस्य श्रवणां, आकर्णनं, तस्मान्,  
अशस्त्रवर्गैः, न शस्त्रेणा वर्गां, क्षतं, येषां तैः । अमर्षेण, कोपेन, यः,  
स्वेदः, वर्मजलं, तस्य, ह्यनेन, व्याजेन । अनेकेति — अनेकेषु, सम-  
रेषु, युद्धेषु, पीतम्, अन्वादिनं, असिधाराजलं, खड्गजलं, इव,  
( बहुशत्रु हननान् ) वमद्भिः, उद्भिर्भिः, अवयवैः, अङ्गैः, रोमाञ्च-  
निभेन, लामच्छलेन, मुक्तः, निःसारितः, शर शतानि, बाणसमूहानि,  
शल्यनिकराः, शल्यसमूहाः, एव भागेयेन, तथोक्तः । अतः, लघुः,  
भाररहितः, तमिव । रणाय, युद्धाय । अदृहासेन, तन्नाम खड्गेन,  
प्रतिविम्बितः, प्रतिफलितः, तारागणः, नक्षत्रवृन्दं, यस्मिन्, तेन ।  
स्पष्टेति — स्पष्टं, स्फुटं, दृष्टा, धवला, शुभ्रा, दन्तमाला, दशनश्रेणी  
यत्र, तद् यथा तथा, हसतेव, हामं, कुर्वतेव । कथ्यमानेति — कथ्य-  
मानः, अभिधीयमानः, सत्त्वस्य, उद्योगस्य, अवष्टम्भः, वेगः यस्य,  
तथोक्तः । परिकरेति — परिकरबन्धः, कटिबन्धः, तस्य, विभ्रमेण,  
चेष्टया, भ्रमितयो, चलितयोः, करयोः, हस्तयोः, नखकिरणानां,  
चक्रवालं, मण्डलं, तेन । व्यपगमनाशङ्कया, ( शत्रोः पलायनाशङ्क-

न्दश दिशो नरनाथः सावज्ञमवादीत् - 'अरे काकोदर ! काक !, मयि स्थिते राजहंसे न जिह्वेपि बलिं याचितुम् । अर्माभिः किं वा परुषभाषितैः । भुजे वीर्यं निवसति, न बाधि । प्रतिपद्यस्व शस्त्रम् । अयं न भवसि । अगृहीतहेतिष्वाशेक्षितो मे भुजः प्रहर्तुम्' इति । नागस्त्वनादृततरम् - 'एहि । किं शस्त्रेण । भुजाभ्यामेव भनज्जिमभवतो दर्पम्' इत्यभिधायास्फोटयामास । नरपतिरपि निरायुधमायुधेन युधि लज्जमानो जेतुमुत्सृज्य सचर्मफलकमट्टहासमसिमर्धोरुकस्थोपरि बबन्ध बाहुयुद्धाय कक्ष्याम् । युयुधाने च निर्दयास्फोटनस्फुटितभुजरुधिरशोकरसिन्धुमानौ

येतिभावः ) नागेति—नागानां, सर्पाणां, दमनमन्त्रः, शासनमन्त्रः, ( गारुडादीनियावन ) तेन, यः, मण्डलबन्धः, मण्डलाकारः, तेनैव, रुन्धन, अवरोधयन । सावज्ञं, सावहेतुम् । काकोदर ! भुजज्ञ ! काकम्य, वायसस्य, उदरं, अथवा, काकं, ईषद्विनिमदुदरं यस्य । काक ! निर्लज्ज ! राजहंसे, राजश्रेष्ठे, मरान्ते च, न जिह्वेपि, लज्जम् । बलिं, पूजां, याचितुं । परुषभाषितैः, कटृक्तिभिः । प्रतिपद्यस्व, नय । अयम् ( ईदृशः-इतिभावः ) अगृहीतहेतिषु, अगृहीतशस्त्रेषु, अशिञ्जितः, अनभ्यस्तः । अनाहततरं, सावज्ञं । एहि, आगच्छ । किं शस्त्रेण ? ( नकिमपि प्रयोजनं शस्त्रस्येतिभावः ) भनज्जिम, नाशयामि । आस्फोटयामास, आस्फालयामास । ( बाहौ कराघातमकरोदितिभावः ) निरायुधम्, अशस्त्रम् । आयुधेन, शस्त्रेण, उत्सृज्य, परित्यज्य । अट्टहासं, भैरवाचार्यदत्तगवज्ञं । अर्द्धोरुकस्य, उर्वोरधरपर्यन्ताङ्गाच्छादतवस्त्रस्य । कक्ष्यां, कटिवन्धे । निर्दयति - निर्दयं, निष्ठुरं, यत्, आस्फोटनम्, प्रहरणं, ( तालिका शब्दकरणमितिभावः ) तेन, स्फुटितस्य, विक्षतस्य, भुजस्य रुधिराणां, रक्तानां, शीकरैः, विन्दुभिः,

शिलास्तम्भैरिव पतद्भिर्बाहुदण्डैः शब्दमयमिव कुर्वाणौ भुवनं  
तौ । न चिराच्च पानयामास भूतले भुजंगं भूपतिः । जग्राह च  
केशेषु । उच्छ्वान च शिग्श्लेत्तुमुद्रहासम् । अपश्यच्च वैकल्यकमा-  
लान्तरेणास्य यत्नोपवीतम् । उपसंहृतशस्त्रव्यापारश्चावादीत्—  
'दुर्विनीत !, अस्ति ते दुर्नयनिर्वाहबीजमिदम् । यतो विश्रब्धमे-  
वाचरसि चापलानि' इत्युक्त्वोत्ससर्ज तम् । अनन्तरं च सह-  
सैवातिबहलां ज्योत्स्नां ददर्श । शरदि विकसतां कमलवनाना-  
मिव च घ्राणावलेपिनमामोदमजिघ्रन् । भट्टिति च नृपुशब्दम-  
शृणोत् । व्यापारयामास च शब्दानुसारेण दृष्टिम् ।

अथ करतलस्थितस्याट्टहासस्य मध्ये तडितमिव नीलज-  
धरोदरे स्फुरन्तीं प्रभया पिवन्तीमिव त्रियामाम्, तामरसह-  
स्ताम्, कोमलाङ्गुलिरागराजिजालकानि च चरणलघ्नानि वेलो-

मिच्यमानौ, कृतमेचनौ । उच्छ्वान, उत्तोलयामास, वैकल्यकमालां,  
निर्यक्वत्तावलम्बिहार, अन्तरंगा, मध्ये । दुर्नयनि—दुर्नयस्य, दुश्चे-  
ष्टिनस्य, निर्वाहः, सम्पादनं, तस्यबीजं, कारणं ( ब्रह्महत्याभयान्नदण्ड्यमे  
इतिभावः ) विश्रब्धं, निःशङ्करम् । चापलानि, चाञ्चल्यानि । उत्सर्ज-  
त्यत्याज । अतिबहलां, अतिप्रभूताम् । घ्राणावलेपिनं (नामागन्धप्रकर-  
मिति यावत् ) आमोदम्, सौख्यं । व्यापारयामास, प्रसारितवान् ।  
दृष्टिं, नेत्रं । अथ इत्यतः "न्त्रियमपश्यत्" इत्यनेनान्वयः । अट्टहा-  
सस्य, तन्नामखड्गस्य । तडितं, दामिनीं इव, स्फुरन्तीं, शोभमानाम् ।  
पिवन्तीं, पानं कुर्वन्तीं, इव । त्रियामां, रात्रिं । तामरसहस्तां, पद्म-  
कराम् । कोमलेति कोमलानां, अंगुलीनां, रागराजिः, लौहित्य-  
धारा । तस्या, जालकानि, समूहानि । वेलेति—वेलायां, तटभूमौ,  
वालानि, नूतनानि, यानि, विद्रुमलतावनानि, प्रवाललता उद्यानानि ।

वालां वद्रुमलतावनानां वाक्येन्ताम्, करपङ्कजसकाचाशङ्कया  
शशाङ्कमण्डलमिव खगडशः कृतं निर्मलचरणनखनिवहनिभेन  
विभ्रताम्, गुल्फावलम्बिनूपुरपुटतया स्थितनिविडकटकावलि-  
बन्धनादिव परिभ्रश्यागताम् । बहुविधकुसुमशकुनिशतशोभि-  
तात्पवनचलिततनुतरङ्गादतिस्वच्छादंशुकादुदधिसलिलादिवो-  
त्तरन्तीम्, उदधिजन्मप्रेम्णा त्रिवलिच्छलेन त्रिपथगयेव परि-  
ष्वक्तमध्याम्, अत्युन्नतस्तनमण्डलात्, दृश्यमानदिङ्गागकुम्भा-  
मिव ककुभम्, मदलग्नैरावतकरशोकरनिकरमिव शरत्ताग-

नानि, इव । करेति—कर एव, पङ्कजं, कमलं, तस्य, सङ्कोचः, निर्मी-  
लनं, ( चन्द्रोदयादिनिरावन् ) तस्य आशङ्का, भयं, तथा शशाङ्क-  
मण्डलं, चन्द्रमण्डलं, इव । खगडशः, कृतं, शकलीकृतम् । निर्म-  
लेति निर्मलानां, स्वच्छानां, चरणनखाणां, निवहः, समूहः, तन्नि-  
भेन, तन्मदशेन । गुल्फेति गुल्फं, पादग्रन्थि, अवलम्बते, तं,  
नूपुरपुटं, नूपुरमन्धिः, यस्याः, तथा । स्थितेति स्थितं, निविडं,  
दृढं, कटकावल्यां, जैनिकसमूहं, बन्धनं, तस्मात्, परिभ्रश्य, निर्गत्य,  
आगतां, प्राप्ताम् । बह्विति बहुविधैः, नानाप्रकारैः, कुसुमानां,  
पुष्पानां, शकुनीनां, पद्मिणां, च शतैः, तन्तुनिर्मितैः ( पद्मे ) उपरि-  
पतितैः । शोभितं, तस्मात् । एवनेति एवनेन, वायुना, चलिताः,  
क्षिप्ताः, तनवाः, सूक्ष्माः, तरङ्गाः, यस्य, तस्मात्, अतिस्वच्छान्,  
निर्मलान्, अशुकान्, वसनान्, उत्तरन्तीं, उत्तिष्ठन्तीम् । उदधिजन्म-  
प्रेम्णा, मातरोत्पत्तिस्नेहेन, त्रिवलिच्छलेन, त्रिवलिव्याजेन । त्रिपथ-  
गयेव, त्रिवारयागङ्गयेव, परिष्वक्तमध्यां, आलिङ्गितमभ्यभागाम् ।  
दृश्यमानेति—दृश्यमानो, दिङ्तागस्य, ऐरावतस्य, कुम्भो यस्यां,  
तथा भूतां, इव । ककुभं, दिशम् । मदेति—मदं, दानवारिणि, लग्नः,

गणतारं हारमुरसा दधानाम्, ध्रुवलचामरैरिव च मन्दमन्दनिः-  
श्वासदोलायितैर्हारकिरणैरुपवीज्यमानम्, स्वभावलोहितेन मदा-  
न्धगन्धेभकुम्भास्फालनसंक्रान्तसिन्दूरैरेणव करद्वयेन द्योतमा-  
नाम्, हरशिखण्डेन्दुद्वितीयखण्डेनेव कुण्डलीकृतेन ज्योत्स्ना-  
मुचा दन्तपत्रेण विभ्राजमानाम्, कौस्तुभगभस्तिस्तवकेनेव च  
ध्रुवगलनेनाशोककिमलयेनालंकृताम्, महता मातङ्गमदमयेन  
निलकेनादृश्यच्छुवच्छायाभगडलेनेवाविरहितललाटाम्, आ पाद-

संस्कृतः, यः, एरावतः, तम्यः, करः, शुण्डः, तम्यः, शीकरागाः, जल-  
विन्दूनां, निकरः, समूहः, तमिव । शरदिति—शरदि, यः, तारागणाः,  
नक्षत्रवृन्दं, तद्वत् ताराः, उज्ज्वलः, तमः, उरमा, वक्षसा । मन्देति—  
मन्दमन्देन, ईषन्मन्देन, निश्चाप्तेन, दोलायिताः, चञ्चलिताः, तैः,  
उपवीज्यमाना, संवीज्यमाना नाम । स्वभावलोहितेन, सहजरक्तेन ।  
मदान्धेति—मदान्धः, मदमत्तः, यः, गन्धेभः, गन्धहस्ताः, (स्वेदं  
मूत्रं पुगीपं च मज्जाञ्चैव मनङ्गजाः, यस्याग्राय विमाद्यन्ति तं  
विशद्भिन्व हस्मिन्म ) तम्यः, कुम्भास्फालनं, अवमर्शः, तेन, संक्रान्तं,  
संस्कृतं, सिन्दूरं, यस्मिन्, तेन, इव । लक्ष्म्याः, करद्वयेन, हस्तयुग-  
लेन, द्योतमानां, शोभमानाम् । हरेति—हरस्य, शिखण्डः, चूडा,  
तत्र, यः, इन्दुद्वितीयखण्डः, अर्द्धचन्द्रः, तेन इव, कुण्डलीकृतेन,  
वर्तुलाकारेणा, ज्योत्स्नामुचा, कान्तिवर्षिणा, दन्तपत्रेण, गजदन्त-  
रचितकर्णभूषणेन, विभ्राजमानां, द्योतमानाम् । कौस्तुभेति—कौस्तु-  
भस्य, मणोः, गभस्तीनां, किरणानां, स्तवकाः, गुच्छः, तेन, इव,  
ध्रुवगलनेन, ध्रुवगतं । मातङ्गमदमयेन, गजदाननिर्मितेन ।  
अदृश्येति—अदृश्यस्य, निरोहितस्य, छत्रस्य, छायाभगडलं, छाया-  
वक्रं तेन, इव । अविरहितः, अशून्यः, ललाटः, यस्याः, नाम् ।

तलादासीमन्ताच्च चन्द्रातपधवलेन चन्दनेनादिगजयशसेव  
धवलीकृताम्, धरणितलचुम्बिनीभिः कण्ठकुसुममालाभिः सरि-  
द्धिवि सागराधिष्ठात्राभिरधिष्ठिताम्, मृणालकोमलैरवयवैः  
कमलसंभवत्वमनन्तरमाचक्षाणां स्त्रियमपश्यत् । असंभ्रान्तश्च  
प्रपच्छ — 'भद्रे, कासि । किमर्थं वा दर्शनपथमागतासि' इति ।  
सा तु स्त्रीजनविरुद्धेनावष्टम्भेनाभिभवन्तीवाभापत तम् —  
'वीर, सिद्धि मां नारायणोऽस्थलीलाविहारहरिणीम्, पृथुभर-  
तभर्गारथादिगजवंशपताकाम्, सुभटभुजजयस्तम्भविलासशा-

आपादतलान्, आसीमन्तान्, सीमन्तपश्यन्तं, चन्द्रातपधवलेन,  
कौमुदीवत् श्वेतं, स्वभावशुभ्रेण वा । आदिराजयशसा, आदिरा-  
जस्य, मताः वैवस्वनस्य, पृथुत्पतेर्वा, यशः तेन, इव । धरणि-  
तलेति - धरणितलं, भूतलं, चुम्बन्ति स्पृशन्ति, इति तादृशाभिः ।  
सागराधिष्ठाभिः, सागरं अधि, अधिकृत्य तिष्ठन्ति, याः, ताभिः ।  
कमलसम्भत्वं, कमलादुत्पत्तिम्, अथवा, सम्भूयते, स्थीयते, अस्मि-  
न्निति, अधिष्ठानस्थानं, यस्याः ( कमलवामिन्यालक्ष्याः-इतिभावः )  
अनन्तरं, अन्तरहितं, ( तूष्णीमिति यावत् ) आचक्षाणां, कथयन्तीं,  
असम्भ्रान्तः, अचकितः, ( अत्वरणवेतिभावः ) अवष्टम्भेन, गर्वेण ।  
अभिभवन्तीव, निरम्कुर्वन्तीव, ( अवरुन्धतीव तद्वाक्यमितिभावः )  
नारायणेति - नारायणस्य, विष्णोः, उरः, वक्षःस्थलम्, एव, स्थली,  
अकृत्रिमाभूः, ( वनमिति यावत् ) तत्र, लीलया, स्वेच्छया, यः,  
विहारः, विहरणं, क्रीडनं वा तत्र हरिणि, मृगी, ताम् ( स्वेच्छयारण्य-  
स्थल्यां हरिण्या विहारः प्रसिद्धः ) पृथिवति - पृथुप्रभृतीनां, राज्ञां,  
वंशस्य, कुलस्य, वेणुदण्डस्य च, पताकां, ध्वजां, औज्वल्यकारिणीं,  
कीर्तिविस्तारान्, ( पक्षे ) वेणुदण्डस्योपरि अवस्थानात् । सुभटेति—

‘लभञ्जिकाम्, रणरुधिरतरङ्गिणीतरङ्गक्रीडादोहदुर्ललितराज-  
हंसीम्, सितनृपच्छत्रपण्डशिखरिडनीम्, अतिनिशितशस्त्रधा-  
रावनभ्रमणविभ्रमसिंहाम्, असिधाराजलकमलिनीं श्रियम् ।  
अपहृतास्मि तवामुना शौर्यरसेन । याचस्व, ददामि ते वरम-  
भिलषितम्’ इति ।

वीराणां त्वपुनरुक्ताः परोपकाराः । यतो राजा तां प्रणम्य  
स्वार्थविमुखोभैरवाचार्यस्य सिद्धिं ययाचे । लक्ष्मीस्तु देवां  
प्रीततरुहदया विस्तीर्यमाणेन चक्षुषा क्षीरोदेनोपरि पर्यस्तेना

मुभटानां, सुवीराणां, भुजाः, बाहवः, एव, जयस्तम्भाः, तेषु, विलास-  
शालभञ्जिका शोभार्थनिहितपुत्तलिका. ताम् ( मुभटपदेनाभ्याः वीरानु-  
रागित्वं, सूचितं ) रणेति—रणेषु, युद्धेषु, या, रुधिरतरङ्गिण्यः,  
रक्तनयः, तामां, तरंगेषु, उर्मिषु, क्रीडा, केली, तत्र दोहदेन, अभि-  
लापेण, दुर्ललिता, दुर्विनीता, राजहंसी ताम् । सितेति—सितानि,  
शुभ्राणि, नृपाणां, राज्ञां, छत्रपण्डानि, आतपत्रममूहानि, तत्र शिख-  
रिडनी, मयूरी, ताम्, ( अनानपेसञ्चरणशीलत्वाद् मयूरीणां )  
अतीति—अतिनिशितानां, सुतीक्ष्णानां, शस्त्राणां, धारा एव, वनानि.  
तेषु, भ्रमणं एव, विभ्रमः, विलासः, तत्र, सिंही, ताम् । अस्तीति—  
अस्मीनां, खड्गानां, धारा एव, जलानि, ( तनुत्वादितिभावः ) तत्र कम-  
लिनी, पद्मिनी ताम् । अपहृतेति—अपहृता, आकृष्टा, शौर्यरसेन,  
उत्साहेन । अभिलषितं, इच्छितम् । अपुनरुक्तेति अपुनरुक्ताः,  
पुनरुक्तिदोषरहिताः, परोपकाराः, परपामुपकृतयः, अथवा, अपुनरुक्ताः,  
अनधिकाः । तां, लक्ष्मीम् । स्वार्थविमुखः, निःस्वार्थः । सिद्धिं,  
इच्छतमाफल्यं । प्रीततरेति—प्रीततरं, अतिशयेन, प्रीतं, ( राज्ञः,  
स्वार्थनिःस्पृहत्वेनेति यावत् ) हृदयं, यस्याः, सा । विस्तीर्यमाणेन,



भिमिश्रन्ती भूपालम् 'एवमस्तु' इत्यब्रवीत् । अवादाच्च पुनः—  
 'अनेन सत्त्वोत्कर्षेण भगवच्छिवभट्टारकभक्त्या चासाधारणया  
 भवान्भुवि सूर्याचन्द्रमसोस्तृतीय इवाविच्छिन्नस्य प्रतिदिनमुप-  
 र्चायमानवृद्धेः शुचिसुभगसत्प्रत्यागधैर्यशौण्डिपुरुषप्रकाण्डप्रायस्य  
 महतो राजवंशस्य कर्ता भविष्यति । यस्मिन्नुत्पत्स्यते  
 सर्वद्वीपानां भोक्ता हरिश्चन्द्र इव हर्षनामा चक्रवर्ती त्रिभुवनवि-  
 विजिर्गापुट्ठितीयो मान्धातेव, यस्यायं कर्मः स्वयमेव कमलमपहाय  
 ग्रहाप्रति चामरम्' इति वचसोऽन्ते तिरोंवभूव ।

भूमिपालस्तु तदाकर्ण्य हृदयेनातिमात्रमप्रीयत । मैरवाच्चा-  
 र्योऽपि तस्या देव्यास्तेन वचसा कर्मणा च सम्यगुपपादितेन  
 सद्य एव कुन्तली किरीटी कुण्डली हारी केयूरी मेखली मुद्गरा

विस्फर्त्यमांगोत । ( निःस्पृहत्वदर्शनेन विस्मयागमादिनि यावत् ) क्षीरो-  
 देनेव, दुग्धसमुद्रगेव ( प्रसन्नत्वादित्यर्थः ) उपरिपर्यस्तेन, पतितेन ।  
 एवं, अस्तु ( पूर्णा ते प्रार्थना ) सत्त्वोत्कर्षेण, साहसानिशयेन, असा-  
 धारणया, निरुपमया । सूर्यचन्द्रमसोः, रविनिशाकरयोः, तृतीय इव,  
 भिन्न इव, ( तेजस्त्वान् ) अविच्छिन्नस्य, अत्रुदितस्य, उपर्चायमानवृद्धेः,  
 तिरन्तरवर्द्धमानाभ्युदयस्य । ( समयप्रभावेण उन्नतिं, अवनतिं च  
 गच्छतः, प्रतिमासं, एवं वृद्धिमदंशस्य नृपस्येत्यर्थः "व्यतिरेकः )  
 शुर्चाति शुचिः, पृतं, शुद्धाचरणां वा सुभगं, सु-शोभनं, भगं, वीर्यं,  
 यशो वा, सत्यं, यथार्थकथनं, त्यागः, दानं, धैर्यं, धीरत्वं, तेषु, शौण्डाः,  
 दक्षाः, ( सर्वगुणसम्पन्नाः—इत्यर्थः ) पुरुषप्रकाण्डाः, पुरुषश्रेष्ठाः, प्रायेण,  
 बाहुल्येन, यत्र, तथा भूतस्य, कर्ता, जनकः । यस्मिन् ( राजवंशे-  
 इति यावत् ) द्वितीयः, अपरः, मान्धातेव, नृप इव । कर्मणा, ( शव-  
 माधनरूपकार्येणातिभावः ) सम्यक्, उपपादितेन, सम्यगनुष्ठितेन ।

खड्गी च भूत्वावाप विद्याधरत्वम् । प्रोवाच च—‘राजन्, अदूरव्यापिनः फल्गुचेतसामलसानां मनोरथाः । सतां तु भुवि विस्तारवत्यः स्वभावेनैवोपकृतयः । स्वप्नेऽप्यसंभावितां दातुमिमां दक्षिणां क्षमः कोऽन्यो भवन्तमपहाय । संपत्कणिकामपि प्राप्य तुलेव लघुप्रकृतिरुन्नतिमायाति । त्वदीयैर्गुणैरुपकरणीकृतस्य त्वत्त एव च लब्धात्मलाभस्य निर्लज्जतेयमस्य मूढहृदयस्य । नदिच्छामि येन केनचित्कार्यलवोपपादनोपयोगेन स्मारयितुमात्मानम्’ इति प्रत्युपकारदुष्प्रवेशास्तु भवन्ति धीराणां हृदया-

सद्य एव, तत्त्वगामेव, कुन्तली, मुकेशः, किरीटी, मुकुधारी, कुण्डली, कुण्डलयुक्तः । हारी, हारवान् । केयूरी, अङ्गदी, मेखली, तडागीधारी । मुद्गरः, मुद्गरः, दण्डः, तडान् । विद्याधरत्वं, विद्याधरभावम् । अदूरव्यापिनः, समीपप्रसारिणः, फल्गुचेतसाम्, असारहृदयानाम् । अलसानां, उद्यमरहितानां, मनोरथाः, इप्सितानि । विस्तारवत्यः, प्रसरणशीलाः । उपकृतयः, उपकाराः । इमां, दक्षिणां, ( विद्याधरत्वलाभरूपाम् ) क्षमः, समर्थः । अपहाय, त्यक्त्वा । सम्पदिति—सम्पदः, धनस्य, कणिकां, कणमात्रं, ( लेशमपीतिभावः ) लघुप्रकृतिः, नीचस्वभावः । उन्नतिम् । औन्नत्यं, विपथगमनं च । उपकरणीकृतस्य, कृतउपकारस्य । लब्धेति—लब्धः, प्राप्तः, आत्मनो, लाभः, अभीष्टरूपः, येन तथा भूतस्य, अस्य ( मदीयस्येति यावन् ) कार्येति—कार्यस्य, लवः, लेशः, ( किञ्चिन्मात्रमितिभावः ) तस्य उपपादनं, करणं, तेन, यः, उपयोगः, ( उपकाररूपः ) तेन । स्मारयितुं, स्मरणतां नेतुं । प्रत्युपकारेति—प्रत्युपकारेण, उपकारप्रतिदानेन,

वष्टम्भाः, अतस्तं राजा 'भवत्सिद्धयैव परिसमाप्तकृत्योऽस्मि । साध्यतु मान्यो यथासमीहितं स्थानम्' इति प्रत्याचचक्षे ।

तथोक्तश्च भूभुजा जिगमिषुः सुदृढं समालिङ्ग्य टीटिभादी-  
न्कुवलयवनेनेवावश्यायशीकरस्त्राविणा सास्त्रेण चक्षुषा वीक्ष-  
माणः क्षितिपतिं पुनरुवाच—'तात, ब्रवीमि यामीति न स्नेह-  
सदृशम् । त्वदीयाः प्राणा इति पुनरुक्तम् । गृह्यतामिदं शरीर-  
कमिति व्यतिरेकेणार्थकरणम् । तिलशः क्रीता वयमिति नोप-

दुःप्रवेशाः, प्रवेष्टुमशक्याः, हृदयावष्टम्भाः, हृदयगाम्भीर्याणि, ( नहि  
धीराः प्रत्युपकारं अर्थयन्ते ) भवत्सिद्ध्या, इप्सिमपूरणोनेतिभावः ।  
परिसमाप्तं, पूर्णतानीतम् । कृत्यं, कर्म, यस्य, तथोक्तः । साध्यतु-  
ब्रजतु, मान्यः । ( भवानितियावत् ) यथा समीहितं, चेष्टितानुरूपं,  
( यथेप्सितमितिभावः ) स्थानं, ( विद्याधरलोकं ) इति, एवं प्रत्याचचक्षे-  
अकथयत् ।

भूभुजा, राज्ञा, जिगमिषुः, गन्तुमिच्छुः, ( भैरवाचार्ये-इतिभावः )  
कुवलयवनेन नीलोत्पलकाननेन, इव । अवश्यायेति—अवश्यायानां  
तुषाराणां, शीकरान्, विन्दून् स्रवति इति तादृशेन । सास्त्रेण, सज्ज-  
लेन । स्नेहसदृशं, स्नेहसमुचितम् । प्राणाः, ( मदीया इत्यर्थः )  
त्वदीयाः, ( त्वं मत्तः अभिन्न इत्यर्थः ) पुनरुक्तं, ( कथितपूर्वमितिभावः )  
व्यतिरेकेण, पृथग्भावेन, अर्थकराणां, अर्थसाधनम् ( आवाग्वतु अभिन्नौ,  
कथने तु विपर्ययः—एवेति भावः ) तिलशः, खण्डशः, क्रीता वयमिति  
( बहु उपकार करणात् ) नहि प्रत्युपकारं कर्तुं समर्थाः वयमितिभावः )  
दूरीकराणां, दूरे निक्षेप, इव । अप्रत्यक्षं, वचनमात्रं ( द्रोष्टरविष्यत्वाद्दृ

कारानुरूपम् । बान्धवोऽसीति दूरीकरणमिव । त्वयि स्थितं हृदयमित्यप्रत्यक्षम् । त्वद्विरहकारिणी कारणेयं न सिद्धरित्यश्रद्धेयम् । निष्कारणस्तवोपकार इत्यनुवादः । स्मर्तव्या वयमित्याज्ञा । सर्वथा कृतघ्नालापेष्वसज्जनकथासु च चेतसि कर्तव्योऽयं स्वार्थनिष्ठुरो जनः' इत्यभिधाय वेगच्छिन्नहारोच्छलितमुक्ताफलनिकरताडिततारागणं गगनतलमुत्पपात । ययौ च सीमन्तितग्रह-

दयस्येतिभावः ) त्वद्विरह कारिणी, तवविच्छेदजननी, अतएव नः, अस्माकं, इयं सिद्धिः, कारणा, यातना, ( क्लेश एवेति यावत् ) ( कारणातुयातना तीव्रवेदना "इत्यमरः" ) अश्रद्धेयं, अविश्वास्यम्, निष्कारणः, कारणरहितः, निरर्थको वा ) इति, एतत्कथनं, अनुवादः, कथितस्यार्थस्य प्रकारान्तरेण कथनम् । आज्ञा, आदेशः । कृतघ्नालापेषु, कृतं, ( कार्यं ) व्रन्ति-इति कृतघ्नाः, तेषां, आलापाः, भाषणानि, तेषु, असज्जनकथासु, दुर्जनविषयकालापप्रस्तावेषु, भवतां प्रत्युपकाराकरणात्, अहमपिकृतघ्नः, अतः, स्वार्थनिष्ठुरः स्वकार्यसाधनपरायणः, अतएव निर्दयः । वेगेति—वेगेन, रंहसा, छिन्नात्, त्रुटितात्, हारात्, उच्छलितानां, निर्गलितानां, मुक्ताफलानां, मौक्तिकानां, निकरैः, समूहैः, ताडितः, आहतः, तारागणः, नक्षत्रवृन्दं, यस्य, यत्र वा, तन् ( विषयाणां मौक्तिकानां, निगरणेन असंख्यतारागणताडनम्, अतः, असम्बन्धे सम्बन्धरूपा अतिशयोक्तिः ) सीमन्तितेति—सीमन्तितः, द्विधाकृतः, ग्रहाणां, दिग्चारिणां, सूर्यादीनां, ग्रामः, समूहः, येन, तथोक्तः । सिध्युचितं, ( विद्याधरत्वा योग्यं ) धाम, स्थानम् । श्रीकण्ठोऽपि, तन्नामनागोऽपि । पराक्रमक्रीतः, बलक्रीतः । कर्तव्येषु, कार्येषु, ( भवतः,

ग्रामः सिद्धयुचितं धाम । श्रीकण्ठोऽपि—‘राजन्, पराक्रमक्रीतः कर्तव्येषु नियोगेनानुग्राह्यो ग्राहितविनयोऽयं जनः’ इत्यभिधाय राजानुमोदितस्तदेव भूयो भूविवरं विवेश ।

नरपतिस्तु क्षीणभूयिष्ठायां क्षपायां, प्रवातुमारब्धे प्रबुध्यमानकमलिनीनिःश्वाससुरभौ, वददेवताकुचांशुकापहरणपरिहासस्वेदिनीव सावश्यायशीकरे, परिमलाकृष्टमधुकृति कुमुदनिद्रावाहिनि निशापरिणतिजडे तुषारलेशिनि वनानिले, विरहविधु-  
 इतियावत् ) नियोगेन, आदेशेन । ग्राहितविनयः, शिक्षितविनयः, ( पराजयेनेत्यर्थः ) भूविवरं, पातालम् । नरपतिः “इत्यतः नगरं विवेश” इत्यनेनान्वयः । क्षीणभूयिष्ठायां, ( प्रायेणव्यतीतायामिति-भावः ) क्षपायां, रजन्याम् । प्रवातुं, सञ्चरितुम् । प्रबुध्यमानेति—प्रबुध्यमानानां, ( सूर्योदयान् ) विकाशं गतानां, कमलिनीनां, निश्वासेन ( तत्स्पर्शवायुनेतिभावः ) सुरभिः, सुगन्धः, तस्मिन् । वनेति—वनदेवतानां, कुचयोः, स्तनयोः, अंशुकस्य, वस्त्रस्य, अपहरणमेव परिहासः, हास्यं, ( क्रीडनमितियावत् ) तेन यः, स्वेदः, धर्मजलं, तद्वति इव, सावश्यायशीकरे, तुषारविन्दुयुक्ते ( समासोक्तिः ) परिमलेति—परिमलः, पुष्पविमर्दोद्गन्धः, तेन, आकृष्टाः, आकर्षिताः, मधुकृतः, द्विरेफाः ( पक्षे ) ( तदाघ्रायोन्मादिताः-विटाः-इति यावत् ) येन तादृशे । कुमुदेति—कुमुदानां, निद्रानिमीलनं, तां बाहयति, उत्पादयति, इति तस्मिन् ( दक्षिणनायकत्वंव्यज्यतेऽत्रप्रेमगर्भव्यवहारेणेतिभावः ) निशेति—निशायाः, रात्रेः, परिणतिः, परिणामः, तथा जडः, मन्थरः, शिशिरभारेण, ( पक्षे ) सर्वासां निशां, विलासात्,

रचक्रवाकचक्रनिःश्रसितसंतापितायामिवापरजलनिधिमवतर-  
 न्त्यां त्रियामायां, साक्षादागतलक्ष्मीविलोकनकुतूहलनिधिव  
 समुन्मीलन्तीषु नलिनीषु, उन्निद्रपक्षिणि क्षरति कुसुमविसर-  
 मिव तुहिनकणनिकरं मृदुपवनलासितलते कानने, कमललक्ष्मी  
 प्रबोधमंलशंखेष्विव रसत्स्वन्तर्बद्धध्वनन्मधुकरेषु मुकुलायमा-  
 प्रजागरालसः, इत्यर्थः—तस्मिन् । तुपारलेशिनि, शिशिरविन्दु वाहिनि,  
 ( ईषत्शीतलेतियावन् ) ( पक्षे ) रतिश्रमस्वेदवतीतिभावः । विरहेति—  
 विरहेण, वियोगेन, विधुराणां, व्याकुलानां, चक्रवाकाणां, रथाङ्ग-  
 पक्षिणां, चक्रम्य, समूहस्य, निश्रसितेन, निश्राममरुता ( उग्रानेति-  
 यावन् ) सन्तापितायां, इव, ( उत्प्रेक्षा ) अपरजलनिधिं, अपरं समुद्रं,  
 त्रियामायां, रजन्यां । साक्षादिति—साक्षादागतायाः, प्राप्तायाः,  
 लक्ष्म्याः, त्रियाः, विलोकने, दर्शने, कुतूहलिन्यः, कौतुकवत्यः, तासु-  
 इव । समुन्मीलन्तीषु, विकसन्तीषु, नलिनीषु, पद्मिनीषु, ( मुग्धनाथि-  
 कात्वं, व्यज्यते एतेन कमलिनीनां ) । उन्निद्रेति—उन्निद्राः, विगत-  
 निद्राः, ( प्रातः पक्षिणां, जागरणस्वभावः ) पक्षिणः, यत्र, तस्मिन्  
 ( शृङ्गारसहायाः पक्षिणः—विटानां ध्वन्यते अनेन ) क्षरति, वर्षति ।  
 कुसुमविसरमिव, पुष्पनिकरमिव, ( पक्षे ) विरहतापोपशान्तये रति-  
 मुखोपभुक्तये वा । मृद्विति—मृदुना त्रिविधेन, पवनेन, वायुना,  
 लासिताः, नर्चिताः, ( कम्पिताः—इतिभावः ) लताः, व्रतत्यः, यत्र तादृशे ।  
 कमलेति कमलानां, पद्मानां, लक्ष्मीः, श्रीः, तस्याः, प्रबोधाय,  
 जागरणाय, मङ्गलशङ्काः, तेषु इव, ( उत्प्रेक्षा ) रसत्सु, ध्वनेत्सु ।  
 अन्तरिति—अन्तः, अभ्यन्तरे, बद्धाः, रुद्धाः, ( पद्मनिमीलनादित्यर्थः )

नेषु कुमुदेषु, उज्जिहानरविरथवाजिविसृष्टैः प्रोथपवनैः प्रोत्सार्य-  
 माणास्त्रिव वारुण्यां ककुभि पुञ्जीभवन्तीषु श्यामालताकलि-  
 कासु तारकासु, मन्दरशिखराश्रयिणि मन्दानिललुलितकल्पल-  
 तावनकुसुमधूलिविच्छुरित इव धूसरीभवति सप्तर्षिमण्डले, सुर-  
 वारणाङ्कुश इव च्युते गलति तारामये मृगे, त्रीनपिटीटिभादी-  
 न्गृहीत्वा नागयुद्धव्यतिकरमलीमसानि शुचिनि वनवापीपयसि  
 ध्वनन्तः, गुञ्जन्तः, मधुकराः, भ्रमराः, येषां, तेषु । मुकुलायमानेषु,  
 मुकुलभावंगच्छत्सु । उज्जिहानेति — उज्जिहानैः, उद्गच्छद्भिः, प्रवृष्टैः,  
 वा, रवैः, सूर्यस्य, रथवाजिभिः, रथाश्वैः, विमृष्टाः, त्यक्ताः, तैः ।  
 प्रोथपवनैः, नासामारुतैः । प्रोत्सार्यमाणासु, अपसार्यमाणासु, इव ।  
 वारुण्यां ककुभि, पश्चिमायांदिशि पुञ्जीभवन्तीषु, संहती भवन्तिषु ।  
 श्यामेति—श्यामा, रात्रिः, एव लता, व्रततिः, अथवा, श्यामालता,  
 प्रियंगुलतिका, मकरिका वा तस्याः, कलिकाः, कुसुममुकुलानि, तासु ।  
 तारकासु, नक्षत्रेषु ( रूपकम् ) मन्दरेति मन्दरस्य, पर्वतस्य,  
 शिखरं, शृङ्गम्, आश्रयतीति तथा भूते । मन्दानिलेति—मन्देन,  
 अल्पेन, (मृदुप्रवाहवतेतिभावः) अनिलेन, वायुना, लुलितं, ईपदान्दो-  
 लितम् । यत्, कल्पलतावनं, देवतरु काननं, तस्य, कुसुमानां,  
 पुष्पाणां, धूलिभिः, परागैः, विच्छुरितं इव, विलिप्तं इव, धूसरा,  
 भवति, धूसरवर्णातांगच्छति । सप्तर्षिमण्डले, मरीच्यादिमहर्षिसमूहे ।  
 सुरेति—सुरवारणास्य, ऐरावतस्य, अङ्कुशे इव । च्युते, स्वस्थानात्  
 भ्रष्टं, गलति, सरति । तारामये, नक्षत्रमये, मृगे, मृगशीर्षनामनक्षत्रं,  
 स हि, अङ्कुशाकारः, (अतः) कोणत्रय युक्तं नाङ्कुशेन, ( उपमा ) टीटि-

प्रक्षाल्याङ्गानि नगरं विवेश । अन्यस्मिन्नहनि तेषामात्मशरीरा-  
नन्तरं स्नानभोजनाच्छादनादिना प्रीतिमकरोत् ।

कतिपयदिवसापगमे च परिव्राट् भूभुजा वार्यमाणोऽपि  
वनं ययौ । पातालस्वामिकर्णतालौ तु शौर्यानुरक्तौ तमेव सिषे-  
धाते । संपादितमनोरथातिरिक्तविभवौ च सुभटमण्डलमध्ये  
निष्कृष्टमण्डलाग्रौ समरमुखेषु प्रथममुपयुज्यमानौ कथान्तरेषु

भादीन । नागेति—नागेन, ( श्रीकण्ठेन ) सह, यत्, युद्धं, तस्य.  
व्यतिकरः, सम्पर्कः, तंन, मलीमसानि, म्लानानि । शुचिनि, पवित्रे,  
वनवापीपयसि, अरण्यसरसीजले । अन्यस्मिन् अहनि, अपरदिने ।  
तेषां ( टीटिभादीनां ) आत्मेति—आत्मशरीरं, स्वदेहं । अनन्तरं,  
पश्चात् (पूर्वं समाधाय स्नानादि व्यापारं तेषां, पश्चात्स्वयमपि कृतवा-  
नितिभावः ) परिव्राट्, परिव्राजकः, ( टीटिभः ) भूभुजा, राज्ञा, वार्य-  
माणः, निषेधितः, वनं, अरण्यं, ययौ, अगमत् ( वानप्रस्थमवललम्ब-  
तिभावः ) । शौर्येति—शौर्येण, पराक्रमेण, अनुरक्तौ, जानस्नेहौ,  
( न भोगाकांक्षयेत्यर्थः ) संपादितेति—सम्पादिनः, जनितः, मनो-  
रथस्य, आशायाः, अतिरिक्तः, अधिकः, विभवः, सम्पद्, ययौ तौ ।  
सुभट मण्डलमध्ये, सुवीरसंघे । निष्कृष्टेति—निष्कृष्टं, उत्कृष्टम् ।  
मण्डलाग्रं, खड्गः, (खड्गे तु निस्त्रिशचन्द्रहासासिरिष्ठयः । कौत्सेयको  
मण्डलाग्रः “इत्यमरः”) ययोः, तौ, अथवा, निष्कृष्टं, प्रसिद्धं, यत्,  
मण्डलं, वीरसमूहः, तस्य, अग्रौ, अग्रगणनीयौ, अतएव, समरमुखेषु,  
युद्धेषु, प्रथमम्, पूर्वं, ( संनापत्यत्वेनेतिभावः ) उपयुज्यमानौ,  
नियुक्तौ । कथाऽन्तरेषु, आलापप्रसंगेषु । अन्तरान्तरा, मध्ये मध्ये ।



चान्तरान्तरा समादिष्टौ विचित्राणि भैरवाचार्यचरितानि शैशव-  
वृत्तान्तांश्च कथयन्तौ तेनैव सार्धं जरामजग्मतुरिति ।

इति श्रावणभट्टकृते हर्षचरिते भैरवाचार्यसिद्धिमाधनं नाम

तृतीय उच्छ्वासः ।

समादिष्टौ, आज्ञप्तौ, ( राज्ञा इति यावत् ) शैशववृत्तान्तान्, वाल्य-  
क्रीडादिव्यापारान् (भैरवाचार्यस्यैवेत्यर्थः) कथयन्तौ । जरां, वृद्धत्वम् ।

इति श्रावणभट्टकृतहर्षचरितव्याख्यायां “आशुतोषिण्यां”

तृतीय उच्छ्वासः ।



पं० रघुनाथचन्द्र शास्त्री के प्रबन्ध से द्वितीय, तृतीय उच्छ्वास

पी० पी० आर० आई० प्रेस लाहौर में छपा ।

# श्रीहर्षचरितम् ।

## चतुर्थ उच्छ्वासः ।

योगं स्वप्नऽपि नेच्छन्ति कुर्वन्ते न करग्रहम् ।

महान्तो नाममात्रेण भवन्ति पतयो भुवः ॥ १ ॥

सकलमहीभृत्कम्पकृदुत्पद्यत एक एव नृपवंश ।

विपुलेऽपि पृथुप्रतिमो दन्त इव गणाधिपस्य मुखे ॥ २ ॥

अथ कविवरो भट्टवाणश्चरित्रनायकजन्मवृत्तान्तप्रस्तावपुष्पक्रम-  
माण आदौ महतां भुवः पतित्वमितरवलक्षयेत् वर्णयति ।

योगमिति । महान्तो नाममात्रेण नाम्नैव भुवः पतयो भवन्ति ।  
नामैव महतां भुवः पतित्वे प्रयोजकं नत्वन्ये पराक्रमादयो गुणाः ।  
योगं संबधं युक्तं वा स्वप्नेऽपि नेच्छन्ति । भूपतीनां युक्त्यपेक्षि-  
त्वमेतेषां तु नेत्यर्थः । करग्रहणं पाणिपीडनं बलिस्वीकारं वा न  
कुर्वन्ते । पतित्वे हि पाणिपीडनमपेक्षितं नृपत्वे च बलिस्वीकारस्त-  
दुभयमप्येते नाचरन्त्यनो वैलक्षण्यम् । अत्र प्रतिपाद्येन वस्तुना  
साधारण्यात्पत्युभूपतेश्च महत मुत्कर्षस्य द्यातनाच्छद्वर्शकिमूलानु-  
सरणरूपो व्यतिरेकालंकारः ॥ १ ॥

वर्यं श्रीहर्षं सकलनृपवंशललामभूतं मनसिकृत्य तादृशस्य  
महतो जनेर्दुष्प्राप्यत्वं वर्णयति—सकलेति । विपुलेऽपि विशालेऽपि  
नृपवंशे पृथुप्रतिमः पृथुतमकराजसदृशः सकलानां महीभृतां  
नृपाणां कपकृद्भीतिद एक एव विरल इति तात्पर्याः उत्पद्यते  
प्रादुर्भवति । गणाधिम्य गजाननस्य मुखे पृथुर्महती प्रतिमा  
आकाशे यस्य तादृश एको दन्त इव । यथा गजाननमुखस्थ एको  
दन्तः सर्वेषां भूधराणां भीतिदस्तद्वदयमप्यखिलानां नृपाणां कम्प-

१ अथ तस्मात्पुष्पभूतेर्द्विजवरस्वेच्छागृहीतकोपो नाभि-  
पद्म इव पुण्डरीकेक्षणान्, लक्ष्मीपुरःसरो रत्नसंचय इव रत्ना-  
करान्, गुरुबुधकविकलावत्तेजस्विभूतन्दनप्रायो ग्रहगण ईवो-

कृन् । अनया चोपमयाऽयतेन सदृश एव गणाधिरो देवतात्वेन  
तदास्वीकृत आसीदिति गम्यते । अपि च कुलस्थोन्नमक एक एव  
भवति वंश इति प्रविद्धमेव । गणाधिपो हि परिणामजली तामनुकु-  
र्वन् पीडयामास निविलान् भूधरानिति पौराणिकी सिद्धिमुन्मृत्ये  
यमुपमा । पृथुर्नाम सकलनृपश्रेष्ठो मध्यम नाद्विजानशरीराज्जात आ-  
दिनृपो भुवःसमीकरणे काले पर्वतान्कंपयामासेति विष्णुपुराणे ॥२॥

अथेति । अथेत्यादौ राजवंशो नृपान्वयो निजगाम इति संबधः  
कस्मात्, पुष्प भूतेस्तन्नामकान्नृपात् । पुण्डरीके इव कमले इवेक्षणा-  
नयने यस्य तस्मात् । द्विजवरैर्ब्रह्मणश्रेष्ठैः स्वेच्छया गृहीतः स्वीकृ-  
तः कोपोऽर्थसंचयो यस्य स नृपवशः । पुण्डरीकेक्षणाद्विष्णोर्द्विजवरेण  
ब्रह्मणा स्वेच्छया गृहीतः कोपः कुडमलो यस्य स नाभिपद्म इव ।  
सर्ववेद-प्रवर्तकत्वाद् द्विजश्रेष्ठत्वं ब्रह्मणः । 'कोपोऽस्त्री कुडमले ।  
जातिकोशेऽर्थसंचाते, इति मेदिनी । साधारण्यमर्थश्च द्विजवरस्वे-  
च्छागृहीतकोपत्वम् । रत्नानां स्वजातिकोष्ठानामाकरात्त्वनेनृ-  
पात् (पक्षे) रत्नाकरात्सागरात् लक्ष्मीः पुरःसराग्रगामिना यस्य स  
नृपान्वयो लक्ष्म्यालंकृत इत्यर्थः (पक्षे) लक्ष्मीः पुरःसराप्रथममुत्पन्ना  
यस्य सः । आहिताग्न्यादित्वात्परनिपातः । रत्नानां स्वजाति-  
श्रेष्ठानां संचयः (पक्षे) रत्नसंचयश्चतुर्दश रत्नानीव । 'रत्नं  
स्वजातिश्रेष्ठेऽपि' इति मेदिनी । 'पुरःसर' इति रूपं पुरःपूर्वकात्सरतेः,  
'पुरोमेतोमेपु सतेः' इत्यनेन टप्रत्यये निष्पन्नम् । 'संचय' इति  
सपूर्वकाच्च एरञ् इत्यनेनाच् देवावासुरैर्मथ्यमानात्सागराच्चतुर्दश

दयस्थानात्, महाभारवाहनयोग्यः सागर इव सगरप्रभावान्,  
दुर्जयबलसनाथो हरिवंश इव शूराधिर्जगाम राजवंशः ।  
यस्माद्विनष्टधर्मधवलाः प्रजासर्गा इव कृतमुखात् प्रतापाक्रान्त-

रत्नानि प्रादुर्बभूवुरिति भागवते । उदयस्थानात्समुन्नतेः स्थानात्पु-  
ष्पभूतेः (पक्षे) पूर्वपर्वताद् । 'उदयस्तु पुमान्पूर्वपर्वते च समुन्नतो'  
इति मेदिनी । गुरव उपदेष्टारः दुष्टा विद्वांसः कवयः काव्यनिर्मातारः  
कलावन्तो नृत्यादिकलाप्रवीणाम्तेजस्विनः शूराः भूतन्दना राजानः  
प्राया बहुला यस्मिन् स नृपवंशः । (पक्षे) गुम्बृद्दम्पतिः बुधः सौम्यः  
कविः शुक्रः कलावंश्चन्द्रो तेजस्वी सूर्यः भूतन्तः मंगलः प्राया  
बहुला यस्मिन् ॥ प्रःगण इव तारका समूह इव । सागर इव प्रभा-  
वःसामर्थ्यं यस्य तस्मात्पुष्पभूतेः (पक्षे) सगरस्यापत्यानि पुमांसः  
सगराः तेषां प्रभावात्सामर्थ्यात् । सगरशब्दाद् "जनपदशब्दात्क्षत्रि-  
यादञ्" अनेन सूत्रेणात्रि" तद्वाजकत्वाद्बहुत्वे लुक् । अस्य जनपद-  
वाचकत्वं कल्प्यमस्यथा सगरेण सागरस्यातिमितत्वादसंगतेयमुपमा  
स्याद् । कपिलापट्टनश्रैः सगापुत्रैरुत्थातः सागर इति महाभारते  
वनपर्वणि । महाभारते भुवः पालनमुद्यमार्थं गतागतं विदधतीनां नावां  
भारश्च तस्य बहनस्य धारणाम्ययोग्यः । शूराद्वीरात् (पक्षे) तन्नाम काशदु-  
वंशपूर्वजान् । दुर्जयं जेतुमशक्यमजय्यं यद्वलं सामर्थ्यं तेन युक्तः  
(पक्षे) दुर्जयेन दुरभभवेनार्थाद्भवता श्रीकृष्णेन बलेन बलशमेण च  
सनाथो हरिवंशो यादववंश इव । यस्मादिति । यस्माद्वाजानोऽजा-  
यन्तेत्यन्वयः । कृतमुखात्कुशलाद्यमान् । कृतमुखः कृती कुशल  
इत्यपि' इत्यमरः । अविनष्टो धर्मोयेषां तादृशान् धवन् धूर्तान्  
लान्ति स्वीकुर्वन्ति ते धर्मनिरतधूर्तप्रहण बद्धादरा इत्यर्थः । 'धवः  
जीर्णपुमान्नरे धूर्ते' इति मेदिनी । अथवाऽवनष्टधर्मेण धवलाः

भुवनाः किरणा इव तेजोनिधेः, विग्रहव्याप्तदिङ्मुखा गिर्य  
इव भूभृत्प्रभवात्, धरणिधारणक्षमा दिग्गजा इव ब्रह्मकरान्,  
उद्धीन्पातुमुद्यता जलधरा इव घनागमात्, इच्छाफलादायिनः  
कल्पतरव इव नन्दनात्, सर्वभूताश्रया विश्वरूपप्रकारा इव  
श्रीवरादजायन्त राजानः ।

शुभ्राः यशस्वन्त इति यावत् । कृतमुखात्कृतयुगारभादाविनष्टेन  
पूर्णं धर्मेण धवलाः प्रजामर्गा इव । धर्मो हि चतुष्पात् स च  
कृतयुगे परिपूर्ण आनीतदनुरोधनाविनष्टेति विशेषणम् । अत्र च  
प्रतिगुणं तस्यैकेकः पादो नष्टः । धर्मस्य चतुष्पात्वं श्रीहर्षेण  
नलवर्णने प्रदर्शितम् । 'पदैश्चतुर्भिः सुकृते स्थिरीकृते कृतेऽमुना  
केन तपः प्रपेदिरे' इति । तेजसां निधेयस्माद्राज्ञः (पक्षे) तेजोनिधेः  
सूर्यात् । प्रतापेन तेजसा (पराक्रमेणेत्यर्थः) आक्रान्तभुवनतलं येस्ते  
राजानः (पक्षे) प्रतापेन तापेनाक्रान्तं भुवनतलं येस्ते किरणाः ।  
'प्रतापस्तापतेजसोः' इति मेदिनी । भूभृतां राज्ञां भूधराणां च प्रभवा-  
ज्जन्ममूलाद् । विग्रहेण समरेण देहेन च व्याधानि दिङ्मुखानि  
येस्ते राजानो गिर्यश्च । ब्रह्मकरात्परब्रह्मचिन्तकात् (पक्षे) प्रजापतेः ।  
धरण्याः पृथ्व्या धारणे वहने क्षमाः समर्थाः दिग्गजा इव । नृप-  
पक्षेऽप्येवमेव । 'सूर्यस्याण्डकपाले द्वे समानीय प्रजापतिः । हस्ताभ्यां  
परिगृह्याथ सप्त सामान्यगायत । गायतो ब्रह्मणस्तस्मात्समुत्पेतुर्मतं-  
गजाः' इति पालकाव्यः । घनो दृढ आगमः शास्त्रं यस्य तस्माद्य-  
स्मात्पक्षे वर्षाकालात् । उद्धीन् पातुं आरक्षितुं प्राशितुं च । वर्षाकाले  
हि मेघाः समुद्रोपरि लंबमाना जलपानायागता इति तर्कयित्वेयमुपमा  
नन्दयति सन्तोषयति सुहृद् स नन्दनस्तस्मात् (पक्षे) तन्नामका  
त्स्वर्गोद्यानात् । नन्दनेत्यत्र 'नन्दि ग्रहिपचादिभ्यः' इत्यनेनल्युः ।

२ तेषु चैवमुत्तरयवानेषु क्रमेणोद्गादि हृणहरिणकेसरी  
सिन्धुगजज्वरो गुर्जरप्रजागरो गान्धाराधिपगन्धद्वि-  
पकूटपाकलो लाटपाटपाटचरो मालवश्चरोल्लनारश्चुः-  
प्रतापशील इति प्रथितामरनाना प्रभाकरवर्धनो नाम  
राजाधिराजः । यो राज्यद्वसङ्गीन्यभिपिच्यमान एव

इच्छायफलं ददात ते कल्पतरु इव । मुष्प्रजानां गिनिस्ताचद्रीत्य'  
इत्यनेन गिनि । श्रीधरा राजलक्ष्म्या आभारात् पक्षे विष्णोः । सर्वेषां  
भूतानां प्राणिनामाश्रया अथवा सर्वेषां भूतानां पञ्चमहाभूतानामा-  
श्रया विश्वरूपप्रकारा इव । गीतायां हि विश्वरूपदर्शनवेलायामर्जुनेन  
सर्वभूतानि तत्र दृष्टानि तदनुगोधन,

तेऽर्चन्ति । हृणा रजवशेषा एव हरिणा मृगास्तेषां केसरी  
तद्धातको मृगाराजः सिन्धुगजस्य ज्वरः संतापकः गुर्गराणां तद्वंश  
मृगाणां प्रजागरो निद्रानाशः । गान्धाराणामधुना 'कंदाहार' इति  
प्रसिद्धानां देवानामधिप एव गन्धद्विपो मत्तगजस्तस्य कूटपाकलः,  
क्षिदोषजो ज्वरः । पित्तज्वरः पाकलोऽस्य कूटपूर्वक्षिदोषज'  
इति त्रिकाण्डशेषः । यद्यपि कूटपाकलशब्दो हस्तिज्वर-  
वाची तथापि गन्धद्विपपदसंनिधानाज्ज्वरमात्रवाच्येव । 'विशिष्टवा-  
चकानां सति पृथग् विशेषणत्वं विशिष्यमात्रपरत्वम्' इति न्यायात् ।  
लाटानां पाटवस्य कौशलस्य पाटच्चरश्चरोरः । पाटवशब्दः पटुशब्दाद्  
गन्ताच्च लघुपूर्वाद् 'इत्यनेन भावेऽपि निष्पन्नः । पाटच्चर  
इति पाटयन् नाशयश्चोरयतीति पाटच्चर इति वृष्णोदगदित्वात्साधुः  
मालवस्य मालवाधिपस्य लक्ष्मीरेव लता तस्याः परशुः कुठारः ।

यितं प्रसिद्धमपरमन्यन्नाम यस्य सः । राज्यगंगस्य राज्यशरीरस्य  
संगः संबन्धो विद्यते येषां तानि धनानि मलानीव मुमोव । स्नानेन

मलानीव मुमोच धनानि । यः परवीर्यशोषि कतरव-  
ल्लभेन रणमुखे तृणनेव धृतेनालज्जत जीवितेन । यः कर-  
धृतधानासिप्रतिबिम्बितेनात्मनाप्यद्वयत समितिषु सहायेन,  
रिपूणां पुरः प्रधनेषु धनुषापि नमता । यो मानी मानसेना-  
खिद्यत । यश्चान्तर्गतापरिमितरिपुशल्याशङ्कुकीलितामिव  
निश्चलामुवाह राजलक्ष्मीम् । यश्च सर्वामु दिक्षु समीकृतत-  
मलनाशो भवति तद्वदनेनापि राज्याभिषेक वेलायां मलभूतानि  
धनान्युत्सृष्टानि । अनेन दानवेलायांधनेऽनासक्तिः सूच्यते । परकी-  
येण शत्रुसंबन्धिना रणमुखे समराग्रभागे धृतेन कातरव्य भीरोवल्ल-  
भेन तृणनेव जीवितेनालज्जत । रणे भीरु शम्यं गच्छंस्तृणं मुखे  
धत्ते । अस्य तु तृणम्बीकरेण सहैव तादृशं जीवितं लज्जाकरमा-  
भात् । करं हस्ते धृते धौते शुभ्रोऽसौ रुद्धं प्रतिबिम्बितेनात्मना स्व-  
प्रतिबिम्बेनापि प्रधनेषु युद्धेषु सहायेन । समितिषु स्वप्रतिबिम्बमाप  
सहायं नैच्छदित्यर्थः । मानी सगर्वो मानसेऽन्तःकरणे नाखिद्यत  
खिन्नो न बभूव । अथवा मानी यो मानसेन उच्चपदाकांक्षारूप-  
मनोविकारेणाखिद्यत । यथा राज्ञः कर्तव्याभावं पश्यन्नखिद्यत  
तद्वदिति वा । तथा च प्रसन्नराघवे 'लंकेश्वरः खिद्यते' इति । अथ  
वा "समितिषु सहायेन" इत्यतः "अखिद्यत" इत्यन्तमेकं वाक्यम् ।  
यो मानी सगर्वो रिपूणां पुरो नमता सहायेन धनुषापि करणेन  
मानसेन 'अधिकरणे' तृतीया मनस्यखिद्यत । अन्तर्गताभ्यपरिमितानि  
असंख्येकानि रिपुशल्यानि शस्त्रबाणा एव कीलिकास्तैः कीलितामिव  
रुद्धामिव राज्यलक्ष्मीम् । शत्रुबाणा अस्योपकारका आसन् येन  
चांचल्यचंचू राज्यलक्ष्मीस्तस्मिन् दृढस्थितासीदिति भावः । 'संख्या-  
कीलकयोः शंकुः इति शाश्वतः कादंबरीं तु राज्यलक्ष्म्याः शूद्रके

दावटविटपाटवीतरुतृणगुल्मवीरुगिरिगहनैर्दण्डयात्रापथैः पृथु-  
 मिर्भृत्योपयोगाय व्यमजनेन वसुधां बहुधा । यं चालब्धयुद्ध  
 दोहदमात्मीयोऽपि सकलरिपुसमुत्सारकः परकीयइवतापप्रतापः  
 प्रतापः । यस्य च वह्निमयो दृढयेषु, जलमयो लोचनपुटेषु, मा-  
 रुतमयो निःश्वसितेषु, क्षमामयोऽङ्गेषु, आकाशमयः शून्यतायां,  
 पञ्चमहाभूतमयो मूर्ते इवावश्यतः निहतप्रतिसामन्तान्तः पुरेषु  
 चिरस्थितिरेनेत्यं वर्णिता । ' अतिचिरकालप्रमनेककु-  
 न्तपतिमहस्रप्रपङ्ककलङ्कमिव क्षालयन्ती यस्य कृपाणा धाराजने  
 चिरमुवाम राज्यलक्ष्मीः' पुनश्च राजानं विशिनष्टि । यश्चेति ।  
 समीकृतानि, समस्थलीकृतानि, तटानि, तीराणि, आवटा  
 गता विटपाः शाखा अटवीतरवो वनवृक्षा तृणां गुल्मानि लुद्रवृक्षा  
 बल्मीकानि मृत्कूटा गिरयः पर्वता गहनानि वनानि च येषु तैः ।  
 गमनविघ्नकारिणां विध्वंसनेन कृता मार्गा इति तात्पर्यम् । विभक्त-  
 नाय सर्वेषां पदार्थानां समीकरणावश्यकम् । यं वेति । अलब्धोऽ-  
 प्राप्तो युद्धस्य रणस्य दोहदोऽभिलाषो येन सः । 'दोहदो  
 गर्भलक्षणे । अभिलाषे तथा गर्भे, इति हैमः । सकालानां रिपूणां  
 समुत्सारको नाशकः । 'शेषे' षष्ठी । अन्यथा तृजकाभ्यां कर्तरीति  
 समासनिषेधः स्यात् । याजकादिगणे च समुत्सारकशब्दाभावान् ।  
 यस्य चेति-दृढयेषु वह्निमयो वह्निरूपः संताप इत्वात्, लोचन-  
 पुटेषु, नेत्रयुगेषु, जलमयो रोदनाश्रुवर्तकत्वात्, निःश्वसितेषु, दुः-  
 खत्रेषु दीर्घेषु श्वासेषु मारुतमयः, अङ्गेषु अवयवेषु क्षमामयः पृथ्व्या  
 उभरीतस्ततो लुण्ठनेन धूलिव्याप्तत्वात्प्रस्तरकठिन कायत्वाद्वा,  
 शून्य तायामाकाशमयः अन्यकार्याभावाच्छून्यत्वम्, पञ्चमहाभूतमयः  
 पृथग्यप्येवमवाकाशमयः । मूर्तिमानिव । प्रतिसामन्तानां



प्रतापः । यस्य चासन्नेषु भृत्यरत्नेषु प्रतिबिम्बितेव तुल्यरूपा समलक्ष्यत लक्ष्मीः । तथा च यस्य प्रतापाग्निना भूतिः शौर्योष्मणा सिद्धिरसिधाराजलेन वंशवृद्धिः शस्त्रव्रणमुग्धः पुरुषकारोक्तिर्धनुर्गुणक्रियेण करगृहीतिरभवत् । यश्च वैरमुपायनं विग्रहमनुग्रहं समरागमं महोत्सवं शत्रु निधिदर्शनमरिवाहुल्यमभ्युदयमाहवाहानं वरप्रदानमवस्कन्दपानं दिष्टवृद्धिशस्त्रप्रहार-

शत्रुपक्षीयाणां नृपाणामन्तः पुंस्त्वरोधेषु । यस्य चेति-आसन्नेषु समीपस्थेषु भृत्यरत्नेषु सेवकश्रेष्ठेषु प्रतिबिम्बितेव संजातप्रतिबिम्बेव तुल्यानि सट्टशानि रूपाणि यस्याः सा लक्ष्मीः समलक्ष्यत । अत्रासन्नपदेन विम्बग्रहणयोग्यत्वं रत्नपदेन योग्यानामेव स्तकारश्च व्यज्येते । तथेति । प्रतापः पराक्रम एवाग्निस्तेन भूतिः कल्याणं भस्म वा । शौर्योष्मणासि योर्ग निष्पत्तिः । उष्मणा च पाकसिद्धिः- 'सिद्धिः स्त्री योगनिष्पत्तिः' इति मेदिनी । असिधाराजलेन खड्गधारोदकेन वंशस्य कुलस्यः वृद्धिरभ्युदयः । जलेन च वंशानां वराणाम् वृद्धिः । खड्गाद्येण हि स्वान्वयस्य संपदनेन संपादितेति भवः । 'वृद्धिर्गुणवर्जने । कालान्तरे चाभ्युदयेस्त्रियामुत्तमयोषिति' इति मेदिनी । शस्त्रव्रणानां, शस्त्रक्षतानां मुखैरग्रभागैः पुरुषकारस्य पराक्रमस्योक्तिर्भाषितम् । पराक्रमकथनेनान्यापेक्षा व्रणा एव तत्कथका इत्यर्थः । भाषितमपि मुखैर्भवति । धनुर्गुणस्य धनुष्यज्यायाः क्रियेण प्रथितेन व्रणजचिन्हेन करगृहीतिर्हस्तस्वीकारः । अनेन हि तस्य धनुर्विद्यातत्परत्वं ज्ञेयम् । तदासक्तस्य हि हस्तेक्रियो भवति (पक्षे) करगृहीतिर्दण्डग्रहणम् । यश्चेति । वैरं विरोधम् । 'वीर' शब्दाद्युवादित्वादण कर्मार्थः । उपायनमुपहारम् । विग्रहं समरम् । समस्य युद्धरागमं प्राप्तिम् निधिदर्शनं द्रव्यसंग्रहदर्शनम् । अरीणां

पतनं वसुधारारसममन्यत । यस्मिंश्च राजनि निरन्तरैर्यूपनि-  
 करैरङ्कुरितमिव कृतयुगेन, दिङ्मुखविसर्पिभिरध्वरधूमैः  
 पलायितमिव कलिना ससुधैः सुरालयैरवतीर्णमिव स्वर्गेण  
 सुरालयशिखरोद्भूयमानैर्धवलध्वजैः पल्लवितमिव धर्मेण,  
 वह्निरुपरिचतविकटसभासत्रप्रपाप्राग्वंशमण्डपैः प्रसूनमिव  
 शत्रूणां बाहुल्यमाधिक्यमभ्युदयमुत्प्रेम् । आहवाय समरायाब्धा-  
 नंवरप्रदानम् । अबस्कन्दपातमज्ञाताभिगमनं दिष्टस्य भाग्यस्य वृद्धिम् ।  
 शस्त्रप्रहारस्य पतनं वसुधारायाः सुवर्णप्रवाहस्य रसममन्यत ।  
 यस्मिन्निति । निरन्तरैर्यूपनिकरैर्यज्ञस्तभैः करणैः कृतयुगेन  
 सत्ययुगेनाङ्कुरतमिव । यूपा भूमेर्निर्गताः कदल्यङ्कुरा इव सत्ययु-  
 गाङ्कुरा इति कल्पनययमुक्तिः । अतो यूपस्य पल्लवरूपत्वाभावादसं-  
 गतमिदमिति कल्पना परास्ता । यथा कदल्यङ्कुरा भूमिमुद्भिद्य  
 बहिरागच्छन्ति तद्वदिमे कृतयुगाङ्कुरा इति भावः । दिशां हरितां  
 मुखेषु विसर्पन्ति प्रसरन्ति तच्छीलैरधूमैः करणैः कलिना ।  
 कलियुगेन पलायितमिव । यथा पिशाचादयो मन्त्रपूतधूमसंपर्कभोत्या  
 पलायन्ते तद्वदयमपि यज्ञधूमभोत्या पलायितः । अथवा कृष्णवर्णा  
 दिग्विसर्पिणो धूमा एव पलायमानानि कलिस्वरूपाणीति कल्पना  
 सुधायाऽमृतेन शुभ्रवर्णचूर्णेन 'चुना' इति प्रसिद्धेन वा सहितैः  
 सुरालयेर्देवगृहैः स्वर्गेण स्वर्लोकेनावतीर्णमिवाथ आगतमिव । स्वर्ग  
 ससुधानि सामृतानि देवगृहाण्यत्रापि शुभ्रचूर्णापरपर्यायसुवाल्लिप्ता-  
 न्यतः स्वर्गो महिमागतन्वितिकल्पना । सुरालयानां देवगृहाणां  
 शिखरेषूर्ध्वभागेषूद्भूयमानैः कम्पमानैर्धवलैः शुभ्रैर्ध्वजैः पताकाभिधर्मेण  
 पल्लवितमिव । पल्लवितेत्ययं शब्दोऽङ्कुरितवज्ज्ञातव्यः । वह्निर्वहिर्भाग  
 उपरचिताः कृता विकटाविशाला सभाधर्मशाला सत्रंसदानंसदैवान्नदानं

ग्रामैः, काञ्चनमयसर्वोपकरणैर्विभवैर्विशीर्णमिव मेरुणा, द्विज-  
दीयमानैरर्थकलशैःफलितमिव भाग्यसंपदा

तस्य च जन्मान्तरेऽपि सती पार्वतीव शंकरस्य गृहीतपरहृ-  
दया लक्ष्मीरिव लोकगुरोः स्फुरत्तरलतारका रोहिणीव कलावतः  
सर्वजनजननी बुद्धिरिव प्रजापतेः महाभूभृत्कुलोद्भवा गङ्गेव बाहि-  
नीनायकस्य, मानसानुवर्तनचतुरा हंसीव राजहंसस्य सकललोक

प्रपा पानीयशाला प्राग्द्वंशमंडपो हविःशालायाः पूर्वभागे यजमाना-  
दीनां निवासार्थं निर्मितो मण्डपस्तैः करणैर्ग्रामैः प्रसृतमिव ।  
एतेषां बाहुल्याद्विभीगेऽन्ये ग्रामा उत्पन्नान्विति कल्पना ।  
काञ्चनमयानि सुवर्णमयानि सर्वोपकरणानि येषां तैर्विभवैः संपद्भिः  
करणैर्मरुणा विशीर्णमिव विशीर्णमिव । द्विजेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो  
दीयमानैरर्थकलशैर्धनपूर्णं घटैः फलितमिव । घटाकाराणि नारिके-  
लसदृशानि फलानि भाग्यसंपदः संजातानां तात्पर्यार्थः ।

तस्येति । जन्मान्तरेऽप्यन्यस्मिञ्जन्मन्यपि सतीव पार्वतीव ।  
दक्षस्य प्रजापतेर्दुहिता सती पितृभवने यज्ञावलोकनायागता । तत्राव-  
मानिताऽऽत्मानमग्निसाच्चकारपार्वतीरूपेणोदियायशंकरं वने (पक्षे) सती  
पतिव्रता । गृहीतमाकर्षितं परहृदयमन्यमानसं वत्सलतया यया सा ।  
लक्ष्मीपक्षे गृहीतपरहृदयेति सुलभम् । लोकगुरोर्लोकाधिपस्य विष्णो-  
श्च स्फुरन्त्यौ तरले तारके कनीनिके यस्याः । (पक्षे) स्फुन्ती तर-  
ला चंचला तारका नक्षत्रं यस्याः सा रोहिणीव । कलावतः कल, नि-  
पुण्यस्य (पक्षे) चन्द्रस्य । सर्वलोकजननी सर्वां जां प्रजानां वात्सल्या-  
न्माता । (पक्षे) जन्यतेऽनया जननी उत्पादनसाधनं करणे ल्युट्  
सर्वलोकानां जनन्युत्पादिका । बाहिनीनायकस्य सेनाध्यक्षस्य  
समुद्रस्य च । महाभूभृद् महानृपो हिमालयश्च तस्य कुल उद्गतोत्प-

चित्रचरणा त्रयीव धर्मस्य, दिवानिशममुक्तापार्श्वस्थितिरुन्धनीव महामुनेः, हंसमयीव गतिषु, परपुष्टमयीवालापेषु चक्रवाकीमयीव पतिप्रेम्णि, प्रावृणमयीव पयोधरोन्नतौ, मदिरामयीव विलासेषु निधिमयीवार्थसंचयेषु, वसुधारामयीव प्रसादेषु, कमलमयीव कोषसंग्रहेषु, कुसुममयीव फलदानेषु, संध्यामयीव वन्द्यत्वे, चन्द्रमयीव निरुपमत्वे, दर्पणमयीव प्रतिप्राणिन्ता । मानसमन्तः करणं तदारुथं सरश्च तस्यानुवर्तने अनुकूलचरणे तत्र स्थितौ च चतुरा कुशला राजहंसस्य नृपश्रेष्ठस्य पक्षिणश्च त्रयीव वेदत्रयीव । 'श्रुतिः स्त्री वेद आम्नायस्त्रयी' इत्यमरः । सकलैर्लोकैरचितौ पूजितौ चरणौ पदौ (पक्षे) चरणाः शाखा यस्याः सा । दिवानिशं रात्रिदिवममुक्ता पार्श्व समीपे स्थितिर्येषा सा । महामुनेर्मननान्मुनिर्विचारवांस्तस्याथवा राजर्षेः (पक्षे) बशिष्ठस्य । आकाशे हि वाशिष्ठमपरित्यजन्त्यरुन्धती तिष्ठति तदनुरोधत इदम् । हंसमयीव हंसीव । आलापेषु भाषाणेषु । प्रावृणमयीव वर्षाकालमिव पयोधरयोः स्तनयोः पयोधराणां मेघानां चोन्नतौ । मदिरामयीव मद्यमिव विलासेषु शृंगारजेषु विकारेषु । 'यानस्थानासनादीनां मुखनेत्रादिकर्मणाम् । विशेषस्तु विलासः स्यादिष्टसंदर्शनादिना' इति विश्वनाथः । मदिरा चाकस्मात्क्रोधादीन् विकाराञ्जनयतीति प्रसिद्धमेव, अर्थानां धनानां संचयेषु संग्रहेषु । वसुधारामयीव सुवर्णाधारेव प्रसादेष्वनुग्रहेषु । कोषाणामर्थसंचयानां कुडमलानां वा । स्त्रीणां पुष्पकलिकासु स्वाभाविकी प्रीतिस्ते युज्यत इदं वर्णनम् । कुसुममयीव पुष्पाणीव फलानां दानेषु । कुसुमेभ्यो यथा फलानि जायन्ते तद्वत्स्याः सकाशहृत्यानां सेवाफललाभः । वन्द्यत्वे नमस्कार्यत्वे । निरुपमत्वे उष्मा गर्व औष्ण्यं च । दर्पणमयीव

ग्रहणेषु, सामुद्रमयीव परचित्तज्ञानेषु, परमात्ममयीव व्याप्तिषु, स्मृतिमयीव पुण्यवृत्तिषु, मधुमयीव सम्भावणेषु अमृतमयीव नृप्यत्सु, वृष्टिमयीव भृत्येषु, निवृत्तिमयीव सखीषु वेतसमयीव गुरुषु, गोत्रवृद्धिरिव विलासनाम, प्रायश्चित्तशुद्धिरिव स्त्रीत्वस्य, आज्ञासिद्धिरिव मकरध्वजस्य, व्युत्थानवृद्धिरिव रूपस्य दिष्टवृद्धिरिव रतेः, मनोरथसिद्धिरिव रामर्णायकस्य, देवसंपत्तिरिव लावण्यस्य, वंशोत्पत्तिरिवानुरागस्य, वरप्राप्तिरिव मुकुर इव प्राणिनि प्राणिनीति प्रणिप्राणि प्रतिप्राणिग्रहणं स्वीकारः प्रतिदिम्बोत्पादनं च । सामुद्रमयीव सामुद्रशास्त्रमिव परेषां चित्तस्य मनसो ज्ञानेषु । सामुद्रविद्यातोऽन्यदीयस्वभावज्ञानं जाय । इति प्रथितम् । 'वेत्ता स्त्रीपुंसयोश्चिह्नं सामुद्रिक उदाहृतः' इति हारावली । परमात्ममयीव ब्रह्मव व्याप्तिषु ब्रह्मसर्वव्यापीति वेदान्तराज्ञानः । अस्या अपि कार्यार्थं सर्वत्र गमनेन सर्वत्र व्याप्तिः तृप्यत्सु तृष्णापीडितेषु अमृतमयीव मधेव । जलादिदानेन तेषां तृष्णाशमकत्वात् । वृष्टिमयीव वृष्टिरिव सेवेषु सदैव धनवपेणात् । निवृत्तिमयीव चित्तव्याम्वमिव सखीषु वयस्यासु तन्मानसमोदजनकत्वात् । वेतसमयीव नम्रत्वाद् गुरुषु श्रवणादिवृद्धेषु । विलासनां गोत्रस्य कुलस्य वृद्धिरिव । प्रायश्चित्तशुद्धिरिव पवित्रीकरणमिव स्त्रीत्वस्य स्त्रीजातेः । अनया निखिला स्त्रीजातिः पवित्रिता । आज्ञासिद्धिरिव । अमोघमस्त्रं तु मदनस्येति तत्पर्यार्थः । व्युत्थानवृद्धिरिवेति । व्येगुत्थानं समाधेश्रलनम् । स्वाधिक्यसंपादनाय समाधिश्रितस्य रूपस्य समाधेरवनरणवेजायां जायमानं ज्ञानमित्यर्थः । रतेर्मदनभार्यायाः, दिष्टस्य भागधेयस्य वृद्धिरिव । मृतो मदनः कदाचिदनया साधनभूतयोज्जीवेतेति रतेर्भाग्यवृद्धिः । रामणी-

कान्तेः, सगेसमामिरिव सौन्दर्यस्य, आयतिरिव यौवनस्य, अनभ्रवृष्टिरिव वैदग्ध्यस्य, अयशःप्रमृष्टिरिव लक्ष्म्याः, यशःपुष्टिरिव चारित्र्यस्य, दृढयनुष्टिरिव धर्मस्य, सौभाग्यपरमाणु-सृष्टिरिव प्रजापतेः, शमस्यापि शान्तिरिव, विनयस्यापि विनीतिरिव, अभिजात्यस्याप्यभिजातिरिव, संयमस्यापि संयतिरिव, धैर्यस्यापि धृतिरिव, विभ्रमस्यापि विभ्रान्तिरिव यशोधती नाम महादेवी प्राणानां प्रणयस्य विस्त्रम्भस्य धर्मस्य सुखस्य च भूमिरभूत् । यस्य वक्षसि नरकजितो लक्ष्मीरिव ललास ।

यस्य रमणीयशब्दाद् 'योपधाद्वरूपोत्तमाद्बुञ्' इत्यनेन भावे बुञ् । अनुगामस्य प्रेम्णो बंशोत्पत्तिरन्वयसंभूतिः । सर्गसमाप्तिः, उत्पत्तेः-समाप्तिः पराकाष्ठेत्यर्थः आयतिरुत्तरकाल इव यौवनस्य तादृश्यस्य । युवादित्वादण् भावः । अनभ्रवृष्टिः अभ्रेष सहिता वृष्टिरभ्रवृष्टिर्न तथाऽनभ्रवृष्टिः सा चाश्रयजनिका पुण्यवल्लभ्या च । वैदग्ध्येनेयं पुण्यतो लब्धाश्चर्यकारिणी । वैदग्ध्यं तस्यामतीवेति तात्पर्यम् । लक्ष्म्या अयशसः 'यः सुन्दरस्तद्वनिता अपकीर्तेः प्रमृष्टिः शाधिका नाशिका । अनुरूपभर्तृगामिन्यपि लक्ष्मीयुतेत्यर्थः । चारित्र्यं पातिव्रत्यम् । सौभाग्यस्य परमाणूनां सूक्ष्मावयवानां सृष्टिरुत्पत्तिः ( प्रथमतो ब्रह्मणा सौभाग्यमुत्पिपत्सुनेयमेव निर्मितेति भावः ) अभिजात्यं कुलोत्तमम् । विभ्रमस्य दयितागमने बाहुमूलादीनां व्यक्तीकरणरूपभावस्य विभ्रान्तिस्त्वेता विभ्रम्भस्य विश्वासस्य । नरकान् कुंभीनतादीन् जयति सः । 'किप्' च' इत्यनेन किप् । (पत्ते) नरकासुरं जितवतो नारायणस्य । ललास शुशुभे आलिलिंग वा ।

निसर्गत एव च स नृपतिरादित्यभक्तो बभूव । प्रतिदिनमु-  
दये दिनकृतः स्नानः सितदुकूलधारी धवलकर्पटप्रावृतशिरोः-  
प्राङ्मुखः क्षितौ जानुभ्यां स्थित्वा कुङ्कुमपङ्कगुलिते मण्डलके  
पवित्रपद्मरागपात्रीनिहितेन स्वहृदयेनेव सूर्यानु-  
रक्तेन रक्तकमलषण्डेनार्चा ददौ । अजपञ्च जप्यं सुचरितः प्रत्युपसि  
मध्यदिने दिनान्ते चापत्यहेतोःप्राध्वं प्रयतेन मनसा जञ्जपूको  
मंत्रमादित्यहृदयम् ।

भक्तजनानुरोधविधेयानि तु भवन्ति देवतानां मनांसि ।  
यतः । स राजा कदाचिद्ग्रीष्मसमये यदृच्छया सितकरकरसि-  
तसुधाधवलस्य हर्म्यस्य पृष्ठे सुष्वाप । पार्श्वे चाभ्य द्विती-

निसर्ग इति । निसर्गत एव । दिनकृतः सूर्यस्योदये सिते  
शुभ्रे दुकूले क्षौमजे वसने धरति सः । धवलेन शुभ्रेण कर्पटन  
शिरोवेष्टनवस्त्रेण प्रावृतं शिरो येन सः । रागाणां माणिक्यानां  
पात्र्यां भाजने निहितेन स्थापितेन स्वमानसेनेव यथा मनः सूर्यानु-  
रक्तं तद्वदनुरक्तेन रक्तकमलसमूहेनार्चा पूजां ददौ । प्रत्युपसि  
प्रभाते मध्यदिने मध्याह्ने दिनान्ते सायंकाले । एतेन तदा त्रिः संध्या  
वन्दनपद्धतिरासीदिति ज्ञायते । प्राध्वं सनम्रं प्रयतेन पवित्रेण मनसा  
आदित्यहृदयमिति मंत्रनाम ।

भक्तेति । अर्थान्तरन्यासः ग्रीष्मसमय इत्यनेन बहिः स्वाप-  
कारणमूष्मातिशयरूपं व्यंजितम् यदृच्छया । 'यदृच्छा स्वैरिता'  
इत्यमरः । सितकरस्य चंद्रस्य करैः किरणैः सुधया चूर्णविशेषेण  
च धवलः शुभ्रः । स्वयं शुभ्रोपि चंद्रकिरणैर्विशेषतो धवल इत्यर्थः ।  
पार्श्वे च समीपे द्वितीयशय्यायां पृथक् शय्या हि नारीणां स्वापे  
योग्या । नाशनीयाद्भार्यया सार्धं न च स्वप्यात्तया सह' इतिवच-

यशयने देवी यशोवती शिश्ये । परिणतप्रायां तु श्यामाया-  
म, आसन्नप्रभातवेलाविलुप्यमानलावण्ये लिलम्बिषमाणे सी-  
दत्तेजसि तारकेश्वरे, कराग्रस्पृष्टकुमुदिनीप्रमोदजन्मनि शश-  
धरस्वेद इव गलत्यतिशीतलेऽवश्यायपयसि, मधुमदमत्तप्रसु-  
प्तसीमन्तिनीनिःश्वासाहतेषु संक्रान्तमदेष्विव धूर्णमाने-  
ष्वन्तः पुरप्रदीपेषु, राजनि च विमलनखप्रतिबिम्बिताभिः  
संवाह्य मानचरण इव तारकाभिः, विस्रब्धप्रसारितैर्दिग्ग-  
नान् । श्यामायां रात्रौ । 'श्यामा स्याच्छारिवा निशा' इत्यमरः ।  
आसन्नया समीपागतया प्रभातवेलया विलुप्यमानं नाशितं लाव-  
ण्यं कान्तिर्यस्य तस्मिन् लिलम्बिषमाणे दूरं जिगमिषौ सीदन्न-  
स्यत्तेजो यस्य तस्मिन्तारकेश्वरे चन्द्रे सति । रात्र्यास्तुरीयश्यामा-  
वसान इति तात्पर्यार्थः । कराग्रैः किरणपैः स्पृष्टायाः कुमिदिन्याः  
प्रमोदस्यानन्दस्य जन्मयस्मादिति चन्द्र विशेषणं, अथवा कराग्रस्पृष्टायाः  
कुमुदिन्याः प्रमोदाजन्म यस्य तस्मिन्नेवायपयसीत्यर्थः । परं चन्द्रे  
गन्तुकामे कुमुदिन्याः प्रमोदवर्णनमसंगतमतः पूर्वोक्तार्थ एव पुन  
रुक्तः । शशधरस्य चप्रमसः स्वेद इव अवश्यायपयसि नीहारोदके  
गलति सति । शिशिरस्वेद इति पाठः नमनोरमः । गीष्मतौ स्वेदोत्पत्यो-  
ष्माधिक्यस्यैवानुभवसिद्धत्वात् । मधुनो मद्यस्य मदेन मत्तानां प्रसु-  
प्तानां निद्रितानां सीमन्तिनीनां प्रमदानां निश्वासाहतेषु ताडितेष्वत  
एव संक्रान्तः समागतो मदो येषां तेषु । मद्यमत्तकामिनीश्वास-  
संपर्कान्मदोपि दीपेष्वागत इति भावः । धूर्णमानेषु भ्रममागतेषु ।  
प्रदीपा अपि मद्यमत्तचिन्हानि प्रकटयामासुरिति तात्पर्यार्थः ।  
विमलेषु स्वच्छेषु नखेषु प्रतिबिम्बिताभिस्तारकाभिर्नखैः संवाह्य-  
मानौ चरणौ यस्य तस्मिन् । विस्रब्धं निर्भयं प्रसारितैर्विस्तारितैः,



नानामिवापितैरङ्गमधुसुगन्धिभिः स्वहस्तकमलतालवृन्तवा-  
तैरिव श्वसितैर्मुखश्रिया वीज्यमाने, विमलकपोलस्थलस्थितेन  
सितकुसुमशेखरेणेव रतिकेलिकचग्रहलम्बितेन प्रतिमाशशि-  
विम्बेन विराजिते स्वपति, देवी यशोवती सहस्रैव 'आर्यपुत्र,  
परित्रायस्व परित्रायस्व' इति भावभाषा भूषणरेणेन व्याहर-  
न्तीव परिजनमुत्कम्पमानाङ्गयष्टिरुदतिष्ठत् ।

अथ नेन सर्वस्यामपि पृथिव्यामश्रुतपूर्वण किमुत देवीमुखं परि-  
दिग्गतामिव दिग्भायाभ्य इवापितैर्दैतैरगैरवयवैरुपलक्षिते । इत्थं  
भूतलक्षणे" तृतीया । मुखश्रिया मुखकान्था कृतभूतया मधुना  
मयेन सुरभिभिः, सुगन्धिभिः, श्वसितैः, आसैः, स्वस्यात्मना  
हस्तकमलं हस्तस्थितमरविन्दमेव व्यजनं तस्य वातैरिव वीज्यमाना  
विमले स्वच्छे कपोलस्थले गण्डस्थले स्थितेन प्रतिमाशशिनः  
प्रतिविम्बशशितो विम्बेन । विमलपदं विम्बप्रदङ्गात्तामर्थ्यं द्योतयति  
कथंभूतेन रतिकेलिः सुरतक्रोडा तस्यां कचग्रहणे लम्बितो गण्ड-  
म्योपर्यागतस्तेन कुसुमशेखरेणेव पुष्पगुच्छेनेव विराजन्ती शोभ-  
माना । विराजित इति-राज्ञो विशेषणं वा । सहस्रैवातर्कितमेव ।  
परित्रायस्व रक्ष । भूषणरेणालंकारशब्देन सञ्जमचलनादलंकार-  
शब्दः व्याहरन्तीवावहयन्तीव । उत्कम्पमाना वेपमाना अङ्गयष्टिः  
शरीरययप्रिययाः सा ।

अथ नेनेति । पूर्वं श्रुतः श्रुतपूर्वो न तथा श्रुतपूर्वस्तेन ।  
'सुप्सुपा' इत्यनेन समासः । दग्ध इव ज्वलित इव । एकपदे भटिति  
गाढानिद्रः केनचिदङ्गारादिना दह्येत चेत्तूर्णमुत्तिष्ठति । कोपेन क्रोधेन  
कम्पमानेन वेपमानेन दक्षिणकरेणापसव्यहस्तेनाकृष्टेन कर्णोत्त-  
लेनेव कर्णोपरिस्थापितेन कमलेनेव । एतेन तस्य खड्गनिष्कोषणे

त्रायस्वेति ध्वनिना दग्ध इव श्रवणयोरेकपद एव निद्रां तत्याज  
राजा । शिरोभागाच्च कोपकम्पमानदक्षिणकराकृष्टेन कर्णोत्प-  
लेनेव निर्गच्छनाच्छुधारेण धौतासिना सीमन्तयन्त्रिय निशाम्,  
अन्तरालव्यवधायकमाकाशमिवोत्तरीयांशुकं विक्षिपन्वामकर-  
पल्लवेन करविक्षेपवेगगलितेन हृदयेनेव भयनिमित्तान्वेषिणा  
भ्रमता दिशु कनकबलयेन विराजमानः, सत्वरवतारितवाम-  
चरणाक्रान्तिकम्पितप्रासादः, पुरःपतितेनासिधारागोचरगतेन  
शशिमयूखखण्डेनेव खण्डितेन हारेण राजमानः, लक्ष्मीचुम्बन-  
लग्नताम्बूलरसरञ्जिताभ्यामिव निद्रया कोपेन चातिलोहिताभ्यां

निरायासत्वं दर्शितम् । अच्छा स्वच्छा धारा निशिताग्रभागो  
यस्य तेन । 'धारा० । खड्गादेर्निशिते मुखे' इति मेदिनी । सीम-  
न्तयन् द्विधा कुर्वन् । खड्गचालनेन तत्तेजसा तमो द्विधाभूतमिवा-  
भात्, अन्तरालेऽभ्यन्तरे व्यवधायकमपवारकमाकाशमिव । एतेन  
वस्त्रस्य सौन्दर्यं द्योतितम् । वामेति । दक्षिणहस्ते खड्गस्य सत्वा-  
द्वामेन वस्त्रक्षेपणम् । करस्य विक्षेपस्य प्रेरणाया वेगाद् गलितेन  
पतितेन हृदयेनेव भयस्य, भीतेर्निमित्तानि, कारयान्यन्विष्यति  
मार्गयति तेन दिक्षु, आशासु, भ्रमता, कनकबलयेन सुवर्णकंकणेन  
विराजमानः शोभमानः । वर्तुलो भूमी पदार्थः पतित इतस्ततो  
भ्रमतीति हि प्रत्यक्षम् । सत्वरं तूष्णमवतारितयाधोनिवेशितस्य  
वामचरणस्य सव्यपादस्याक्रान्त्या कम्पितः, प्रासादो, राजगृहं, येन  
सः । असिधारायाः खड्गाग्रभागस्य गोचरं वशं गतेन खण्डितेन  
वृटितेन हारेण मुक्ताहारेण शशिमयूखमण्डलेन चन्द्रकिरणसमूहेनेव  
राजमानः । लक्ष्म्याश्चुम्बनं तथा, कृतं चुम्बनं तेन लग्नः, संलग्नस्ता-  
म्बूलरसस्तेन रञ्जिताभ्यामिव रक्ताभ्यामिव । चुम्बनस्थानेषु नेत्रस्य

लोचनाभ्यां पाटलयन्पर्यन्तानाशानाम्, बद्धान्धकारया त्रिपता-  
कया भ्रुकुट्या पुनरिव त्रियामां परिवर्तयन्, 'देवि, न भेतव्यं न  
भेतव्यम्' इत्यभिदधानो वेगेनोत्पपात । सर्वासु च दिक्षु विश्व-  
मचभुर्यदा नाद्राक्षीत्किञ्चिदपि तदा पप्रच्छ तां भयकारणम् ।

अथ गृहेदेवतास्विव प्रधावितासु यामिकिनीषु प्रबुद्धे च  
समीपशायिनि परिजने, शान्ते च हृदयोत्कम्पकारिणि साध्वसे  
सा समभाषत—'आर्यपुत्र, जानामि स्वप्ने भगवतः सवितुर्मण्ड-  
लाग्निर्गत्य द्वौ कुमारौ, तेजोमयौ, बालातपेनेव पूरयन्तौ  
दिग्भागान्, वैद्युतमिव जीवलोकं कुर्वाणौ, मुकुटिनौ, कुण्डलिनौ  
अङ्गदिनौ, कवचिनौ, गृहीतशस्त्रौ, इन्द्रगोपकरुचा रुधिरेण  
स्नातौ, उन्मुखेनोत्तमाङ्गघटमानाञ्जलिना जगता निखिलेन  
प्रणम्यमानौ, कन्ययैकया च चन्द्रमूर्त्यैव सुपुष्परश्मिनिर्गत-

ग्रहणं प्रसिद्धमेव । तिस्रः पताकाः ध्वजाः यस्यास्तथा । भ्रुकुटेस्त्रिधा  
परिवर्तनेन त्रियामां रात्रि पुनरिव परिवर्तयन् आनयन् ।

अथेति । यामिकिनीषु जागरिकासु । रात्रौ नृपप्रासादे जाग्रतो  
जनाः संरक्षणाय नियुक्ताः सन्ति । समीपं निकटार्थादन्तःपुरस्य  
बहिर्द्वारं शेते तस्मिन् प्रबुद्धे जागरिते । हृदयस्य मनस उत्कम्प-  
वेपनं करोति तच्छीले साध्वसे भये शान्ते नष्टे सति । सवितुः  
सूर्यस्य मण्डलात्परिधेर्निर्गत्य बहिरागत्य । बालातपेन कोमल-  
किरणैर्दिग्भागान्दिशां प्रदेशान् पूरयन्तौ व्याप्नुवन्तौ वैद्युतमिव  
विद्युतसंबन्धिनमिव । अङ्गदिनौ केयूरवन्तौ । इन्द्रगोपक इव ताम्रवर्ण-  
मृगकीटक इव रुक् कान्तिर्यस्य तेनोन्मुखेनोर्ध्वावलोकिताना ।  
सुपुष्परश्मेः मृतमयकिरणान्निर्गतया बहिरागतया । विलपन्त्याः

यानुगम्यमानौ, क्षितितलमवतीर्णौ । तौ च मे विलपन्त्याः  
शस्त्रेणोदरं विदार्य प्रवण्डुमारब्धौ । प्रतिबुद्धास्मि चायर्पुत्रं  
त्रिकोशयन्ती वेपमानहृदया' इति ।

एतस्मिन्नेव च कालक्रमे राजलक्ष्म्याः प्रथमालापः  
प्रथयन्निव स्वप्रफलमुपतोरणं रराण प्रभातशङ्कः । भाविनीं  
भूनिमिवाभिदधाना दध्वनुरमन्दं इन्दुमयः । चकाण कोणाह-  
तानन्दादिव प्रत्यूषनान्दी । जयजयेति प्रबोधमंगलपाठकाना  
मुच्चैवाचोऽश्रूयन्त, पुरुषश्च बलुभनुरङ्गमन्दुरामन्दिरेमन्दमन्दं  
मे विलपन्ती ( मामनादृतेत्यर्थः ) 'षष्ठी चानादरे' इत्यनेनानादरे  
षष्ठी । विदार्य भित्त्वा ।

एतस्मिन्नेवेति-स्वप्रफलं प्रथयन्निव स्वप्नोऽवशं भावोति सूचय-  
न्निव उपतोरणं बहिर्द्वारोपरि । विभक्त्यनेनाव्ययीभाक् ; । प्रात-  
दृष्टः स्वप्नः सद्यः फलद इति धर्मशास्त्रमतश्च स्वप्नोऽयमवश्य सफल  
भवेदिति सूचयितुमिदं वर्णनम् । अमन्दमुच्चैः । कोणो वादनदण्ड-  
स्तेन आहतं ताडनं तस्यानन्दात् । प्रत्यूषनान्दी प्राभातिकी भेरी ।  
प्रबोधमंगलपाठकाः प्रातर्नरपतिप्रबोधनार्थं गायन्तो बन्दिनः ।  
बल्लभः, प्रियो, यस्तुरंगस्तस्य मन्दुरामन्दिरं शाला । मन्दुराशब्द  
एव वाजिशालावाच्यपि तुरंगपदसान्निध्याच्छाला मात्रवाचकः ।  
वाचकानां पदानां सति पृथग्विशेषणात्वे विशेष्यमात्रपरत्वमिति  
न्यायात् । सुप्तं निद्रा । 'नंपुसकेभावेक्तः । तस्मादुत्थितः ।  
अथवादो सुप्तः पश्चादुत्थितः । अस्मिन्पक्षेऽकर्मकत्वात्कर्तरि क्तः  
सप्तानां हयानाम्, च्योवत्तुषाराणां पतद्विमानां मलिलैः शीकर-  
मार्द्रं मरकतमिव गारुतमतमिव हरितं हरिद्वर्णं यवसं तृणं  
किरन । वक्त्रापरवक्त्रे । वक्त्रं भाव्यर्थसूचकः छंदोविशेषः

सुप्तोत्थितः सप्तानां कृतमधुरेहशारवाणां पुरश्च्योतत्तुषार-  
सलिलशीकरं किरन्मरकतहरितं यवसं वक्त्रापरवक्त्रेपपाठ—  
निधिस्तनुविकारेण सन्मणिः स्फुरता धाम्ना ।

शुभागमो निमित्तेन स्पष्टमाख्यायते लोके ॥३॥

अरुण इव पुरःसरो रविं पवन इवातिजवो जलागमम् ।

शुभमशुभमथापि वा नृणां कथयति पूर्वनिदर्शनोदयः ॥४॥

नरपतिस्तु तच्छ्रुत्वा प्रीयमाणेनान्तःकरणेन तामवादीत्—  
'देवि, मुदोऽयसरे विषीदसि । समृद्धास्ते गुरुजनाशिषः । पूर्णा  
नो मनोरथाः । परिगृहीतासि कुलदेवताभिः । प्रसन्नस्ते  
भगवानंशुभाली ।

अपरवक्त्रम् तन्नामकं मात्रावृत्तम् । 'वक्त्रमास्ये छंदसि च'  
हेमचंद्रः । उभयोराख्यायिकायामत्यावश्यकत्वम् । तथा चाग्निपुराणे,  
उच्छ्वासैश्च परिच्छेदो यत्र सा चूर्णिकोत्तरा । वक्त्रं चापरवक्त्रं  
च यत्र साऽऽख्यायिका मृता ।

निधिरिति । निधिर्भूमिगतो धनसंचयस्तनुविकारेण वृक्षस्य  
विशिष्टावस्थानेन सन्मणिः समीचीनं रत्नं स्फुरता विकसता  
धाम्ना तेजसा शुभागमः शुभस्य प्राप्तिर्निमित्तेन शकुनेन लोके  
जने स्पष्टमाख्याते कथ्यते । दीपकालंकारः ॥३॥

अरुण इति । पुरःसरोऽययायी अरुणो रविमिवातिजवो  
वेगवान् पवनो वायुर्जलागमं वर्षाकालमिव पूर्वं प्राग् निदर्शनस्य  
दृष्टान्तस्योदयः प्राप्तिर्नृणां शुभमशुभं वा कल्याणमकल्याणम्  
वा कथयति । भाविनावर्थानथौ पूर्वमेव शकुनादिना ज्ञायेते इति  
तात्पर्यार्थः ॥४॥

नरपतिरिति । प्रीयमाणेन संतुष्टेन । स्वमनोरथसूचकवाक्य-

नचिरेणातिगुणवदपत्यत्रयलाभेनानन्दयिष्यति भवतीम'  
इति । अवतीर्य च यथाक्रियमाणाः क्रियाश्चकार । यशोवत्यपि  
तुतोष तेन पत्युर्भाषितेन ।

ततः समनिक्रान्ते कस्मिंश्चित्कालांशे देव्यां च यशोवत्यां  
देवो राज्यवर्धनः प्रथममेव संबभूव गर्भे । गर्भस्थितस्यैव च  
यस्य यशमेव पाण्डुतामादत्त जननी । गुणगौरवक्लान्तेव  
गात्रमुद्रोदुं न शशाक । कान्तिविसरामृतरसतृप्तेवाहारं प्रति  
पराङ्मुखीवभूव । शनैः शनैरुपवीयमानगर्भभरालसा च  
श्रवणात्तस्यानन्दः । मुदोऽवसरे आनन्दस्य समये त्रिषीदसि विद्यसे  
अंशूनां किरणानां माला पंक्तिर्विद्यते यस्य स भगवान् सूर्यः ।  
'ब्रह्मादिभ्यश्च' इत्यनेन मत्वर्थीय इति । अवतीर्य चन्द्रशालाया,  
इति शेषः

तत इति । कालांशे स्वल्पे काले । सप्रः सफन इति सूचयितु-  
मिदम् । गर्भे स्थितस्य विद्यमानस्य यस्य राज्यवर्धनस्य । यशसा  
कीर्त्यैव । यशसः पाण्डुत्ववर्णनं कविसंप्रदायानुरूपम् । अतएव  
विश्वनाथेनोक्तं कविसमये 'यशसि धवलता' इति । गुणानां  
गौरवेण जाड्येन क्लान्ता पीडितेव गात्रं शरीरमुद्रोदुं धारयितुम् ।  
भारेण पीडितः स्वशरीरधारणेऽप्यसमर्थो भवति । कान्तीनां  
तेजसां विसरः समूह एवामृतरसस्तेन तृप्तेव । तृप्ताय च पानादि न  
रोचते । उक्तं च श्रीहर्षेण 'अपां हि तृप्ताय न वारिधारा स्वादुः  
सुगंधिः स्वदते तुपारा' । उपचीयमानस्य वर्धमानस्य गर्भस्य भरेण  
भारेणालसामन्दा गुरुभिर्वृद्ध जनैर्वारितापि निषिद्धापि कथमपिकष्टेन  
एतेन तस्या जनेष्वादरातिशयो व्यज्यते । विश्राम्यन्ती श्रान्ता  
विश्रमाय यत्रकुत्रापि तिष्ठन्ती सालभञ्जिकेव पुत्तलिकेव कमलेति ।

गुरुभिर्वारितापि वन्दनायकथमपिसखीभिर्हस्तावलम्बेनानीयत ।  
 विश्राम्यन्ती सालभञ्जिकेव समीपगतस्तम्भभित्तिष्वलक्ष्यत ।  
 कमललोभनिलीनैरङ्गिभिरिव वृतावुद्धर्तुं नाशकच्चरणौ ।  
 मृणाललोभेन च चरणनखमयूखलग्रैर्भवनहंसैरिव संचार्यमाणा  
 मन्दमन्दं बभ्राम । मणिभित्तिपातिनीषु प्रतिमास्वपि हस्तावल-  
 म्बनलोभेन प्रसारयामास करकमलम्, किमुत मखीषु ।  
 माणिक्यस्तम्भदीधितोरण्यालम्बितुमाचकाङ्क्ष किं पुनर्भवन-  
 लताः । समादेषुमप्यसमर्थासीद्गृहकार्याणि कैव कथा कर्तुम् ।  
 आस्तां नूपुरभारखेदितं चरणयुगलं मनसापि नोदसहत

गमपोडिता चरणवुद्धर्तुं नाशकत्परं त्रमरैः कमलभ्रान्त्या व्याप्नो-  
 तावतोऽसमर्थेति कल्पितम् । मृणाललोभेन विमलोभन चरणनखाना-  
 मयूखेषु किरणेषु लग्नैः संसक्तैर्हंसैमेरान्तैः संचार्यमाणा गमनाय  
 प्रेयमाणा मन्दं मन्दं शनैः शनैर्बभ्राम । हंससदृशीं गतिमाचरन्ता  
 मन्दं जगाम हंसलम्बित्वं कारणं कथितम् । मणिभित्तिषु पतन्ति  
 तासु प्रतिमासु स्वप्रतिविम्बेष्वपि । भ्रान्तो यस्य कस्यापि सहायं  
 गहीतुमुत्कण्ठिता भवति तद्वदियमपि स्वप्रतिमाधारमपैक्षतेति  
 तात्पर्यम् । माणिक्यानां पद्मरागाणां दीधितोरपि किरणान्यप्या-  
 लम्बितुमश्रयितुमाचकाङ्क्ष इयेष । भवनलता गृहमध्यं स्थापिता  
 लताः । नूपुरयोर्मज्जरयोर्भारेण खेदितं पोडितम् । पादावसमर्था-  
 वित्यत्र नाश्रयमपि तु सौधारोद्गणकल्पनामपि नासहत । तस्तान् ।  
 दीर्घं श्रमितवती । प्रत्युत्थानेष्विति । उभयोर्त्रांश्वोरुपर्वणोः  
 शिखरयोरग्रयोनिहितौ स्थापितौ करकिसलयौ यया सा । दिवस-  
 मित्यत्यन्तसंयोगे द्विताया । स्तनयोः पृष्ठे संक्रान्तेन पतितेनापत्य-  
 दर्शनस्यौत्सुक्यादिच्छया तः प्रविष्टोनेव । स्तनयोः पुष्ट्या-

सौधमारोढुम् । अङ्गान्यपि नाशक्रोद्धारयितुं दूरे भूयणानि ।  
चिन्नयित्वापि क्रोडापर्वताधिरोहणमुत्कल्पितस्तनी तस्तान् ।  
प्रयुज्यातेषु भयं नानुशिखरविनिहितकरकिसलयापि गर्वादिव  
गर्भेणाधार्यत । दिवसं चाधोमुखी स्तनपृष्ठसंक्रान्तेनापत्यदर्श-  
नौत्सुक्यादन्तःप्रविष्टेनेव मुखकमलेनैवं प्रीयमाणा ददर्श गर्भम् ।  
उदरेतनयं हृदये च भर्त्रा तिष्ठता द्विगुणितामिव लक्ष्मीमुवाह ।  
सख्युत्सङ्गमुत्कशरीराचशरीरपरिचारिकाणामङ्गेषु सपत्नीनान्तु  
शिरःसु पादौ चकार । अवतीर्णो च दशमे मासि सर्वोर्वी-  
भृत्पक्षपाताय वज्रपरमाणुभिरिव निर्मितम्, त्रिभुवनभारधार-

धिक्यात्कञ्चुक्यामस्थितिस्तेन च तत्र प्रतिविम्बं युज्यते । अन्यथा  
साऽऽभीकृतं चालिकेति तर्क्यं स्यात् । सखानां सहचरीणामुत्संगेष्वं-  
केषु मुक्तं त्यक्तं शरीरं यया सा सपत्नीनां समानपत्नीनां शिरः-  
सुत्तमांगेषु । अवतीर्ण इति । सर्वेषु भूर्विभृतां नृपाणां पर्वतानां च  
पक्षपाताय नृपाणां सहायनाशाय पर्वतानां पतत्रान्मूलनाय च ।  
बले सखिसहाययोः । चूलिरन्ध्रे पतत्रे च इति मेदिनी ।  
वज्रस्येन्द्रायुधस्य परमाणुभिः सूक्ष्मैरवयवैरिव । इन्द्रोत्पातिनां  
पर्वतानां पक्षाः स्ववज्रेण छिन्नास्तद्वदयमप्युर्वीभृतां पक्षपाताय  
वज्रमय इव निर्मित इति तात्पर्यम् । त्रिभुवनस्य त्रिलोक्या धारणे  
बहने समर्थं शेषस्य तन्नामकस्य सर्पराजस्य फणामण्डलस्य  
फणसमूहस्योपकरणैः साधनैरिव कल्पितम् । सकलानां भूभृतां  
राज्ञां पर्वतानां च कम्पं करोति तच्छीलमतएव दिग्गजानामवयवै-  
रिव विहितं कृतम् दिग्गजाः स्वदन्तैः पर्वतान्कम्पयन्ति तदनु-  
शीधेनेनम् । नृत्वमयः । पूरितेति । पूरितानां शंखानां शङ्खै-  
र्ध्वनिभिर्मखरम् । प्रहृतानां ताडितानां पटहशतानां ढकाशतानां पटुः



णसमर्थं शेषफणामण्डलोपकरणैरिव कलिपतम्, सकलभूभृत्कम्पकारिणं दिग्गजावयवैरिव विहितममृतं देवं राजवधनम् । यस्मिञ्जाते जातप्रमोदा नृत्यमय्यद्वाजायन्त प्रजाः । पूरितासंख्यशङ्खगद्गदमुखरं प्रहतण्डहशनपटुरवं गम्भीरभेरीनिनादनिर्भरभरितभुवनं प्रमोदोन्मत्तमर्त्यलोकमनोहरं मासमेकं दिवसमिव महोत्सवमकरोन्नरपतिः ।

अथान्यस्मिन्नतिक्रान्ते कस्मिंश्चित्काले कन्दलिनि कुड्मलितकदम्बतरौ तोकमतृणस्तम्बे स्तम्भिततामरसं विकसितचातकचेतसि सूक्तमानसौकसि नभसि देव्या देवक्या इव चक्रपाणिर्यशोवत्या हृदये गर्भे च संबभूव हर्षः । शनैः शनैश्चास्या सर्वप्रजा पुण्यैरिव परिगृहीता भूयोऽप्यापाण्डुतामद्भयष्टिर्जंगाम । गर्भारम्भेण श्यामायमानचारुचूचुकचूलिकौ चक्रवर्तिनः पातुं मुद्रिताविव पयोधरकलशौ बभार । स्तन्यासम्यग् रवो ध्वनिर्यस्मिंस्तम् । गं गीरेण दुन्दुभीतां भेरीणां निनादेन शब्देन निर्भरमत्यन्तं भरितं व्याप्तं भुवनं येन तम् । प्रमोदेनानन्देनोन्मत्तेन मत्तेन मर्त्यलोकेन मनुजलोकेन मनोहरस्तम् । मासम् त्रिंशदहोरात्रम् । अत्यन्तसंयोगे द्वितीया । एक दिवसमिवति । उत्सवनिमग्नानामचेतितः का तो यात इति ज्ञायतेऽनेन ।

अथति । कस्मिंश्चित्काले द्वित्रवर्षात्मक इत्यर्थः । कन्दलिनि तत्राङ्कुरवति कुड्मलितः संजातकारकः कदम्बनर्ययस्मिंस्तस्मिन् । तोकमा हरितारतृणस्तम्बा यवससमूहा यस्मिन् । स्तम्भितानि रुद्धानि (नष्टानित्यर्थः) तामरसानि कमलानि यस्मिन् । पर्जन्याधिक्येन कमलध्वंसः । विकसितं प्रफुल्लं चातकचेतश्चातकमानसं यस्मिन् । एतादृशे नभसि श्रावणौ मासि । मेघागमनेन चातकानन्दः ।

यमानननिहिता दुग्धनदीव दीर्घस्निग्धधवला माधुर्यमधत्त  
दृष्टिः । सकलमङ्गलगणाधिष्ठितगात्रगरिमोव गतिरमन्दा-  
यत । मन्दमन्दं संचरन्त्या निर्मलकुट्टिमनिमग्नप्रतिबिम्बनिभेन  
गृहीतपादपलुवा पूर्वसेवामिवारेभे पृथिव्यस्याः । दिवसमधि-  
शयानायाः शयनीयमपाश्रयपत्रमङ्गपुत्रिकाप्रतिमा विमलकपो-

मूका अशद्वा मानसो रुसो हंसाः यस्मिन् । हंसानां तदाऽत्रास्थित्या  
मूकत्वम् । तथा च विश्वनाथः 'जलधरसमये मानसं यान्ति हंसाः,  
इति । देव्या देवक्याः कृष्णमातुः तस्या अपि भगवंतंध्यायन्त्या-  
हृदये गर्भे च सममेव हरिः प्रादुरासीत् । भगवद्भयाननिमग्ना सा गः  
भेवत्यासीदिति तात्पर्यार्थः, न भसीत्यस्योपमा यां न संबन्धः, देव कीर्णभेस्य  
आवणोऽभवादिदिदिक् प्रजापुण्यैरिव परिगृहीता स्वीकृता आपा-  
ण्डुतां पाण्डुरत्वम् । श्यामायमा गो कृष्णवर्णा चूलिकं हस्तिनः कर्ण-  
मूले इव चूचुको स्तनाग्रौयस्याः सा चूचुकस्य चूलिकोपमा काठिन्य-  
कार्यमूलिवेत्यवधेयम् । रक्षार्थमुद्राविधाय किमपि स्थाप्यते तद्वदिद-  
मपि । गर्भकाले च कुचाग्रयोः श्यामत्वं वर्णितं वाग्भटेन अस्लेष्टता  
स्तनौ पीनौ' श्वतान्तौ कृष्णचूचुको' इति । चक्रवर्तिनो भाविनः पाना-  
येत्यर्थः, स्तन्यार्थं दुग्धार्थं स्तने भद्रं स्तन्यं दिगादित्वाद्भवार्थं यत् ।  
सकलमङ्गलगणोनार्था दिक्पालसमूहेनाधिष्ठितानां गात्राणामवयवानां  
गरिम्या गौरवेण गतिर्गौननममदायत । नृश्च देवतांशेभवति ।  
मन्दमन्दं शनैः शनैः संचरन्त्या अस्या निर्मले हीरकादिरत्नमयेऽ-  
तएव स्वच्छे कुट्टिमे निबद्धायां भुवि निमग्नस्य पतितस्य प्रति-  
बिम्बस्य, निभेन, मिषेण, पूर्वसेवां प्रथमसेवामिव । दिवसम-  
शयनं शय्यामधिशयानाया अधितिष्ठत्याः । 'अपाश्रयः शय्यास्त-  
रणं तस्य पत्रगर्भपुत्रिका तदुपरि लिखिता पुत्रिका तस्याः प्रतिमा ।

लोदरगताप्रसवसमयं प्रतिपालयन्ती लक्ष्मीरिवालक्ष्यत । श्रपा-  
सु सौधशिखराग्रगताया गर्भोन्माथमुकांशुके स्ननमण्डले-  
संक्रान्तमुदुपतिमण्डलमुपरि गर्भस्य श्वेतातपत्रमिव केनापि  
धार्यमाणमदृश्यत । सुप्तया वासभवने चित्रमिति चामरग्राहि-  
ण्योऽपि चामराणि चालयांचक्रुः स्वप्नेषु करविधृतकमलिनीपला-  
शपुटसलिलैश्चतुर्भिरपि दिक्करिभिरक्रियतामिषेकः । प्रतिबुध्यमा-  
नायाश्च चन्द्रशालिकासालभञ्जिकापरिजनो जयशब्दमसृकृदज-  
नयत् । परिजनाह्वानेष्वदिशेत्यशरीरा वाचो निश्चेरुः । क्रीडाया  
मपि नासहताज्ञाभङ्गम् । अपि च चतुर्णामपि महार्णवानामेकी

विमले स्वच्छे कपोलोदरे गल्लमध्ये गता, विमलेत्यनेन विव-  
प्रहणसामर्थ्यम् । प्रसवसमयं प्रसूतिकालं प्रतिपालयन्ती प्रत्यवे-  
क्षमाणा लक्ष्मीरिव जीवन्ती' इति प्रसिद्धा प्रसूतिदेवतेव ।  
श्रपासु रात्रिषु सौधशिखरं चंशालां गताया गर्भस्य अर्भकस्यो-  
न्माथेन परिभ्रुकृण्णेन मुक्तं त्यक्तमंशुकं वसनं यस्य तस्मिन् ।  
संक्रान्तं प्रतिब्रिंविमुदुपतिमंडलं चद्रमंडलं गर्भस्योदरस्थितार्भ-  
कस्योपरि केनापि धार्यमाणं श्वेतं शुभ्रमातपत्रं छत्रमिव । अत्र  
सौधाग्रगमनं तु लघुना शिविकादिना, वासभवने, शय्यागृहे ।  
स्वप्नेष्विति । चतुर्भिरपि दिक्करिभिर्दिग्गजैः करे शृङ्गादंडे  
विधृतस्य कमलिन्याः, पलाशस्य, पत्रस्य, पुटस्य, पर्णपात्रस्य,  
सलिलैरुदकैरभिषेको मंत्रपूतं जलमिंचनम् । सालभञ्जिकापरि-  
जनः सौधे स्थापिताःमूर्तयः । अशरीरा वाचः अमानुष्यो वाचः ।  
चतुर्णामिति । चतुः समुद्रोदकानि सम्राडभिषेकोपयुक्तानि तत्र  
वाञ्छा भाविनीं साम्राज्यसिद्धिं शशांस । देलालता समुद्रतीरस्था  
लता तस्या गृहोदरस्य गृहमध्यस्य पुलिनपरिसरेषु, बालुकाप्रदेशेषु,

कृतेनाम्भसान्नातुं वाञ्छा बभूव । वेलालतागृहोदरपुलिन-  
परिसरेषु पर्यटितुं हृदयमभिललाप । आत्ययिकेष्वपि कार्येषु-  
सविभ्रमं भ्रूयता चवाल संनिहितेष्वपि मणिदपणेषु मुखमु-  
त्खाते खड्गपट्टं वीक्षितुं व्यसनमासीत् । उत्सारितवीणाः  
स्त्रीजनविरुद्धा धनुर्ध्वनयः श्रुनावसुखायन्त । पञ्जरकेसरिषु  
चक्षुररमत । गुरुप्रणामेष्वपि स्तम्भितमिव शिरः कथमपि  
ननाम । सख्यश्चास्याः प्रमोदविस्फारितैर्लोचनपुटैरासन्न-  
प्रसवमहोत्सवधियेव धवल्यन्त्यो भवनं विकचकुमुदकमल-  
कुवलयपलाशवृष्टिमयं रक्षावलिबिबिभिवानवरतं विदधाना  
दिक्षु क्षणमपि न मुमुचुः पार्श्वम् ।

आत्मोचितस्थाननिपयपणाश्च महान्तो विविधौषविधरा भिष-  
एतेनापत्यस्यासमुद्रक्षितीशत्वं सूचितम् । आत्ययिकेष्ववश्यकृतं  
व्येष्वपि । संहितेष्विति मणिदपणेषु रत्नमुकरेषु । उत्खाते  
विकोपे, एतेन गर्भस्य वीरत्वं ज्ञातम् । उत्सारिता नि.सारिता  
वीणा यैस्ते स्त्रीजनविरुद्धा, युवतिजनानुचिता, धनुर्ध्वनयश्चापशब्दाः,  
श्रुतौ कर्णोऽपुखायन्त सुखं व्यदधुः । सख्य इति । सख्योऽस्याः  
पार्श्वेन मुचुमुस्त्यन्वयः । तान् विशिनष्टि । प्रमोदेनानन्देन वि-  
स्फारितैर्विकसितैर्लोचनपुटैर्नयन पुटैः । अत्र पुटशब्दोऽलंकारार्थः ।  
आसन्नस्य समीपागतस्य प्रसवमहोत्सवस्य धियेव बुव्येव । भवनं  
गृहं धवल्यन्त्यः शुभ्रीकुर्वन्त्यः । महोत्सवेषु गृहशुभ्रीकरणं  
प्रसिद्धमेव, अनवरतं, सततं, विकचानां, विकसितानां, कमलकुमुदकु-  
वलयपलाशानां, वृष्टिमयं वृष्टिप्रचुरं, रक्षावलि रक्षणाार्थं क्रियमाणां  
पूजामिव दिक्षु सर्वत्र विदधानाः कुर्वाणाः । आत्मनः स्वस्योचितेषु  
योग्येषु स्थानेषु निषण्णा स्थिताः । विविधानामोषधीनां धरा धारका

जो भूधरा इव भुवो धृतिं चक्रुः । पयोनिधीनां हृदयानीव  
लक्ष्यासहागतानि ग्रीवा वृषग्रन्थिषु प्रशस्तरत्नान्यवध्यन्त ।

ततश्च प्राप्ते ज्येष्ठामूलान्ये मासि, बहुलासु बहुलपक्षद्वा-  
दश्यां, व्यतीते प्रदोषसमये, समारुहन्ति क्षपायौवने, सप्तमे  
वान्तःपुरे समुदपादि कोलाहलः स्त्रीजनस्य । निर्गत्य च  
ससंभ्रमं यशोवत्याः स्वयमेव हृदयनिर्दिशेषा धात्र्याः सुता  
सुयात्रेति नाम्ना राज्ञः पादयोर्निपत्य 'देव' दिष्ट्या वर्धते  
द्वितीयसुतजन्मना 'इति व्याहरन्ती पूर्णपात्रं जहार ।

अस्मिन्नेव च काले राज्ञः परमसंमतः, शतशः संवादि-

इत्युभयत्रापि समानम् । अथवा त्रिविधा औषधयो यासु तथाभूता  
धरा भूमयौ येषां ते । भिषजो वैद्याः । धृतिं धैर्यं धारणां च ।  
प्रशस्तानि च तानि रत्नानि (पक्षे) प्रशस्तानि रत्नानि येषु तथा-  
भूतानि हृदयानि ।

ततश्चेति ज्येष्ठामूलान्ये ज्येष्ठे 'ज्येष्ठामूलान्यमिच्छन्ति  
मासमाषाढपूर्वजम्' इति हारावली । बहुलासु कृत्तिकासु । 'बहुलाः  
कृत्तिका' इत्यमरः । लहुलपक्षद्वादश्यां, कृष्णपक्षद्वादश्यां, प्रदोषसमये  
रजनीमुखे व्यतीतेऽतक्रान्ते, क्षपाया, रात्र्यौवने, प्राभादुत्तरे  
भागे, समारुहन्त्यागते सति । स्त्रीजनस्य, युवतिवर्गस्य, कोलाहलः  
कलकल उदपादि समभूत् । निर्गत्येति । यशोवत्या धात्र्या  
उपमातुः सुता हृदयाभिर्गतो विशेषो यस्यां सा सुयात्रेति नाम्ना  
स्वयमेव निर्गत्यात्प्रेच्छया बहिरागत्या इति व्याहरन्ती इति  
निवेदयन्ती शृणुपात्रं पूर्णानकम् ।

अस्मिन्निति । परमसंमतोऽत्यन्तमान्यः संवादितः प्रत्यक्षीकृतो-  
ऽतीन्द्रियादेशो भविष्यकथनं यस्य सः । संकलितं गणनं विद्यते

तानीन्द्रियादेशो, दर्शितप्रभावः संकलिनी ज्योतिषि, सर्वासां ग्रहसंहितानां पारदृष्ट्वा, सकलगणकमध्ये महितो हितश्च त्रिकालज्ञानभागभोजकस्तारको नाम गणकः समुपसृत्य विज्ञापितवान्—‘देव, श्रूयताम् । मांधाता किलेवंविधे व्यतीपातादिमर्वदोषाभिषङ्गरहितेऽहनि सर्वेपूच्चस्थानस्थितेष्वेवं ग्रहेष्वीदृशि लग्ने भेजे जन्म । अर्वाकिततोऽस्मिन्नन्तराले पुनरेवंविधे योगे चक्रवर्तिजन्ने नाजनि जगति कश्चिदपरः । सप्तानां चक्रवर्तिनामग्रणीश्चक्रवर्तिचिह्नानां महारत्नानां च भाजनं सप्तानां मागराणां पालयिता सप्ततन्तूनां सर्वेषां प्रवर्तयिता सप्तसप्तिसमः सुतोऽयं देवस्य जानः’ इति ।

अत्रान्तरे स्वयमेवानाध्माता अपि तारमधुरं शङ्खाविरसुः।

यस्य सः । ज्यातिषि ज्योतिःशास्त्रे पारदृष्ट्वा पारंगतः । दृशोः कनिष्ठा । महितः पूज्यो भोजकः सूर्याराधको गणकविशेषो भागवत, इति प्रथितो वा । मांधाता सूर्यवंशस्थो युवनाश्वस्य पुत्रोऽवरोषारुषस्य नृपतेः पिता । व्यतीपातादिदोषाणामभिषङ्गेन संबन्धेन रहिते वर्जिते । सर्वेपूच्चस्थानस्थितेषु ग्रहेषु । सर्वेषां ग्रहाणामेकदैवोच्चस्थानत्वमशक्यमिति ज्योतिर्विदोऽतोऽत्र शुभेषु ग्रहेष्वित्यर्थो ग्राह्यः । चक्रवर्तिनः सम्राजो जननमुत्पत्तिर्यस्मिंस्तादृशे योगे सुमुहूर्ते नाजनि । दीपजनेत्यनेन वैकल्पिकः कतेरिचिष्णुः । अग्रणीः श्रेष्ठः । ‘भाजनं पात्रम् । परिनायकः सेनापतिः । सप्ततन्तूनां यज्ञानां, प्रवर्तयिता प्रवर्तकः । सप्त सप्तयोऽश्वा यस्य स सूर्यस्तेन समस्तुल्यः ।

अत्रान्तरे इति । अनाध्माता अपूरितास्तामधुरमुच्चैर्मनोहरम् । लुभितस्य संचलितस्य जलनिधेः, समुद्रस्य, जलस्य, ध्वनिरिव,

अताडिनोऽपि क्षुभितजलनिधिजलध्वनिधीरं जुगुञ्जामिषेकदु-  
न्दुभिः । अनाहतान्यपि मङ्गलतूर्याणि रेणुः । सर्वभुवनाभयघो-  
षणापटह इव दिगन्तरेषु बभ्राम, तूर्यप्रतिशब्दः, विधुतकेसरस-  
टाश्च साटोपगृहीतहरितदूर्वापल्लवकवलप्रशस्तेर्मुखपुटैः सम-  
हेषन्त हृष्टा वाजिनः । सलीलमुत्क्षिप्तैर्हस्तपल्लवैर्नृत्यन्त इव  
श्रवणसुभगं जगज्जुर्गजाः । ववौ चाचिराच्चक्रायुधमुत्सृजन्त्या  
लक्ष्म्या निःश्वास इव सुरामोदसुरभिर्दिव्यानिलः । यज्वनां  
मन्दिरेषु प्रदक्षिणशिखाकलापकथितकल्याणागमाः प्रजज्वलुर-

धीरं यथास्थान्तथा जुगुञ्ज दध्वान् । मंगलतूर्याणि मंगलवादित्राणि ।  
सर्वम्य, सकलस्य, भुवनस्य जगतोऽभयस्य घोषणाया उच्चैर्ध्रुप्रसर-  
पटहो, ढक्केव । तूर्याणां, वाद्यविशेषाणां, प्रतिशब्दः, प्रतिध्वनिः, ।  
विधूनाः, कंपिताः, केसरसटाः, सटाग्राणि, यैस्ते वाजिनो ह्याः, साटोपं  
सगर्वं, गृहीतानां, हरितानां, हरिद्वर्णानां, दूर्वाणां कवलैर्ग्रीवाः प्रशस्तानि,  
विस्तृतानि, तैर्मुखपुटैः, समहेषन्त समहेषन्त । उत्क्षिप्तैरुर्ध्वं धृतैर्हस्त-  
पल्लवैः, शुण्डादङ्गैर्नृत्यन्त इव नर्तका, इव गजा, हस्तिनः, श्रवणसुभगं  
श्रुतिमनोहरं, जगज्जुः शब्दं चक्रुः, ववाविति । चक्रायुधं नारयण-  
मचिरात्तूष्णमुत्सृजन्त्यास्त्यजन्त्या लक्ष्म्या निश्वास इव । नूतनोत्पन्नं  
हर्षमाश्रितुं हर्षिलक्ष्म्या त्यक्त इति तात्पर्यम् । सुराया मद्य-  
स्यामोदेनाति निर्हारिगंधेन, सुरभिः सुगंधिर्दिव्यानिलः, स्वर्गीयो  
वायुः । यज्वनां, यज्ञकृतां, मन्दिरेषु, गृहेषु, प्रदक्षिणेन, वर्तुलाकारेण,  
शिखाकलापेन, ज्वाला समूहेन कथितः सूचितः कल्याणानां मंगला-  
नामागम उत्पत्तिर्यैस्ते वैतानवन्द्वा यज्ञाग्नयोऽनिधना इधनरहिता  
एव । वैतानवन्द्वा प्रदक्षिणशिखावलयेन ज्वलनं मंगलसूचकमिति  
कविसंप्रदायः । भुवस्तलादिति । तपनीयशृङ्खला सुवर्णनि-

निन्धना वतानैवेद्वयः भुवस्तलात्तपनीयश्चङ्खलाबन्धबन्धुरकल-  
 शीकोशाः समुदगुर्महानिधयः । प्रहतमङ्गलतूर्यप्रतिशब्दनिभेन  
 दिक्षु दिक्पालैरपि प्रमोदादक्रियतेव दिष्टवृद्धि कलकलः  
 तन्क्षण एव च शुक्ल वाससो ब्रह्ममुखाः कृतयुग प्रजा-  
 पतय इव प्रजावृद्धये समुत्तस्थिते द्विजानयः । साक्षाद्धर्म  
 इव शान्त्युदककलहस्तस्नस्थौ पुरः पुरोधः । पुरातन्यः स्थितय  
 इवाद्दृश्यन्तागता बान्धववृद्धा । प्रलम्बश्मश्रुजालजटिलाननानि  
 बहलमलपङ्कुकलङ्कुकालकायानि नश्यतः कलिकालस्य बान्ध-  
 वकुलानीवाकुलान्यधावंत मुक्तानि बन्धनवृन्दानि । तत्काला-  
 पक्रान्तस्याधर्मस्य शिविरश्रेणय इवालक्ष्यन्त लोकविलुण्ठिता  
 गडस्तस्य बंधेन बंधनेन, बंधुरो, मनोहरः, कलशीकोशी घटावरणं  
 येषां ते महानिधयो द्रव्यसंचयाः भुवस्तलाद्भूपृष्ठादुदगुर्बहिराजगुः ।  
 प्रहतानां ताडितानां मंगलतूर्याणां प्रतिशब्दस्य निभेन मिषेण  
 दिष्टवृद्धिरानन्दवर्धनम्, तत्क्षणे । ब्रह्ममुखे येषां ते (पक्ष) ब्रह्मवेदो मुखे  
 येषां । पुरातन्यः प्राचीनाः । प्रलंबेन लंबमानेन श्मश्रुजालेन मुखस्थ-  
 केशममूहेन जटिलानि, व्याप्तान्धाननानि, मुखानि, येषां ते । बहलेन  
 प्रभूतेन मलपंकस्य कलंकन कालाः कृष्णवर्णाः कायाः येषां ते ।  
 एतेन तदानीं कारागृहिणां श्मश्रुच्छेदनं स्नानं च प्रतिबद्धमासीदिति  
 गम्यते । आकुलान्युत्सुकानि गृहगमनत्वरयौत्सुक्यम् । बंधनवृन्दानि  
 बंधनं कारावासो विद्यते येषां ते बंधनाः तेषां वृन्दानि, समूहाः ।  
 तत्काले-धर्मस्वरूपस्य, हर्षस्योपत्तिकाले उपक्रान्तस्य पलायितस्या-  
 धर्मस्य शिविरश्रेणयो निवासगृहपंकतय इव रिक्ता इत्यर्थः ।  
 लोकैरानन्दमग्नैर्जलेर्विलुण्ठिताश्चोरेता बलाद् गृहीता विपणिवीथ्यो  
 बणिकपथसमूहाः । एतेन तदानीं पुत्रोत्पत्त्याद्यभ्युदयकाले विपणो-



विपणिवीथ्यः । विलसदुत्सुखवामनकवधिरवृन्दवेष्टिताः साक्षा-  
ज्जातमातृदेवता इव बहुबालकव्याकुला ननुतुर्वृद्धधात्र्यः ।  
प्रावर्तत च विगतराजकुलस्थितिरधः कृतप्रतीहाराकृतिरपनी-  
तवेत्रिवेङ्गो निर्दोषान्तः पुर प्रवेशः समस्वामिपरिजनो निर्वि-  
शेषबालवृद्धः समानशिष्टाशिष्टजनो दुर्ज्ञेयमत्तामत्तप्रविभाग-  
स्तुल्यकुलयुवनिवेश्याविलासः प्रनृत्तसकलकटकलोकः पुत्र-  
जन्मोसवो महान् ।

अपरेद्युरारभ्य सर्वाभ्यो दिग्भ्यः स्त्रीराज्यानीवावर्जि-  
र्विलुंठनपद्धतिरासीदिति गम्यते । प्राया नृपा वणिजां धनदातार  
इत्यपि कलनीयम् । विलसितां, शोभमानानां, खर्वाणां, अधिराणां,  
ओत्रविहीनानां, वृद्धैः, समूर्ध्ववेष्टिता, वृद्धधात्र्यो जरत्य उपमातृका,  
बहुभिरनेकैर्बातकैर्वत्सैर्व्याकुला जातमातृदेवता अपत्यरक्तदेवता  
इव ननुतुः । प्रसूतिगृह बहुबालगविष्टा देवी पाषाणखण्डे तंडुत-  
मयी रक्षार्थमधुनापि स्थाप्यते । प्रावर्तनेति-विगता नष्टा राज-  
कुलस्य नृपगृहस्य स्थितिर्मर्यादा यस्मिन्सः । अधःकृता तिरस्कृता-  
वमानितेत्यर्थः, प्रतीहारस्य दीवारिकस्याकृतिर्यस्मिन्सः । निर्दो-  
षोऽनिवागितोऽन्तःपुर प्रवेशो यस्मिन् सः । समो स्वामिपरिजनो  
सेव्यसेवकौ यस्मिन्सः । निर्गता विशेषो येभ्यस्ते निर्विशेषास्तथा  
बालवृद्धा यस्मिन् सः दुर्ज्ञेयो ज्ञातुमशक्यो मत्तामत्तयाः क्षीवा-  
क्षीबयोः प्रविभागा यस्मिन् सः । तुल्यः, समानः, कुलयुवतीनां,  
वेश्यानां च विलासो यस्मिन् सः । कुलस्त्रियोप प्रमोदप्रमत्ता  
वेश्या इव विलासान् प्रकटयामासुस्त्वर्थः । प्रनृत्ता, नृत्यासक्तः,  
सकलः, कटकलोकः, सेनिकवर्गो यस्मिन्सः ।

अपरेद्युरिति । नृत्यन्ति सामन्तान्तः पुरसङ्ख्यायदृश्यन्तेति-

नानि, असुरविवराणीयापावृतानि नारायणावरोधानीव  
 प्रचलितानि, अप्सरसामिव महीमवतीर्णानि कुलानि, परिजनेन  
 पृथुकरण्डपरिगृहीताः स्नानीयचूर्णावकीर्णकुसुमाः सुमनःस्रजः,  
 स्फटिकशिलाशकलशुक्लकर्पूरखण्डपूरिताः पात्रीः, कुङ्कुमाधि-  
 वासभाञ्जि भाजनानि च मणिमयानि, सहकारतैलतिम्यत्तनु-  
 खदिरकेसरजालजटिलानि चन्दनधवलपूगफलफालीदन्तुरदन्त-  
 शफरुकाणि, गुञ्जन्मधुकरकुलपीयमानपारिजातपरिमलानि पाट  
 संबंधः सर्वाभ्यो दिग्भ्यो निखिलाभ्य आशाभ्य आवर्जितान्या-  
 नीतानि स्त्रीराज्यानीव । अवावृतानि विमुक्तान्यसुरविवराणीव ।  
 पातालविवरात्रागरन्यान्वागता इमा इति कल्पना । नारायणस्य  
 श्रीकृष्णस्यावरोधान्यन्तः पुराणि बहुसंख्याकत्वात् । परिजनेनेत्यस्य  
 विभ्राणेनेत्यनेन संबंधः, । किं विभ्राणेनेत्याह । पृथुषु महत्सु  
 करण्डेषु समद्वेषु परिगृहीताः, स्थापिताः, स्नानीयचूर्णेनावकीर्णानि,  
 व्यापानि कुसुमानि यासां ताः सुमनःस्रजः, पुष्पमालाः । स्फटिकस्य  
 शिलाशकलेरिव शिलाखण्डैरिव शुक्लैः शुभ्रैः कर्पूरखण्डैः, पूरिताः  
 पात्रीर्भाजनानि । मणिमयानि रत्नमयानि । कुङ्कुमस्य काश्मीरज-  
 स्याधिवासं संस्कारं भजन्ति तानि भाजनानि, पात्राणि । सहकार-  
 तैलेनाम्रतैलेन तिम्यतामार्द्राणां तनूनां, सूक्ष्माणां, खदिरकेसराणां  
 जालेन समूहेन जटिलानि व्यापानि । चन्दनमिव, धवलानि, शुभ्राणि,  
 पूगीफलानि फाल्यः कार्पासवस्त्राण्याच्छादनार्थं स्थापितानीत्य-  
 र्थस्ताभिर्दन्तुराणि नतोन्नतानि दन्तशफरुकाणि करिदन्तकृताः  
 समुद्रकाः । गुञ्जता सशब्देन मधुकरकुलेन भ्रमरसमूहेन पीयमानः  
 प्रसूयमानः पारिजातस्य सुगन्धिद्रव्यविशेषस्य परिमलो येषां तानि  
 पाटलानीषद्रक्तानि पटलकानि पिटकानि ।

लानि पोटलकानि ( पटलकानि ) च, सिन्दूरपात्राणि च, पिष्टातकपात्राणि च, बाललतालम्बमानविटकवीटकांश्च ताम्बूलवृक्षान्विभ्राणेनानुगम्यमानानि चरणतिकुट्टरणिनमणिनूपुरमुखरितदिङ्मुखानि नृत्यन्ति राजकुलमागच्छन्ति समन्तात्सामन्तान्तः पुरसहस्राण्यदृश्यन्त ।

शनैः शनैर्व्यञ्जम्भत च कचिन्नुत्तानुचितचिरंतनशाली नकुलपुत्रकलोकलास्यप्रथितपार्थिवानुरागः, कचिदन्तः स्मितक्षितिपालोपेक्षितश्रीवश्रुद्रदासीसमाकृष्यमाणराजवल्लभः, 'पटलं तिलके नेत्ररोगे छदिपि संचये । पिटके परिवारे च इति' हैमः । सिन्दूरपात्राणि रक्तचूर्णपात्राणि । पिष्टातकस्य कृष्णवर्णस्य सुगंधिद्रव्यस्य, पात्राणि । बाललतासु लंबमाना विटकवीटकाः पंचाशत्पर्णमयास्तांबूला येषां तान् तांबूलवृक्षान् । विभ्राणेन धारयता परिजनेन सेवकेनानुगम्यमानान्यनुस्त्रियमाणानि । चरणैः यन्तिकुट्टनं ताडनं तेन रणितैः शब्दं विदधद्भिर्नूपुरैर्मुखरितानि शर्द्दायितानि दिङ्मुखानि यैस्तानि । राजकुलं, राजगृहम् ।

शनैरिति । उत्सवामोद उत्सवस्य हर्षो व्यञ्जम्भतावर्धत । कचिदेकत्र नृत्तस्य नर्तनस्यायोग्यश्चिरंतनः परं परागतः शालीनोऽधृष्टः कुलपुत्रकाणां लोकः समूहस्तस्य लास्येन नृत्येन प्रथितः स्पष्टः पार्थिवस्य पृथ्व्या ईश्वरस्य प्रतापवर्धनस्यानुरागः प्रेम यस्मिन्सः । अन्तः स्मितं हास्यं यस्य तेन क्षितिपालेन नृपेण उपेक्षितः अवज्ञां प्रापितः क्षीवया मत्तया लुद्रदास्या समाकृष्यमाणो राजवल्लभो राजप्रियजनो यस्मिन्सः । नृपस्मितप्रेरिता लुद्रदासी राजवल्लभं समाकृष्टवतीत्यर्थः । मत्तानां कटककुट्टिनीनां सेनावेश्यानां कंठेषु गलेषु लग्नानां समासक्तानां वृद्धानां जरठानामार्याणां श्रेष्ठानां

कचिन्मत्त कटककुट्टनीकण्ठलप्रवृद्धायांसामन्तनृत्तनिर्भरहसित-  
नरपतिः, कचिद्विनिपाक्षिसंज्ञादिष्टदुष्टदासेरकगीतसूच्यमान-  
सचिवचौर्यरतप्रपञ्चः, कचिन्मदोत्कटकुट्टहारिकापरिष्वज्यमा-  
नजरत्प्रव्राजितजनिनजनहासः, कचिदन्योन्यनिर्भरस्पर्धोद्धुर-  
चेटकपेटकारब्धावाच्यवचनयुद्धः, कचिन्नृपाबलाबलात्कारन-  
र्त्यमाननृत्यानभिज्ञान्तः पुरपालभाविताभुजिष्यः, सपर्वत इव  
कुसुमराशिभिः, सधारागृह इव सीधुप्रपाभिः, सतन्दनवन इव  
पारिजातकामोदैः, सनीहार इव कर्पूररेणुभिः, साट्टहास इव

सामन्तानां मंडलाधिपानां नृत्तेन निर्भरमतिरायितं हसितो नरपतिर्य  
स्मिन्सः । क्षितिपालेन नृपेणाक्षिसंज्ञया नेवसूचनया आदिष्ट आज्ञा-  
पितो दुष्टो दासेरको दास्याः पुत्रस्तेन गीतेन गानेन करणेन सूच्य-  
मानः कथ्यमानः, सचिवस्य, चौर्यरतस्य गुप्तक्रीडाया अर्थात्पर  
नारीगमनस्य, यस्मिन्सः, प्रपंचो विस्तारो, उपरितनवर्णनेन  
तदानीं सचिवादयो न शुद्धाचाराः सेनायां च वेश्यास्थापनपद्धति  
रासोदिति ज्ञायते । मदेनोत्कटया व्याप्तया कूटहारिकया कुम्भदास्या  
परिष्वज्यमान आलिङ्ग्यमानो जरन्वृद्धः प्रव्रजितःसन्यासी तेन  
जनित उत्पादितो जनहासो लोकहास्यं यस्मिन्सः । अन्योऽन्यस्य  
परस्परस्यनिर्भरयाऽतिशयया स्पर्धया उद्धराउज्जासिताश्चेटका गायक-  
वेश्यादीनांपरिचिताः जनास्तेषां पेटकेन समूहेनारब्धं प्रारधम् अवाच्य  
वचनैर्गालभिर्युद्धं बाकलहो यस्मिन्सः । पेटकः पुस्तकादीनामंजूषायां  
कदंबक इति मेदनी । नृपाबलाभिः नृपतिदासीभिः काभिश्चित्  
बलात्कारेण हठेन नर्त्यमाना नृत्यानभिज्ञाः नृत्यापरिचिताः  
अन्तःपुरपाला अन्तःपुररक्षकाः तैः भाविताः प्रोणिताः भुजिष्या  
दास्यो यस्मिन्सः । सीधुप्रपाभिर्मद्यपानायशालाभिः सधारागृह इव,

पटहरवैः, सामृतमथन इव कलकलैः, सावर्त इव रासकमण्डलैः  
सरोमाञ्च इव भूषणमणिकिरणैः, सपट्टवत्पुष्पधन इव चन्दन-  
लहलाटिकाभिः, सप्रसव इव प्रतिशब्दकैः, सप्ररोह इव प्रसा-  
ददानैरुत्सवामोदः ।

स्कन्धावलम्बमानकेसरमालाः कांबोजवाजिन इवास्क-  
न्दन्तः, तरलतारका हरिणा इवोड्डीयमानाः, सगरसुता इव  
खनित्रैर्निर्दयैश्चरणाभिघातैर्दारयन्तो भुवम्, अनेकसहस्रसंख्या-

धारागृहैर्यत्रगृहैः सहित इव कर्पूररेणुभिः कर्पूरपरागैः सनीहार  
इव हिममय इव । शैत्यशुभ्र-युतत्वात्कर्पूरस्योभयधर्मत्वात् ।  
पटहानामानकानां रवैः, शङ्खैः अट्टहासेनोच्चैर्हीस्येन सहित इव  
कलकलैः कोलाहलैरमृतः मथनेन सहित इव । उच्चैः शङ्खवत्त्वात् ।  
रासकं गोपानां वतुलाकारं नृत्यविशेषः । आवर्तैर्भ्रमिभिः सहित इव  
भूषणमणीनामलंकाररत्नानां किरणैर्मयूखैः सरोमाञ्च इव  
रोमाञ्चै रोमोद्गमैः सहित इव । दन्तुराकारत्वादिति भावः । चन्दनस्य  
मलयजस्य ललाटिकाभिर्ललाटालंकारैः पट्टबंधेन शिरोवेष्टनेन  
सहित इव । चन्दनेन शुभ्रत्वान्नललाटस्य । प्रतिशङ्खकैः प्रतिध्वनिभिः ।  
प्रसाददानैरनुग्रहदानैः सप्ररोह इव सांकुर इव । अनुग्रहेण दत्ताः  
पदार्था उत्सवामोदस्यांकुरा इति कल्पना ।

स्कन्धेनि—युवानश्चिक्रीडुरित्यन्वयः । तान्यूनो विशिनष्टि ।  
स्कन्धेष्ववलम्बमानाः केसरमालाः, वकुलस्रजः, स्कन्धस्थाः केशा वा  
येषां ते । आस्कन्दन्त, उड्डीयमानाः, कांबोजवाजिनः, कांबोजाख्यस्य  
हिमवदुत्तरस्य काशमीरात्प्राचीनस्य, देशस्याश्वा इव । ' आस्कन्दित-  
कमित्यपि । उत्प्लुत्योत्प्लुत्य गमनं कोपादेवाखिलैः पदैः ' इति  
हैममाला । सगरपुत्राः खनित्रैरिव निर्दयैर्दयारहितैश्च रणाभिघातैः,

श्चिक्रीडयुवानः । कथमपि तालावचरचारणचरणक्षोभंचक्षमेक्ष-  
मा, क्षितिपाल कुमारकाणां खेलतामन्योन्यास्फालैराभरणेषु मुक्ता-  
फलानि फेलुः । सिन्दूररेणुना पुनरुत्पन्नहिरण्यगर्भगर्भशोणित  
शोणाशमिव ब्रह्मांडकपालमभवत् । पटवासपांशुपटलेन प्रकटित-  
मन्दाकिनीसैकतसहस्रमिव शुशुभे नभस्तलम् । विप्रकीर्यमाण-  
पिष्टातकपरागपिञ्जरितातता भुवनक्षोभविशीर्णपितामहकमल-  
किञ्जल्करजोराजिरञ्जिता इव रेजुदिवसाः । संघट्टविघट्टिनहार-  
पतितमुक्ताफलपटलेषु चस्खाल लोकः ।

स्थानस्थानेषु च मंदमंदमास्फाल्यमानालिङ्ग्यकेन शिञ्जान-

पादताडनैर्भुवं वमुधां दारयन्त इव खनन्त इव । अनेकसहस्रसंख्या  
थसंख्याता इत्यर्थः । क्षमा पृथ्वी तालैरवचरन्ति भ्रमन्ति ते च ते  
चारणा बंदिनस्तेषां चरणक्षोभं चक्षमे विपेहे । आभरणेष्वलंकारेषु,  
अन्योन्यास्फालनैः परस्पर संघर्षणैः । पुनरुत्पन्नः पुनर्जाता हिरण्य-  
गर्भो ब्रह्मा तस्य गर्भस्य भ्रूणस्य शोणितै रक्तैः शोणास्ताम्रा  
आशा दिशा यस्य तत् । पटवासस्य पिष्टातस्य पांसून् रजसां पटलेन  
समूहेन प्रकटितंव्यक्त्यया दर्शितं मन्दाकिन्याः स्वर्गंगाया सैकत-  
सहस्रं पुलिनसदृशं येन तदिव । विप्रकीर्यमाणस्य क्षिप्यमाणस्य  
पिष्टातकस्य सुगन्धिद्रव्यविशेषस्य “अर्गजा” इति भाषायां प्रसिद्धस्य  
परागैर्धूलिभिः पिञ्जरितः पीतवर्णीकृत आतपः प्रकाशो येषां ते दिवसा  
भुवनस्य जगतः क्षोभेन सञ्चलनेन विशीर्णस्य विदीर्णस्य पितामह-  
कमलस्य ब्रह्मकमलस्य किञ्जल्करजसां परागधूलीनां राजिभिः  
पंक्तिभिः रंजिता इव । संघट्टेन विघटितेभ्यस्त्रुटितेभ्यो हारेभ्यो  
मुक्तामालाभ्यः पतितेषु मुक्ताफलपटलेषु मौक्तिकसमूहेषु ।

स्थानस्थानेष्विवति । स्थानस्थानेष्वेवंविधेनातोद्येवाद्येनानुगम्य-

मञ्जुवेणुना झणझणायमानश्चलरीकेण ताड्यमानतंत्री पटहिकेन,  
वाद्यमानानुत्तालालाबुवीणेन कलकांस्यकोशीकणितकाहलेन  
समकालदीयमानानुतालतानकेतानोद्यवाद्येनानुगम्यमानाः, पदे  
पदे झणझणितभूषणरैरपि सहृदयैरिवानुवर्तमानताललयाः,  
कोकिला इव मदकलकाकलीकोमलालापिन्यो, विटानां कर्णा-  
मृतान्यश्लीलरासकरदानि गायन्त्यः, समुण्डमालिकाः, स-  
कर्ण पल्लवाः, सवन्दननिलकाः, समुच्छिन्नाभिर्वलयावली-  
वाचालाभिर्वाहुलतिकाभिः सवितारमिवालिङ्गयन्त्यः, मकुंकु-

मानाः पण्यवित्तासिन्यः प्रानृत्यन्निति संवन्धः । मन्दं मन्दं शनैः  
शनैरास्फाल्यमानास्ताड्यमाना आलिंग्या लघुमृदङ्गाः ( तवला )  
प्रसिद्धा यस्मिंस्तेन । शिञ्जाना मधुरं नदन्तः मन्जवो मनाज्ञा वेणवो  
मुरल्यो यस्मिंस्तेन । ऋणभणायमाना ऋणभणोति शङ्खं विदधत्यो  
भल्लयो ( भांज ) इति भाषायां प्रसिद्धा यस्मिंस्तेन । ताड्यमाना-  
स्तंत्रीयो वीणाः पटहिका लघवा भेर्यो यस्मिंस्तेन । वाद्यमाना अनु-  
त्ताला मधुशङ्खा अताबुवीणा यस्मिंस्तेन । कलं मधुरं कांस्यकोश्यां  
कांस्यमये वाद्यपृष्ठभागे कणितः सशङ्खः काहलः ' कर्णा ' इति  
भाषायां प्रसिद्धो यस्मिंस्तेन । समकालं दीयमाना अनुत्ताला  
अनुत्कटा ताना यस्मिंस्तेन । आतोद्येवाद्येन चतुर्विधवाद्येनानुगम्य-  
मानाः । पदे पदे इति । ऋणभणितानां तथा शब्दं विदधतां  
भूषणानामलंकाराणां रवैः शङ्खैरपि सहृदयैर्गानाभिर्जैरनुवर्तमानौ  
ताललयौ यासां ताः । मदेन कला मधुरा काकली कोमलध्वनिस्तया  
मधुरमात्रपन्ति गायन्ति ताः । विटानां स्वाश्रितानां नीचानां कर्णा-  
मृतानि कर्णयोः श्रोत्रयोरमृतसहशान्यश्लीलान्यवाच्यानि रास-  
कपदानि गोपनृत्यपदानि । समुण्डमालिका मुण्डे शिरसि पुष्प-

प्रमृष्टिरुचिरकायाः काशमीरकिशोर्य इव वलगन्त्यः,  
नितम्बविम्बलम्बिविकट कुरण्टकेशंखराः प्रदीप्ता इव रागाग्निना  
सिन्दूरच्छटाच्छुरितमुखमुद्राः शासनपट्टपङ्क्तय इवाप्रतिहत-  
शासनस्य कन्दर्पस्य, मुष्टिकीर्यमाणकर्पूरपट्टवासपांसुला मनो-  
रथसंचरणरथ्या इव यौवनस्य, उद्दामकुसुमदामताडिततरुण  
जनाः प्रतीहार्य इव तरणमहोत्सवस्य, प्रचलत्पत्रकुण्डला

मालिकास्ताभिः सहिताः । समुद्धिताभिरूर्ध्व विधृताभि-  
र्वलयानां कंकणानामवलीभिः , पङ्क्तिभिर्वाचालाभिर्वाचा-  
टाभिर्बाहुलतिकाभिर्हस्तैः । लतिकाशब्दोवाहुकोमलतां व्यं-  
जयति । कुङ्कुमेन प्रमृष्टिः परिमाजेन विलेपनमिति यावत् तथा  
रुचिरः सुन्दरः कायः, शरीरं यासां ताः । वलगन्त्यो मनोहराः  
काशमीरेषु बालिकाः कुङ्कुमस्थलीषु लुंठनत्सुन्दरकाया दृश्यन्ते  
तद्वदिमा इति भावः । नितम्बबिम्बेषु लंबते ते तद्दृशा विकटा  
विशालाः कुरण्टकशेखरा अम्लातपुष्पगुच्छा यासां ताः ।  
रागाग्निनाऽनुरागवन्दिना प्रदीप्ता इव । अम्लातपुष्पाणां रक्त-  
वर्णत्वान् । सिन्दूरच्छटाभी रक्तवर्णचूर्णसमूहैश्चुरिता व्याप्ता  
मुखमुद्रा यासां ताः । अतएव प्रतिहतमनिरोधं शासनमाज्ञा  
यस्य तस्य कन्दर्पस्य मदनस्य शासनपत्रस्याज्ञापत्रस्य पङ्क्तय  
इव । मुद्रितमुखत्वमुभयोः साधारण्यमिति भावः । अञ्जलिभिः-  
हस्तसंपुटैः प्रकीर्यमाणेन क्षिप्यमाणेन कर्पूरपट्टवासेन कर्पूरमिश्रि-  
तेन सुगन्धिचूर्णेन पांसुला धूलिव्याप्ताः कर्पूरचूर्णपांसुयुक्ता इत्यर्थः,  
यौवनस्य तादृग्यस्य मनोरथस्य स्पृहायाः उंचरणस्य गमनस्य  
वौथ्यो मार्गा इव । मार्गा यथा बालुकाकणव्याप्तास्तद्वदिमाः  
कर्पूरकणव्याप्ता इत्यर्थः । उद्दामं सातिशयं कुसुमदामभिः,



लसन्त्यो लता इव मदनचंदनद्रुमस्य, ललितपदहंसकरवमुखराः  
समुल्लसन्त्यो वीचय इव शृङ्गाररसस्य, वाच्यावाच्यविवेक-  
शून्या बालक्रीडा इव सौभाग्यस्य, घनपटहरवोत्कण्ठकितगात्रय-  
ष्टयः केतक्य इव कुसुमधूलिमुद्गिरन्त्यः, कमिलन्य  
इव दिवसमुत्फुल्लाननाः, कुमुदिन्य इव रात्रावनुप-  
जातनिद्राः, आविष्टा इव नरेन्द्रवृन्दपरिवृत्ताः प्रीतय  
इव हृदयमपहरन्त्यः, गीतय इव रागमुद्दीपयन्त्यः, पुष्टय  
इवानन्दमुत्पादयन्त्यः, मदमपि मद्यन्त्य इव, रागमपि  
पुष्पस्रग्भिम्बिताडितास्तरुणा जना याभिस्त स्तरुणमहोत्सवस्य तरुण-  
स्य नूतनस्य शूनां वा महोत्सव-य प्रतीहार्य इव । प्रतीहार्यो-  
ऽपि स्वयष्टिभिर्जनांस्ताडयन्ति । प्रचलन्ति नृत्य वशाच्च-  
चलानि पत्राकाराणि कुण्डलानि कर्णभूषणानि यासां ताः ।  
(पक्षे) प्रचलन्ति पत्राण्येव कुण्डलानि पल्लवरूपाणि कर्णभूषणानि  
यासां ताः । ललितेषु रमणीयेषु पदेषु चरणेषु ये हंसकाः नूपुरास्तेषां  
रवेण शब्देन मुखराः सशब्दाः । यद्वा ललितानि पदानि  
यासां ताश्च ता हंसकरवमुखराश्च । (पक्षे) ललितपदानां हंसकानां  
हंसानां रवेण मुखराः । सौभाग्यस्य सुभगताया वच्यावाच्य-  
याविकेहो विचारस्तेन शून्या बालक्रीडा इव । घनेन दृढेन पटहरवेण  
भेरीनिनादेन उत्कण्ठकित समुद्रतरोभांचो गात्रयष्टयो यासां ताः ।  
दिवसम उत्फुल्लं प्रफुल्लमाननं मुखं यासां ताः । कमलिनीनां  
कमलरूपाणि मुखानि दिवसं विकसितानि भवन्ति कुमुदिन्य  
इ । कैरविय इव रात्रावनुपजाता अनागता निद्रा यासां  
ताः । कैरविय आसुर्योदयमसंकुचिता एतासामपि क्रीडासक्ततया  
निशायां निद्राभाव इति भावः । आविष्टा इव पिशाचग्रस्ता इव ।

रञ्जयन्त्य इव, आनन्दमपि आनन्दयन्त्य इव, नृत्यमपि नर्तयमाना इव, उत्सवमप्युत्सुकयन्त्य इव, कटाक्षितेषु पिबन्त्य इवापाङ्गशुक्तिभिः, तर्जनेषु संयमयन्त्य इव नखमयूख-  
पाशैः कोपाभिनयेषु नाडयन्त्य इव भ्रूलताविभागैः, प्रणय-  
संभाषणेषु वर्पयन्त्य इव सर्वरसान्, चतुरचङ्क्रमणेषु विकिरन्त्य  
इव विकारान्, पण्यविलासिन्यः प्रानृत्यन् ।

अन्यत्र वेत्तिवेत्रवित्रासितजनदत्तान्तरालाः, ध्रियमाण-  
धवलानपत्रवना वनदेवता इव कल्पतरुतलविचारिण्यः, काश्चि-  
त्स्कन्धोभयपालीलम्बमानलम्बोत्तरीयलग्ना लीलादोलाधिरूढा  
इव प्रेङ्खन्त्यः, कैश्चित्कनककेयूरकोटिपाट्यमानपट्टांशुकोत्तरङ्गा-

नरेन्द्रवृन्देन भूपसमूहेन मांत्रिकसमूहेन वा परिवृता वेष्टिताः ।  
मदमपि मदयन्त्य इव । मदेनान्या मत्तो भवति स तु इमा आश्रि-  
त्योन्मत्तः । रागोऽनुरागो द्विगुलादिश्च । रोगोऽन्यान् रंजयति ।  
इमास्तु तमपि रंजयन्ति । चतुरेषु मनोदरेषु चक्रमणेषु वक्रगमनेषु ।

अन्यत्रेति प्रारब्धं समारब्धं नृत्यं नर्तनं याभिस्ता राज-  
महिष्यो विलेसुश्चिक्रीडुः । कथंभूता इत्याह । वेत्रिभिः कञ्चुकिभिः  
कर्तृभिर्वेत्रैर्हस्तयष्टिभिः करणैर्वित्रासिताः पोडिता जनास्तैर्दत्तोऽन्तरा-  
लोऽवकाशो यासां ताः । ध्रियमाणमुह्यमानं धवलानां शुभ्राणामात-  
पत्राणां छत्राणां वनं समूहो यासां ताः ( वनशब्दो लक्षणया समूह-  
वाची ) कल्पतरूणां देववृक्षाणां तलेषु विचरन्ति तच्छ्रीला वनदेवता  
इव । शुभ्रपर्णत्वात्कलमतलूणां छत्रसाम्यम् । स्कन्धानामुभयपालीषु  
कोटिद्वयेषु लम्बमानानि लम्बानि दीर्घाण्युत्तरीयाणि प्रावारकास्तेषु  
लम्बाः संसक्ताः । लीलायाः क्रीडायाः दोलायामधिरूढा  
इव । प्रेङ्खन्त्य इतस्ततो गच्छन्त्यः । कनकस्य सुवर्णस्य

स्तरङ्गिण्य इव तरच्चक्रवाकसीमन्त्यमानस्रोतसः, काश्चिदुद्धूय-  
मानधवलचामरसटालप्रत्रिकण्टकवलितविकटकटाक्षाः सरस्य  
इव हंसाकृष्यमाणनीलोत्पलवनाः काश्चिच्चट्वाणचपुनालक-  
कारुणस्वेदशीकरसिच्यमानभवनहंसाः, संध्यारागरज्यमाने-  
न्दुबिम्बा इवकौमुदीरजन्यः काश्चित्कण्ठनिहितकाञ्चनकाञ्चो-  
केयूराणामङ्गदानां कोटिभिर्ग्रभागैः पात्र्यमानाः तरङ्गा इव  
पट्टांशुकानि पट्टांशुकतरङ्गाः तरङ्ग सदृशानि चञ्चलानि  
श्रेष्ठवस्त्राणि यासां ताः । तरङ्गिश्चक्रवाकैः सीमन्त्यमानानि विभज्य-  
मानानि, स्रोतांसि यासां, तास्तरंगिण्या नद्य इव । कनकाङ्गदा तां चक्र  
वाकसाम्यं, पात्र्यमानवस्त्राणां द्विधा क्रियमाणप्रवहसाम्यम् ।  
उद्धूयमानासु वायमाणासु धवलासु शुभ्रासु चामरसटासु चामरासु  
लघ्नेन संसक्तेन त्रिकण्टकेन कर्णाभरणेन वलिता वक्रोक्ता विकटाः,  
विशालाः, कटाक्षाः, यासां ताः । 'त्रिकण्टकस्तु ज्यश्रः स्यात्त्रिभी-  
रत्नैश्च भूषणम्' । हंसाकृष्यमाणाणि, नीलोत्पलवनानि, यासां ताः  
सरस्य इव । यथ, सरसीषु हंसाः कमलान्याकर्षन्ति तद्वत् सत्तदृशीषु  
युवतिषु हंससदृशाश्चामरसटाः कमलसदृशानि नयनान्याकपति ।  
रत्नमयत्रिकण्टकपदोपादानेन हंसचञ्चुर्व्यज्यते रक्तवर्णत्वादिति  
दिक् । चलद्भ्यश्चरणेभ्यश्चयुतैर्गलितैरलक्तकेनारुणैस्ताम्रैः स्वेदशी-  
करैर्धर्मबिन्दुभिः सिच्यमाना भवनहंसाः, याभिस्ताः । संध्यारागेण  
रज्यमानमिदुबिंबं याभिस्ता रजन्यो रात्रय इव । चन्द्रसदृशान्  
श्रेतोन् गृहहंसान् संध्यारक्तम्नेवारुणितधर्मबिन्दुभिर्ज्योत्स्न्य इवेमा  
रंजयन्तीत्यर्थः । कामवागुरा मदनजालानीव । प्रसारितबाहुपाशस्य  
वागुरासाम्यम् । कंठेषु निहितैः स्थापितैः काञ्चनकाञ्चीगुणैः  
सुवर्णमेखलादामभिरञ्चितानां नम्राणां कञ्चुकिनां कञ्चुकानि चूलिका

गुणाश्चितकञ्चुकिविकाराकुञ्चितभ्रुवः । कामवागुरा इव प्रसारितबाहुपाशा राजमहिष्यः प्राख्यनृत्या विलेसुः ।

सर्वतश्च नृत्यन्तः स्त्रियस्य गलद्भिः पादालक्तकैररुणिता रागमयीव शुषोणश्रौणी । समुलसद्भिः स्तनमण्डलैर्मङ्गलकलशमय इव बभूव महोत्सवः । भुजलताविक्षेपेर्मृणालवलयमय इव रराजजीवलोकाः । समुलसद्भिर्विशस्मितैस्तडिन्मय इवाक्रियत कालः । चञ्चलानां चक्षुषामंशुभिः कृष्णशारमया इवासन्वासराः । समुलसद्भिः शिराणकुसुमस्तवककर्णपूरैः शुकपिच्छमय इव हरितच्छायोऽभूदातपः । विस्त्रंसमानैर्धम्मिलहनमालपल्लवैः कज्जलमयमिवालक्ष्यनान्तरिक्षम् । उत्तिमैर्हस्तकिशलयैः कमलिनीमय्य इव बभासिरे सृष्टयः । माणिक्येन्द्रायुधानामर्चिषा चापपत्रमया इव चकाशिरे रविमरीचयः । रणनामाभरणगणानां प्रतिशब्दैः किङ्किणीमय्य इव शिशिञ्जिरे दिशः । जरत्योऽप्युन्मादिन्य इव रमण्यो रेणुः । वर्षीयांसोऽपि ग्रहगृहीता इव नापत्रेपिरे । विद्वांसोऽपि मत्ता इवात्मानं विद्यन्ते येषां तेषांस्तनानां विकारैराकुञ्चिताः संकुचिता भ्रुवो भ्रुकुट्यो यासां ताः । वस्त्रधारणवेलाभां कांचीगुणस्य कंठे धारणं स्त्रीसंप्रदायः । यद्वा कञ्चुकिनां प्रतिहारिणामित्यर्थो ग्राह्यः ।

सर्वतश्चेति । स्त्रियास्य स्त्रीसमूहस्य । क्षाणी, पृथ्वी, शुशोण, रक्तवर्णा बभूव । विलासस्मितैर्लीलाहास्यैः कालः समयः कृष्णवर्णश्च । तडिन्मय इव विद्युन्मय इव । हास्यस्य शुभ्रत्वं कविसमयानुरूपमतः शुभ्रतडिन्मयत्वमुत्सवकालस्य वर्णितमनुचितमिवावभाति । सितायास्तडितो दुर्भित्वसूचकत्वात् । 'दुर्भित्ताय सिता भवेत्' इति महाभाष्यवचनात् । विस्त्रंसमानैर्गलद्भिर्नृत्यवेशादिति

विसस्मरुः । निनर्तिषया मुनीनामपि मनांसि विपुस्फुलुः ।  
सर्वस्वं च ददौ नरपतिः । दिशि दिशि कुवेरकोपा इवालुप्यन्त  
लोकेन द्रविणराशयः ।

एवं च वृत्ते तस्मिन्महोत्सवे शनैःशनैः पुनरप्यतिक्रामति काले.  
देवे चोत्तमाङ्गनिहितरक्षासर्षपे, समुन्मिषत्प्रतापाग्निस्फुलिङ्ग  
इव, गोराचनापिञ्जरितवपुषिसमभिव्यज्यमानसहजज्ञात्रतेजसी-  
व, हाटकबद्धविकटव्याघ्रनखपङ्क्तिमण्डितग्रीवकेहृदयोद्भिद्यमा  
नदर्पाङ्कुर इव, प्रथमाव्यक्तजल्पितेन सत्यस्य शनैरौकारमिव  
कुवाणि, मुग्धस्मितैः कुसुमैरिव मधुकण्टकुलानि बन्धुहृदया-  
न्याकर्षति, जननीपयोधरकलशपयःशोकरसेकादिव जायमा-  
नैर्विलासहसिताङ्कुरैर्दर्शनैर्करलंक्रियमाणमुखकमलके, चारि-

भावः । धम्मिलस्य संयतशानाम् । माणिक्येन्द्रायुधानां शरीरे  
धृतस्नोद्भूतैर्द्रधनुषाम अचिपा प्रभया । किङ्किणीमयः क्षुद्रघंटाप्र-  
चुराः । शिशिजिरे मधुरं शब्दमकुर्वन् । निनर्तिषया नृत्येच्छया ।  
नृत्यतेः सनि ।

एवमिति । यशोवती राज्यश्रियं नारायणमूर्तिर्वसुधामिव  
गर्भेण आधत्तेति संबंधः । देवे चेत्यादीनां हर्ष इत्यनेन संबंधः ।  
उत्तमांगे मूर्धनि निहिता रक्षायैः सर्षपायस्य तस्मिन् । अधुनापि शैत्यादि-  
वातविकारपरिहरणाय सर्पपोषयागः क्रियते । समुन्मिषतः प्रज्वलि-  
ष्यतः प्रतापाग्नेर्यशोवन्हेविस्फुलिंग इव । सर्पपस्य विस्फुलिंगसाम्यम् ।  
गोरोचनया, गोपितेन, पिञ्जरितं, पिशङ्गीकृतं, वपुः, शरीरं, यस्य,  
तास्मिन् गोरोचनायाः ज्ञात्रतेजःसाम्यम् । पीतवर्णत्वात् । हाटके  
सुवर्णे, बद्धानां, खचितानां, विकटानां वक्राणां व्याघ्रनखानां पङ्क्त्या रा-  
ज्या मण्डिता, भूषिता, ग्रीवा कंधरा यस्य तस्मिन् । व्याघ्रनखानां वक्र-

त्र इवान्तःपुङ्खः कदम्बकेन पाल्यमाने, मन्त्र इव सचिवमण्ड-  
लेन रक्ष्यमाणे, वृत्त इव कुलपुत्रकलोकेनामुच्यमाने, यशसी-  
वात्मवंशेन, संवर्ध्यमाने, मृगपतिपोत इव रक्षिपुरुषशस्त्रपञ्ज-  
रमध्यगते, धात्रीकराङ्गुलिलम्बे पञ्चषाणि पदानि प्रयच्छति  
हर्षे, पञ्च वर्षमवतरति च राज्यवर्धने देवी यशोवती गर्भेणा-  
धत्त नारायणमूर्तिरिव वसुधां देवीं राज्यश्रियम् ।

पूणर्षु च प्रसन्नदिवसेषु दीर्घरक्तनालनेत्रामुत्पलिनीमिव  
सरसी, हंसपद्मुरस्वरां शरदमिव प्रावृट्, कुसुमसुकुमारा-  
वयवां वनराजिमिव मधुश्रीः, महाकनकावदानां वसुधारामिव  
द्यौः, प्रभातर्षिणीं रत्नजानिमिव वेला, सकलजननयनानन्दका-  
त्वादर्पां कुरसाम्यं, युक्तमेव । मुग्धैः सुन्दरैः स्मितैर्हास्यैः कुसुमैर्मधुक-  
रकुलानीव भ्रमरसमूहा इव बंधुहृदयानि आपन्ननाम्भ्यार्षति । जन-  
न्याः कलशाविव पयोधरौ, स्तनौ, तयोः, पयसो दुग्धस्य शीकरैः, कणौ,  
सेकादिव सिचनादिव, उदकसेचनादंकुरोत्पत्तिः दंतानां शुभ्रत्वाद्भास  
तां कृत्वासाध्यवर्णन युक्तमेव । चारित्र पातित्रय इव । मृगपतिपोत  
इव सिंहशिशाविव रक्षिपुरुषाणां शस्त्राण्येव पञ्जरस्तभ्य मब्धं गते ।  
धात्र्युपमाता ।

पूणैष्विति देवी दुहितरं प्रसूतवतीति संबंधः । नालानि ना-  
ल्योनेत्रे च नालनेत्रं प्राण्यंगत्वादेकवद्भावः । दीर्घं महद् रक्तं  
ताम्रं नालनेत्रं यस्याः सा दुहिता ताम् (पक्षे) दीर्घाणि रक्तानि  
नालानि पद्मदंडा नेत्राणि मूलानि यस्यास्तामुत्पलिनीं कमलिनीम् ।  
हंस इव हंसैर्वा मधुरः स्वरो यस्यास्ताम् । कुसुमानीव कुसुमान्येव  
धा गात्राणि यस्यास्तां वनराजि वनपंक्तिम् । महाकनकं तिल-  
सुवर्णमिति शंकरः तदिवावदाता शुभ्रा । (पक्षे) महाकनकेनावदाता

रिणीं चन्द्रलेखामिव प्रातेपत्, सहस्रनेत्रदर्शनयोग्यां ज-  
यन्तीमिव शची, सर्वभूभृदभ्यर्थितां गौरीमिव मेना, प्रसृतवती  
दुहिरितम् यया द्वयोः सुतयोरुपरि स्तनयोरिवैकावलीलनया  
नितगमराजत ।

अस्मिन्नेव तु काले देव्या यशोवत्या भ्राता सुतमष्टवर्षदेशीय-  
मुद्धूयमानकुटिलकाकपक्षकशिखण्डं खण्डपरशुहुंकाराग्नि-  
धूपलेखानुवद्रुयानं मकरध्वजमिव पुनर्जातम्, एकेनेन्द्रनील  
कुण्डलांशुश्यामलितेन शरीरार्धेनेतरणं च त्रिकण्टकमुक्ताफला-  
लोकधवलितेन संपृक्तावतारमिव हार्हरयोर्दर्शयन्तम्, पीन-  
प्रकोष्ठप्रतिष्ठित पुण्ड्रलोहवलयं, परशुराममिव क्षत्रक्षपणश्रीण-  
वसुधारा धनवृष्टिः । भार्याधिक्यसूचनाय दिवः सुवर्णावृष्टिः,  
पततीति हि प्रसिद्धिः । वेला समुद्र विकृतिः । शची इंद्राणी ।  
भूभृद्गौरी राजिभिः पर्वतेश्वर । गौरीमिव पावतीमिव । एकावलीलता  
एकयष्टिका मौक्तिकमाला ।

अस्मिन्निति । देव्या यशोवत्या भ्राता स्वतनयं भंडिनामानं  
कुमारयोरनुचरमर्पितवानिति सवंधः । अष्टवर्षदेशीयम् ईषन्न्युना-  
न्यष्टवर्षाणि यम्यतम् । उद्धूयमानः, कंपमानः, काकपक्षकः, शिखा  
एव शिखण्डो बर्धो यस्य तम् । खण्डपरशोः शिवस्य हुंकाराग्नेधूम-  
लेखया धूमराज्याऽनुवद्वाऽनुगतो मूर्धा मस्तकं यस्य ते पुनर्जातं  
पुनरुद्धूतं मकरध्वमिव मदनमिव । कुमारस्य मदनसाम्यं शिखाया  
धूमलेखासाम्यम् । इंद्रनीलकुडलस्यांशुभिः किरणैः, श्यामलितेन,  
कृष्णाभूतेन । त्रिकण्टकस्य कर्माभूषणस्य मुक्ताभतानामालोकेन का-  
न्या धवलितं शुभ्रीकृतं तेन, संपृक्तावतारमेकीभूतावतारम्, एतेन त-  
दा हार्हरयारेकावतारकल्पन्ऽऽसीदिति गम्यते । पीने पुष्टे प्रकोष्ठे

परशुपाशचिह्नितं बालतां गतम्, कण्ठसूत्रप्रथितभङ्गुरप्रवाला-  
ङ्कुरं हिरण्यकाशिपुमिवोरः काठिन्यखागडितनरमिहनखर-  
खण्डम् गृहीतजन्मान्तरं, शैशवेऽपि सावष्टम्भं बीजमिव  
वीर्यद्रुमस्य, भण्डिनामानमनुचरं कुमारयोरर्पितवान् ।

अवनिपतेस्तु तस्योपरि पुत्रयोस्तृतीयस्य नेत्रयोरिवेश्व-  
रस्य तुल्यं दर्शनमासीत् । राजपुत्रावपि सकलजीवलोक-  
हृदयानन्ददायिनौ तेन प्रकृतिदक्षिणेन मधुमाधवाविव मलय-  
मारुतेनोपेतौ नितरारिजतुः । क्रमेण चापरेशेव भ्रात्रा प्रजानन्दन

कूपरादधः प्रदेशे प्रतिष्ठितं पुष्पलोहस्य मणिविशेषस्य बल्यं कटकं  
यस्य तम् । क्षत्रस्य क्षत्रियजातेः क्षपणं नाशेन क्षीणस्य परशोरा-  
युधविशेषस्य पाशो धारणार्ज्जुस्तेन चिह्नितो युक्तस्तम् । पुष्प-  
लोहबल्यं परशुधारणपाशेनोत्प्रेक्षितम् । कण्ठसूत्रेप्रथितो भङ्गुरो वक्र  
प्रवालस्य रत्नावशेषस्याङ्कुरो यस्य तम् । उरःकाठिन्येन बल्लोदाढ्येन  
खण्डितं नरसिंहस्य नखराणां नखानां खण्डयेन तम् । गृहीतं जन्मान्तर-  
मन्यज्जन्म येन तं हिरण्यकाशिपुमिव प्रल्हादपितरमिव । वक्राणां  
प्रवालाङ्कुराणां नृसिहनखचिह्नसाम्यम् । शैशवेऽपि बाल्येऽपि सावष्टम्भं  
सगर्भम् । अतएव वीर्यद्रुमस्य पराक्रमवृक्षस्य बीजमिव ।

अवतीति । अवनिपतेस्तु तस्योपरि पुत्रयोस्तुल्यं दर्शनमालो-  
कनमासीदिति संबन्धः । कथमिव । ईश्वरस्य शंकरस्य तृतीयस्या-  
परि भालस्थलोचनोपरि दर्शनं दृष्टिरिव । ईश्वरस्येति नृपविशेषणं  
च । राजपुत्रावपि राज्यवर्जन्हर्षावपि प्रकृतिदक्षिणेन निसर्गऋजुना  
तेन भण्डिना रिजतुः शुशुभात । सकलजीवलोकस्य हृदयस्यानन्दं  
दत्तरतौ प्रकृतिदक्षिणेन स्वभावसरलेन निसर्गतौ दाक्षिणात्येन च  
मलयमारुतेन वासंतानिलेनोपेतौ मधुमाधवौ चैत्रवैशाखाविव ।



सह चर्चमानौ यौवनमवतेरतुः । स्थिरोरुस्नम्भौ च पृथुप्रकोष्ठौ  
दीर्घभुजागलौ विकटोरःकवाटौ प्रांशुसालाभिरामौ महानगर-  
सन्निवेशाविव सर्वलोकाश्रयश्चमौ बभूवतुः ।

अथ चन्द्रसूर्याविव स्फुरज्ज्योत्स्नायशः प्रतापाक्रान्तभुव-  
नावभिरामदुर्निरीक्ष्यौ, अग्निमारुताविव समभिव्यक्ततेजोबला-  
वेकीभूतौ, शिलाकठिनकायबन्धौ हिमवद्विन्ध्याविवाचलौ,  
महावृषाविव कृतयुगयोग्यौ, अरुणगरुडाविव हरिवाहनवि-  
भक्तशरीरौ, इन्द्रोपेन्द्राविव नाभेन्द्रगतौ, कर्णाजुनाविव

महतान्नगरयोः सन्निवेशाविव स्थाने इव सर्वलोकानामाश्रयम्याधार-  
स्य क्षमौ समर्थौ । स्थिरो स्तम्भाविवोक्त ययोस्तौ ( पक्षे ) स्थिरा  
उरवो महान्तः स्तम्भा ययोस्तौ । पृथू महान्तो प्रकोष्ठौ कूर्पूराधो-  
भागौ ययोस्तौ ( पक्षे ) पृथवो महान्तः प्रकोष्ठः कक्ष्या ययोस्तौ ।  
विकटं विशालमुरःकवाटं वक्त्रःफलिका ययोस्तौ ( पक्षे ) विकटान्युर  
इव कवाटानि द्वाराणि ययोस्तौ । प्रांशू सालौ वृक्षविशेषाविवा-  
भिरामौ सुन्दरौ ( पक्षे ) प्रांशुनोन्नतेन सालेन वप्रेणाभिरामौ ।

अथेति । तौ स्वल्पीयमापि कालेन द्रोपांतरेष्वप्यग्नद्वीपेष्वपि  
रुधातिं प्रसिद्धिं जग्मतुरिति संबंधः । स्फुरन्ती ज्योत्स्नेव चन्द्रिकेव,  
यशः, कीर्तिः, प्रतापः, पराक्रमश्च ताभ्यामाक्रान्तं भुवनतलं याभ्यां  
तौ । अतएवाभिरामौ सुन्दरौ दुर्निरीक्ष्यौ दुर्ग्वलाकनीयौ । यशसा  
सुन्दरौ ( प्रतापेन दुर्निरीक्ष्यावित्यर्थः ) ( पक्षे ) स्फुरज्ज्योत्स्नेव  
यशः प्रताप आतपश्च ताभ्यामाक्रान्तं भुवनतलं याभ्यां तौ ।  
चन्द्रमसो ज्योत्स्नयाभिरामत्वं सूर्यस्यातपेन दुर्निरीक्ष्यत्वं च ।  
समभिव्यक्ते तेजस्तेक्ष्णं प्रकाशश्च बलं सामर्थ्यं च ययोस्तौ ।  
अग्निमारुताविव बन्धिसमीरणाविवैकाभूतौ परस्पराणुवर्तिनौ मिलि-

कुण्डलकिरीटधरौ. पूर्वापरदिग्भागाविव सर्वतेजस्विनामुद-  
यास्तमयसंपादनसमर्थौ, अमान्ताविवानिमानेनासन्नबेलार्ग-  
लनिरोधसंकटे कुकुटीरके, तेजः पराङ्मुखीं छायामपि जुगुप्स-  
मानौ, स्वात्मप्रतिबिम्बेनापि पादनखलप्नेन लज्जमानौ,  
शिरोरुहाणामपि भङ्गेन दुःखमवतिष्ठमानौ, चूडामणिसंक्रान्ते-  
नापि द्वितीयेनातपत्रेणापत्रपमाणौ, भगवति षण्मुखेऽपि  
स्वामिशब्देनासुखायमानश्रवणौ, दर्पणदृष्टेनापि प्रतिपुरुषेण  
दूयमाननयनौ, संध्याञ्जलिघटनेष्वपि शूलायमानोत्तमाङ्गौ,

तौ च । शिलेव शिलाभिर्बा कठिनः कायबधो देहबधो ययोस्तौ ।  
अचलौ दृढौ पर्वतौ वा । हिमवान् हिमानयो विंध्याचलो विंध्या-  
द्रिस्ताविव । महावृषाविव महान्तो बलोवर्दाविव कृतयुगस्य योग्यौ  
( पक्षे ) कृत्वा युगस्य धुगे योग्याऽव्ययनं याभ्यां तौ । अथवा  
वृषपक्षे कृते परिकल्पिते युगे धुरि योग्यावुचितावित्यथः । हरिवाह-  
नेनाश्वाराहणेन विभक्तं सुबद्धं सुपारमाणं शरीरं ययोस्तौ । ( पक्षे )  
हरिश्च हरिश्च हरी कृष्णदिनकरी तथावाहनं याने विभक्तं योजितं  
शरीरं देहो ययोस्ता । 'हरिवातार्कचंद्रौद्रयमोर्पेद्रमरांचिपु । सिंहाश्व-  
कापिभेकादिशुकलोलांतरेषु च' इति विश्वः । नागेन्द्र इव गजराज  
इव गतं गमनं ययोस्तौ । ( पक्षे ) नागेन्द्र ऐरावतः शेषराजश्च  
ता गता प्राप्ता । कर्णाय कुण्डले सूर्येण दत्तः । अर्जुनस्य शिरसि  
। करीटो वृत्रघ्ना बद्धः । सर्वतेजस्विनां वीराश्वामादित्यादीनां  
चादयोऽभ्युदय उद्गमनं चास्तौ नाशस्तिरोभवन् च तत्र समर्थौ ।  
अतिमानेनात्यन्ताभिमानेन महाप्रमाणतश्च चासन्नयाः समीपस्थाया  
बैलायाः समुद्रभर्यादाया अर्गलरूपाया निरोधेन प्रतिबंधेन संकटे  
गहन । कुरेवपृथ्व्येव कुटीरकं छरद्गृहंतस्मिन् अमान्ताविवार्वर्तमा-

जलधरधृतेनापि धनुषा दोदूयमानहृदयौ, आलेख्य क्षि-  
तिपतिभिरप्यप्रणमद्भिः संतप्यमानचरणौ, परिमि-  
तमण्डलसंतुष्टं तेजः सवितुरप्यबहुमन्यमानौ, भूभृदपह-  
तलक्ष्मीकं सागरमप्युपहसन्तौ, बलवन्तमकृतविग्रहं  
मारुतमपि निन्दन्तौ, हिमवतोऽपि चमरीबालव्यजन-  
वीजितेन दह्यमानौ, जलधीनामपि शङ्खैः खिद्यमानौ चतुः-  
समुद्राभ्यपतिमपरं प्रचेतसमप्यसहमानौ, अनपहतच्छत्रानपि  
बिच्छायावनिपालान्कुर्वाणौ, साधुष्वप्यसेवितप्रसन्नौ मुखेन  
नाविव ( समुद्रमर्यादितायां भुवि महामानवत्वेनातिष्ठन्ताविवेति  
तात्पर्यार्थः ) शिरोरुहाणां केशानामपि भंगन ( कर्तनादाविति  
भावः चूडामणौ शिरोभूषणे संक्रान्तेनापि पतितेनापि आत-  
पत्रेण छत्रेण लज्जमानौ ( चूडामणिषु प्रतिविम्बितमपि द्विती-  
यमातपत्रमसहमानावित्यर्थः ) षण्मुखेपि, कातिकेयेपि, स्वामिशद्र-  
भाजमश्वौकुर्वन्तावित्यर्थः । संध्यायां संध्योपासने । अञ्जलिघट-  
नेष्वपि, नमस्कारेष्वपि । दोदूयमानमतिशयेन पीड्यमानं हृदयं  
ययोस्तौ । आलेख्यनृपातिभिश्चित्रस्थराजभिरप्रणमद्भिरकृतनमस्कारैः  
संतप्यमानौ कुप्यन्तौ चरणौ पादौ ययोस्तौ, परिमितेन परिगणि-  
तेनाल्पेनेत्यर्थः, मण्डलेन विषयेण विबेन च संतुष्टं सवितुः सूर्य-  
स्यापि तेजोऽबहुमन्यमानौ भूभृतामंरिणापहृता लक्ष्मीर्यस्य तं  
सागरमपि समुद्रमपि अकृतो विग्रहः तमरः । कायश्च येन तम् ।  
मारुतस्य शरीराभावादूपरहितस्पर्शवत्वरूपतल्लक्षणादशरीरत्वस्य  
प्रतीतेः । अनपहतमगृहीतमातपत्रं छत्रं येषां तानपि बिच्छाया-  
न्मलिनान् । पराजयेनेति भावः । गृहीतातपत्रा अपि बिच्छाया  
इति विरोधः । साधुष्वपि सदाचारेष्वप्यसेवितेन सेवया विना

मधु क्षरन्तौ. दुष्टराजवंशानूष्मणा दूरस्थितानपि म्लानिमा-  
नयन्तौ, अनुदिवसं शस्त्राभ्यासश्यामिकाकलङ्कितमशेषरा-  
जकप्रतापाग्निनिर्वपणमलिनमिव करतलमुद्रहन्तौ, योग्या  
कालेषु धीरैर्धनुर्ध्वनिभिरभ्यर्णोपभोगाद्दिग्वधूभिरिवालप-  
न्तौ, राज्यवर्धन इति हर्ष इति सर्वस्यामेव पृथिव्यामावि-  
र्भूतशब्दप्रादुर्भावौ, स्वल्पीयसैव कालेन द्वीपान्तरेष्वपि  
प्रकाशतां जग्मतुः ।

एकदा च तावाहूय भुक्तवानभ्यन्तरगतः पिता सस्नेहम-  
वादीत्—‘ वत्सौ, प्रथमं राज्याङ्गं दुर्लभाः सद्गत्याः । प्रायेण  
परमाणव इव समवायेष्वनुगुणीभूय द्रव्यं कुर्वन्ति पार्थिव  
प्रसन्नौ मुखेन मधुक्षरन्तौ मधुरं भाषमाणौ । साधुभूतसकाले-  
ष्वप्यसेविता प्रसन्ना मद्यं याभ्यां तथाभूतावपि मुखेन मधु  
क्षरन्ताविति विरोधः । अथवा साधुषु सतामुपरि असेवितप्रस-  
न्नावपि अपीतमद्यावपि मुखेन मधु क्षरन्ताविति विरोधो ज्ञेयः,

दुष्टेति । ऊष्मणा दाहशक्त्या । तथा समीपस्थो म्लानो  
भवति न तु दूरस्थ इति विरोधः । शस्त्राणामभ्यासस्य श्याम-  
लक्या क्रियोन प्रथितेन कलङ्कितं मलिनम् अशेषस्य सकलस्य  
राजकस्य राजसमूहस्य प्रतापाग्नेः शौर्वाग्नेर्निर्वपणेन शमनेन  
मलिनमिव । वन्देः शमनेन शांतांगारेण हस्तो मलिनो भवति  
योग्याया अध्ययनस्य कालेषु । धीरैर्गभीरैर्धनुर्ध्वनिभिर्धनुःशब्दै  
अभ्यर्णोपभोगात्समीपागतो य उपभोगः सेवारूपस्तस्मात् । आवि-  
र्भूतः शब्दाप्रादुर्भावो नामप्रसिद्धिर्यथोक्तौ ।

एकदेति । प्रायेण जुद्धा नीचा समवायेषु समूहेषु अर्था-  
न्मंत्रिसभायामनुगुणीभूय प्रविश्य पार्थिवं नृपं द्रव्यं स्वरक्ती

क्षुद्राः । क्रीडारसेन नर्तयन्तो मयूरतां नयन्ति बालिशः ।  
 दर्पणमिवानुप्रविश्यात्मीयां प्रकृतिं संक्रामयन्ति पल्लविकाः ।  
 स्वप्ना इव मिथ्यादर्शनैरसद्बुद्धिं जनयन्ति विप्रलम्भकाः ।  
 गीतनृत्यहसितैरुन्मत्ततामावहन्त्युपेक्षिता विकारा इव वाति-  
 काः । चातका इव तृष्णावन्तो न शक्यन्ते ग्रहीतुमकुली-  
 नाः, मानसे मीनमिव स्फुरन्तमेवाभिप्रायं गृह्णन्ति जालिकाः ।  
 यमपट्टिका इवाम्बरे चित्रमालिखन्त्युद्धीतकाः । शल्यं हृदये  
 निक्षिपन्त्येतिमार्मणाः । यतः सर्वदोषाभिषङ्गैरसंगतौ बहुधोप-  
 धाभिः परीक्षितौ शुची विनीतौ विक्रान्तावभिरूपौ मालवराजपु-  
 त्रौ भ्रान्तौ भुजाविव मे शरीरादव्यतिरिक्तौ कुमारगुप्तमाधवगुप्ता-

दनकं कुर्वन्ति ( तन्मन्त्रिषु स्वप्रवेशं कृत्वा नृपाद्धनं हरन्तीत्यर्थः )  
 यथा परमाणवः सूक्ष्माः अवयवाः समबायेषु तादृशसंबन्धेष्वनु-  
 गुणीभूय घटकीभूय पार्थिवं पृथ्वीसंबन्धि द्रव्यं कुर्वन्ति तद्वत् ।  
 बालिशः धूर्ताः कुमाराश्च । क्रीडारसेन नर्तयन्तो मयूरतां हास्यत्वम्,  
 कुमाराश्च क्रीडायां मयूरान्नर्तयन्ति । पल्लविका विटाः किसलयानि  
 च । अनुप्रविश्य चित्तं रंजयित्वा आक्रम्य च । आत्मीयां प्रकृतिं  
 स्वीयं दौरात्म्यं शरीरं च, विप्रलम्भका प्रतारका असच्छास्त्रनिर्तारो  
 वा वातिका धूर्ता वातजा विकारा वा । तृष्णावतोऽकुलीना ग्रहीतुं न  
 शक्यन्ते तेषां तृष्णायाः कदापि शमनासंभवात् । चातका अपि  
 कौ पृथ्व्यां लीना न भवन्ति खेचरत्वात्तेषाम् । जालिका मायाविनः  
 कैवर्ताश्च । मानसेऽन्तःकरणे सरोविशेषे च । स्फुरत्मुत्पद्यमानमेवा-  
 भिप्रायं स्फुरन्तं चलन्तं मीनं मत्स्यमिव । यमपट्टो धर्मराजप्रकृति-  
 युतः पट्टो विद्यते येषां ते । उद्धीतका उच्चैर्गीतं गानं येषां ते ।  
 अङ्गं आकाशे चित्रमालिखन्त्यसंभाव्यनर्थानारभन्ते । वक्ष्ये च

‘यस्माभिर्भवतोरनुवर्त्तवार्थमिमौ निर्दिष्टौ, अनयोरुपरि भवद्भ्या-  
नपि नान्यपरिजन समवृत्तिभ्यां भवितव्यम्’ इत्युक्त्वा  
तयोराल्लानाय प्रतीहारमादिदेश ।

नचिराद्द्वारदेशनिहितलोचनौ राज्यवर्धनहर्षौ प्रतीहा-  
रण सह प्रविशन्तम् अग्रतो ज्येष्ठमष्टादशवर्षवयस नात्युच्चं  
नातिखर्वमतिगुरुभिः पदन्यासैरनेकेनरपतिसंचरणचलां निश्च-  
लीकुर्वाणमिवोर्वीम्, अनवरताभ्यस्तलङ्घनघनोपचयकठिन  
मांसमेदुरादूरुद्वयान्निष्पततेवानुल्वणजानुग्रंथिप्रसूतेनतनुतरज-  
ङ्घाकाण्डयुगलेन भासमानम्, उल्लिखितपार्श्वप्रकाशितकशिप्ता  
मन्दरमिव सुरासुररभसभ्रमितवासुकिकषणक्षीणेन मध्येन  
लक्ष्यमाणम्, अतिविस्तीर्णंनोरसा स्वामिसंभावनानामपरि-  
मितानामवकाशमिव प्रयच्छन्तम्, प्रलम्बमानस्य भुजयुगलस्य

चित्रकर्माचरन्ति । अतिमार्गेणात्यन्तं याचकाः दृढाः शराश्च ।  
शल्यं विषादं शंकुं च । सर्वैर्दोषाभिर्षणैर्दोषसंपर्कैः । उपधाभिर्भृत्य-  
परीक्षणोपायैः । अन्यपरिजनसमा इतरमेव कतुल्या वृत्तिवर्तनंतया ।

न चिरादिति राज्यवर्धनहर्षौ प्रतिहारं सह प्रविशन्तमग्रतो  
ज्येष्ठं कुमारगुप्तं पृष्ठतश्च तस्य कनीयांसं माधवगुप्तं दशतुरिति  
संबन्धः । अष्टादश वर्षाणि वयो यस्य तं नातिखर्वं नातिवामनं  
पादन्यासैश्चरणसंक्रमणैरनेकेषां नरपतीनां संचरणेन गमनेन  
चलामुर्वी पृथ्वीं निश्चलीकुर्वाणं स्थिरोकुर्वाणमिव । अनवरतं  
सततमभ्यस्तेन कृतेन लंघनेनोद्धानेन गमनेन वा घनो दृढ उपचयो  
वृद्धिर्यस्य तस्मादूरुद्वयादंकद्वयाद् । अनुल्वणाया अनुद्धताया  
जानुग्रंथः । प्रसूतेन जातेन । तनुतरेण सूक्ष्मेण जंघाकाण्डद्वयेन  
प्रसृतायुगलेन भासमानं शोभमानम् । उल्लिखिताभ्यां तनूभूताभ्यां

निभृतललितैर्विद्वेषैरतिदुस्तरं तरन्तमिमं यौवनोदधिम, वाम  
करकटकमाणिक्यमरीचिमञ्जरीजालिन्या समुद्भिद्यमानप्रतापान-  
लशिखापल्लवयेव चापकिणलेखयाङ्कितपीवरप्रकोष्ठम्, आलो-  
हिनीमुखांसनटावलम्बिनीमस्त्रग्रहणव्रतविधृतां रौरवीमिव  
त्वचं कर्णाभरणमणेः प्रभां बिम्बाणम् उत्कोटिकेयूरपत्रमङ्ग-  
पुत्रिकाप्रतिबिम्बगर्भकपोलं मुखं चन्द्रमसमिव हृदयस्थित-  
रोहिणीकमुद्रहन्तम्, अचपलस्तिमिनतारकेणाधोमुखेन चक्षुषा  
शिक्षयन्तमिव लक्ष्मीलाभो तानिवमुखानि पङ्कजवनानि  
विनयम् स्वास्थ्यनुरागमिवामलातकमुत्तंसीकृतं सिरसा धार-  
यन्तम्, निदंयाकर्षणभङ्गभीततया सकलकार्मुकार्पितामिव  
नम्रतां ! प्रकाशयन्तम्, शैशव एव निर्जितैरिन्द्रियैररिभिरिव  
सयतैः शोभमानम्, प्रणयिनीमिव विश्वासभूमिं कुलपुत्रतामनु-  
पाश्वर्भाभ्यां कक्षाधोभागाभ्यां प्रकाशितः प्रकटितः काशमा कशता  
यस्य तेन मध्येन कटिना । सुरासुरैः, रभसेन वेगेन भ्रमिता वासुकि  
शेषराजस्तेन कषणं घषणं तेन क्षीणेन मध्येनोपलक्ष्यमाणं मंदार-  
मिव मदार पर्वतमिव । अवकाश स्थलमिव प्रयच्छन्तं ददानम् ।  
निभृतललितैर्गभीरमनोहरैः वामकरस्य सव्यहस्तस्य माणिक्यकटकस्य  
माणिक्यवल्लयस्य मरीचिमञ्जरीणां किरणानां जालं समूहो विद्यते  
यस्यास्त्रया चापकिणलेखया चापत्रणचिन्हराज्या समुद्भिद्यमान-  
स्पोद्गच्छतः प्रतापानलस्य सिखापल्लवया शिखापल्लवनेव । अस्त्र-  
ग्रहणं शस्त्रत्वोकारस्तस्य व्रते विधृतां शस्त्राध्ययन कालेऽङ्गीकृतम्  
रौरवीं मृगसंबन्धिनीम् । उत्कोटिकस्योध्वाग्रभागस्य केयूरस्यांगदस्य  
पत्रभंगपुत्रिका रचनाविशेष उल्लिखिता शालभञ्जिका तस्याः  
प्रतिबिम्बगर्भमध्ये यस्य तादृशः कपोलो यस्य तन्मुखं हृदयस्थित

वर्तमानम्, तेजस्विनमपि शीलेनाह्लादकेन सवितारमिव यशिनान्तर्गतेन विराजमानम् अचलानामपि कायकार्कश्येन गन्धनमिवचारन्तम्, दर्शनक्रीत मानन्दहस्त विक्रीणानमिव जनं सौभाग्येन, कुमारगुप्तम्, पृष्ठतस्तस्य कनीयांसमतिप्रांशुतया गौरतया च मनःशिलाशैलमिव सञ्चरन्तम्, अनुत्वणमालतीकुसुमशेखरनिभेन निर्जिगमिषता गुरुणा शिरभि चुम्बितमिव यशसा, परस्परविरुद्धयोर्विनयौवनयोश्चिरात्प्रथमसङ्गमचिह्नमिव भ्रूसङ्गतकेन कथयन्तम्, अतिधीरतया हृदयनिहितां स्वामिभक्तिमिव निश्चलां दृष्टिं धारयन्तम्, अच्छाच्छचन्दनरसानु-

रोहिणी यस्य तादृशं चंद्रममिवोद्वहता । चतुषाजातवक्त्रचनमूलक्ष्म्यश्रियः लाभेनोत्तानितान्युपरि कृतानि मुखानि यैस्तानि । अम्लातकं ताम्रकरंटक पुष्पम् । अतएव तस्यानुरागसादृश्यम् । उत्तंसीकृतं शेखरतां नीतम् । निर्दयं दृढ यदाकर्षणं तेन भङ्गो नाशस्तस्य भीततया भीत्या सकलैः कामुकैधनुर्भिरर्पितां दत्तामिव । कायकार्कश्येन देहदार्ढ्येनाचलानां पर्वतानां गन्धनमर्दनमिव । दर्शनेनावलोकनेन क्रीतमावर्जितं जनं सौभाग्येन तद्रूपमूल्येनानन्दहस्ते आनन्दरूपक्रेतुर्हस्ते विक्रीणानमिव । अवलोकनेनैव वश्यतां नीतमतएव क्रीतं जनमानन्दभाजं विदधात्यत आनन्दहस्ते विक्रीणीत इत्युक्तम् । विक्रीणान इति रूपं विपूर्वकात्क्रीणातेः “परिव्यवेभ्यः क्रियः” इत्यनेनात्मनेपदेशानचि निष्पन्नम् । तस्य कुमारगुप्तस्य । उन्नतत्वाद्गौरवणत्वाच्च मनःशिलाशैलसाम्यम् । अनुत्वणस्याव्यक्तस्य मालतीकुसुमशेखरस्य निभेन मिषेण निर्जिगमिषता बहिरागन्तुमिच्छुना गुरुणा महता यशसा शिरसि चुम्बितमिव । यशसः शुभ्रत्वाच्छे-



लपेशीतलं संनिहितहारोपधानं वक्षःस्थलमनन्तसामन्त-  
संक्रान्तिश्रान्तायाः श्रियो विशालं शशिमणिशिलापट्टशयनमिव  
विभ्राणम् , चक्षुः कुरङ्गकैर्घोणावंशं वराहैः स्कन्धपीठं  
महिषैः प्रकोष्ठबन्धं व्याघ्रैः पराक्रमं केसरिभिर्गमनं  
मनङ्गजैर्मृगयाश्रपितशेषैर्भित्तिरुत्कोचमिव दत्तं दर्शयन्तं माथव-  
गुप्तं ददृशतुः ।

प्रविश्य च दूरादेव चतुर्भिरङ्गैरुत्तमाङ्गेन च गां स्पृशन्तौ  
नमश्चक्रतुः । स्निग्धनरेन्द्रदृष्टिनिर्दिष्टामुचितां भूमिं भेजाते ।  
मुहूर्तं च स्थित्वा भूपतिरादिदेश तौ—अद्य प्रभृति भवद्भ्यां  
कुमारावनुवर्तनीयौ ' यथाज्ञापयति देवः ' इति मेदिनी-  
दोलायमानमौलिभ्यामुत्थाय राज्यमर्धनहर्षां प्रणमतुः ।

खर साम्यम् (शेखरं चानुलग्णविशेषणेन तस्य विनीतत्वं व्यज्यते)  
भ्रमङ्गतकेन विनयेन भ्रवोरन्तरालं धृतैः शैः । एतेन तदानीं  
भ्रुकुट्योरन्तरालवर्तिनां केशानामच्छेदनरीतिर्मन्यजनेष्वासीदि-  
ज्ञायते । ।च्छाच्छस्यातिष्वच्छस्य चन्दनरसभ्यानुलेपनेन शीतलं  
हिमं सन्निहितं स्थापितं हार एव मौक्तिकमालावोपधानमुपबर्हो  
यस्य तत् । अनितेष्वास्त्ररूपेण; सामन्तेषु, प्रतिभूषेषु, सन्क्रान्त्या  
सन्क्रमणेन श्रान्तायाः विभ्रायाः श्रिया राजलक्ष्म्या विशालं  
महत् शशिमणिशिलापट्टमेव चन्द्रकान्तशिलाखण्डमेव शयनम् ।  
घोषा नासिकैव वशो वेणुरुन्नतत्वात् । उत्कोचमिव गुप्तोपहारमिव ।

प्रविश्येति । चतुर्भिरङ्गैर्जानुभ्यां हस्ताभ्यां च । गां पृथ्वीम् ।  
स्निग्धेन प्रेमवता नरेन्द्रेण नृपेण दृष्ट्या निर्दिष्टा दर्शिता-  
मुचितां सेवयोग्याम् । मेदिन्यां पृथ्व्यां दोलायमानाभ्यां  
मस्तकाभ्याम् । निमेषोन्मेषाविव संकोचविकासाविव ।

नौ च पितरम् । ततश्चारभ्य क्षणमपि निमेषोन्मेषाविव  
चक्षुर्गो वरादनपयान्तावुच्छ्वासनिःश्वासाविव नक्तदिवमभि-  
मुखस्थितौ भुजाविव सततपार्श्ववर्तिनौ कुमारयोस्तौ बभूवतुः ।

अथ राज्यश्रीरपि नृत्यगीतादिषु विदग्धासु सखिषु  
सकलासु कलासु च प्रतिदिवसमुपचीयमानपरिचया शनैः  
शनैरवर्धत । परिमितैरेव दिवसैर्यौवनमारुरोह । निपेतु-  
रेकस्यां तस्यां शरा इव लक्ष्यभुवि भूभुजां सर्वेषां दृष्टयः ।  
दूतप्रेषणादिभिश्च तां ययाचिरे राजानः ।

कदाचित् राजान्तःपुरप्रासादस्थितो बाह्यकक्ष्याव-  
स्थितेन पुरुषेण स्वप्रस्तावगतां गीयमानामार्यामशृणोत् ।

‘उद्वेगमहावर्ते पातयति पयोधरोन्नमनकाले ।

सरिदिव तटमनुवर्षे विवर्धमाना सुता पितरम्’ ॥५॥

तां च श्रुत्वा पार्श्वस्थितां महादेवीमुत्सारितपरिजनो

अथेति—नृत्वं नर्तनं गीतं गानं चादि प्रमुखं यासां तासु  
विदग्धासु पण्डितासु सखीषु मनोहरासु सकलासु कलासु च ।  
उपचीयमानो वर्धमानः यरिचयो यस्याः सा ।

कदाचिदिति—बाह्य कक्ष्यायां प्रासादस्य बहिःप्रकोष्ठे ।

उद्वेगेति । अनुवर्षं प्रतिहायनं प्रतिवर्षाकालं च । वर्धमाना  
सुता कन्या पयोधरयोः स्तनयोः पयोधराणां मेघानां चोन्नमनस्यो-  
न्नमनस्य काले तारुण्ये वर्षाकाले च । पितरं जनकमुद्वेगस्य  
मानसपीडाया महत्यावर्ते आवर्तने ( पक्षे ) उद्वेग इव महावर्ते  
महत्यंभसां भ्रमे पातयति । कथमिव सरिन्नादी तटं तीरमिव ।  
‘आवर्तेष्विचतने वारिभ्रमे चावर्तने पुमान्’ इति मेदिनी ॥५॥

ह्यं चेति । उत्सारिता दूरीकृताः परिजना येन सः । पार्श्वे

जगाद—‘देवि, तरुणीभूता वत्सा राज्यश्रोः । एतदीया गुणवत्तेव क्षणमपि हृदयान्नापयाति मे चिन्ता । यौवनारम्भ एव च कन्यकानामिन्धनीभवन्ति पितरः संतापानलस्य । हृदयमन्धकारयति मे दिवसमिव पयोधरोन्नतिरस्याः । केनापि कृता धर्म्या नाभिमता मे स्थितिरियं यदङ्गसंभूतान्यङ्गलालितान्यपरित्याज्यान्यपत्यकान्यकाण्ड एवागत्यासंस्तुतैर्नीयन्ते एतानि तानि खल्वङ्गनस्थानानि संसारस्य । सेयं सर्वाभिभाविनी शोकाग्नेर्दीहशक्तिर्यदपत्यत्वे समाने जानाया दुहितरि दूयन्ते सन्तः । एतदर्थं जन्मकाल एव कन्यकाभ्यः प्रयच्छन्ति सलिलमश्रुभिः साधवः । एतद्भयादकृतदारपरिग्रहाः परिहृतगृहवसतयः शून्यान्यरण्यान्यधिशेरते मुनयः । को हि नाम सहते विरहमपत्यानाम् । यथा यथा समापतन्ति दूता वराण वराकी लज्जमानेव चिन्ता तथा तथा नितरां प्रविशति मे हृदयम् । किं क्रियते । तथापि गृहगतैरनुगन्तव्या एव लोकवृत्तयः । प्रायेण च सत्स्वप्यन्येषु वरगुणेष्वभिजनमेवानुरुध्यन्ते धीमन्तःधरणीधराणां च मूर्ध्नि स्थितो मातृश्वरः पादन्यासइव सकलभुवननमस्कृतो मौखरीवंशः । तत्रापि तिलकभूतस्याव-

समीपे स्थिताम् । तरुणीभूता यौवनमाश्रिता । एतदीयेति । हृदयादनपगमनमेव गुणवत्तार्याश्चिन्तापायाश्च साम्यम् । पयोधरयोः स्तनयोर्मेषानां चोन्नतिः । धर्म्या धर्म्या प्राप्या ! इयं स्थितिराचारो नाभिमता, न मान्या, अकाण्ड एवातर्कितमेव । असंस्तुतैरपरिचितैः । अङ्गनस्थानानि चिन्हस्थानानि । शून्यान्यरण्यानीति । वराकी दीना । गृहगतैर्गृहस्थैः । अभिजनं कुलम् धरणीधराणां नृपाणां पर्वतानां च । सकलेन भुवनेन नमस्कृतो वन्दितः । ग्रहपतिरिव सूर्य

न्तिवमणः सूनुरग्रजो ग्रहवर्मा नाम ग्रहपतिरिव गां गतः  
पितुरन्यूनो गुणैरेनां प्रार्थयते । यदि भवत्या अपि मतिरनुमन्य-  
ते ततस्तस्मै दातुमिच्छामि' इत्युक्तवति भर्तारि दुहितृस्नेहका-  
तरतरहृदया साश्रुलोचना महादेवी प्रत्युवाच—'आर्यपुत्र,  
सर्वधनमात्रोपयोगिन्यो धात्रीनिर्विशेषा भवन्ति खलु मातरः  
कन्यकानाम् । दाने तु प्रमाणमासां पितरः । केवलं कृपाकृत-  
विशेषः सुदूरेण तनयस्नेहादतिरिच्यते दुहितृस्नेहः । यथा  
यावज्जीवमावयोरार्तिता प्रतिपद्यते तथार्यपुत्र एव जानाति'  
इति ।

राजा तु जातनिश्चयो दुहितृदानं प्रति समाहूय सुतावपि  
विदितार्थावकाशीन् । शोभने च दिवसे ग्रहवर्मणा कन्यां  
प्रार्थयितुं प्रेषतस्य पूर्वागतस्यैव प्रधानदूतपुरुषस्य करे  
सर्वराजकुलसमक्षं दुहितृदानजलमपातयत् । जातमुदि

इव । दुहितृस्नेहेन कन्याप्रेम्णा कातरं भीरु हृदयं यस्याः सा ।  
धात्रीनिर्विशेषा धात्र्या निर्गतो विशेषो यस्याः सा । उपमातृसदृश  
इयथः । 'धात्री जनन्यामलङ्क्री वसुमन्युपमातृषु' इति मेदिनी ।  
आर्तिता मनःपीडात्वम् ।

राजेति । जातमुदीति । एव राजकुलमासीदिति संबंधः ।  
उद्दामं सानिध्यं दीयमानैस्तांबूलैः पटत्राणैः सुगंधिचूर्णैः कसुमैः  
पुष्पैश्च प्रसाधिता अलङ्कृताः सर्वलङ्काः यस्मिन् । सकल-  
देशेष्वदिश्यमानमाज्ञाप्यमानंशिल्पिसार्थानां कारुसमूहानामागमनं  
यस्मिंस्तत् अवनिरालपुरुषे राजसेवकैर्गृहीतः स्वीकृतः समग्रैः  
सकलैर्गोमीणैः ग्राम्यैः जनैरानीयमान उपकरणसंभारः  
साधनसमूहो यस्मिंस्तत् । राज्ञां नृपाणां दौवारिकैर्द्वार-

कृतार्थं गते च तस्मिन्नासन्नेषु च विवाहदिवसेषूद्दाम-  
दीयमानताम्बूलपटवासकुसुमप्रसाधितसर्वलोकम, स कलदेसा-  
दिश्यमानशिल्पिसार्थागमन . अवनिपालपुरुषगृहीतमसमग्र-  
ग्रामीणानीयमानोपकरणसम्भारम् , राजदौवारिकोपनीय-  
मानानेकनृपोपायनम्, उपनिमन्त्रितागतबन्धुवर्गसंवर्गजव्यग्र-  
राजवल्लभम् , लब्धमधुमदमचण्डचर्मकारकरपुटोललालित-  
कोणपटुविद्यदृतरणनमङ्गलपटहम् , पिष्टपञ्चांगुलमण्यमानो-  
लूखलमुसलशिलाद्युपकरणम्, अशेषाशाखामुखाविभूर्तेचारण-  
परम्परापूर्यमाणप्रकोष्ठप्रतिष्ठाप्यमानेन्द्राणीदेवतम् . सित-

रक्तकैरुपनीयमानान्यनेकानि नृपाणामुपायनान्युपहारा यस्मिंस्तत्  
उपनिमन्त्रितस्याहूनस्यागतस्य बन्धुवर्गस्याप्तसमूहस्य संवर्गो  
स्वागते व्यग्रा राजवल्लभा यस्मिन् , लब्धस्याधि-  
गतस्य मधुनो मद्यस्य मदेन प्रचण्डा भयंकराश्चर्मकाराः  
पादूकृतस्तैः करपुटैरुल्लालिताः कम्पिताः कृतसंस्कारा वाः  
कोणा भेरीदण्डास्तैर्यत्पटु विद्यदृतं ताडनं तेन रणन्त  
शब्दं विदधतो भेरीसमूहाः यस्मिंस्तत् । पिष्टस्य सुधाचूर्णस्य  
पञ्चांगुलं पिष्ट पञ्चांगुलम् ( सुधालिप्तानामंगुलीनां पंचक-  
मित्यर्थः ) तेनमण्ड्यमानम् उलूखलमुसलशिलादि उपकरणं  
साधनं यस्मिंस्तत् । अद्य यावद् उलूखलादिचित्रीकरणा-  
पद्धतिर्विवाहे वर्तते । अशेषालामुखेभ्योऽखिलाभ्यो दिग्भ्य  
आत्रिभूतया आगतया चारणां बन्दिनां परंपरया पूर्यमाणो  
व्याप्ते प्रकोष्ठेऽलिन्दे प्रतिष्ठाप्यमानः , इन्द्राणीदैवतं यस्मिन् ।  
विवाहे शय्याः पूजनमावश्यकम् । सितैः शुभ्रैः कुसुमैः  
पुष्पैर्विलेपनैः अङ्गरागैर्वसनैर्वस्त्रैश्च सत्कृतैर्भूषितैः सूत्रधारैः

कुसुमविलेपनवसनसत्कृतैः सूत्रधारैरादीयमानविवाहवेदी-  
सूत्रपातम् , उत्कूर्चककरैश्च सुधाकर्परस्कन्धैरधिरोहिणी-  
समारूढैर्वैर्धवलीक्रियमाणाप्रासादप्रतोलीप्राकारशिखरम् ,  
श्रुण्णक्षाल्यमानकुसुम्भकसम्भाराम्भःप्लवरज्यमानजनपादपल्ल-  
वम् , निरूप्यमाणयौतकयोग्यमातङ्गतुरङ्गतरङ्गिताङ्गम् , गण-  
नाभियुक्तगणकगणगृह्यमाणलघुगुणम् , गन्धोदकवाहिमकर-  
मुखप्रणालीपूर्यमाणक्रीडावापीसमूहम् , हेमकारचक्रप्रक्रान्त-  
हाटकघटनटाङ्कारवाचालितालिन्दकम् , उत्थापिताभिनवभि-  
न्निपात्यमानबडलवालुकाकण्ठकालेपाकुलालेपकलोकम् , चतुर-

स्थपतिभिरादीयमानो रच्यमानो विवाहवेद्याः सूत्रस्य परिमाण-  
रज्ज्वाः पातो रचनारम्भः यस्मिन् । उन्मुखा उर्ध्वमुखाः कूर्चकाः  
( " कुंचला " इति भाषायां प्रसिद्धाः ) करेषु येषां तैः सुधायाः  
कर्पराः कपालाः स्कन्धेषु येषां तैः । अधिरोहिणीं सोपनमार्गं  
( शिठी ) इति भाषायां प्रसिद्धामधिरूढैर्धवैः पुरुषैर्धवलीक्रिय-  
माणानि प्रासादस्य राजगृहस्य प्रतोलीप्राकारस्य मार्गवप्रस्य  
शिखराणि यस्मिन्स्तत् , लुण्णशचूर्णीकृतः क्षाल्यमानः स्वच्छी-  
क्रियमाणाः कुसुम्भसम्भारः काश्मीरजघमूहस्तस्यांभःप्लवेनेोदक-  
पूरेण रज्यमाना रक्तीक्रियमाणा जनानां पादपल्लवा यस्मिन्  
निरूप्यमाणा यौतकयोग्या दुहितृदानकाले जामात्रे दातुं योग्या  
मातङ्गा हस्तिनस्तुरङ्गा अश्वाश्च तैस्तरङ्गितमङ्गनं यस्थ तत् ।  
गणनायां सन्ख्यानेऽभियुक्तेन नियुक्तेन गणकगणेन मौहूर्तिक-  
समूहेन गृह्यमाणां लघुस्य वेषादेर्गुणा यस्मिन् । गन्धोदकं  
सुगन्धिवारि वहन्ति ताभिर्मकरस्य मुखं यासां ताभिः  
प्रणालीभिर्जलनिसरणमार्गैः पूर्यमाणः क्रीडावापीसमूहः

चित्रकरचक्रवाललिख्यमानमंगल्यालेख्यम् . लेप्यकारकदम्ब-  
 कक्रियमाणं मृण्मयीनकुर्ममकरनारिकेलकदलीपूगवृत्तकम् ,  
 क्षितिपालैश्च स्वयमावद्धकक्षैः स्वाम्यर्पितकर्मशोभासंपादना-  
 कुलैः सिन्दूरकुट्टिमभूमीश्च मसृणयद्भिर्विनिहितसरसानर्पण-  
 हस्तान्विन्यस्तालककपटलांश्च चूताशोकपल्लवलांछित-  
 शिखरानुद्वाहविनर्दिकास्तम्भानुत्तम्भयद्भिः प्रारब्ध विविध-  
 व्यापारम् , आसूर्योदयाच्च प्रविष्टाभिः सतीभिः सुभगाभिः  
 सुवेशाभिरविधवाभिः सिन्दूररजोराजिराजितलटाटाभिर्वधूवर-  
 गोत्रग्रहणगर्भाभिः श्रुतिपुत्राणि मंगलानि गायन्तीभिर्बहु-  
 विधवर्णाकादिर्घांगुलीभिर्ग्रीवासूत्राणि च चित्रयन्तीभिश्च-  
 क्रीडायै निर्मिताः कूपानां समूहो यस्मिन् । हेमकारचक्रेण  
 सुवर्णकारसमूहेन प्रक्रान्तं प्रारब्धं हाटकघटनं सौवर्णालंकार-  
 निर्माणं तस्य टांकाराणां शङ्केन वाचालितोऽलिन्दः प्रकोष्ठो  
 यस्मिन् । उत्थापिताः समुद्धिताः याः अभिनवाः नृणाः  
 भित्तयः तासुपात्यमानः बहुलाः बालुकानां कण्ठकानां कणाः  
 यस्मिन् , एतादृशो, य, आलेपः, तस्मिन् आकुलाः व्यप्राः  
 आनेपकलोकाः, कारवः, यस्मिन् । चतुराणां चित्रकाराणां  
 चक्रवालेन समूहेन लिख्यमानानि मांगल्यानि मङ्गलसम्बन्धी-  
 न्यालेख्यानि, चित्राणि, यस्मिन् । लेप्यकारकदम्बेनालेपकव-  
 र्गेण क्रियमाणा मृण्मयी मीना मत्स्याः कूर्मा नारिकेल-  
 कदलीपूगवृत्ताः यस्मिन् , क्षितिपालान्विशिनष्टि । आबद्ध-  
 कक्षैर्बद्धपरिकरैः । स्वामिनाऽर्पितस्य नृपेणाज्ञापितस्य कर्मणः  
 शोभायाः, सम्पादन आकुलैः, सिन्दूरकुट्टिमभूमीः सिन्दूरप्रस्तर-  
 भुवो मसृणयद्भिः श्लक्ष्णीकुर्वद्भिः ।

त्रपत्रलतालेश्वकुशलाभिः कलशांश्च धवलितान्शीतलशाराजिर-  
श्रणश्च मण्डयन्तीभिराभत्रपुटकर्पासतूलपलुवांश्च वैवाहिक-  
कङ्कुणोर्णासूत्रसंनाहांश्च रञ्जयन्तीभिर्बलाशनाघृतनीकृतकुङ्कुम-  
कल्कमिश्रितांश्चाङ्गरागाल्हावण्यविशेषकृन्ति च मुखालेपनानी  
कल्पन्तीभिः कक्कालमिश्राः सजानीफलाः स्फुरत्फलतस्फाटिक-  
कर्पूरशकलखचिचिचान्तराला लवङ्गमाला रचयन्तीभिः समन्ता-  
त्सामन्तसीमन्तिनीभिर्व्याप्तम् बहुविधभक्तिनिर्माणनिपुणपुराण-  
पौरपुरंघ्रिबध्यमानैर्बद्धैश्चाचारचतुरान्तःपुरजरतीजनितपूजाराज-  
मानरजकरज्यमानै रक्तैश्चोभयपटान्तलग्नपरिजनप्रेङ्खनेलितैश्छा-  
यासु शोष्यमाणैः शुष्कैश्च कुटिलकमरूपक्रियमाणपलुवपरभा-

विनिहिताः स्थापिताः सरसस्यार्द्रस्यातर्पणस्य चूर्णविशेषस्य हस्ता-  
येषु तान् । उद्वाहस्य विवाहस्य वेद्याः स्तंभान् उत्तंभयद्भिरूर्ध्वकुव-  
द्भिः” उदःस्थास्तंभोः पूर्वस्य’ इत्यनेन पूर्वसवर्णः । प्रविष्टाभिरित्यादीनां  
तृतीयान्तानां व्याप्तमित्यनेनान्वयः । सिंदूररजोराजिभिः कश्मीरज-  
धूलिसमृद्धै राजितं शोभितं ललाट यासां ताभिः । अद्य यावद्विवाहा-  
दिमंगलेषु’ लेपमुत्तमांगेषु नार्यो विदधाति । बहुविधाभिर्वर्णकाभिर्वि-  
लेपेनैर्दिग्धाभिरुपलिप्ताभिरंगुलीभिः करणैः । ग्रावसूत्राणि विवाहे  
बध्यमानानि मंगलसूत्राणि चित्रयन्तीभिः । तदा शालाया अजिर-  
श्रेणीरंगपंक्तीरित्यर्थः । शालाजिराण ( शरावान्मृत्पात्राणीत्यर्थः )  
वैवाहिकस्य विवाहसंबन्धिनः कङ्कणस्योर्णासूत्राणां मेषलोमसूत्राणां  
संनाहान् रचनाः बलाशना पुष्पाख्योषधिविशेस्तत्पक्वं घृतं रक्षार्थं क्रि-  
यते । तेन घृतेन घनीकृतः कुङ्कुमकल्कस्तेन मिश्रितान् । स्फुरद्भिः प्र-  
काशमानैः स्फीतैर्बृहद्भिः स्फटिककर्पूरस्य कर्पूरविशेषस्य शकलैः खडैः  
खचितमंतरालं यासां ताः । सर्वतो वासोभिर्वसनैः संछादितमिति सं-



गैरपरैगारब्धकुङ्कुमपंकस्थासकच्छुरणैरपरैरुद्भुजभुजिष्यभज्य-  
 मानभङ्गुरोत्तरीयैः क्षौमैश्च बादरैश्चदुकूलैश्च लालातन्तुजैश्चांशु-  
 कैश्च नेत्रैश्च निर्मोकानभैरकठोररम्भागभकोमलैर्निः श्वासहार्यैः  
 स्पर्शानुमैयवासोभिः सर्वतः स्फुरद्भिरिन्द्रायुधसहस्रैरिव संछा-  
 दितम्, उज्ज्वलनिचोलकावगुण्ठयमानोपधानैः हंसतूलशयनीयै-  
 स्तारामुक्तफलोपचीयमानैश्च कञ्चुकैरनेकोपयोगपाट्यमानैश्चा-  
 परिमितैः पट्टपटीसहस्ररामित्वरागकोमलदुकूलरामानैश्च पट्ट-  
 बन्धः । बहुविधानां भक्तीनां रचनानां निर्माणे निपुणाभिः कुशलाभिः  
 पुराणाभिः पुरातनीभिः पौरपुरंध्रोभिर्नागरिकप्रमदाभिर्बध्यमानैः  
 आचारं चतुराभिरन्तः पुरजरीभिर्वृद्धाभिर्जनितया पूजया राजमानैः  
 शोभमानै रजकैर्निर्णजकै रज्यमानैः । उभयपटांते पटान्तद्वये लम्पैः  
 परिजनैः प्रेखोलितैश्चालितैः । कुट्टितः क्रमो येषां तै रूपैः क्रियमा-  
 णाः, पल्लवानां परभागः शोभा येषां तैः । आरब्धं कुङ्कुमपंकस्य स्था-  
 सकानां रचनाविशेषाणां छुराणां लपनं येपु तैः उद्भुजैरुर्ध्वहस्तर्भुजिष्यै-  
 विटैर्भज्यमानानि मुष्टिदानन समाक्रियमाणाणि भंगुराणि वकाण्यु-  
 त्तरीयाणि येपु तैः । क्षौमैः क्षुमाविकारैः । बादरैः कार्पाशैः । लाला-  
 तन्तुजैः कौशेयैः । नेत्रैर्वस्त्रविशेषैः । निर्मोकाभः सर्पकंचुकसदृशैः ।  
 अकठोरः कोमलो रम्भायाः कदल्या गर्भ इव मध्य इव कोमलानि तैः  
 मृदुभिः । निश्चासेन इयंहरणियैरतिसूक्ष्मैरित्यर्थः ) उज्ज्वलैः स्वच्छै-  
 र्निचोलिकैरवगुण्ठयमानानि वेष्टयमानान्युपधानान्युपबर्हाणि येषां तः  
 हंसतूल यनीयैर्हंसपक्षशय्याभिः । अथवा उज्ज्वलैर्निचोल कैरवगुण्ठय-  
 मानानि पराजितानि हंसकलानि येस्तैः । शुभ्रत्वाद्धंसा येः पराजिता  
 इत्यर्थः । ताराकारैर्मुक्ताफलैरुपचीयमानैः शोभमानैः कंचुकैश्चोलैः ।  
 स्तवरकनिवह उपरि स्थाप्यमानवस्त्रसमूहस्तेन निरन्तरं दृढं छाद्यमा-

वितानैः स्तवरकनिवहनिरन्तरच्छाद्यमानसमस्तपटलैश्च मण्डपैरुच्चित्र-  
नेत्रवटवेष्ट्यमानैश्च स्तम्भैरुज्ज्वलं रमणीयं चौत्सुक्यदं च मङ्गल्य-  
चासीद्राजकुलम् ।

देवी तु यशोवती विवाहोत्सवपर्याकुलहृदया हृदयेन भर्तेरि, कुत-  
हलेन जामातरि, स्नेहेन दुहितरि, उपचारेणा निमन्त्रितस्त्रीषु, आदे-  
शेन परिजने, शरीरेणा संचरणा, चक्षुषा कृताकृतप्रत्यवेक्षणेषु, आन-  
न्देन महोत्सवे, एकापि बहुधा विभक्तवाभवत् । भूपतिरप्युपर्युपरि विस्-  
र्जितोष्ठ्वामीजनितजामातृजोषः सत्यप्याह्वासंपादनदत्ते सुखेक्षणपं-  
परिजने ममं पुत्राभ्यां दुहितृस्नेहविक्रवः सर्वं स्वयमकरोत् ।

एवं च तस्मिन्नविधवामय इव भवति राजकुले, मङ्गलमय इव  
जायमाने जीवलोकं, चारणामयेष्विव लक्ष्यमाणेषु दिङ्मुखेषु, पटह-  
मय इव कृतोऽन्नरिक्षं, भूषणमय इव भ्रमति परिजने, बान्धवमय इव  
दृश्यमाने सर्गं, निर्वृतिमय इवोपलक्ष्यमाणे काले, लक्ष्मीमय इव  
विजृम्भमाणं महोत्सवे, निधान इव सुखस्य, फल इव जन्मनः, परि-  
णाम इव पुण्यस्य, यौवन इव विभूतेः, यौवराज्य इव प्रीतेः, सिद्धि-  
काल इव मनोरथस्य वर्तमाने, गण्यमान इव जनाङ्गुलीभिः, आलां-  
क्यमान इव मार्गध्वजैः, प्रत्युद्गम्यमान इव मङ्गल्यवाद्यप्रतिशब्दकैः,  
नानि समस्तपटलानि, सकलपरिच्छदा, गृहाच्छादनानि, यैस्तैर्मण्डपैः । उच्चित्रै-  
रपरिस्थिताचित्रैर्नेत्रपटैः पटाविशेषैर्दृष्टमानैः, स्तम्भैरुज्ज्वलं, प्रकाशमानं राजकुलं  
राजप्रासादः । 'नेत्रं मंथगुणो वस्त्रभेदे मूलं द्रुमस्य च' इति मेदिनी ।

देवीति—विवाहोत्सवेन पर्याकुलं व्याकुलं हृदयं यस्याः सा । बहुधाऽ-  
नेकप्रकारेण । उपर्युपरि वारंवारं, विसर्जिताभिः, प्रेषिताभिरुष्ठ्वामीभिः कमल-  
कवडवाभिर्जनित उत्पादितो जामातृजोष आनंदो येन सः ।

एवं चेति—अविधवामयेऽविधवाप्रचुरं । प्राचुर्ये मयट् । निर्वृतिमय

आहूयमान इव मोहूर्तिकैः, आकृष्यमाणा इव मनोरथैः, परिष्वज्यमान इव वधून्नावृद्धयैर्गजगाम विवाहदिवसः । प्रानरेव प्रतीहारैः समुत्सारितनिग्विलानिवद्धलोकं विविक्रमक्रियत राजकुलम् ।

अथ प्रतीहारः प्रविश्य नृपसमीपम् 'देव, जामातुरन्तिकान्ताम्बू-  
तदायकः पारिजानकनामा संप्राप्तः' इत्यभिधाय स्वाकारं युवानमदर्श-  
यन् । राजा तु तं दूरादेव जामातृबहुमानादर्शितादरः ' बालक, कञ्चि-  
त्कुशली ग्रहवर्मा इति पप्रच्छ । अस्मौ तु समाकर्णितनगाधिपध्वनिर्धा-  
वमानः कतिचित्पशान्युपमृत्य प्रसार्य च बाहू संवाचतुगश्चिरं वसुंध-  
रायां निधाय मूर्धानमुत्थाय 'देव, कुशली यथाज्ञापयस्यर्चयति च देवं  
नमस्कारेण' इति व्यज्ञापयन् । आगतजामातृनिवेदनागतं च तं ज्ञात्वा  
कृतमत्कारं राजा 'यामिन्याः प्रथमे यामे विवाहकालात्ययकृता यथा न  
भवति दोषः' इति संदिश्य प्रतीपं प्राहिणोत् ।

अथ सकलकमलवनलक्ष्मीं वधूमुख इव संचार्य समवसिते  
वासरे, विवाहदिवसश्चिरः पदपल्लव इव रज्यमाने सवितरि, वधूवरानु-  
रागलघूकृतप्रेमलज्जितेष्विव विघटमानेषु चक्रवाकमिथुनेषु, सौभाग्य-  
इव आनन्दमय इव । मुखस्य निधान इन्द्रेयादीनां वर्तमान इत्यनेनान्वयः ।  
समुत्सारिता निःसारिता अनिवद्धलेका अनिमंत्रिता जना यस्मान्न ।

अथेति—यथा न भवति दोष इत्युक्त्वेव विरमणं नृपस्य विनयाधिक्यं  
व्यंजयति । अन्यथा तथा कर्मित्युक्तौ जामाताज्ञापितः स्याद् । प्रतीपं प्राहि-  
णोत्पुनरपि जामातुः सन्निधौ प्रेषयामास ।

अथेति—कमलानि सायं संकुचन्ति तेषां श्रीवधूमुखे निवेश्य वासरो  
गतां न्वति कल्पना । वधूवरयोरनुरागेण प्रेम्णा लघूकृतं तिरस्कृतं यत्प्रेम तेन  
लज्जितेष्विव । सायं चक्रवाकमिथुनानि वियुज्यन्ते वधूवरप्रेमाधिक्येन, जाय-  
माना, लज्जा, कारणात्तेन प्रदर्शिता । कपोतस्य पारावतस्य कण्ठ इव कबुरे चित्र-

ध्वज इव रक्तांशुकमुकुमारवपुषि नभसि स्फुरति संध्यारामे कपोतक-  
गठकबुरुं वर्यात्रागमनरजसीव कलुषयति दिङ्मुखानि तिमिरं, लम्पसं-  
पादनमज्ज इवोज्जिहाने ज्योतिर्गणो, विवाहमङ्गलकलश इवोदयशिख-  
रिणा समुत्तिष्ठ्यमाणो वर्धमानधवलच्छाये ताराधिपमण्डले, बधूवदन-  
लावण्यज्योत्स्नापरिपीतनभसि प्रदोषे, वृथोदितमुपहस्रतिरिव रजनिक-  
रमुत्तानितमुखेषु कुमुदवनेष्वाजगाम मुहुर्मुहुरल्लासितस्फारस्फुरितारु-  
णाचामरैर्मनोरथैरिवोन्थितरागाग्रपल्लवैः पुरो धावमानैः पादतिस्तकर्णा-  
कटकहयप्रतिहेपितदीयमानस्वागतैरिव वाजिनां वृन्दैश्चापूरितदिग्भागः,  
चलकर्णाचामराणां चामीकरमयसर्वोपकरणानां वर्णकलम्बिनां बलिनां  
वर्णं तमसि वर्यात्रागमनस्य रजसां धूलानिव दिङ्मुखानि कलुषयति दिशां  
मंडलानि मलिनाकुर्वति । अत्र तमसः कबुरुत्वं संध्यारामसंबंधन । लम्पस्य  
मुहूर्तस्य विवाहस्य च संपादने मज्ज इव बद्धपरिकर इव ज्योतिर्गणो नक्षत्रसमूह  
उज्जिहान, उद्वच्छति । वर्धमाना धवला, छाया, कान्तिर्यस्य ( पद्मे ) वर्धमान  
इव, शराव इव, छाया यस्य, तेन च मंगलकलशसाम्यम् । स च कृगमयघटः  
सुधालिप्तः शुभ्रो भवति । बधूना वदनस्य मुखस्य लावण्येन कांत्या परिपीतं  
प्राशितं तमोऽध्वकरो यस्य तादृशि प्रदोषे रजनीमुखे । वृथोदितं व्यर्थमुद्वतम् ।  
उद्वमनकार्यस्य तमोनाशनस्य बधूमुखेनैव संपादितत्वात् । उल्लासितस्फार धृतैः,  
स्फारं विशालं महाद्वयर्थः स्फुरितं कम्पनं येषां तै रक्तेश्चामरैरुपलक्षितो द्रव-  
वर्मा आजगामेति संबंधः । कम्पितानां, ताम्रचामराणां, मनोरथस्य, नूतनपत्रसा-  
म्यम् । उल्कणानामूर्ध्वकर्णानां कटकहयानां सेनाश्वानां प्रतिहेषितेन प्रतिशब्देन  
दीयमानं स्वागतं येषां तैर्वाजिनामश्वानां, वृन्दैः, समूहैः । आपूरितो दिग्भागो  
यस्य सः । चलन्ति कर्णाचामराणि कर्णं भूषणार्थं स्थापितानि चामीराणि येषां  
चामीकरमयं सुवर्णमयं सर्वोपकरणं सकलसाहित्यमलंकारा वा येषाम् । वर्ण-  
कलाच्छादनवसनैर्लबन्ते भूमिं स्पृशन्ति ते वर्णकलम्बिन इति यथाकथंचित्प्राप-

घण्टाटाङ्कारिणां करिणां घटाभिः घटयन्निव पुनरिन्दुदयविलीनमन्ध-  
कारं, नक्षत्रमालामण्डितमुखीं करिणां निशाकर इव पौरंदरीं दिशमा-  
रुदः प्रकटितविविधविहगविरुतैस्तालावचरचारुणैः पुरः सर्बालो वसन्त  
इवोपवनैः क्रियमाणकोकाहलो, गन्धनैलावसेकुसुगन्धिना दीपिकाचक्र-  
वालस्यालोकेन कुंकुमपटवासवूलिपटनेनेव पिञ्जरीकुर्वन्सकलं लोकम्,  
उत्फुल्लमल्लिकामुण्डमालामध्याध्यामितकुसुमशेखरेण शिरसा हसन्निव  
सपरिवेशक्षपाकरं कौमुदीप्रदोषम्, आत्मरूपनिर्जितमकरकेतुक-  
रापहृतेन कार्मुकणेव कौमुदेन दाग्रा विरचितवैकट्यकविलासः,  
कुसुमसौरभगर्वभ्रान्नभ्रमरकुञ्जकलप्रलापसुभगः पारिजात इव जातः  
श्रिया सह पुनरवतारितो मेदिनीं, नववयूवदनावलोकनकुतूहलेनेव

नीयम् । घंटानां टांकारो विद्यते येषां तः । घटयन्निवेत्पादयन्निव । नक्षत्रमालया,  
भूषणविशेषेण, यस्यास्मात् ( पदे ) नक्षत्राणां, तारकाणां, मालया, पंक्या,  
मण्डितं, मुखं, यस्याः । पौरंदरीं, पूर्वां, दिशाम् । प्रकटितानि, विविधानि, विहगानां,  
विरुतानि, शब्दाः, यैस्तैस्तालावचरैस्तालेष्ववचरन्ति, नृत्यन्ति, तैर्बन्दिभिः । यथा  
विहगविरुतिभिरुपवनैर्बालो वसन्तो, वसन्तारंभः, कोलाहलं, जनयति, तद्वद्वसन्त-  
मदृशोयं पक्षिशब्दं विदधद्विर्बन्दिभिरुत्पादितकोलाहल इत्यर्थः । गन्धयुतस्य,  
सुगन्धिनस्तैलस्यावशेकेन, मिचनेन, सुगन्धिना, सुरभिणा । चक्रवालं, समूहः ।  
कुंकुमपटवासः, उत्फुल्लानां, विकसितानां मल्लिकानां, पुष्पविशेषाणां, मुण्डमालाया,  
भालवजो मध्यं मध्यभागमध्यामितोऽधिष्ठितः, कुसुमशेखरो, यस्य, तेन शिरसा  
सपरिवेशः, समंडलश्चंद्रो यस्मिन्तं कौमुदीप्रदोषं चंद्रिकायुतं प्रदोषकालं हसन्निव  
मालायाः परिवेशसाम्यं चंद्रस्य च शेखरसाम्यम् । विरचितो वैकट्यकस्य  
तिर्यगुरसि क्षिप्रस्योपवीतादेर्विलासः शोभा येन सः । कुसुमानां, सौरभस्य सुगं-  
धस्य गर्वेण भ्रान्तानां, मूढानां, भ्रमराणां, कुलस्य, कलप्रलापेन, मधुरध्वनिना,  
सुभगो, मनोहरः । श्रिया सह जातो लक्ष्म्यासममुत्पन्नः पारिजातस्तत्संज्ञ-

कृप्यमाणादृदयः पतन्निव मुग्धेन प्रत्यासन्नलम्पो प्रहवर्मा ।

राजा तु तमुपद्वारमगतं चरणाभ्यामेव राजचक्रानुगम्यमानः  
समुतः प्रत्युज्जगाम । अवनीर्णं च तं कृतनमस्कारं मन्मथमिव माधवः  
प्रमार्गितभुजो गाढमालिलिङ्ग । यथाक्रमं परिष्वक्तराज्यवर्धनहर्षं च  
हस्ते गृहीत्वाभ्यन्तरं निन्ये । वनिर्विशेषासनदानादिना चैनमुपचारे-  
णोपचचार ।

न चिराच्च गम्भीरनामा नृपतेः प्रणयी विद्वान्द्विजन्मा प्रहवर्मा-  
गमुवाच — तात, त्वां प्राप्य चिरात्स्वतु राज्यश्रिया घटितौ तेजोमयौ  
सकलजगद्गीयमानबुधकर्णानन्दकारिगुणगणौ सोममूर्यवंशाविव पुष्प-  
भूतिमुखरवंशौ । प्रथममेव कौतुभमणिगिव गुणैः स्थितोऽसि हृदये  
देवस्य । इदानीं तु शशीव शिरसा परमेश्वरेणासि वोढव्यो जातः इति ।

एवं वदत्येव तस्मिन्नृपमुपसृत्य मौडूतिकाः 'देव, समासीदति  
लग्नवेला । व्रजतु जामाता कौतुकगृहम्' इत्यूचुः । अथ नरेन्द्राण  
'उतिष्ठ गच्छ' इति गदितो प्रहवर्मा प्रविश्यान्तःपुरं जामातृदर्शनकृतू-  
हलिनीनां स्त्रियाणां पतिनानि लोचनसहस्राणि विकचनीलकुवलयवना-  
नीव लङ्घयन्नास्साद् कौतुकगृहद्वारम् । निवारितपरिजनश्च प्रविवेश ।

अथ तत्र कतिपयाप्रप्रियसखीस्वजनप्रमदाप्रायपरिवाराम्, अरु-  
कवृत्तः, श्रिया राज्यश्रिया, राज्यलक्ष्म्या पुनर्मैदिनीं पृथ्वीमवतारित आनीतः ।

नातेति—सकलजगता गीयमानो बुधानां विदुषां कर्णयोः श्रोत्रयोर्बुधश्च-  
द्रपुत्रः कर्णः सूर्यात्मजस्तयोर्वा, आनन्दकारी गुणगणो ययोस्तां । हृदये, मनसि,  
वक्षसि च । देवस्य नृपतेर्विष्णोर्वा । परमेश्वरेण नृपेण हरेण च । एतेन जामातुः  
पूजनीयत्वं व्यज्यते । एवमिति—लं वयञ्चाक्रममाराः । कौतुकगृहद्वारमुत्पवगृहस्य  
विवाहात्मवगृहस्य द्वारम् ।

अथेति—तत्र वधूमपश्यदिति संबंधः । अरुणांशुकेन लोहितवस्त्रेणाव-

गांसु कावगुण्ठितमुखीं प्रभातसंध्यामिव स्वप्रभया निष्प्रभान्प्रदीपका-  
 न्कुर्वाणाम्, अतिसौकुमार्यशङ्कितेनेव यौवनेन नानिनिर्भरमुपगृहाम्,  
 साध्वसतिरुध्यमानहृदयदेशदुःखमुक्तैर्निभृतायतैः श्रमितैरपयान्तं कुमा-  
 रभावमिवानुशोचन्तीम्, अत्युत्कम्पिनीं पतनभियेव त्रपया निष्पन्दं  
 धार्यमाणाम्, हस्तं तामरसप्रतिपत्तमामन्नग्रहणं शशिनमिव रोहिणीं  
 भयवेपमानमानसामवलोकयन्तीम्. चन्दनधवलतनुलताज्योत्स्नादा-  
 नसंचितलावण्यात्कुमुदिनीगर्भादिव प्रसूताम्, कुमुमामोदनिर्हारिणीं  
 वसन्तहृदयादिव निर्गताम्, निःश्रासपरिमलाकृष्टमधुकरकुलां मलय-  
 मारुतादिवोत्पन्नाम्, कृतकंदर्पानुसरणां रतिमिव पुनर्जाताम्, प्रभा-  
 लावण्यमदसौरभमाधुर्यैः कौस्तुभशशिमदिगपारिजातामृतप्रभवैः सर्व-  
 गुण्ठितमाच्छादितं मुखं यस्यास्ताम् । प्रभातसंध्या चारुणस्यानूरोरत्नैरंशुभिर्-  
 शुक्लैरवगुण्ठितमुखी भवति । नानिनिर्भरं नातिदृढमुपगृहामालिङ्गिताम् । अप्राप्त-  
 पूर्णयौवनां वयः संधौ वर्तमानांमत्यर्थः । साध्वमेन भयेन कपेन वा निरुध्यमा-  
 नेन हृदयदेशेन दुःखान्मुक्तैर्निभृतायतैर्गुणैरायतैर्दार्ढ्यैः । अपयान्तं नश्यन्तं कुमार-  
 भावं बाल्यम् । तामरसप्रतिपत्तं, कमलसदृशमासन्नं प्राप्तं ग्रहणं, स्वाकारं, यस्य  
 तं हस्तं करमवलोकयन्तीम् । भयेन, वेपमानं, मानसं, मनां, यस्यास्ताम् । आस-  
 न्नग्रहणं प्राप्तापरागं, शशिनं, चंद्रमममवलोकयन्ती रोहिणीं चन्द्रभार्गमिव । भर्तृ-  
 ग्रहणं दृष्ट्वा रोहिणी वेपते । विवाहे च कुमार्यो भर्तृभार्या लज्जाधिक्येन वा वेपन्ते  
 इति हि प्रत्यक्षम् । वर्णितं चैतत् चन्दनेन धवला शुभ्रा तनुलता, यस्या स्ताम् ।  
 ज्योत्स्नायाश्चंद्रिकाया, आशनेन, ग्रहणेन, संचितं, वद्धितं, लावण्यं, कान्तिर्यस्य  
 तस्मात्कुमुदिनीगर्भात् । शुभ्रा, तनुलता, कमलिन्याः, संजातान्विन्युत्प्रेक्षा ।  
 कृतकंदर्पानुसरणामुद्भूतमदनविकाराम् ( पत्ने ) मदनमनुयान्तीम् । प्रभादीनां  
 कौस्तुभादिभिर्माधुर्यैरुपेयान्त्वयः । सर्वरत्नगुणैः, कौस्तुभादीनां प्रभादिभिर्गुणैः,  
 उपलब्धिनां, मुरामुरुषा, देवामुरयोरुपरि, कपेन, लक्ष्मीहरणजेनेत्यर्थः, रत्नाक-

रत्नगुणैरपगमिव सुगसुररूपा रत्नाकरेण कल्पितां श्रियं, स्निग्धेन बालिकालोकेन सितसिन्धुवारकुमुममञ्जरीभिरिव मुक्तादीधितिभिः कल्पितकर्णाचिनंसाम्, कर्णाभिरणमरकतप्रभाहरितशाद्वलेन कपोलस्थ-  
लीतलेन विनोदयन्तीमिव हारिणीं लोचनच्छायाम्, अधोमुखं वर-  
कौतुकालोकनाकुलं मुहुर्मुहुः कृतमुखोन्नमनप्रयत्नं सखीजनं हृदयं च निर्भर्त्सयन्तीं वधूमपश्यन् ।

प्रविशन्तमेव न हृदयचौरं वध्वा समर्पितं जग्राह कंदर्पः । परि-  
हासस्मेरमुखीभिश्च नारीभिः कौतुकगृहे यद्यत्कार्यते जामाता तत्तत्स-  
र्वमनिपेशलं चकार । कृतपरिणयानुरूपवेशपरिग्रहां गृहीत्वा करे  
वधूं निर्जगाम । जगाम च नवमुधाधवलां निमन्त्रितागतैस्तुषारशै-  
लोपत्यकामिव त्र्यम्बकाम्बिकाविवाहाद्वैभूभृद्भिः परिवृत्ताम्, सेकमु-  
कुमारयवाङ्कुरदन्तुरैः पञ्चास्यैः कलशैः कोमलवर्णिकाविचित्रैरमित्र-

रेण सागरेण, कल्पितां, श्रियं लक्ष्मीमिव । स्निग्धेन वक्ष्यलेन बालिकाजनेन  
कन्यकाजनेन । मित्राभिः, मित्रवारम्भ्य, निर्गुड्याः, कुसुममञ्जरीभिः । हारिणीं  
मनोहरां हरिणसंबन्धिनीं च । कौतुकालोकनाकुलमुत्सुकं हृदयं सखीजनं च  
निर्भर्त्सयन्तीं तर्जयमानामिव । अथवा हेतुमर्ण्यतं हेतोरविवक्षयेति बोध्यम् ।

**प्रविशन्तमिति**—हृदयचौरं हृदयहारकम् कंदर्पं जग्राह । यथा कंचि-  
त्स्तेनं कोपि राजपुरुषादेर्हस्ते ददाति तद्वदिमं, वध्वार्पितं कंदर्पं जग्राहेत्यर्थः ।  
अतिपेशलमतिमनोहरम् । कृतः परिणयस्य विवाहस्यानुरूपो योग्यो वेशपरिग्रहो  
नैवस्थस्वाकारो यथा ताम् वेदीं जगामेति-संबन्धः, वेदीं विशिनष्टि । नवया नूतनया सु-  
धया धवलाम् । भूभृद्भिः राजभिः, पर्वतैश्च । तुषारशैलस्य हिमालयस्योपत्यकां समी  
पस्थभूमिम् । पुश्रवर्णत्वं भूभृद्वैष्टेनत्वं च तस्याभ्यम् । सेकेन, मुकुमाराः, कोमला,  
यवाङ्कुरास्तैर्दन्तुरैरुचनीचैः, पंचास्यैः विस्तृतमुखैः कोमलयाव र्णिकया, पुश्ररंगेण  
विचित्रैरमित्रमुखैः शत्रुवदनैश्च, शत्रुमुखाकाराणि (पात्राण्यासन्नित्यर्थः) मंगल्य-



मुखैश्च मङ्गल्यफलहस्ताभिरञ्जलिकारिकाभिरुद्गामितपर्यन्तम्, उपा-  
ध्यायोपधीयमानेन्यनधूमायमानाग्निमधुक्षणाक्षणिकोपद्रष्टृद्विजम्, उप-  
कृशानुनिहितानुपहतहरितकुशाम्, संनिहितदृषदजिनाज्यम्बुसमित्पू-  
लीनिवहाम्, नूतनसूर्पापितश्यामलशमीपलाशमिश्रलाजहासिनीं वे-  
दीम् । आरुरोह च तां दिवमिव सज्योत्सलः शशी । समुत्सर्प च  
वेक्षितारुणशिखापल्लवस्य शिखिनः कुसुमायुध इव रतिद्वितीयो रक्ता-  
शोकस्य समीपम् । हुते च हुतभुजि दक्षिणावर्तप्रवृत्ताभिर्वधूवदनवि-  
लोकनकुतूहलिनीभिरिव ज्वालाभिरेव सह प्रदक्षिणां बभ्राम । पात्य-  
माने च लाजाञ्जलौ नखमयूखधवलिततनुरदृष्टपूर्वधूवरूपविस्मय-  
स्मेर इवाद्दृश्यत विभादमुः ।

फलं हस्ते यामां ताभिः । अञ्जलिकारिकाभिः मृगमयप्रतिमाभिः, उद्गासिताः  
शोभितः, पर्यन्तो यस्यास्ताम् । उपाध्यायेन गुरुर्योपधीयमानैः, स्थाप्यमानैर्धर्मैः  
समिद्धिधूमायमानस्याग्नेः, संधुक्षणे प्रज्वलनेऽक्षणिका व्यग्रा उपद्रष्टारः, सा-  
क्षिणः, छात्रा वा द्विजा ब्राह्मणाः यस्यां ताम् । उपकृशानु, वन्देः समीपे निहताः  
स्थापिताः, अनुपहताः, अनुपयुक्ताः, (प्रत्यग्रा इत्यर्थः) हरितकुशा, हरिद्वर्णा दर्भा  
यस्यास्ताम् । दशदशमा, अजिनं मृगचर्म आज्यं, घृतं, मुक्, पात्रविशेषः, समि-  
त्पूली एकत्र बद्धाः, समिधः । नूतनसूर्पे नवे प्रस्फोटनेऽपिताभिः श्यामलैः, कृष्णैः  
शमीपलाशैः शमीपणैर्मिश्रिताभिरलाजाभिर्हसति ताम् । लाजानां शुभ्रत्वाद-  
स्यसाम्यम् । वेक्षिताञ्जलिता-अरुणाः, ताम्राः, शिखापल्लवाः, ज्वालाक्षणा, यस्य  
तस्य, शिखिनो, वन्देः, ( पत्ने ) वेक्षिता-अरुणाः, शिखापल्लवाः, अग्रपर्णानि,  
यस्य तस्य रक्ताशोकस्य शिखिनो वृक्षस्य । दक्षिणावर्तेनापसव्यवर्तलेन प्रवृ-  
त्ताभिः । नखमयूखैर्नखकिरणैर्धवलिता तनुर्यस्य सः । अदृष्टपूर्वेणानवले क्लि-  
पूर्वेण बधूवरयो रूपेण जातो यो विस्मयः तेनाश्चर्येण स्मेरश्चकित इव ।  
विभावसुर्दन्दिः ।

अत्रान्तर स्वच्छकपोलोदरसंक्रान्तमनलप्रतिबिम्बमिव निर्वा-  
पयन्ती स्थूलमुक्ताफलविमलबाष्पबिन्दुसंदोहदर्शितदुर्दिना निर्वदन-  
विकारं रुरोद बधूः । उदश्रुविलोचनानां च बान्धववधूनामुदपादि  
महानाक्रन्दः । परिसमापितवैवाहिकक्रियाकलापस्तु जामाता बध्वा  
समं प्रणानाम श्रमुरौ । प्रविवेश च द्वारपक्षलिखितरतिप्रीतिदैवतं  
प्रणयिभिरिव प्रथमप्रविष्टैरलिकुलैः कृतकोलाहलम् , अलिकुलपक्षप-  
वनप्रेङ्खोलितैः कर्णोत्पलप्रहारभयप्रकम्पितैरिव मङ्गलप्रदीपैः प्रकाशि-  
तम् , एकदेशलिखितस्तबकितरक्ताशोकतरुतलभाजाधिज्यचापेन ति-  
र्यक्कूणितनेत्रत्रिभागेण शरमृजुर्कुर्वता कामदेवेनाधिष्ठितम् , एकपार्श्व-  
न्यस्तेन काञ्चनाचामनकेनेतरपार्श्ववर्तिन्या च दान्तशफरकधारिण्या  
कनकपुत्रिकया साक्षाल्लक्ष्म्येवोदण्डपुण्डरीकहस्तया सनाथेन सोपधा-  
न्त स्वास्तीर्णेन शयनेन शोभमानम् , शयनशिरोभागस्थितेन च  
कृतकुमुदशोभेन कुसुमायुधसाहायकायागतेन शशिनेन निद्राकलशेन  
राजतेन विराजमानं वासगृहम् ।

अत्रान्तरे इति—स्वच्छकपोलोदरे स्वच्छे कपोलमध्ये, संक्रान्तं पतित-  
मनलस्याग्नेः प्रतिबिम्बम् । स्वच्छेत्यनेन विबग्रहणयोग्यत्वम् । निर्वापयन्ती शम-  
यन्ती । स्थूलमुक्ताफलानां विमलाः स्वच्छा बाष्पबिन्दवस्तेषां संदोहेन समूहेन  
दर्शितं दुर्दिनं यथा सा । निर्गता विकारा यस्मात्तादृशं वदनं यस्मिन्यथा तथा ।  
वदनविकारदर्शनाभावस्तु भर्तृसान्निध्यात् । प्रविवेशेति—जामाता वासगृहं  
प्रविवेशेति संबन्धः । द्वारपक्षे द्वारपार्श्वे लिखितं रतेर्मदनभार्यायाः, प्रीतिदैवतमर्था  
न्मदनो यस्मिन् । एकदेशे, लिखितस्य, स्तबकितस्य, गुच्छयुतस्य, रक्ताशोकस्य,  
तलं भजति तेन ज्यामधिगतं चापं यस्य तेन । कूणितः, संकुचितो, नेत्रत्रिभागो,  
नेत्रापांगो यस्य तेन । एतेन लक्ष्यबद्धदृष्टित्वं दर्शितम् । काञ्चनाचामनकेन,  
सौवर्ण्येष्ठीवनपात्रेण, दन्तशफरकं, हस्तिदंतमयीं, पेटिकां, धारयति, तथा ।

तत्र च ह्रीताया नववयूकायाः पराङ्मुखप्रसुप्ताया मणिभिन्नि-  
दर्पणेषु मुखप्रतिबिम्बानि प्रथमालापकर्णनकौतुकागतगृहेदेवताऽऽनना-  
नोव मणिगवाक्षकंषु वोक्षमाणः क्षणशं निन्ये । स्थित्वा च श्रृङ्ग-  
कुले शालेनामृतमिव श्रृङ्गहृदये वर्षन्नभिनवाभिनवोपचारैरपुनरुक्ता-  
न्यानन्दमयानि दशदिनानिस्थित्वा दत्त्वा राज दौवारिकमिव राजकुले  
रणरणकं यौतुकनिवेदिनानोव शम्बलान्यादाय हृदयानि सर्वलोकस्य  
कथं कथमपि विसर्जितो नृपेण ब्रह्मा सहस्वदेशमगमदिति ।

इति श्रीबाणभट्टकृते हर्षचरिते चक्रवर्तिनजन्मवर्णनं  
नाम चतुर्थ उच्छृवासाः ।

तत्रेति—प्रथमालापस्य प्रथमभाषितस्याकर्णनस्य, श्रवणस्य, कौतुकादाग-  
तानां गृहेदेवतानामाननानां मुखानां ( अधुनापि गर्भाधानसंस्कारवेलायां वधू-  
वरालापकुतूहलिन्यः प्रमशः निगुशत्मानं लेष्टुनीति प्रसिद्धमेव ) अपुनरुक्तानि  
नवानि । रणरणकं, मनस्तापम् । यौतुके, कन्यादानकाले, दीयमानधने निवेदि-  
तानां, समर्पितानां, सर्वलोकस्य, हृदयानि, चेतांसि, कथंकथमपि, कष्टेन ।  
अगमत्, गतवान् ।

इति श्रीबाणभट्टकृतहर्षचरितव्याख्यायां “आशुतोषिण्यां”

चतुर्थ उच्छृवासाः ।





लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, पुस्तकालय  
Lal Bahadur Shastri National Academy of Administration Library

मसूरी  
MUSSOORIE

अत्रापि सं०

Acc. No.....

कृपया इस पुस्तक को निम्न लिखित दिनांक या उससे पहले वापस कर दें।

Please return this book on or before the date last stamped below.

[illegible]

Sans  
891.21  
वाणभ

अदाप्ति नं० ~~14650~~  
ACC. No. ....

वर्ग नं.  
Class No. ....

लेखक  
Author. ....

शीर्षक  
Title. ....

निर्गम दिनांक  
Date of Issue

उधारकर्ता की सं.  
Borrower's No.

हस्ताक्षर  
Signature

Sans  
891.21

**LIBRARY**  
**वाणभ LAL BHADUR SHASTRI**  
**National Academy of Administration**  
**MUSSOORIE**

Accession No. 125555

1. Books are issued for 15 days only but may have to be recalled earlier if urgently required.
2. An over-due charge of 25 Paise per day per volume will be charged.
3. Books may be renewed on request, at the discretion of the Librarian.
4. Periodicals, Rare and Reference books may not be issued and may be consulted only in the Library.
5. Books lost, defaced or injured in any way shall have to be replaced or its double price shall be paid by the borrower.

Help to keep this book fresh, clean & moving